देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

9 772395 711007

Impact Factor 8.642

ISSN : 2395-7115
May 2026
Vol.-23, Issue-5

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

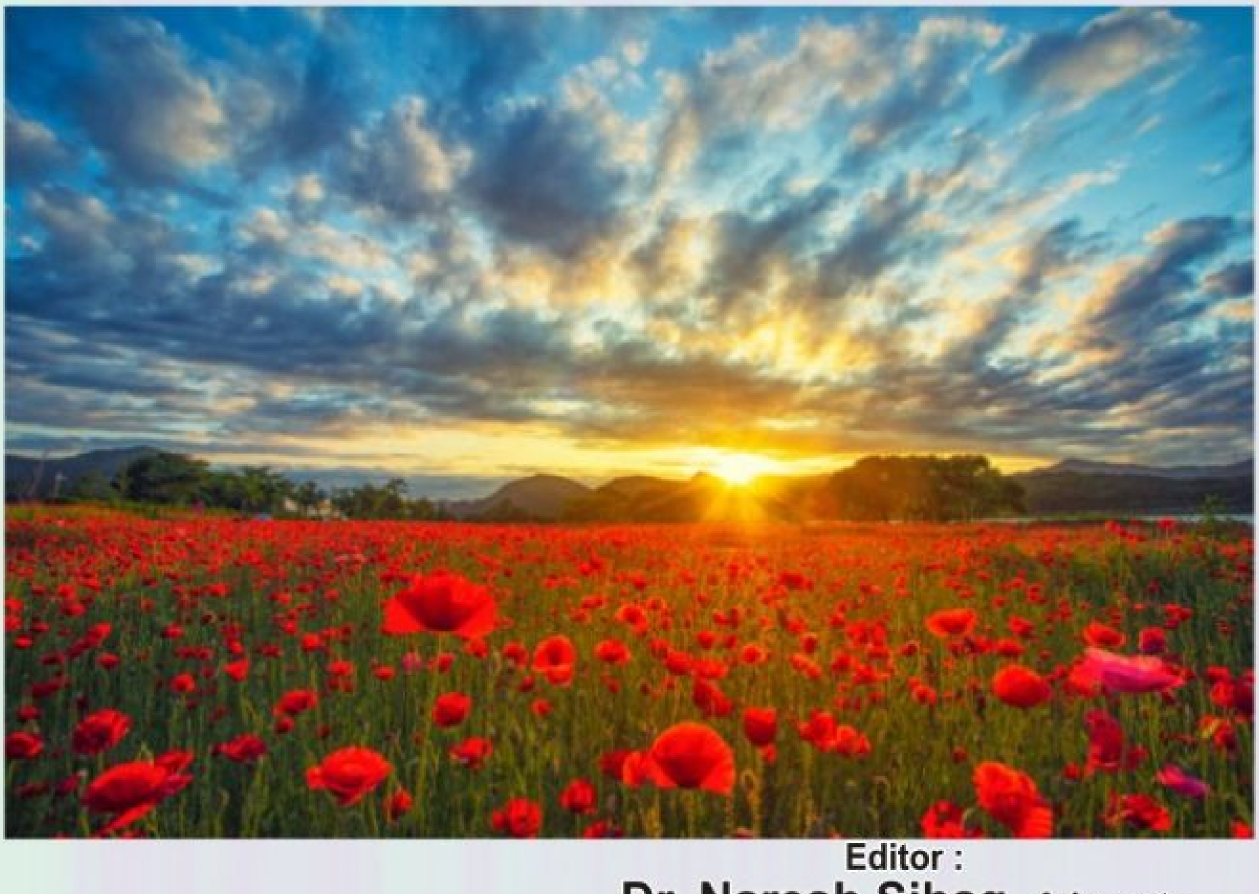

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

Bohal Shodh Manjusha May 2026 Editor : Dr. Naresh Sihag, Advocate

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 23 I SSUE-5(part-one) (मई 2026) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :
चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट
एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :
गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के **Arial, Times New Roman** में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी **Email ID : grsbohal@gmail.com** पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	**पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)**
खाता धारक का नाम	:	**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी**
बैंक खाता संख्या	:	**1182000109078119**
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमणिका -मई 2026

क्र०	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहाग	10-10
2.	बीसवीं शताब्दी के कुमांउनी कवियों की कविताओं में सामाजिक चेतना	डॉ० पूनम आर्या	11-13
3.	ਸਾਧੁ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਵਿਸੈਗਤ ਅਧਿਐਨ	ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ	14-17
4.	स्वतंत्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता: उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ	डॉ. प्रतिभा राय,	18-22
5.	स्वतंत्रता और जिम्मेदारी: आधुनिक महिला का संतुलन	डॉ० सुकन्या चल्ला	23-25
6.	अद्वैत वेदान्त दर्शनानुसार आत्मा, ब्रह्म और जगत् की अवधारणा	नाजमा हासान	26-28
7.	वीरेन डंगवाल के काव्य में स्त्री-संघर्ष के विविध आयाम	डॉ अमिता प्रकाश	29-33
8.	झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के बढ़ते महत्त्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन	नीलमणि तिग्गा	34-38
9.	औपनिवेशिक इतिहासलेखन से परे नाथ एवं अघोर चिकित्सा परंपरा : एक IKS आधारित पुनर्पाठ	प्रो० अरुण कुमार सिंह	39-45
10.	भारतीय ज्ञान परम्परा में संगीत एवं अध्यात्म	डॉ० श्रुति मिश्रा	46-48
11.	"काव्य में 'इन्सान' की खोज करते कवि सदानंद भोसले (मानवता के परिप्रेक्ष्य में)"	डॉ. दादासाहेब नारायण डांगे	49-54
12.	आधुनिक जीवनशैली में योग और पोषण	पंकज कुमार कुशवाह, श्री जितेन्द्र प्रताप सिंह	55-62
13.	आस्तिक परंपरा मे योग का दार्शनिक प्रतिरूप	कु. शाशि देवी, डॉ. हरिकान्त मिश्र	63-69
14.	माध्यमिक स्तर के हिंदी माध्यम के छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके नैतिक मूल्यों के प्रभाव का अध्ययन	कृष्ण बहादुर सिंह, डॉ. राममणि द्विवेदी	70-74

15.	डिजिटल शिक्षा और महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण	डॉ० स्वाति राय	75-79
16.	दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में धर्मराज्य	भुनेश्वर सिंह, डॉ. हेत राम	80-88
17.	मंजुल भगत कृत 'अनारो' उपन्यास में चित्रित आर्थिक यथार्थ	डॉ. पूनम कुमारी	89-92
18.	भारतीय मध्यवर्गीय जीवन-संघर्ष और सामाजिक यथार्थ 'थके पाँव' उपन्यास के सन्दर्भ में	डॉ. जिनु जॉन	93-96
19.	भीष्म साहनी के कथा साहित्य में पुरुष-विमर्श और नैतिक संकट	रिम्पल सिंह, डॉ. दिनेश कुमार मीणा	97-99
20.	हरिशंकर परसाई के व्यंग्य साहित्य में मध्यमवर्गीय मानसिकता का द्वंद्व	कुलबीर सिंह, डॉ. सुमन देवी	100-103
21.	झारखण्ड की उराँव जनजाति की महिलाओं में साक्षरता के प्रति दृष्टिकोण: एक अध्ययन	पूर्णिमा किस्पोट्टा, डॉ. पूनम कुमारी	104-108
22.	आधुनिक समय में डॉक्टर बी आर अंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता	Dinesh kumar, Dr.Shrikrishna singh	109-113
23.	बैसवारा के अमर साहित्यकार जवाहर इंदु : जीवन परिवेश रचनाधर्मिता	डॉ० आजेन्द्र प्रताप सिंह	114-118
24.	Communicative Justice and the Margins : Evaluating Media Accessibility and the Democratic Agency of Persons with Disabilities in India	Dr. Shourya Pratap Singh	119-123
25.	परसाई के व्यंग्य में राजनीतिक-सामाजिक विडम्बनाओं का यथार्थ चित्रण	कुलबीर सिंह	124-128
26.	सततता के लिए उच्च शिक्षा	Dr. Archana Mishra	129-133
27.	जसिंता केरकेट्टा की काव्ययात्रा : संघर्ष, पर्यावरण और आदिवासी अस्मिता	राहुल कुमार मीना	134-139
28.	झलकारी बाई : 1857 के विद्रोह की नायिका का पुनर्मूल्यांकन	डॉ० रिजवान अहमद	140-145
29.	ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਸਮਾਜ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਰੋਕਾਰ	ਹਰਜੀਤ ਸਿੰਘ, ਡਾ.ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ	146-151

30.	**भारतरत्न पंडित मदनमोहन मालवीय और हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान**	**LAV KESH BAHADUR SINGH, Dr.Shrikrishna singh**	**152-154**
31.	**भारतीय ज्ञान परंपरा का गणितीय आयाम: स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ के 16 सूत्रों का विश्लेषण एवं शैक्षणिक अनुप्रयोग**	**श्रीमती सरिता आचार्य**	**155-157**
32.	**Legacy of Shaheed Udham Singh**	**Dr. Michael Khindo**	**158-161**
33.	**विद्यालयों पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव - उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के दृष्टिकोण**	**सचिन कुमार**	**162-166**
34.	**म.प्र. के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं का योगदान**	**डॉ. सुनीता सिंह मरकाम**	**167-171**
35.	**पर्यावरण और वर्तमान परिपेक्ष्य**	**डॉ० कमलेश देवी**	**172-174**
36.	**विक्रमोर्वशीये स्वात्मभावगौरवविमर्शः**	**जयकिशन नैनानी**	**175-179**
37.	**जयपुर राज्य के अधीन खण्डेला की प्रशासनिक व्यवस्था की विवेचना (18 वीं सदी से 20 वीं सदी के संदर्भ में)**	**डॉ. म्होर सिंह मीणा**	**180-183**
38.	**सौन्दर्यानुरागी महाकविर्माघः**	**श्रीमती राजकुमारी**	**184-187**
39.	**“ हिन्दी उपन्यास में युवा वर्ग के व्यक्तित्व का संघर्ष”**	**सुशील कुमार पटेल**	**188-192**
40.	**Trickster Tales of the Zeme Naga of Assam**	**Mr. Ijegalakbe Jeme,**	**193-197**
41.	**“संत नामदेव का जीवन, भक्ति-दर्शन, संत-मंडली एवं शिष्य-परंपरा : सामाजिक समरसता के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन”**	**अशोक कुमार, गौरव सेठी**	**198-206**
42.	**“आदिवासियों का धर्मांतरण: ‘सूरज किरन की छांव’ उपन्यास के विशेष संदर्भ में”**	**उष्मिता गौड़**	**207-210**

संपादकीय

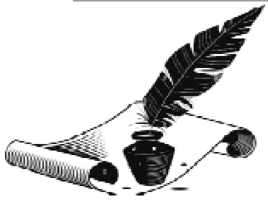

प्रिय विद्वत्जन, शोधार्थियों एवं पाठकगण,

आज के वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान, शोध और संवाद की परम्पराएँ तीव्र गति से परिवर्तित हो रही हैं। ऐसे समय में **"बोहल शोध मंजूषा"** का मई अंक न केवल अकादमिक विमर्श का मंच है, बल्कि भारतीय ज्ञान परम्परा और समकालीन चुनौतियों के बीच एक सशक्त सेतु भी है। यह अंक विशेष रूप से इस विचार को केंद्र में रखकर प्रस्तुत किया गया है कि परम्परा और आधुनिकता का समन्वय ही वास्तविक प्रगति का आधार है।

भारतीय ज्ञान परम्परा सदैव से समावेशी, बहुआयामी और जीवनोपयोगी रही है। वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, लोक साहित्य और आधुनिक साहित्य तक फैली यह परम्परा केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए मार्गदर्शक भी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इन ज्ञान स्रोतों को केवल स्मरण न करें, बल्कि उन्हें नए संदर्भों में पुनः व्याख्यायित करें। यही कार्य शोध का मूल उद्देश्य भी है—नवीन दृष्टिकोण के साथ सत्य की खोज।

समकालीन समय में शोध लेखन की गुणवत्ता और नैतिकता भी एक महत्वपूर्ण प्रश्न बनकर उभरी है। **Plagiarism,** संदर्भों की प्रामाणिकता और शोध की मौलिकता पर विशेष ध्यान देना आज की आवश्यकता है। एक सशक्त शोध वही है जो तथ्यात्मक, विश्लेषणात्मक और मौलिक हो। इस संदर्भ में यह पत्रिका शोधार्थियों और विद्वानों को एक जिम्मेदार मंच प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है।

डिजिटल युग ने ज्ञान के प्रसार को सरल बनाया है, परंतु इसके साथ ही चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं। सूचनाओं की अधिकता में सत्य की पहचान करना कठिन हो गया है। ऐसे में समीक्षित (Peer Reviewed) पत्रिकाओं की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। **बोहल शोध मंजूषा** इस दिशा में एक विश्वसनीय माध्यम के रूप में निरंतर कार्य कर रही है।

यह भी उल्लेखनीय है कि भारतीय समाज में शिक्षा और संस्कृति का संबंध अत्यंत गहरा है। शिक्षा केवल ज्ञान का अर्जन नहीं, बल्कि मूल्य निर्माण की प्रक्रिया भी है। इस अंक के अनेक लेख इस तथ्य को रेखांकित करते हैं कि यदि शिक्षा में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का समावेश किया जाए, तो समाज में नैतिकता और संवेदनशीलता का विकास संभव है।

अंततः, यह कहना समीचीन होगा कि शोध एक सतत यात्रा है—प्रश्नों से उत्तरों तक और फिर नए प्रश्नों की ओर। **बोहल शोध मंजूषा** का यह अंक इसी यात्रा का एक पड़ाव है, जो पाठकों, शोधार्थियों और विद्वानों को नए विचारों, दृष्टिकोणों और संभावनाओं से परिचित कराता है।

हम सभी लेखकों, समीक्षकों और पाठकों का आभार व्यक्त करते हैं, जिनके सहयोग से यह अंक संभव हो सका। आशा है कि यह अंक न केवल ज्ञानवर्धन करेगा, बल्कि नए शोध कार्यों के लिए प्रेरणा भी प्रदान करेगा।

आपके सुझावों और प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

– **संपादक**

बोहल शोध मंजूषा

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 11-13
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

बीसवीं शताब्दी के कुमांउनी कवियों की कविताओं में सामाजिक चेतना

डॉ० पूनम आर्या
असिस्टेंट प्रोफसर (हिन्दी),
श्री राम सिंह धौनी राजकीय महाविद्यालय जैंती, अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

कुमांउनी भाषा के विकासक्रम का आरम्भ तेरहवीं सदी से माना जाता हैं। इस प्रकार दीर्घकाल से कुमांउनी भाषा का विकासक्रम चलता रहा तथा समय–समय पर अनेक साहित्यकारों ने इसको समृद्ध बनाया है। वर्तमान में कुमांउनी भाषा में विभिन्न विधाओं में सृजन कार्य किया जा रहा हैं। कविता एक ऐसी विधा है जिसमें कवियों ने स्वतंत्र होकर अपनी मानवीय संवेदना को अभिव्यक्त किया है। कविता के माध्यम से कुमांउनी कवियों नें समाज में व्याप्त बुरारियों एवं कुरीतियों को खत्म करने एवं सामाजिक चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है। कुमांउनी कवियों की कविताओं में सामाजिक चेतना से हमारा तात्पर्य किसी देश एवं काल से संबधित नहीं, बल्कि एक ऐसी चेतना से है जो कुमांऊ के विभिन्न क्षेत्रो में सामाजिक परिवर्तनशीलता को जागृत कर सकें, तथा समाज में एक नये आदर्श व नवजागरण पैदा करे, जिससे सामाजिक जागरूकता संभव हो सके।

बीसवीं शताब्दी के कुमांउनी कवियों में श्री गौरीदत्त पांडें 'गौर्दा' का नाम सर्वोपरि है। कुमांऊ के साहित्याकारों में से 'गौर्दा' जी एक प्रतिष्ठित कवियों में से एक हैं। इनकी कविताओं में समाज में व्याप्त कुरीतियों की कटु आलोचना स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। गौर्दा जी ने अपनी कविताओं के माध्यम से सामाजिक विसंगतियों पर जमकर प्रहार किया हैं। अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण कुमांऊ ने उन्हें अपना जनप्रिय व्यक्ति बना दिया हैं। गौर्दा जी की कविताओं का का काव्य संग्रह 'गौरी गुटका' नाम से प्रकाशित हुआ है जिसमें गौर्दा जी ने 'चाय–लीला' कविता के माध्यम से सामाजिक यथार्थ को स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि किसप्रकार से कुमांउनियों की चाय पीने से पेट की गैस दूर होती है, चाय पीने के बाद ही पंडित जी के कथावाचक मंत्र मुंह से निकलते है, यहां तक कि अब वैद्य भी चाय का अनुपात बताने लगे है–

''ओहो ठुलि बोज्यु, कसिक छुटँछ अमल पड़ी गो चहा को पाणी ।
तीन दिन छोड़ि मैं दियो, बाइ उमड़ि गो ढ़ाङ उसाणी ।।
बैठक में बैगन चैछँ कतुक बेर , चड़ियाँ हिं रूँछ ना्न चुल अध्यैणी।
देवर कैं मेरा झुकमुक में चैछँऽ नी दियों ऊँत ऽ रातै नै ब्यानी ।।
बामण–पुराहित पुजपाति करूँछ रूँछऽ चहा हुंणि ऊ आँख ताणी।
बैदि बतूनि रोगिन कणी लै, चहा का संग में औखद खाणी ।।'' [1]

गौर्दा जी ने कलयुग की सामाजिक व्यवस्था पर करारा व्यंग करते हुए कहा है ,कि कलयुग की चाय में अब तो भगवान बस गये है–

'' है गई सब भैंस हैरान चहा में,
खातिर लै रै गेछ मेहमान चहा में ।
मनि जानि एक प्याला को अहसान चहा में,
भरि हालि तिथान कब्रिस्तान चहा में।
ततो पाणि चैंछ न पहचान चहा में,
तौलि कितलि चढ़ि रूँ रिस्थान चहा में।।'' [2]

शिवदत्त सती एक ऐसे कवि है जिनके काव्य में भोगे हुए सामजिक यथार्थ के रूप परिलक्षित होते है। स्वंय कृषक जीवन व्यतीत करने वाले सती जी एक समाजसुधारक एवं प्रगतिशील व्यक्ति हैं। इनकी रचनाओं में जीवन की कठिनाईयों का कटु सत्य देखने को मिलता है । सती जी ने हिन्दी एवं कुमांउनी दोनों भाषाओं में रचना की है। इनकी कविता 'भाबर का गीत' में भाबर जीवन की विसंगतियाँ एवं संघर्षशील जीवन का वर्णन देखने को मिलता है। भाबर जाने पर पारिवारिक स्वजनों को छोड़ना पड़ता है, साथ ही वहाँ अकारण समस्याओं से जुझना पड़ता है ; पेट फूलकर नगाड़े–सा हो जाता है, शरीर में ताकत नही रहती है और गर्मी से पूरा शरीर काला पड़ जाता है–

'' भाबर में नाडॅर जस भरी रूँ छ पेट,
ल्वे मांस शुकी जाँछ बड़ी जाँछ रेट। '' [3]

सती जी ने 'भाबर का गीत' कविता में भाबर क्षेत्र में जीवनयापन करने वालो की समस्या एवं पहाड़ में रहने वालों की प्रशंसा करते हुए अपने सहज प्रेम को बड़े मार्मिकता के साथ चित्रण किया है कि पहाड़ो में शुद्व हवा,पानी और भोजन मिलता है यहां भट के डुबके, सिसूणा का साग और मडुवे की रोटी जैसी साधारण चीजें क्यों न मिलती हों परन्तु भाबर जाना किसी भी प्रकार से श्रेयस्कार नहीं है–

''अपणा मुलुक रौनी जाँ अपणी थात,
भट का डुबका भला मादिर को भात।
मडुवा की रोटी भली सिशौंणी को साग,
माल जाई कसो होलो, दगड़ै छ भाग।। '' [4]

इसके साथ शिवदत्त सती जी ने अपनी कविताओं में तत्कालीन सामाजिक कुरीतियों, प्रचलित अंधविश्वासों, बाह्मणों के स्वार्थप्रेरित पाखण्ड तथा बाह्याडम्बरों की घोर निंदा की है। जो बाह्यामण अपनी विद्या का उपयोग केवल आजीविका के लिए करते है दूसरों के हित के लिए नही, वह बाह्यामण सदैव ऊँच–नीच के भेदों से घिरे रहते है और वे इन सभी भावनाओं से ग्रस्त होकर अपना पिंड नही छुड़ा पा रहे हैं, जिसकी एक झलक नीचे दी गई पंक्तियों में देखने को मिलती हैं–

''खानदानी बामण त है गई नौकर,
पितलिया पतड़िया हैगी घर–घर। '' [5]

पं० श्यामचरणदत्त की पहचान कुमांउनी लोककवि के रूप में की जाती है। उन्होंने कुमांउनी के साथ–साथ हिन्दी में भी लेखनकार्य किया हैं। इनका काव्य संग्रह 'दातुलै की धार' नाम से प्रकाशित हुआ है जिसमें इन्होंने सरस कविताओं का वर्णन किया है। 'कौ सुवा काथ कौ' कविता में इन्होंने स्वतंत्रता के पश्चात् देश में होने वाली भ्रष्ट राजनीति के प्रति अपना तीखा व्यंग्य करते हुए समाज में व्याप्त भ्रष्ट राजनीति और भ्रष्ट उच्च्य अधिकारियों की अपने काम के प्रति उदासीनता को बखूबी रूप से निम्न पंक्तियों के माध्यम से उजागर किया है और समाज को एक नयी दिशा देना का प्रयास किया है–

'' उथकै तन्खा ल्हिनीं, नी करना काम,
टी० ए० मोटर को आराम।
फाइलन में छन फीता लाल,

एसिक रूपैं सब करनी हलाल। '' [6]

श्यामचरण जी समसमायिक विषयों के अतिरिक्त समाज सुधारक के रूप में कार्य किया हैं। इनकी कविताओं में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना के स्वरों की गूँज स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।

रामदत्त पंत कुमांउनी कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवियों की श्रेणी में से एक गिने जाते है इनका नाम कुमांउनी साहित्य में प्रमुखता से लिया जाता है, इनकी कविता में रूढ़िग्रस्त हिन्दू समाज की अवेहलना की गई है पंत जी की अधिकांश कविताऐं समाजिक चेतना एवं राजनीतिक भावना से ओत–प्रोत होती नजर आती है। 'गाँधी गीत' कविता में पंत जी गांधी जी के नेतृत्व में हिन्दू समाज की रूढ़िगत मान्यताओं से आजादी दिलाने के लिए सभी युवाओं का आह्वान करते नजर आते है–

''उठौ रे ज्वानो लियो नगारा निशाण,
रणसींग बजाओं अब अल्सेट क्ये छ।
पछिल नि चैबेर अघिल कै हिटो,
मुखिया का हुकुम में सब मरि मिटो।'' [7]

एक कवि अपने युग से बड़ी संजीदगी से जुड़ा रहता हैं। अतीत से वह खाद–पानी लेते हुए वर्तमान को जीता है, और भविष्य के सुनहरे सपने बुनता है। मानवीय सरोकारों के प्रति और बेहतर युग निर्माण की परिकल्पना उसके काव्य में समय–समय पर परिलक्षित होती नजर आती हैं। एक कवि की रचना तभी सार्थक हो पाती है, जब वह समाजिक यथार्थ को बेहतर ढ़ग अपने साहित्य में उजागर कर सके। अतः कहा जा सकता है कि, काव्य सौराष्ठ एवं सामाजिक चेतना की दृष्टि से कुमांउनी कवियो ने अपनी कविताओं में सामाजिक जीवन की चेतना को प्रभावी रूप से अंकित किया हैं। इन कवियों ने बदलते सामाजिक संदर्भों को आधुनिक दृष्टिकोण से देखा–परखा है और उसे अपनी कविताओं के माध्यम से यथार्थ रूप देना का प्रयास किया है।

संदर्भ–

1. डॉ० केशवदत्त रूवाली– कुमांनी भाषा और संस्कृति, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो माल रोड, अल्मोड़ा–263601(उ०प्र०), ब्राचः A/2,71/B, लारेन्स रोड, दिल्ली, संस्करण–1994, पृ. सं.–153
2. डॉ० दिनेश चन्द्र बलूनी– उत्तरांचलः लोकजीवन इतिहास एवं पुरातत्व, प्रकाशक बुक डिपो, बड़ा बाजार बरेली– 243003, प्रथम संस्करण–2001, पृ. सं.–284
3. डॉ० केशवदत्त रूवाली– कुमांनी भाषा और संस्कृति, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो माल रोड, अल्मोड़ा–263601(उ०प्र०), ब्राचः A/2,71/B, लारेन्स रोड, दिल्ली, संस्करण–1994, पृ. सं.–153
4. डॉ० शेरसिंह बिष्ट, डॉ० सुरेन्द्र जोशी–जनपदीय भाषा साहित्य, अंकित प्रकाशन चन्द्रावती कालोनी पीलीकोठी, हल्द्वानी–263139,प्रथम संस्करण–2005, पृ. सं.–56
5. डॉ० शेरसिंह बिष्ट, डॉ० सुरेन्द्र जोशी–जनपदीय भाषा साहित्य, अंकित प्रकाशन चन्द्रावती कालोनी पीलीकोठी, हल्द्वानी–263139,प्रथम संस्करण–2005, पृ. सं.–56
6. डॉ० केशवदत्त रूवाली– कुमांनी भाषा और संस्कृति, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो माल रोड, अल्मोड़ा–263601(उ०प्र०), ब्राचः A/2,71/B, लारेन्स रोड, दिल्ली, संस्करण–1994, पृ. सं.–155
7. डॉ० शेरसिंह बिष्ट, डॉ० सुरेन्द्र जोशी–जनपदीय भाषा साहित्य, अंकित प्रकाशन चन्द्रावती कालोनी पीलीकोठी, हल्द्वानी–263139,प्रथम संस्करण–2005, पृ. सं.–61

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 14-17
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ੈਗਤ ਅਧਿਐਨ

ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ (ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ),
ਡੀ.ਏ.ਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿੱਚ ਮਾਰਕਸਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਉੱਘਾ ਲੇਖਕ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੇ 1967 ਵਿਚ ਭਾਰਤੀ ਪੰਜਾਬ ਤੋਂ ਕਨੇਡਾ ਵਿੱਚ ਪਰਵਾਸ ਕੀਤਾ। ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਸਾਹਿਤਕ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦੁਆਰਾ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿੱਚ ਅਮੁੱਲ ਵਾਧਾ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦਾ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀਕਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਸਥਾਨ ਹੈ। ਲੰਮੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਵਿਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਰਹਿਣ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪਰਵਾਸੀ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਦਰਪੇਸ਼ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਦਾ ਨਿੱਜੀ ਤਜਰਬਾ ਬਹੁਤ ਹੈ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਉਹ ਅਕਸਰ ਵਿਚਰਦਾ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਦੁੱਖ-ਸੁੱਖ ਸਾਂਝੇ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਪਰਵਾਸ ਜੁਗਾਂ ਜੁਗਾਂਤਰਾਂ ਤੋਂ ਚਲਿਆ ਆ ਰਿਹਾ ਅਜਿਹਾ ਵਰਤਾਰਾ ਹੈ ਜਿਸ ਅਧੀਨ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਜਨਮ ਸਥਾਨ ਨੂੰ ਛੱਡ ਕੇ ਆਪਣੇ ਵਧੀਆ ਭਵਿੱਖ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਲਈ ਵਿਦੇਸ਼ ਦੀ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਡੇਰੇ ਲਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਉਥੇ ਰਹਿੰਦੇ ਇਹਨਾਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਕਈ ਵਾਰ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰਿਆਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਵੀ ਕਰਨਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਦੇ ਨਾਲ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਤੰਗੀਆਂ ਤੁਰਸ਼ੀਆਂ ਭਰਿਆ ਜੀਵਨ ਵੀ ਬਤੀਤ ਕਰਨਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਧਰਤੀ ਦਾ ਮੋਹ, ਘਰ ਅਤੇ ਉੱਥੇ ਰਹਿੰਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦਾ ਵਿਛੋੜਾ ਵੀ ਪਰੇਸ਼ਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਪਰਵਾਸੀ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕ ਵੇਦਨਾ ਨੂੰ ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਆਪਣੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਬਹੁਤ ਕਲਾਤਮਿਕ ਤਰੀਕੇ ਨਾਲ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਆਪਣੇ ਦੇਸ਼ ਤੋਂ ਵਿਦੇਸ਼ ਗਏ ਲੋਕਾਂ ਨੇ ਹੱਡ ਭੰਨਵੀਂ ਮਿਹਨਤ ਕਰਕੇ ਚਾਹੇ ਕਿੰਨੀਆਂ ਹੀ ਉੱਚੀਆਂ ਬੁਲੰਦੀਆਂ ਨੂੰ ਛੂਹ ਲਿਆ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪਰਾਈ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰੇ ਅਤੇ ਹੋਰ ਭੇਦਭਾਵ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋਣਾ ਹੀ ਪਿਆ ਹੈ। ਨਸਲਵਾਦ ਤੋਂ ਮਤਲਬ ਆਦਮੀ ਨਾਲ ਧਰਮ,ਜਾਤ ਅਤੇ ਰੰਗ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਵਿਤਕਰਾ ਕਰਨਾ। ਨਸਲੀ ਭੇਦ ਭਾਵ ਇੱਕ ਅੰਤਰ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਮੁੱਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਬਾਰੇ ਸਾਡੇ ਸਾਹਿਤ ਸਿਰਜਣਾ ਵਿੱਚ ਭਾਵੇਂ ਕਾਫ਼ੀ ਕੁੱਝ ਲਿਖਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਪਰ ਬੁਨਿਆਦੀ ਵਿਤਕਰੇ ਦੀ ਸਮੱਸਿਆ ਜਿਉਂ ਦੀ ਤਿਉਂ ਬਣੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਨੂੰ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਕਰਕੇ ਭਾਰਤੀ ਲੋਕਾਂ ਵੱਲੋਂ ਹੰਢਾਏ ਜਾ ਰਹੇ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰੇ ਦਾ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਭਿੰਨ- ਭਿੰਨ ਪੱਖਾਂ ਤੋਂ

ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਗੋਚਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰੇ ਬਾਰੇ ਵਿਚਾਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਨਾ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਅਸੀਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਕੋਈ ਅਜਿਹਾ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਨਸਲ ਕਿਸੇ ਦੂਸਰੀ ਨਸਲ ਨਾਲੋਂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸਮਾਜਿਕ ਬੌਧਿਕ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ ਤੌਰ ਤੇ ਉੱਤਮ ਸਮਝਦੀ ਹੈ। ਅਜਿਹਾ ਵਿਤਕਰਾ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰਾ ਕਹਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰੇ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਮਨੁੱਖ ਨਫ਼ਰਤ, ਗਰੀਬੀ ਅਤੇ ਗੁਲਾਮੀ ਆਦਿ ਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਗੁਜ਼ਰਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਮਾਨਸਿਕ ਸੰਤਾਪ ਭੋਗਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਆਪਣੀਆਂ ਭਾਵਨਾਤਮਕ ਸੁਰੱਖਿਆ ਲਈ ਵਿਦੇਸ਼ ਗਏ ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਲਿਖਤਾਂ ਦੁਆਰਾ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਅਭੀਵਿਅਕਤ ਕੀਤਾ। ਬੇਸ਼ੱਕ ਇਹਨਾਂ ਪਰਵਾਸੀ ਲੇਖਕਾਂ ਵਿੱਚ ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਰਹਿੰਦਿਆਂ ਹੀ ਆਪਣੀ ਭਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤ ਨਾਲ ਮੋਹ ਸੀ ਪਰੰਤੂ ਵਿਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਵਸ ਕੇ ਉਥੋਂ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਕੇ ਇਹਨਾਂ ਵਿੱਚ ਸਾਹਿਤ ਸੰਵੇਦਨਾ ਹੋਰ ਜਿਆਦਾ ਤੀਬਰ ਹੋ ਗਈ।

ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀ 'ਜੁੱਤੀ ਦੇ ਜਾਰ' ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਗੋਰਿਆਂ ਵੱਲੋਂ ਕੰਮ ਉੱਪਰ ਇੰਡੀਅਨ ਲੋਕਾਂ ਨਾਲ ਵਿਤਕਰਾ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ 'ਉਹ' ਪਾਤਰ ਨੂੰ 'ਜੈਕ' ਨਾਮ ਦਾ ਗੋਰਾ ਵਿਅਕਤੀ ਹਰ ਰੋਜ਼ ਪਰੇਸ਼ਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਕਰਕੇ 'ਉਹ' ਵਿਅਕਤੀ ਮੈਨੇਜਰ ਨੂੰ ਸ਼ਿਕਾਇਤ ਕਰਦਾ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਮੈਨੇਜਰ ਵੀ ਗੋਰਾ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਉਸਦੀ ਕੋਈ ਗੱਲ ਨਹੀਂ ਸੁਣਦਾ। ਆਰਥਿਕ ਪੱਖੋਂ ਗਰੀਬ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਭਾਰਤ ਜਾਂ ਹੋਰ ਦੇਸ਼ਾਂ ਤੋਂ ਵਿਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿੱਚ ਆਏ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਗੋਰੇ ਗੁਲਾਮ ਕਹਿ ਕੇ ਬੁਲਾਉਂਦੇ ਸਨ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅਜਿਹੇ ਮਾਹੌਲ ਵਿੱਚ ਰਹਿਣਾ ਅਤੇ ਕੰਮ ਕਰਨਾ ਵਿਅਕਤੀ ਨੂੰ ਹਰ ਪਲ ਬੇਗਾਨਗੀ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ ਕਰਵਾਉਂਦਾ ਸੀ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਕਹਾਣੀ 'ਰਾਖੇ' ਵਿੱਚ 'ਹਰਨਾਮ ਸਿੰਘ' ਅਤੇ ਉਸ ਦੀ ਪਤਨੀ 'ਦਇਆ ਕੌਰ' ਦੋਵੇਂ ਘਰ ਵਿੱਚ ਇਕੱਲੇ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿਉਂਕਿ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਬੱਚੇ ਵਿਆਹ ਕਰਵਾ ਕੇ ਅਲੱਗ ਰਹਿਣ ਅਲੱਗ ਪਏ ਹਨ। ਦੋਵੇਂ ਬਜ਼ੁਰਗ ਰਾਤ ਨੂੰ ਇਕੱਲੇ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਚੈਨ ਨਾਲ ਸੌਂ ਵੀ ਨਹੀਂ ਸਕਦੇ ਅਤੇ ਪਰੇਸ਼ਾਨ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿਉਂਕਿ ਗੋਰੇ ਲੋਕ ਰਾਤ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੇ ਘਰਾਂ ਉੱਪਰ ਪੱਥਰ ਮਾਰ ਕੇ ਸ਼ੀਸ਼ੇ ਤੋੜ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਹਰਨਾਮ ਸਿੰਘ ਦੇ ਘਰ ਦੇ ਸ਼ੀਸ਼ੇ ਪਹਿਲਾਂ ਵੀ ਕਈ ਵਾਰ ਭੰਨ ਦਿੱਤੇ ਗਏ ਸਨ। ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਨਾਲ ਹੁੰਦੀਆਂ ਅਜਿਹੀਆਂ ਦੁਰਘਟਨਾਵਾਂ ਦਾ ਪੁਲਿਸ ਵੀ ਸਾਥ ਨਹੀਂ ਦਿੰਦੀ। ਉਹ ਵੀ ਗੋਰੀ ਕੌਮ ਦੀ ਹਾਮੀ ਭਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਗੋਰੇ ਡਰਦੇ ਨਹੀਂ ਸਨ। ਗੋਰਿਆਂ ਦੀ ਮਦਦ ਵਾਸਤੇ ਪੁਲਿਸ ਹਰ ਵੇਲੇ ਤਿਆਰ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਆਮ ਲੋਕਾਂ ਦੀਆਂ ਤਕਲੀਫਾਂ ਦੀ ਕੋਈ ਪਰਵਾਹ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ 'ਦਇਆ ਕੌਰ' ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਦੀ ਗੱਲ ਦੱਸਦੀ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ:-

" ਆਖੇ ਗੁਰਦੁਆਰੇ ਵਾਲਿਆਂ ਨੇ ਦੋ ਤਿੰਨ ਗੋਰਿਆਂ ਦੇ ਛੋਕਰੇ ਜਿਹੜੇ ਆਉਂਦੇ ਜਾਂਦੇ ਨੂੰ ਗਾਲ੍ਹਾਂ ਕੱਢਦੇ ਰਹਿੰਦੇ ਸੀ, ਫੜ ਕੇ ਪੁਲਿਸ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਦੇ ਦਿੱਤੇ ਤੇ ਪੁ0ਲਿਸ ਵਾਲਿਆਂ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਦੇਖਦਿਆਂ ਹੀ ਮੁੰਡੇ ਕਾਰ 'ਚ ਛੱਡ ਦਿੱਤੇ।"[1]

ਇਸ ਤੋਂ ਪਤਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਪੁਲਿਸ ਵੀ ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰੇ ਵਿੱਚ ਪੂਰਾ ਹੱਥ ਰੱਖਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਗੋਰਿਆਂ ਦੀ ਗਲਤੀ ਹੋਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਵੀ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਕੋਈ ਸਜ਼ਾ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤੀ ਜਾਂਦੀ। ਇਸੇ ਵਿਤਕਰੇ ਕਰਕੇ ਹੀ ਪੰਜਾਬੀ ਪਰਾਈ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਸੁਰੱਖਿਅਤ ਨਹੀਂ ਸਮਝਦੇ ਅਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਰਾਤਾਂ ਦੀ ਨੀਂਦ ਵੀ ਉੱਡ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀਆਂ ਕਈ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਭੂ-ਹੇਰਵਾ ਵੀ ਸਪੱਸ਼ਟ ਵਰਨਣ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ। ਭੂ-ਹੇਰਵਾ ਅਤੀਤ ਦੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਮੁੱਲਾਂ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਮੋਹ ਦੀ ਸਥਾਪਤੀ ਦਾ ਰਿਸ਼ਤਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਘਰ ਅਤੇ ਪਿੰਡ ਦੇ ਵਿਛੋੜੇ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ। ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਵੀ ਆਪਣੇ ਪਿੰਡ ਵਾਪਿਸ ਨਹੀਂ ਪਰਤ ਸਕਦੇ। ਅਸਲ ਵਿੱਚ ਭੂ-ਹੇਰਵੇ ਦਾ ਸੰਤਾਪ ਹੰਢਾਉਂਦੇ ਪੰਜਾਬੀ ਆਪਣੇ ਬੀਤੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਹੀ ਮੁੜ ਕੇ ਜਿਉਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਉਸ ਦੀ

ਕਹਾਣੀ 'ਫੌਜੀ ਬੰਤਾ ਸਿੰਘ' ਵਿੱਚ 'ਬੰਤਾ ਸਿੰਘ' ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਨਾਲ ਕਈ ਸਾਲਾਂ ਤੋਂ ਕੈਨੇਡਾ ਵਿੱਚ ਰਹਿ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਉਸਦੇ ਪਰਿਵਾਰ ਵਿੱਚ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਜਨਮੇ ਬੱਚੇ ਉਸ ਦੀ ਕਦਰ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ ਅਤੇ ਉਹ ਇਕੱਲਤਾ ਦਾ ਸੰਤਾਪ ਹੰਢਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਦੀਆਂ ਅੱਖਾਂ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਜਨਮ ਭੂਮੀ ਲਈ ਪਿਆਰ ਅਤੇ ਖਿੱਚ ਸਾਫ਼ ਝਲਕਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਲੰਮੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਵਿਦੇਸ਼ ਵਿੱਚ ਵਸਦੇ ਪਹਿਲੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦੇ ਬਜ਼ੁਰਗਾਂ ਵਿੱਚ ਭੂ-ਹੇਰਵੇ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਵਧੇਰੇ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਉਹ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਆਖਰੀ ਸਾਹਾਂ ਤੱਕ ਕਾਇਮ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ 'ਬਰਫ ਦਾ ਗੀਤ' ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪਾਤਰ 'ਚਰਨ ਸਿੰਘ'ਨੂੰ ਲੰਬੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਮਗਰੋਂ ਪਰਦੇਸ ਵਿੱਚ ਵਧੀਆ ਰੁਜ਼ਗਾਰ ਚਾਹੇ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋ ਗਿਆ ਪਰੰਤੂ ਫਿਰ ਵੀ ਉਹ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਮਿੱਟੀ ਨੂੰ ਦਿਲੋਂ ਨਹੀਂ ਕੱਢ ਸਕਦਾ,ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਬਲਵੰਤ ਨੂੰ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ:-

" ਮੈਂ ਤਾਂ ਸੋਚਦਾ ਸੀ ਹੁਣ ਚਾਰ ਪੈਸੇ ਹੱਥ 'ਚ ਹੈਗੇ ਆ ਆਪਾਂ ਸਾਰਾ ਟੱਬਰ ਦੇਸ਼ ਗੇੜਾ ਮਾਰ ਆਉਨੇ ਆ। ਨਾਲੇ ਮੇਰੇ ਦਿਲ 'ਚ ਸੀ ਪਈ ਆਪਣੇ ਬਾਹਰਲੇ ਖੂਹ ਲੱਗਦੇ ਦੋ ਖੱਤੇ ਭਗਤੂ ਅਮਲੀ ਕੋਲੋਂ ਲੈ ਲੈਂਦੇ, ਉਹਨੇ ਤਾਂ ਹੋਰ ਸਾਲ ਖੰਡ ਤਾਈ ਕਿਸੇ ਨਾ ਕਿਸੇ ਨੂੰ ਦੇ ਈ ਦੇਣੇ ਆ। "[2]

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਆਪਣੀ ਧਰਤੀ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਰਹਿਣ ਲਈ ਪਿੰਡ ਜਾ ਕੇ ਹੋਰ ਜਮੀਨ ਲੈਣ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਆਪਣੀ ਜਨਮ ਭੂਮੀ ਨਾਲ ਪਿਆਰ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਇਹ ਪੀੜ੍ਹੀ ਵਾਪਿਸ ਆਪਣੀ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਵੀ ਨਹੀਂ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਹੀ ਭੂ-ਹੇਰਵੇ ਦਾ ਸੰਤਾਪ ਭੋਗਦੀ ਹੈ।

ਅਜੋਕੇ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਜਿੱਥੇ ਪੈਸਾ ਪ੍ਰਧਾਨ ਹੈ ਉੱਥੇ ਵਿਆਹ ਅਤੇ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦਾ ਵੀ ਵਪਾਰੀਕਰਨ ਹੋਣ ਲੱਗ ਗਿਆ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਔਰਤ ਪਰਾਈ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਆਪਣੀ ਜਨਮ ਭੂਮੀ ਤੋਂ ਵਿਆਹ ਦੀ ਕਾਨੂੰਨੀ ਆੜ ਹੇਠ ਵਿਸਥਾਪਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਪਰ ਵਿਆਹ ਉਹਲੇ ਹੋਇਆ ਸੌਦਾ ਮਾਪਿਆਂ ਦੀ ਸਵਾਰਥੀ, ਖੁਦਗਰਜ਼ੀ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ ਉਸ ਨੂੰ ਪਰਾਈ ਧਰਤੀ ਉੱਪਰ ਜਾ ਕੇ ਬੇਗਾਨੇ ਚੁਗਿਰਦੇ, ਅਣਜੋੜ ਵਿਆਹ, ਪਤੀ ਵੱਲੋਂ ਤ੍ਰਿਸਕਾਰ ਦੀ ਭਾਵਨਾ,ਬੇਵਸੀ ਅਤੇ ਲਾਚਾਰੀ ਦੀ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਪਹੁੰਚ ਕੇ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਉਦੋਂ ਬਹੁਤ ਦੇਰ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਆਰਥਿਕ ਤੌਰ ਤੇ ਪਛੜੇ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀਆਂ ਔਰਤਾਂ ਨੇ ਜਦੋਂ ਪੱਛਮੀ ਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਤਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰਿਕ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਨੂੰ ਵੱਡਾ ਝਟਕਾ ਲੱਗਿਆ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਪਰਵਾਸੀ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਤਬਾਹਕੁੰਨ ਤਬਦੀਲੀ ਵਾਪਰਦੀ ਹੈ। ਵਿਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਖੁੱਲ੍ਹ ਕਾਰਨ ਪੰਜਾਬੀ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਤ੍ਰੇੜਾਂ ਆਉਂਦੀਆਂ ਹਨ ਤੇ ਉਹ ਇੱਕ ਤੋਂ ਵੱਧ ਵਿਆਹ ਕਰਵਾਉਂਦੇ ਹਨ ਜਾਂ ਤਲਾਕ ਲੈ ਕੇ ਪਤੀ ਪਤਨੀ ਅਲੱਗ ਅਲੱਗ ਰਹਿਣ ਲੱਗਦੇ ਹਨ। ਔਰਤ ਨੂੰ ਹਮੇਸ਼ਾ ਆਪਣੇ ਪੈਰ ਦੀ ਜੁੱਤੀ ਬਣਾ ਕੇ ਰੱਖਣ ਵਾਲਾ ਮਰਦ ਔਰਤ ਦੀ ਬਰਾਬਰੀ ਨੂੰ ਬਰਦਾਸ਼ਤ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ। ਪਤੀ ਪਤਨੀ ਦੇ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਆ ਰਹੀਆਂ ਤ੍ਰੇੜਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਸਪੱਸ਼ਟ ਦੇਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀ ਕਹਾਣੀ 'ਦਿਨ ਕਟੀ' ਵਿੱਚ 'ਮੈਂ' ਪਾਤਰ ਤੇ ਉਸ ਦੀ ਪਤਨੀ 'ਜਸਵੰਤ' ਦੀ ਆਪਸ ਵਿੱਚ ਘੱਟ ਬਣਦੀ ਹੈ। ਪੱਛਮੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅਧੀਨ ਉਹ ਇੱਕ ਦੂਸਰੇ ਨਾਲ ਰਹਿ ਕੇ ਪਹਿਲਾਂ ਜਿੰਨੇ ਖੁਸ਼ ਨਹੀਂ ਸਨ,ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹ ਅਲੱਗ ਅਲੱਗ ਰਹਿਣ ਦਾ ਫੈਸਲਾ ਕਰਦੇ ਹਨ ਅਤੇ ਤਲਾਕ ਲੈ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। ਮਰਦ ਆਪਣੀ ਮਰਜ਼ੀ ਜਾਂ ਮਸਤੀ ਭਰਿਆ ਜੀਵਨ ਬਤੀਤ ਕਰਨ ਲਈ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਨੂੰ ਤਲਾਕ ਦੇ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਸ ਦੀ 'ਚੱਕਰ' ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ 'ਬਾਸ' ਨਾਂ ਦਾ ਪਾਤਰ ਹੈ ਜੋ 'ਡੇਲ' ਪਾਤਰ ਰਾਹੀਂ ਭਾਰਤ ਤੋਂ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਨੂੰ ਮੰਗਵਾਉਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਉਹ ਭਾਰਤ ਜਾ ਕੇ ਦੂਸਰਾ ਵਿਆਹ ਕਰਵਾ ਆਇਆ ਸੀ। ਉਸ ਦੀ

ਆਪਣੀ ਪਹਿਲੀ ਪਤਨੀ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਬਣਦੀ ਅਤੇ ਦੋਹਾਂ ਵਿਚਕਾਰ ਹਰ ਰੋਜ਼ ਝਗੜਾ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਉਹ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਨੂੰ ਸੁਧਾਰਨ ਲਈ 'ਡੇਲ' ਨੂੰ ਪੈਸੇ ਦੇ ਕੇ ਆਪਣਾ ਕੰਮ ਕਰਵਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਡੇਲ ਆਪਣੇ ਦੋਸਤਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਦੱਸਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਾਸ ਦੀ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਬਣਦੀ। ਉਹ ਸ਼ਰਾਬ ਪੀ ਕੇ ਉਸਦੇ ਭਰਾਵਾਂ ਨੂੰ ਗਾਲਾਂ ਕੱਢਦਾ ਹੈ,ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹ ਦੁਖੀ ਹੋ ਕੇ ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਨੂੰ ਘਰੋਂ ਬਾਹਰ ਕੱਢ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਡੇਲ ਆਪਣੇ ਦੋਸਤ ਨੂੰ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ :-

" ਤੋ ਯੇ ਸਾਬ ਬੋਲੇ ਕਿ ਮੈਂ ਆਪਨੀ ਜਨਾਨੀ ਕੋ ਸਬਕ ਸਿਖਾਨਾ ਚਾਹਤਾ ਹੂੰ। ਤੋ ਏਸ ਨੇ ਮੁਝੇ ਦੱਸਿਆ ਕਿ ਜਬ ਪਿਛਲੇ ਸਾਲ ਦੇਸ਼ ਕੋ ਗਿਆ ਥਾ ਤਾਂ ਵਹਾਂ ਏਕ ਔਰਤ ਸੇ ਸ਼ਾਦੀ ਰਚਾ ਲੀ ਏ ਨੇ।.......ਜਦੋਂ ਦਾ ਦੇਸ਼ੋਂ ਆਇਆ ਆਪਣੀ ਜਨਾਨੀ ਦੇ ਨਾਲ ਈ ਰਹੀ ਜਾਂਦਾ ਆ ਪਰ ਉਹਨੂੰ ਦੱਸਿਆ ਕੁਛ ਨਹੀਂ? "[3]

ਇਸ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ 'ਡੇਲ' ਪਾਤਰ ਦੁਆਰਾ ਸ਼ਰਾਬ ਪੀ ਕੇ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਦੀ ਕੁੱਟਮਾਰ ਵੀ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ ਕਿਉਂਕਿ ਉਹ ਸੋਚਦਾ ਸੀ ਕਿ ਮਰਦ ਦੁਆਰਾ ਔਰਤ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਅਧੀਨ ਰੱਖਣਾ ਪਹਿਲਾਂ ਤੋਂ ਚੱਲਦਾ ਵਰਤਾਰਾ ਹੀ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪਰਵਾਸੀ ਮਰਦ ਆਪਣੀਆਂ ਪੀੜ੍ਹੀਆਂ ਤੋਂ ਚਲਦੀ ਆ ਰਹੀ ਸੋਚ ਨੂੰ ਔਰਤ ਉੱਪਰ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹੀ ਲਾਗੂ ਕਰਨਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਨ,ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਵਡੇਰੇ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਪਰੰਤੂ ਫਿਰ ਵੀ ਕਾਫ਼ੀ ਹੱਦ ਤੱਕ ਔਰਤਾਂ ਇਸ ਜ਼ੁਲਮ ਨੂੰ ਬਰਦਾਸ਼ਤ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਜਦ ਉਹ ਪੱਛਮੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅਧੀਨ ਚੇਤੰਨ ਹੋ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ ਤਾਂ ਤਲਾਕ ਵੀ ਲੈ ਲੈਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਮਰਦ ਪ੍ਰਧਾਨ ਸੋਚ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਨਿਘਾਰ ਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅਸੀਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਨੇ ਆਪਣੇ ਕਹਾਣੀ ਸੰਗ੍ਰਹਿਆਂ ਵਿੱਚ ਵਿਕਸਿਤ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਢਾਂਚੇ ਵਿੱਚ ਸਥਾਪਿਤ ਹੋ ਚੁੱਕੇ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੀਆਂ ਮਾਨਸਿਕ ਗੁੰਝਲਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਵਸਤੂ ਬਣਾਇਆ ਹੈ। ਇਹਨਾਂ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਪਰਵਾਸੀ ਜੀਵਨ ਦੇ ਅਨੇਕਾਂ ਸਰੋਕਾਰ ਮਿਲਦੇ ਹਨ।

ਹਵਾਲੇ

1. ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ, ਕਿਸ ਦਾ ਕਸੂਰ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਪੰਜਾਬੀ ਭਵਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ, 2001, ਪੰਨਾ 100
2. ਸਾਧੂ ਬਨਿੰਗ, ਲੀਹੋਂ ਲੱਥੇ, ਰਵੀ ਸਾਹਿਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਹਾਲ ਬਾਜ਼ਾਰ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, 1994, ਪੰਨਾ 57-58
3. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ 126

ਮੋ. 9464212113

ਈਮੇਲ. Lakhwinderbrar5775@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 18-22
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

स्वतंत्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता :उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ

डॉ. प्रतिभा राय,
असि॰ प्रो॰ बीएड,
सेंट पाल टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, बिरसिंहपुर समस्तीपुर, बिहार- 848102

शोधसार- प्रस्तुत शोध आलेख में स्वतंत्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के विभिन्न पहलुओं - संवैधानिक ढांचे, न्यायिक दृष्टिकोण, सामाजिक प्रभाव तथा डिजिटल माध्यमों के संदर्भ में - का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है। इस विश्लेषण में हमने जहाँ एक ओर इस मौलिक अधिकार की विभिन्न उपलब्धियों को रेखांकित किया है, वहीं दूसरी ओर समकालीन परिदृश्य में उभरती चुनौतियों पर भी संतुलित विवेचन प्रस्तुत किया है। आलेख में प्रयुक्त तथ्यात्मक सामग्री का आधार सर्वोच्च न्यायालय के ऐतिहासिक निर्णय, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे Reporters Without Borders की World Press Freedom Index 2025 तथा Freedom House की वार्षिक रिपोर्ट Freedom in the World 2025, और वर्तमान घटनाक्रम हैं। इस अध्ययन का मूल उद्देश्य पाठक वर्ग को अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य की गतिशील प्रकृति से परिचित कराना तथा लोकतांत्रिक मूल्यों की सुरक्षा हेतु सार्थक चर्चा को आगे बढ़ाना है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सभी अधिकारों की जननी मानी जाती है। यह सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक मुद्दों पर जनमत तैयार करती है। मेनका गांधी बनाम भारत संघ मामले में न्यायमूर्ति ने वाक स्वतंत्रता पर बल प्रदान करते हुए कहा कि लोकतंत्र मुख्य रूप से बातचीत एवं बहस पर आधारित है तथा लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देश में सरकार की कार्यवाही के उपचार हेतु यही एक उचित व्यवस्था है। अगर लोकतंत्र का मतलब लोगों का, लोगों द्वारा शासन है तो स्पष्ट है कि हर नागरिक को लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेने का अधिकार है और अपनी इच्छा से चुनने के बौद्धिक अधिकार के लिये सार्वजनिक मुद्दों पर स्वतंत्र विचार, चर्चा और बहस ज़रूरी है। इससे न सिर्फ लोकतंत्र को मज़बूती प्रदान की गई है बल्कि तार्किक चयन की स्वतंत्रता प्रदान कर बाज़ार-आधारित अर्थव्यवस्था के विकास, समाज में संवाद अंतराल और सामाजिक तनाव को कम किया है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जब अपनी सीमा का उल्लंघन करती है तो सामाजिक अराजकता का कारण बनती है।

कीवर्ड्स- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेस की आजादी, युक्तियुक्त प्रतिबंध, राजद्रोह कानून, मानहानि के प्रावधान, इंटरनेट की बंदी, सूचना प्राप्ति का अधिकार, न्यायिक फैसले, मीडिया का स्वामित्व, स्व-सेंसरशिप की प्रवृत्ति

प्रस्तावना

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मतलब है कि हर व्यक्ति को अपने विचार, राय और भावनाओं को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने का अधिकार है। यह अधिकार किसी भी माध्यम से हो सकता है —बोलकर लिखकर, कला के माध्यम से, या अन्य किसी तरीके से। यह अधिकार संविधान और कानूनी व्यवस्था द्वारा सुरक्षित होता है और यह किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था का मूलभूत अंग है।

लोकतांत्रिक समाज में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्व अपार है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्वं कई तरीकों से समझा जा सकता है। सबसे पहले, यह जनता की आवाज़ है। लोकतंत्र का आधार जनता की संप्रभुता पर टिका होता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बिना, जनता अपनी आवाज़ को प्रकट नहीं कर सकती। यह स्वतंत्रता नागरिकों को अपनपे विचारों को साझा करने, सरकारी नीतियों पर टिप्पणी करने और नेताओं की आलोचना करने की अनुमति देती है। इससे सरकार को जनता की भावनाओं और आवश्यकताओं का पता चलता है।

आजाद भारत में विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को लोकतंत्र की धुरी माना गया है। हमारे संविधान में अनुच्छेद 19(1)(a) के माध्यम से प्रत्येक नागरिक को यह मूलभूत अधिकार प्रदत्त किया गया है कि वह अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त कर सके। यह अधिकार महज बोलने-लिखने या छापने तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें समाचार माध्यमों की आजादी, जानकारी हासिल करने का अधिकार, और आधुनिक डिजिटल युग में ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स पर अपनी बात रखने की स्वतंत्रता भी समाहित है। आजादी के बाद के सात दशकों में इस अधिकार ने देश को एक जीवंत एवं सशक्त लोकतंत्र के रूप में स्थापित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

हालांकि, यह समझना आवश्यक है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कोई असीमित या निरपेक्ष अधिकार नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 19(2) में राज्य को यह अधिकार दिया गया है कि वह देश की संप्रभुता और अखंडता, सार्वजनिक व्यवस्था, शालीनता, नैतिकता, न्यायालय की अवमानना, मानहानि आदि के आधार पर इस अधिकार पर युक्तियुक्त प्रतिबंध लगा सकता है। दुर्भाग्यवश, कई बार इन प्रतिबंधों का उपयोग असहमति की आवाजों को दबाने के लिए किया जाता है।

आज के समय में हम देखते हैं कि राजद्रोह से जुड़े कानूनी प्रावधान, मानहानि के मुकदमे, इंटरनेट सेवाओं की बंदी, और डिजिटल सेंसरशिप जैसी समस्याएं इस मौलिक अधिकार के समक्ष गंभीर चुनौतियां खड़ी कर रही हैं। वर्ष 2025 के विश्व प्रेस स्वतंत्रता सूचकांक में भारत 151वें स्थान पर आया है, जो पिछले वर्ष के 159वें स्थान से सुधार दर्शाता है, फिर भी वैश्विक परिदृश्य में यह स्थिति" कठिन "श्रेणी में रखी गई है। इसी प्रकार Freedom House की 2025 की रिपोर्ट में भारत को" आंशिक रूप से स्वतंत्र "की श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है, जिसमें पत्रकारों पर बढ़ते हमलों की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है।

प्रस्तुत शोध पत्र में हम स्वतंत्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से जुड़ी उपलब्धियों का विस्तृत लेखा-जोखा प्रस्तुत करेंगे, साथ ही वर्तमान दौर में इस अधिकार के समक्ष उभरती चुनौतियों का भी गहन विश्लेषण करेंगे। इसमें

संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या, ऐतिहासिक न्यायिक निर्णयों का अध्ययन, मीडिया के विकास की यात्रा, तथा समकालीन संकटों की पड़ताल शामिल होगी।

प्रमुख पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या- इस शोध आलेख में प्रयुक्त महत्वपूर्ण शब्दावली को समझना आवश्यक है:

- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से तात्पर्य है व्यक्ति का अपने विचारों, भावनाओं, मान्यताओं तथा धारणाओं को किसी भी माध्यम - चाहे वह मौखिक हो, लिखित हो, मुद्रित हो या डिजिटल - के जरिये व्यक्त करने का अधिकार।
- प्रेस की स्वतंत्रता हालांकि संविधान में स्पष्ट रूप से उल्लिखित नहीं है, किंतु यह अनुच्छेद 19(1)(a) में निहित मानी जाती है। इसका अर्थ है कि समाचार माध्यम सरकारी हस्तक्षेप, दबाव या नियंत्रण से मुक्त होकर जनता को सूचित कर सकें तथा सत्ता की आलोचना कर सकें। यह लोकतंत्र की चौथी स्तंभ के रूप में कार्य करती है।
- युक्तियुक्त प्रतिबंध संविधान के अनुच्छेद 19(2) के तहत राज्य द्वारा लगाए जाने वाले वे प्रतिबंध हैं जो तर्कसंगत, आनुपातिक तथा सार्वजनिक हित में आवश्यक हों। ये प्रतिबंध भारत की संप्रभुता और अखंडता, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध, सार्वजनिक व्यवस्था, शालीनता या सदाचार, न्यायालय की अवमानना, मानहानि या अपराध के लिए उकसावे के संबंध में लगाए जा सकते हैं।
- राजद्रोह का अर्थ है सरकार के विरुद्ध घृणा या असंतोष भड़काना। यह पूर्व में भारतीय दंड संहिता की धारा 124A के अंतर्गत अपराध था, और अब नई भारतीय न्याय संहिता में धारा 152 के रूप में विद्यमान है।
- मानहानि किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को क्षति पहुंचाने वाला कथन या लेखन है। भारतीय कानून में यह आपराधिक) IPC धारा 499-500) तथा दीवानी दोनों प्रकार का अपराध हो सकता है।
- इंटरनेट शटडाउन सरकार द्वारा किसी क्षेत्र में इंटरनेट सेवाओं को अस्थायी रूप से निलंबित करने की कार्रवाई है, जो प्रायः सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने के नाम पर की जाती है। भारत विश्व में सर्वाधिक इंटरनेट शटडाउन करने वाला देश है, जो डिजिटल अभिव्यक्ति को गंभीर रूप से प्रभावित करता है।

उपलब्धियों का विवेचन-

संवैधानिक एवं न्यायिक मील के पत्थर

भारतीय संविधान ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मौलिक अधिकारों में सम्मिलित कर इसे संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया। यह निर्णय अत्यंत दूरदर्शी था क्योंकि इसने लोकतांत्रिक मूल्यों की नींव रखी। स्वतंत्रता के प्रारंभिक वर्षों में ही सर्वोच्च न्यायालय ने इस अधिकार की व्याख्या करते हुए कई ऐतिहासिक निर्णय दिए।

रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य) 1950) के मामले में न्यायालय ने स्पष्ट किया कि प्रेस की स्वतंत्रता अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अभिन्न अंग है। इस निर्णय में न्यायालय ने कहा कि" लोकप्रिय सरकार की सुरक्षा स्वतंत्र अभिव्यक्ति में निहित है। "इसी प्रकार बृज भूषण बनाम दिल्ली राज्य) 1950) के मामले में प्रेस पर पूर्व-प्रतिबंध को असंवैधानिक घोषित किया गया। इन प्रारंभिक निर्णयों ने यह स्पष्ट कर दिया कि भारतीय लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को गंभीरता से लिया जाएगा।

हालांकि इन निर्णयों के बाद संविधान के प्रथम संशोधन) 1951) द्वारा अनुच्छेद 19(2) में परिवर्तन किया गया और" युक्तियुक्त प्रतिबंध "के आधार विस्तृत किए गए, फिर भी न्यायपालिका ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को व्यापक दृष्टिकोण से देखना जारी रखा।

केदार नाथ सिंह बनाम बिहार राज्य) 1962) का मामला राजद्रोह कानून के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने राजद्रोह कानून को संवैधानिक रूप से वैध माना, किंतु साथ ही यह भी स्पष्ट किया कि यह कानून केवल उन्हीं अभिव्यक्तियों पर लागू होगा जो हिंसा भड़काने या सार्वजनिक व्यवस्था बिगाड़ने की प्रवृत्ति रखती हों। सरकार की आलोचना मात्र से राजद्रोह नहीं होता। यह निर्णय आज भी प्रासंगिक है।

बेनेट कोलमैन बनाम संघ) 1973) के मामले में न्यायालय ने प्रेस की स्वतंत्रता को केवल सामग्री प्रकाशित करने तक सीमित न मानकर समाचार पत्रों के परिसंचरण के अधिकार तक विस्तारित किया। न्यायालय ने कहा कि सरकार द्वारा न्यूज़प्रिंट के आयात पर प्रतिबंध प्रेस की स्वतंत्रता का उल्लंघन है।

मेनका गांधी बनाम संघ) 1978) का निर्णय मौलिक अधिकारों की व्याख्या में एक क्रांतिकारी मोड़ था। इस मामले में न्यायालय ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को अनुच्छेद 21 में निहित व्यक्तिगत स्वतंत्रता से जोड़ा और कहा कि मौलिक अधिकार परस्पर संबंधित हैं।

आधुनिक युग में डिजिटल अभिव्यक्ति के संदर्भ में श्रेया सिंघल बनाम संघ) 2015) का निर्णय मील का पत्थर साबित हुआ। इस मामले में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम की धारा 66A को असंवैधानिक घोषित किया गया, जो ऑनलाइन अभिव्यक्ति पर अंकुश लगाती थी। न्यायालय ने कहा कि यह धारा अस्पष्ट, मनमानी तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन करने वाली है।

अनुराधा भसीन बनाम संघ) 2020) के मामले में कश्मीर में लगाए गए इंटरनेट शटडाउन को चुनौती दी गई थी। न्यायालय ने स्वीकार किया कि इंटरनेट तक पहुंच अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का हिस्सा है, और अनिश्चितकालीन शटडाउन को अवैध ठहराया। यह निर्णय डिजिटल युग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मजबूती प्रदान करता है।

मीडिया का विकास और प्रगति

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय मीडिया ने एक लंबी यात्रा तय की है। प्रारंभ में आकाशवाणी और दूरदर्शन पर सरकारी नियंत्रण था, जो सूचना प्रसारण में एकाधिकार बनाए हुए था। 1990 के दशक में आर्थिक उदारीकरण की नीतियों ने निजी समाचार चैनलों के प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया। इससे सरकारी एकाधिकार टूटा और मीडिया में विविधता आई।

सूचना का अधिकार अधिनियम) 2005) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मजबूत करने में महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसने आम नागरिकों को सरकारी सूचनाएं प्राप्त करने का कानूनी अधिकार दिया, जिससे पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ी।

सोशल मीडिया के आगमन ने अभिव्यक्ति को लोकतांत्रिक बनाया। अब केवल पत्रकार ही नहीं, बल्कि आम नागरिक भी अपनी आवाज उठा सकते हैं। ट्विटर, फेसबुक, यूट्यूब जैसे प्लेटफॉर्म्स ने अभिव्यक्ति को व्यापक पहुंच दी है। 2025 तक भारत में हजारों समाचार चैनल, अखबार, डिजिटल प्लेटफॉर्म्स तथा सोशल मीडिया उपयोगकर्ता हैं, जो सूचना और विचारों के प्रसार में विविधता प्रदान करते हैं।

निष्कर्ष :क्या है समाधान?

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कोई उपहार नहीं है जो सरकार ने हमें दिया है, बल्कि यह हमारा वह मौलिक अधिकार है जिसके बिना लोकतंत्र सिर्फ एक खोखला शब्द रह जाएगा। 2025 के आंकड़े और रिपोर्टें हमें चेतावनी दे रही हैं।

सुधार की गुंजाइश कानूनों को सरल बनाने, मीडिया की आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करने और डिजिटल अधिकारों के प्रति संवेदनशील होने में है।

आजादी की इस मशाल को जलाए रखना सिर्फ कोर्ट या पत्रकारों का काम नहीं है, बल्कि यह हर उस नागरिक की जिम्मेदारी है जो एक स्वतंत्र समाज में सांस लेना चाहता है। याद रखिए, लोकतंत्र की खूबसूरती शोर में नहीं, बल्कि हर उस आवाज के सुरक्षित होने में है जो अलग सोच रखती है। लोकतंत्र एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इनमें से किसी पर भी आँच आने पर दूसरा स्वत :ही विलुप्ति की कगार पर पहुँच जाता है, जो जनमत पर तानाशाही की स्थापना को बढ़ावा देता है।

सन्दर्भ सूची

1. Constitution of India. (1950). Art. 19(1)(a). https://www.india.gov.in/my-government/constitution-india
2. Freedom House. (2025). *Freedom in the world 2025: India*. https://freedomhouse.org/country/india/freedom-world/2025
3. Ministry of Law and Justice. (2023). *The Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023*. Gazette of India.
4. Reporters Without Borders. (2025). *2025 World press freedom index*. https://rsf.org/en/index
5. Right to Information Act. (2005). Act No. 22 of 2005.

मो• 9451173282 ईमेल- amitkumarpandey25@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 23-25
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

स्वतंत्रता और जिम्मेदारी: आधुनिक महिला का संतुलन

डॉ० सुकन्या चल्ला
ए पी टी डब्ल्यू आर ई आई एस गर्ल्स, करेडु, प्रकाशम ज़िला।

आधुनिक समय में महिला की स्वतंत्रता केवल एक सामाजिक उपलब्धि नहीं, बल्कि एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया है, जो अनेक संघर्षों, अनुभवों और आंतरिक द्वंद्वों से होकर गुजरती है। आज की महिला शिक्षित है, आत्मनिर्भर है, अपने अधिकारों के प्रति जागरूक है, और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान स्थापित कर रही है। फिर भी, इस स्वतंत्रता के साथ जो जिम्मेदारियों का बोझ जुड़ा हुआ है, वह उसके जीवन को कई बार अत्यंत जटिल बना देता है। यह संतुलन केवल बाहरी परिस्थितियों का नहीं, बल्कि एक गहरे मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक संघर्ष का भी परिणाम है।

एक ओर महिला को यह बताया जाता है कि वह स्वतंत्र है, अपने निर्णय स्वयं ले सकती है, अपने सपनों को साकार कर सकती है; वहीं दूसरी ओर समाज अब भी उससे परंपरागत भूमिकाओं के निर्वहन की अपेक्षा करता है। एक कामकाजी महिला जब अपने करियर में आगे बढ़ने का प्रयास करती है, तो उसे घर और परिवार की जिम्मेदारियों को भी उसी दक्षता के साथ निभाना होता है। यह दोहरी भूमिका उसके लिए कई बार मानसिक तनाव, थकान और आत्म-संदेह का कारण बन जाती है। कार्यस्थल पर उसे अपनी योग्यता सिद्ध करने के लिए पुरुषों की तुलना में अधिक संघर्ष करना पड़ता है, जबकि घर में उसकी मेहनत को अक्सर स्वाभाविक मानकर अनदेखा कर दिया जाता है।

महिलाओं के सामने सबसे बड़ी समस्याओं में से एक है लैंगिक भेदभाव, जो आज भी सूक्ष्म और प्रत्यक्ष दोनों रूपों में मौजूद है। समान योग्यता और क्षमता होने के बावजूद उन्हें समान वेतन नहीं मिलता, पदोन्नति के अवसर सीमित होते हैं, और कई बार उनके निर्णयों को गंभीरता से नहीं लिया जाता। कार्यस्थल पर उत्पीड़न, असुरक्षा की भावना और सामाजिक पूर्वाग्रह उनके आत्मविश्वास को प्रभावित करते हैं। यह केवल शारीरिक सुरक्षा का प्रश्न नहीं है, बल्कि मानसिक सुरक्षा और सम्मान का भी विषय है।

इसके अतिरिक्त, घरेलू जिम्मेदारियों का असमान वितरण भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। आज भी अधिकांश परिवारों में घर के कामों और बच्चों की देखभाल की जिम्मेदारी मुख्यतः महिलाओं पर ही होती है। इससे उनके व्यक्तिगत

समय, विश्राम और आत्मविकास के अवसर सीमित हो जाते हैं। एक महिला जो पूरे दिन कार्यस्थल पर काम करती है, उसे घर लौटकर भी बिना रुके कार्य करना पड़ता है। यह निरंतर दबाव उसके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

मानसिक स्वास्थ्य की समस्या आधुनिक महिलाओं के जीवन में एक महत्वपूर्ण लेकिन अक्सर अनदेखा पहलू है। लगातार अपेक्षाओं, जिम्मेदारियों और सामाजिक दबाव के बीच महिला अपने भावनात्मक संघर्षों को व्यक्त नहीं कर पाती। उसे हमेशा मजबूत बने रहने की सीख दी जाती है, जिसके कारण वह अपने भीतर के तनाव, अवसाद और अकेलेपन को दबा देती है। यह स्थिति धीरे-धीरे गंभीर मानसिक समस्याओं का रूप ले सकती है।

सामाजिक स्तर पर भी महिलाओं को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा, बाल विवाह, और यौन उत्पीड़न जैसी समस्याएँ आज भी हमारे समाज में मौजूद हैं। इन समस्याओं के कारण महिला की स्वतंत्रता केवल सैद्धांतिक रह जाती है। ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में स्थिति और भी गंभीर है, जहाँ शिक्षा और जागरूकता की कमी के कारण महिलाएँ अपने अधिकारों से वंचित रह जाती हैं।

इसके साथ ही, आधुनिकता के नाम पर महिलाओं पर एक नया दबाव भी उत्पन्न हुआ है—स्वयं को हर क्षेत्र में "परफेक्ट" साबित करने का दबाव। एक सफल प्रोफेशनल, एक आदर्श माँ, एक समझदार पत्नी, और एक आकर्षक व्यक्तित्व—इन सभी भूमिकाओं को एक साथ निभाने की अपेक्षा महिला को लगातार तनाव में रखती है। सोशल मीडिया ने इस दबाव को और बढ़ा दिया है, जहाँ तुलना और दिखावे की संस्कृति महिला के आत्मसम्मान को प्रभावित करती है।

इन सभी समस्याओं के बीच एक आधुनिक महिला अपने जीवन में संतुलन बनाने का प्रयास करती है। वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होते हुए भी अपनी जिम्मेदारियों को निभाने में पीछे नहीं हटती। वह समय प्रबंधन, आत्मअनुशासन और धैर्य के माध्यम से अपने जीवन को व्यवस्थित करने का प्रयास करती है। लेकिन यह भी आवश्यक है कि समाज और परिवार उसके इस प्रयास में सहयोग करें। केवल महिला से ही संतुलन बनाए रखने की अपेक्षा करना उचित नहीं है; बल्कि यह एक सामूहिक जिम्मेदारी होनी चाहिए।

परिवार में सहयोग और समझदारी का वातावरण महिला के जीवन को संतुलित बनाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि घर के सदस्य जिम्मेदारियों को साझा करें, महिला के कार्यों को महत्व दें, और उसके निर्णयों का सम्मान करें, तो वह अधिक आत्मविश्वास के साथ अपने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सफलता प्राप्त कर सकती है। इसी प्रकार, कार्यस्थल पर भी समान अवसर, सुरक्षित वातावरण और संवेदनशील नीतियाँ महिलाओं के लिए आवश्यक हैं।

अंततः, यह समझना आवश्यक है कि स्वतंत्रता और जिम्मेदारी का संतुलन कोई स्थिर स्थिति नहीं है, बल्कि एक निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया है। आधुनिक महिला इस प्रक्रिया में निरंतर सीखती है, संघर्ष करती है और आगे बढ़ती है। उसकी वास्तविक शक्ति इसी में निहित है कि वह कठिन परिस्थितियों में भी अपने आत्मसम्मान और संवेदनशीलता को बनाए रखते हुए अपने जीवन को अर्थपूर्ण बनाती है। यह संतुलन केवल उसके व्यक्तिगत विकास के लिए ही नहीं, बल्कि एक समतामूलक और प्रगतिशील समाज के निर्माण के लिए भी अनिवार्य है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. Nussbaum, M. (2000). *Women and Human Development*. Cambridge University Press.

2. Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
3. Bhasin, K. (2004). *What is Patriarchy?* Kali for Women.
4. United Nations (2020). *Gender Equality and Women's Empowerment Report*.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 26-28
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

अद्वैत वेदान्त दर्शनानुसार आत्मा, ब्रह्म और जगत् की अवधारणा

नाजमा हासान
(शोधार्थी),
विश्वविद्यालय स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
ल. ना. मि. विश्वविद्यालय,दरभंगा, बिहार।

कूटशब्द – अद्वैत, वेदान्त, आत्मा, ब्रह्म, जगत्, अविद्या, माया, मुक्ति, मोक्ष।

भारतीय दर्शन की समृद्ध परम्परा में अद्वैत वेदान्त का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह दर्शन मुख्यतः अद्वैत (अभेद) के सिद्धान्त पर आधारित है, जिसका प्रतिपादन आदि शङ्कराचार्य ने किया। अद्वैत वेदान्त के अनुसार 'ब्रह्म' ही एकमात्र परम सत्य है और 'आत्मा' उसी 'ब्रह्म' का स्वरूप है। 'जगत्' को इसमें 'मिथ्या' माना गया है अर्थात् उसका अस्तित्व केवल अनुभव स्तर पर है, परमार्थतः वह सत्य नहीं है। इस दर्शन में 'आत्मा' (जीव), 'ब्रह्म' और 'जगत्' के सम्बन्ध को अत्यन्त सूक्ष्म और गहन रूप से समझाया गया है। अद्वैत वेदान्त के अनुसार जीव और ब्रह्म में कोई वास्तविक भेद नहीं है, भेद केवल अविद्या (अज्ञान) के कारण प्रतीत होता है। जब यह अज्ञान नष्ट होता है, तब 'आत्मा' का वास्तविक स्वरूप प्रकट होता है, जो 'ब्रह्म' के समान ही शुद्ध, चैतन्य और अनन्त है। 'ब्रह्म' को अद्वैत वेदान्त में निराकार, निर्गुण, सर्वव्यापक और अनन्त माना गया है। वह न तो जन्म लेता है और न ही परिवर्तनशील है। वही समस्त सृष्टि का आधार है। उपनिषदों में वर्णित महावाक्य जैसे **"तत्त्वमसि"**, **"अहं ब्रह्मास्मि"** इस बात को स्पष्ट करते हैं कि 'आत्मा' और 'ब्रह्म' में कोई भेद नहीं है। 'जगत्' की अवधारणा अद्वैत वेदान्त में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। इसे न तो पूर्णतः असत् माना गया है और न ही पूर्णतः सत्, बल्कि 'मिथ्या' कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि 'जगत्' का अनुभव तो होता है, किन्तु उसका स्वतन्त्र और स्थायी अस्तित्व नहीं है, वह ब्रह्म पर आश्रित है। यह माया के प्रभाव से उत्पन्न प्रतीत होता है। इस शोधपत्र का उद्देश्य अद्वैत वेदान्त दर्शन के आलोक में 'आत्मा', 'ब्रह्म' और 'जगत्' की अवधारणाओं का विश्लेषण करना है। इसके अन्तर्गत यह समझाने का प्रयास किया गया कि इन तीनों तत्त्वों के बीच क्या सम्बन्ध है? अविद्या और माया की क्या भूमिका है तथा किस प्रकार ज्ञान के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति होती है ? आज का मानव अपने अस्तित्व, चेतना और जीवन के अन्तिम उद्देश्य को समझने के लिए निरन्तर प्रयासरत है। अद्वैत वेदान्त न केवल दार्शनिक दृष्टि से गहन समाधान प्रस्तुत करता है, अपितु यह आत्मबोध, आन्तरिक शान्ति और सार्वभौमिक एकता की भावना को भी विकसित करता है।

भारतीय दर्शन परम्परा में 'आत्मा' (जीव), 'ब्रह्म' (परम सत्य) और 'जगत्' (प्रपञ्च) के स्वरूप पर गहन चिन्तन किया गया है। विभिन्न दर्शनों जैसे वेदान्त, सांख्य, योग, न्याय आदि ने इन तत्त्वों की व्याख्या अपने-अपने दृष्टिकोण से की है, किन्तु सभी का मूल उद्देश्य सत्य की खोज और जीवन के अन्तिम लक्ष्य (मोक्ष) की प्राप्ति है।

(1) 'आत्मा' की अवधारणा - भारतीय दर्शन में 'आत्मा' को नित्य, अविनाशी और चेतन तत्त्व माना गया है। यह शरीर से भिन्न है और जन्म-मरण से परे है। श्रीमद्भगवद्गीता में 'आत्मा' के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'आत्मा' न कभी जन्म लेती है, न कभी मरती है, यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है। शरीर के नष्ट होने पर भी यह नष्ट नहीं होती -

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे[1] **॥**

'आत्मा'(जीव) और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है। यह उपनिषदों के महावाक्यों द्वारा सिद्ध किया गया है। बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है कि 'मैं ही ब्रह्म हूँ'- **"अहं ब्रह्मास्मि"**[2]। इसी प्रकार छान्दोग्योपनिषद् में कहा गया है कि 'तुम वही (ब्रह्म) हो'- **"तत्त्वमसि"**[3]।

(2) 'ब्रह्म' की अवधारणा - ब्रह्म को भारतीय दर्शन में परम सत्य, सर्वव्यापक और अनन्त माना गया है। अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म को निराकार, निरगुण और सर्वव्यापक माना गया है। तैत्तिरीयोपनिषद् में ब्रह्म के स्वरूप के विषय में कहा गया है कि ब्रह्म सत्यस्वरूप, ज्ञानस्वरूप और अनन्त है – **"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म"**[4] । इसी प्रकार छान्दोग्योपनिषद् में ब्रह्म और 'आत्मा' की एकता को व्यक्त किया गया है – 'हे श्वेतकेतु ! तुम वही (ब्रह्म) हो' – **"तत्त्वमसि श्वेतकेत"**[5]।

(3) जगत् की अवधारणा – 'जगत्' को विभिन्न दर्शनों में भिन्न-भिन्न रूपों में देखा गया है। सामान्यतः इसे 'ब्रह्म' की अभिव्यक्ति या प्रकृति का परिणाम माना जाता है। ईशोपनिषद् में कहा गया है कि 'जगत्' में जो कुछ भी है, वह सब ईश्वर (ब्रह्म) से व्याप्त है - **"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत"**[6]।

इस प्रकार भारतीय दर्शन में 'आत्मा' को नित्य और चेतन तत्त्व, परम सत्य तथा 'जगत्' को 'ब्रह्म' या प्रकृति की अभिव्यक्ति माना गया है। विभिन्न दर्शनों में इनके स्वरूप की व्याख्या में अन्तर है, फिर भी इन तीनों तत्त्वों का परस्पर सम्बन्ध भारतीय दार्शनिक चिन्तन का केन्द्रीय आधार बना हुआ है। अद्वैत वेदान्त के अनुसार 'जगत्' न तो पूर्णतः असत् है, न ही पूर्णतः सत्; वह मिथ्या है अर्थात् केवल अनुभव में सत्य प्रतीत होता है। यहाँ (परम सत्य में) कोई भी द्वैत नहीं है - **"नेह नानास्ति किंचन"**[7]।

अद्वैत वेदान्त के अनुसार 'आत्मा' और 'ब्रह्म' एक ही हैं (अभेद)। 'ब्रह्म' ही एकमात्र परम सत्य है, 'जगत्' मिथ्या (मात्र व्यावहारिक सत्य) है। अविद्या बन्धन का कारण है और ज्ञान (ब्रह्मज्ञान) से ही मोक्ष सम्भव है। इस प्रकार अद्वैत वेदान्त पूर्ण अद्वैतवाद का प्रतिपादन करता है और आत्मा, 'ब्रह्म' तथा 'जगत्' के सम्बन्ध को एकत्व के आधार पर स्पष्ट करता है।

'अद्वैत वेदान्त दर्शनानुसार आत्मा, ब्रह्म और जगत् की अवधारणा' यह विषय स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि अद्वैत वेदान्त भारतीय दार्शनिक परम्परा में एक अत्यन्त गहन और सुव्यवस्थित तत्त्वमीमांसा प्रस्तुत करता है। आदि शङ्कराचार्य द्वारा प्रतिपादित इस दर्शन का मूल प्रतिपादन यह है कि ब्रह्म ही एकमात्र परम सत्य है और आत्मा उसी ब्रह्म का अभिन्न स्वरूप है। जीव और ब्रह्म के बीच जो भेद प्रतीत होता है, वह वस्तुतः अविद्या (अज्ञान) का परिणाम है। इस शोधपत्र से यह भी स्पष्ट होता है कि अद्वैत वेदान्त में 'जगत्' को 'मिथ्या' कहा गया है, जिसका आशय यह नहीं कि 'जगत्' का अस्तित्व पूर्णतः असत्य है, अपितु यह कि उसका स्वतन्त्र और परम अस्तित्व नहीं है। वह केवल व्यावहारिक स्तर पर सत्य प्रतीत होता है और अन्ततः ब्रह्म पर ही आश्रित है। इस

प्रकार अद्वैत वेदान्त 'जगत्' की एक ऐसी व्याख्या प्रस्तुत करता है जो अनुभव और तत्त्वज्ञान के बीच सन्तुलन स्थापित करती है। आत्मा के सन्दर्भ में अद्वैत वेदान्त यह प्रतिपादित करता है कि प्रत्येक जीव का वास्तविक स्वरूप शुद्ध, चैतन्य और अनन्त है। जब तक मनुष्य स्वयं को शरीर, मन और अहंकार से जोड़कर देखता है, तब तक वह बन्धन में रहता है, किन्तु जैसे ही वह ब्रह्मज्ञान के माध्यम से अपने वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार करता है, वैसे ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। इस प्रकार मोक्ष कोई बाह्य वस्तु की प्राप्ति नहीं, अपितु आत्मा के वास्तविक स्वरूप का बोध है। अद्वैत वेदान्त में ज्ञान को ही मुक्ति का एकमात्र साधन माना गया है। श्रवण, मनन और निदिध्यासन की प्रक्रिया के माध्यम से साधक अविद्या का नाश करता है और 'आत्मा-ब्रह्म' की एकता का प्रत्यक्ष अनुभव करता है। यह ज्ञान केवल बौद्धिक नहीं, बल्कि अनुभवात्मक (experiential) होता है, जो जीवन में स्थायी परिवर्तन लाता है। समकालीन परिप्रेक्ष्य में अद्वैत वेदान्त की प्रासङ्गिकता अत्यन्त महूत्वपूर्ण है। आज के भौतिकवादी और तनावपूर्ण जीवन में यह दर्शन व्यक्ति को समत्व और आत्मबोध की दिशा प्रदान करता है। यह न केवल व्यक्तिगत स्तर पर मानसिक सन्तुलन स्थापित करता है, अपितु सामाजिक स्तर पर भी समभाव, सहिष्णुता और वैश्विक एकता की भावना को प्रोत्साहित करता है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अद्वैत वेदान्त **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** की अवधारणा को चरितार्थ करते हुए 'आत्मा', 'ब्रह्म' और 'जगत्' के सम्बन्ध को एकत्व के आधार पर स्पष्ट करते हुए मानव जीवन के परम उद्देश्य मोक्ष की ओर मार्गदर्शन करता है। यह दर्शन न केवल दार्शनिक दृष्टि से समृद्ध है, अपितु व्यावहारिक जीवन में भी अत्यन्त उपयोगी है, जो मनुष्य को अपने वास्तविक स्वरूप की पहचान कराकर एक सन्तुलित, शान्त और सार्थक जीवन जीने की प्रेरणा देता है।

---

[1] श्रीमद्भगवद्गीता 2.20, पृ. 45

[2] बृहदारण्यकोपनिषद् 1.4.10, पृ. 37

[3] छान्दोग्योपनिषद् 6.8.7, पृ. 87

[4] तैत्तिरीयोपनिषद् 2.1, पृ. 53

[5] छान्दोग्यपनिषद् 6.8.7, पृ. 87

[6] ईशोपनिषद् 1, पृ. 10

[7] बृहदारण्यकोपनिषद् 4.4.19, पृ.104

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2013
2. ईशादि नौ उपनिषद्, शङ्कराचार्य गीता प्रेस, गोरखपुर, 2006
3. बृहदारण्यकोपनिषद्, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994
4. छान्दोग्योपनिषद्, स्वामी गम्भीरानन्द, अद्वैत आश्रम, 2006
5. तैत्तिरीयोपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2010
6. वेदान्तसार, डॉ. सन्तनाराताण श्रीवास्तव्य, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2021

Email: najmahasan1993@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 29-33
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

वीरेन डंगवाल के काव्य में स्त्री-संघर्ष के विविध आयाम

डॉ अमिता प्रकाश
असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सोमेश्वर, अल्मोड़ा

शोध सार-
प्रस्तुत शोध आलेख समकालीन हिंदी कविता के महत्वपूर्ण स्तंभ वीरेन डंगवाल के काव्य लोक में व्याप्त जन-जीवन के सूक्ष्म यथार्थ और उसमें स्त्री की स्थिति का विश्लेषण करता है। वीरेन की कविताएँ मामूली वस्तुओं और उपेक्षित पात्रों को गरिमा प्रदान करते हुए जन-जीवन की जटिलताओं को उद्घाटित करती हैं। यह शोध इस बात को रेखांकित करता है कि वीरेन के यहाँ स्त्री कोई पृथक इकाई नहीं, बल्कि वर्गीय संरचना और पूंजीवादी दुष्चक्र का अभिन्न अंग है। उनकी कविताओं में स्त्री मुक्ति का स्वर किसी अकादमिक विमर्श के बजाय 'रोजी-रोटी' के बुनियादी संघर्ष और पितृसत्तात्मक जकड़न के विरुद्ध सहज मानवीय प्रतिरोध के रूप में उभरता है। आलेख का निष्कर्ष है कि वीरेन की कविता सौंदर्यशास्त्र और राजनीति के समन्वय की वह भूमि है, जहाँ साधारणता ही असाधारण है।
बीज शब्द : वीरेन डंगवाल, जन-जीवन, स्त्री-संघर्ष, पूंजीवाद, पितृसत्ता, वर्गीय चेतना, मामूलीपन, यथार्थवाद।
प्रस्तावना- कवि वीरेन डंगवाल (1947-2015) समकालीन हिन्दी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर थे, जिनकी काव्य-यात्रा की शुरूआत 1970 के आस-पास हुई और वे अपनी कविताओं के जरिये अपने आसपास की दुनिया यानि जन-जीवन के सामान्य प्रसंगों को मजबूती के साथ चित्रित करने लगे। उनकी कविता के विषयों की विविधता के पीछे उनकी जीवनानुभूति की गहरी पड़ताल का पता तो चलता ही है, साथ ही उनमें एक नये प्रकार की जिजीविषा और चिन्तन शैली की सूचना भी मिलती है, जो सामान्य कवियों में विरल होती है। यही कारण है कि वीरेन डंगवाल का कवि कर्म भी अन्य कवियों की अपेक्षा भिन्न और विशिष्ट कोटि का ठहरता है। 1991 के पहले डंगवाल की कविताओं का कोई संग्रह प्रकाशित नहीं था, कहने की आवश्यकता नहीं कि वीरेन डंगवाल अपने पहले संग्रह की कविताओं से ही चर्चा में आ गये थे। बाद में उनके तीन और काव्य-संग्रह 'दुष्चक्र में स्रष्टा', 'कवि ने कहा' और 'स्याही ताल' के नाम से प्रकाशित और प्रशंसित हुए। उनकी कविताओं ने उनका नये सिरे से निर्माण किया और वे एक बड़े कवि के रूप में सामने आये।

वीरेन डंगवाल की कविताएँ हमारे परिवेश की उस समग्रता का साक्ष्य हैं, जिसे अक्सर 'अभिजात दृष्टि' उपेक्षित कर देती है। उनकी काव्य-दृष्टि में सूक्ष्मता और व्यापकता का एक दुर्लभ अंतर्संबंध है, जहाँ कुत्ता, बिल्ली और मक्खी जैसे मामूली जीव भी मानवीय संवेदना के विस्तार बन जाते हैं। प्रेमचंद की कथा-परंपरा के निकट खड़ी

उनकी कविताएँ पाठक को एक आत्मीय बोध से जोड़ती हैं। यहाँ जीवन केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं, बल्कि इसमें प्रकृति, पशु-पक्षी और यहाँ तक कि सुरंगों में बहती हवा के 'खुफ़िया संकेत' भी शामिल हैं।

१. साधारणता का सौंदर्यशास्त्र और भविष्य की शिनाख्त

वीरेन डंगवाल ने हिंदी कविता को उस 'मामूलीपन' की गरिमा लौटाई है, जिसे विकास के शोर में हाशिये पर धकेल दिया गया था। उनकी कविता का एक पक्ष जहाँ यथार्थ की बारीकियों को पकड़ता है, वहीं दूसरा पक्ष फासीवादी ताकतों और पूंजीवादी सभ्यता के मुखौटों को बेनकाब करता है। विकास की विडंबना पर प्रहार करते हुए वे लिखते हैं:

"अब दरअसल सारे खतरे खत्म हो चुके
प्यार की तरह
दरअसल चारों तरफ चैन ही चैन है।"[1]

यह व्यंग्य उस क्रूर सत्य को उद्घाटित करता है जहाँ आधुनिकता की चकाचौंध के पीछे भूख और अभाव का गहन सन्नाटा पसरा हुआ है।

२. वर्गीय संरचना और स्त्री-जीवन का अंतर्संबंध

वीरेन की कविता में स्त्री किसी विशिष्ट विमर्श का हिस्सा बनने के बजाय अपने सामाजिक-आर्थिक परिवेश के साथ उपस्थित होती है। वे पूंजीवादी व्यवस्था के उस दुष्चक्र को पहचानते हैं, जहाँ मनुष्यता स्वयं 'दमकते हुए कालेपन' की शिकार है। मंगलेश डबराल के अनुसार, ‘‘वीरेन की जिद है कि मामूली लोग उसी तरह दिखाई दें जैसे वे हैं।‘‘[2]

वीरेन समाज की वर्गीय संरचना के प्रति अत्यंत सजग हैं। उनके यहाँ आने वाली स्त्रियाँ प्रायः निम्न वर्ग की श्रमशील महिलाएँ हैं, जिनके लिए स्वाधीनता के अर्थ 'रोजी-रोटी' से शुरू होते हैं। 'वह आ रहा है' कविता में वे वयस्कों की दुनिया के पाखंड को उजागर करते हैं:

"अभी उसे पता नहीं कि क्यों
वयस्कों की एक दुनिया के
प्रचलित शब्द आजादी का उच्चारण
वयस्कों की दूसरी दुनिया में वर्जित हैं।[3]

वीरेन डँगवाल के काव्य में स्त्रियों के लिए पितृसत्ता से पूर्व 'अस्तित्व का संकट' सर्वोपरि है। वीरेन रेखांकित करते हैं कि एक श्रमिक स्त्री की लड़ाई मध्यवर्गीय स्त्री विमर्श से भिन्न है; उसकी प्राथमिकता रोटी और बुनियादी अधिकार हैं।

3. पितृसत्ता, पूंजी और हिंसा का त्रिकोण- एंगेल्स ने अपनी स्थापनाओं में स्पष्ट किया था कि पूंजी के विकास ने ही स्त्री को पुरुष की निजी संपत्ति में बदला। वीरेन की कविता 'बस में लंबे सफर का एक टुकड़ा' इस तथ्य की दहला देने वाली अभिव्यक्ति है। यहाँ 'दीपा विश्वास' नामक लड़की की हत्या महज एक उपभोक्ता वस्तु के लिए कर दी जाती है, यहाँ पूंजीवादी लालसा और लैंगिक हिंसा का वीभत्स मेल दिखाई देता है।

"आई याद मुझे दीपा विश्वास
खचाखच जीवन से जैसे खुद को साबित करती बहती हो हवा
... मार डाली गई आज वतन से दूर /पति के घर में / रंगीन टीवी की खातिर" [4]

‘‘एंगेल्स की मान्यताओं के समानांतर वीरेन की कविताएँ यह स्पष्ट करती हैं कि निजी संपत्ति और पूंजी के संचय ने स्त्री को पुरुष की 'निजी वस्तु' में रूपांतरित कर दिया है।[5] वीरेन डंगवाल के काव्य में स्त्री और वर्गीय संघर्ष पूंजीवादी

तंत्र के छद्म और उसके विनाशकारी चक्र को बेनकाब करती है। अपनी प्रसिद्ध कविता 'हमारा समाज' में वे इस व्यवस्था के स्याह पक्ष पर कड़ा प्रहार करते हुए लिखते हैं:

"पर हमने यह कैसा समाज रच डाला है
इसमें जो दमक रहा, शर्तिया काला है
वह कत्ल हो रहा सरेआम चौराहे पर
निर्दोष और सज्जन, जो भोला-भाला है।[6]

इस अमानवीय व्यवस्था ने न केवल मनुष्यों के बीच विभाजन की दीवारें खड़ी की हैं, बल्कि स्त्रियों को इस दुष्चक्र की दोहरी वेदी पर ला खड़ा किया है—जहाँ वे एक ओर वर्गभेद की शिकार हैं, तो दूसरी ओर लिंगभेद। हमारा वर्गीय ढाँचा यह माँग करता है कि हम स्त्रियों के संघर्ष को किसी एक चश्मे से न देखें। एक साधन-संपन्न और शिक्षित महिला की चुनौतियाँ उस अभावग्रस्त स्त्री से सर्वथा भिन्न हैं, जिसके लिए शिक्षा और अधिकारों की बात रोटी की प्राथमिक आवश्यकता के बाद आती है। वीरेन डंगवाल की कविता परंपरागत 'स्त्री विमर्श' के बने-बनाए साँचों में शायद फिट न बैठे, लेकिन वह स्त्री जीवन के बुनियादी संकटों और परिवार के भीतर उनकी दोयम दर्जे की स्थिति का अत्यंत गहरा दस्तावेज़ है। उनके यहाँ वर्ग-संघर्ष और स्त्री-संघर्ष अलग-अलग नहीं, बल्कि एक-दूसरे में रचे-बसे हैं।

4- घरेलू स्पेस और अदृश्य श्रम की विडंबना

वीरेन स्त्री के उस 'स्पेस' (स्थान) की अनुपस्थिति को गहराई से महसूस करते हैं, जहाँ उसका अपना कोई घर नहीं होता। 'जहाँ की महिलाएँ हो गई कहीं' कविता में वे मायके और ससुराल के बीच झूलती स्त्री की विवशता को व्यक्त करते हैं।

"वे लौटेंगी / कुछ अनमनी मायके से / भाभी से कुछ रूठी / तनिक खुश / अपने नरक की बेतरतीबी में ही ढूँढ़ेंगी वे / अपनी अपरिहार्यता की तसल्ली" [6]

वह अपने 'नरक की बेतरतीबी' में ही अपनी उपयोगिता ढूँढने को अभिशप्त है। समाज ने स्त्री को 'घर' नामक संस्था की धुरी तो बनाया, पर उसे अपना कोई 'स्पेस' नहीं दिया। 'जहाँ की महिलाएँ हो गई कहीं' कविता इस विडंबना को बड़ी सूक्ष्मता से पकड़ती है।

इसी प्रकार 'माँ की याद' कविता में वे स्त्री को त्याग की देवी बनाने के सांस्कृतिक षड्यंत्र पर प्रहार करते हैं। इस कविता में वे स्त्री को सामाजिक-सांस्कृतिक परंपरा की उस 'बर्फीली चोटी' पर खड़ा देखते हैं, जो वास्तव में एक 'फायरिंग स्क्वैड' के सामने होने जैसा है-

"सामाजिक-सांस्कृतिक परंपरा है हमारी
जिसमें माएँ सबसे ऊपर खड़ी की जाती रही ँ
बर्फीली चोटी पर
और सबसे आगे
फायरिंग स्क्वैड के सामने" [7]

इसी प्रकार 'रामसिंह' कविता में एक सैनिक की माँ की छवि के माध्यम से वे अभावग्रस्त जीवन की पीड़ा को उकेरते हैं:

"माँ सारी रात रोती घूमती थी
भोर में जाती चार मील पानी भरने
घरों के भीतर तक घुस आया करता था बाघ

... बिल्ली की तरह कलपती हुई माँ होती थी बिल्ली की तरह"[8]

5. पारिस्थितिकी, विस्थापन और दैहिक शोषण

कॉरपोरेट पूंजीवाद की नजर जब जंगलों पर पड़ती है, तो उसकी सर्वाधिक मार वन्या (आदिवासी/ग्रामीण) स्त्रियों पर पड़ती है। 'वन्या' कविता में ठेकेदारों और अधिकारियों के जाने के बाद जो सन्नाटा और भय बचता है, वह स्त्रियों के दैहिक और आर्थिक शोषण की गूँज है। चीड़ के पेड़ों का विलाप वास्तव में उन घायल लड़कियों की कराह है, जिनकी अस्मिता को विकास के नाम पर कुचला गया है। है। 'वन्या' कविता में जंगल की लकड़ियाँ बीनने वाली लड़कियों के माध्यम से वे इस भयावह सत्य को उद्घाटित करते हैं:

"अकेली मैं कैसे जाऊँगी वहाँ
मुझे देखते ही विलापने लगते हैं चीड़ के पेड़
सुनाई देने लगती है किसी घायल लड़की की दबी-दबी कराह"[9]

5. प्रतिरोध का स्वर और नवीन चेतना

कवि वीरेन डंगवाल का स्त्री संबंधी दृष्टिकोण अत्यंत सुस्पष्ट और यथार्थवादी है। उनकी कविता स्त्री के प्रति प्रचलित कुलीन और मध्यवर्गीय दृष्टिकोण को पूरी तरह नकारती है। स्त्री को देखने का उनका नज़रिया न तो कोरी रूमानियत से भरा है, न ही वह वसंत जैसी भावुकता या सतही क्रांतिकारी नारों से प्रेरित है; बल्कि यह पूरी तरह 'जमीनी' और ठोस यथार्थ पर टिका है। एक ऐसे समाज में, जहाँ सांझ ढलते ही कबीलाई मानसिकता और बर्बरता हावी होने लगती हो, वहाँ स्त्री की स्थिति का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। विशेषकर रुकमिनी जैसी पात्र की स्थिति, जो स्वयं एक विधवा है, जिसकी एक किशोरवय बेटी है और जिसका परिवेश 'कटरी' जैसा बीहड़ और दुर्गम क्षेत्र है। डंगवाल जी ने ऐसी अत्यंत कठिन और जटिल परिस्थितियों में फंसी स्त्री के जीवन को उसकी संपूर्ण जड़ता और संघर्ष के साथ बेहद गहराई से उकेरा है।

'कटरी की रुकुमिनी' जैसी कविताओं के माध्यम से वीरेन समाज के उन वीभत्स रहस्यों को उजागर करते हैं, जहाँ एक चौदह वर्षीय बालिका अपने भविष्य के 'चीथड़ा' होने की नियति को समझ चुकी है। किंतु, वीरेन केवल शोक के कवि नहीं हैं। वे धर्म और कर्मकांडों के नाम पर स्त्रियों की 'कंडीशनिंग' को भी चुनौती देते हैं। उनकी अप्रकाशित नाटिका के माध्यम से वे उन शास्त्रों और देवताओं के नाश का आह्वान करते हैं, जिन्होंने मनुष्य को गुलाम बनाया।

निष्कर्ष

वीरेन डंगवाल की काव्य-दृष्टि स्त्री को किसी कृत्रिम 'देवत्व' या 'विशिष्टता' के छद्म आवरण में लपेटने के बजाय, उसे उसकी **'ठेठ मनुष्यता'** और हाड़-मांस के यथार्थ में प्रतिष्ठित करती है। उनकी कविताएँ स्त्री के प्रति कुलीनतावादी और मध्यवर्गीय संकोच या अति-रूमानियत को सिरे से खारिज करती हैं। यहाँ करुणा का अतल प्रवाह तो है, किंतु यह करुणा स्त्री को एक 'असहाय पात्र' के रूप में चित्रित नहीं करती; बल्कि यह उस आंतरिक शक्ति को रेखांकित करती है जो उसे कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी टूटने नहीं देती। डंगवाल जी की करुणा स्त्री के दैनंदिन संघर्ष को एक मानवीय गौरव और गरिमा प्रदान करती है।विस्तृत परिप्रेक्ष्य में देखें तो, उनकी कविताएँ इस कड़वे सच का दस्तावेज़ हैं कि जब तक समाज में वर्गीय विषमता और लैंगिक विभेद की जड़ें गहरी हैं, तब तक वीरेन की कविताओं की प्रासंगिकता और उनकी **अर्थवत्ता अक्षुण्ण** बनी रहेगी। वे केवल शब्दों के शिल्पी नहीं, बल्कि सही अर्थों में उस मानवीयता के चितेरे कवि हैं जो हाशिए पर धकेल दी गई अस्मिताओं में भी जीवन की लय ढूँढ लेते हैं। उनकी रचनाओं में स्त्री का संघर्ष केवल उसका व्यक्तिगत दुख नहीं, बल्कि एक दमनकारी व्यवस्था

के विरुद्ध सूक्ष्म किंतु प्रखर प्रतिरोध है। यही कारण है कि उनकी कविताएँ समय की सीमाओं को लांघकर एक न्यायपूर्ण समाज की वैचारिक पीठिका तैयार करती हैं।

संदर्भ सूची

1. डंगवाल वीरेन. "अब दरअसल सारे खतरे खत्म हो चुके". *इसी दुनिया में*, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 1991, पृष्ठ 42।
2. डबराल, मंगलेश. "वीरेन की कविता". *कवि ने कहा*, नई दिल्ली: किताबघर प्रकाशन, 2004, पृष्ठ 12 (भूमिका)।
3. डंगवाल, वीरेन. "वह आ रहा है". *इसी दुनिया में*, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 1991, पृष्ठ 28।
4. डंगवाल, वीरेन. "बस में लंबे सफर का एक टुकड़ा". *दुष्चक्र में स्रष्टा*, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 2002, पृष्ठ 56।
5. एंगेल्स, फ्रेडरिक. *परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति*. अनुवाद: रामविलास शर्मा, नई दिल्ली: पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 1992, पृष्ठ 84।
6. डंगवाल, वीरेन. "जहाँ की महिलाएँ हो गई कहीं". *कविता वीरेन*, संपा. नवारुण, नई दिल्ली: नवारुण प्रकाशन, 2018, पृष्ठ 159।
7. डंगवाल, वीरेन. "माँ की याद". *दुष्चक्र में स्रष्टा*, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 2002, पृष्ठ 74।
8. डंगवाल, वीरेन. "रामसिंह". *इसी दुनिया में*, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 1991, पृष्ठ 65।
9. डंगवाल, वीरेन. "वन्या". *स्याही ताल*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2009, पृष्ठ 38।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 34-38
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के बढ़ते महत्त्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन

नीलमणि तिग्गा
शोधार्थी,
शिक्षा विभाग, राधा गोविंद विश्वविद्यालय, रामगढ़ (झारखण्ड)

सारांश (Abstract):

यह शोध पत्र झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के बढ़ते महत्त्व का एक विस्तृत एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। वर्तमान वैश्विक अर्थव्यवस्था में कौशल-आधारित शिक्षा की आवश्यकता अत्यधिक बढ़ गई है। पारंपरिक शिक्षा प्रणाली जहाँ मुख्यतः सैद्धांतिक ज्ञान पर आधारित रही है, वहीं व्यावसायिक प्रशिक्षण छात्रों को व्यावहारिक कौशल प्रदान कर उन्हें रोजगारोन्मुख बनाती है।

इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण की वर्तमान स्थिति, छात्रों के कौशल विकास पर इसके प्रभाव तथा इसके प्रति छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण का विश्लेषण करना है। अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया, जिसमें 150 छात्रों, 20 शिक्षकों तथा 10 विद्यालय प्रमुखों से आंकड़े एकत्रित किए गए।

अध्ययन के निष्कर्षों से यह ज्ञात हुआ कि व्यावसायिक प्रशिक्षण छात्रों के आत्मविश्वास, कौशल विकास एवं रोजगार क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। साथ ही, विद्यालयों में संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षक का अभाव एवं जागरूकता की कमी प्रमुख बाधाएँ हैं।

मुख्य शब्द : व्यावसायिक प्रशिक्षण, झारखण्ड, माध्यमिक विद्यालय, कौशल विकास, रोजगार

1. प्रस्तावना (Introduction) :

1.1 अध्ययन की पृष्ठभूमि :

21वीं सदी को कौशल, नवाचार एवं प्रौद्योगिकी की सदी के रूप में जाना जाता है, जहाँ ज्ञान के साथ-साथ व्यावहारिक दक्षताओं का होना अत्यंत आवश्यक हो गया है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में केवल शैक्षणिक डिग्री प्राप्त कर लेना पर्याप्त नहीं माना जाता, बल्कि व्यक्तियों में समस्या-समाधान क्षमता, तकनीकी कौशल एवं कार्यकुशलता का होना भी जरूरी है। इसी कारण भारत की शिक्षा प्रणाली पारंपरिक रटने-आधारित पद्धति से हटकर धीरे-धीरे कौशल-आधारित एवं अनुभवात्मक शिक्षण की ओर अग्रसर हो रही है।

झारखण्ड एक खनिज-समृद्ध एवं औद्योगिक संभावनाओं से युक्त राज्य है, जहाँ बड़ी संख्या में युवा आबादी निवास करती है। इसके बावजूद राज्य में बेरोजगारी, कौशल की कमी तथा रोजगार के अवसरों का असमान वितरण एक गंभीर चुनौती बनी हुई है। अधिकांश युवा सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी उपयुक्त रोजगार पाने में असमर्थ रहते हैं, जिसका प्रमुख कारण व्यावहारिक एवं तकनीकी कौशलों का अभाव है। ऐसे परिदृश्य में व्यावसायिक शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है, जो छात्रों को रोजगारोन्मुख प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में सहायक सिद्ध होती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) ने भी इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल करते हुए कक्षा 6 से ही व्यावसायिक शिक्षा को शामिल करने पर बल दिया है। इसका उद्देश्य छात्रों को प्रारंभिक स्तर से ही विभिन्न कौशलों से परिचित कराना, उनके भीतर कार्य के प्रति सम्मान की भावना विकसित करना तथा भविष्य के लिए उन्हें तैयार करना है। अतः यह अध्ययन झारखण्ड के संदर्भ में व्यावसायिक शिक्षा के बढ़ते महत्त्व को समझने हेतु अत्यंत प्रासंगिक है।

1.2 समस्या का कथन: झारखण्ड के अधिकांश माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण का समुचित विकास नहीं हो पाया है। संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव तथा जागरूकता की कमी के कारण छात्र इस क्षेत्र में पीछे रह जाते हैं।

1.3 अध्ययन के उद्देश्य:

1. झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना।
2. व्यावसायिक प्रशिक्षण का छात्रों के कौशल विकास पर प्रभाव का विश्लेषण करना।
3. छात्रों एवं शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
4. व्यावसायिक प्रशिक्षण के समक्ष आने वाली चुनौतियों की पहचान करना।

1.4 परिकल्पनाएँ (Hypotheses) :

1. व्यावसायिक प्रशिक्षण छात्रों की रोजगार क्षमता को बढ़ाता है।
2. व्यावसायिक शिक्षा छात्रों में आत्मनिर्भरता विकसित करती है।
3. व्यावसायिक प्रशिक्षण छात्रों की शैक्षिक रुचि को बढ़ाता है।
4. व्यावसायिक प्रशिक्षण छात्रों के आत्मविश्वास को बढ़ाती है।

1.5 अध्ययन का महत्व

यह अध्ययन झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के बढ़ते महत्त्व को समझने में अत्यंत उपयोगी है। वर्तमान समय में केवल सैद्धांतिक शिक्षा पर्याप्त नहीं है, बल्कि रोजगारोन्मुख कौशलों का विकास भी आवश्यक हो गया है। यह अध्ययन इस बात का विश्लेषण करेगा कि व्यावसायिक शिक्षा किस प्रकार विद्यार्थियों में कौशल, आत्मनिर्भरता तथा रोजगार की संभावनाओं को बढ़ाती है। इसके निष्कर्ष नीति निर्माताओं को प्रभावी योजनाएँ बनाने, शिक्षकों को नवीन शिक्षण-पद्धतियाँ अपनाने तथा विद्यालय प्रशासन को बेहतर संसाधन उपलब्ध कराने में सहायक होंगे। साथ ही, यह अध्ययन झारखण्ड जैसे राज्य में युवाओं के आर्थिक सशक्तिकरण एवं बेरोजगारी को कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देगा।

2: साहित्य समीक्षा (Review of Literature):

व्यावसायिक प्रशिक्षण पर विभिन्न शोधों से यह स्पष्ट होता है कि यह छात्रों के रोजगार कौशल को विकसित करने में सहायक होती है। NCERT (2019) के अनुसार व्यावसायिक प्रशिक्षण छात्रों को जीवनोपयोगी कौशल प्रदान करती है। NEP 2020 में कौशल-आधारित शिक्षा को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। UNESCO

(2015) के अनुसार व्यावसायिक प्रशिक्षण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। झारखण्ड के संदर्भ में किए गए अध्ययन बताते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में व्यावसायिक शिक्षा की स्थिति अपेक्षाकृत कमजोर है।

3: शोध कार्यप्रणाली (Methodology):

3.1 शोध विधि:

इस अध्ययन के लिए नमूना चयन में कुल 150 छात्रों, 20 शिक्षकों तथा 10 विद्यालय प्रमुखों को शामिल किया गया, जिससे विभिन्न दृष्टिकोणों को समाहित किया जा सके। डेटा संग्रह के लिए मुख्यतः प्रश्नावली एवं साक्षात्कार तकनीकों का उपयोग किया गया, ताकि उत्तरदाताओं से विस्तृत एवं विश्वसनीय जानकारी प्राप्त हो सके। प्रश्नावली के माध्यम से संरचित डेटा एकत्र किया गया, जबकि साक्षात्कार द्वारा गहन एवं व्याख्यात्मक जानकारी हासिल की गई। एकत्रित आंकड़ों के विश्लेषण के लिए प्रतिशत तथा औसत विधियों का प्रयोग किया गया, जिससे प्राप्त परिणामों को सरल, स्पष्ट एवं व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया जा सके और निष्कर्षों की सटीक व्याख्या संभव हो सके।

4: निष्कर्ष, चर्चा एवं सुझाव:

4.1 निष्कर्ष :अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण माध्यमिक स्तर के छात्रों के कौशल विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह न केवल छात्रों में व्यावहारिक ज्ञान और दक्षताओं का विकास करती है, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर बनने की दिशा में भी प्रेरित करती है। साथ ही, व्यावसायिक शिक्षा रोजगार के अवसरों को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है, जिससे छात्र भविष्य में विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर करियर विकल्प प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार, यह शिक्षा प्रणाली पारंपरिक शिक्षा के साथ-साथ रोजगारोन्मुखी दृष्टिकोण को भी सुदृढ़ करती है।

4.2 चर्चा: झारखण्ड के संदर्भ में देखा जाए तो व्यावसायिक प्रशिक्षण की वर्तमान स्थिति में सुधार की व्यापक संभावनाएँ हैं। विद्यालयों में आवश्यक संसाधनों, प्रशिक्षित शिक्षकों एवं आधुनिक उपकरणों की कमी इस क्षेत्र के विकास में बाधा बन रही है। इसलिए आवश्यक है कि सरकार एवं संबंधित संस्थाएँ मिलकर व्यावसायिक शिक्षा को अधिक प्रभावी, व्यावहारिक एवं उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाएं, ताकि छात्रों को वास्तविक जीवन में बेहतर अवसर प्राप्त हो सकें।

4.3 सुझाव:

1. विद्यालयों में व्यावसायिक पाठ्यक्रम लागू किए जाएँ।
2. प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति की जाए।
3. छात्रों को व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाए।
4.छात्रों को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित किया जाय।

5: झारखण्ड में व्यावसायिक प्रशिक्षण से संबंधित योजनाओं का विश्लेषण :-

5.1 प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY) : भारत सरकार की एक महत्वपूर्ण पहल है, जिसका उद्देश्य युवाओं को उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप कौशल प्रशिक्षण प्रदान करना है। झारखण्ड में इस योजना के तहत कई प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किए गए हैं, जहाँ युवाओं को निःशुल्क प्रशिक्षण, प्रमाणन आधारित मूल्यांकन तथा रोजगार सहायता उपलब्ध कराई जाती है। यह योजना विशेष रूप से उन युवाओं के लिए लाभकारी सिद्ध हुई है, जो औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ व्यावहारिक कौशल प्राप्त करना चाहते हैं। इसके प्रभावस्वरूप अनेक छात्रों ने अल्पकालिक प्रशिक्षण प्राप्त कर अपनी रोजगार क्षमता में वृद्धि की है। फिर भी, ग्रामीण एवं दूरदराज क्षेत्रों में इस

योजना की पहुँच सीमित बनी हुई है, जिसे और सुदृढ़ करने की आवश्यकता है, ताकि अधिकाधिक युवा इसका लाभ उठा सकें।

5.2 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान (ITI): आईटीआई झारखण्ड में व्यावसायिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण आधार है, जो छात्रों को तकनीकी एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करता है। यहाँ इलेक्ट्रिशियन, फिटर, वेल्डर तथा कंप्यूटर ऑपरेटर जैसे प्रमुख ट्रेडों में प्रशिक्षण दिया जाता है, जिससे छात्रों में रोजगारोन्मुख कौशल विकसित होते हैं। आईटीआई का मुख्य उद्देश्य छात्रों को उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार करना है। इससे प्रशिक्षित छात्र सीधे विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। परिणामस्वरूप न केवल उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है, बल्कि राज्य के औद्योगिक विकास और उत्पादन क्षमता में भी वृद्धि होती है।

5.3 स्किल इंडिया मिशन (Skill India) : स्किल इंडिया मिशन का उद्देश्य भारत को एक कौशलयुक्त राष्ट्र बनाना है, जिसका प्रभाव झारखण्ड में भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इस मिशन के अंतर्गत युवाओं को उद्योगों की मांग के अनुसार प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है, ताकि उनकी रोजगार क्षमता बढ़ सके। इसका मुख्य लक्ष्य युवाओं को कौशलयुक्त बनाकर रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसरों का विस्तार करना है। झारखण्ड में इस योजना का क्रियान्वयन झारखण्ड कौशल विकास मिशन (JSDMS) के माध्यम से किया जा रहा है, जो विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन करता है। इसके तहत युवाओं को व्यावहारिक एवं तकनीकी कौशल प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किए जा रहे हैं।

5.4 अन्य राज्य स्तरीय पहलें: झारखण्ड में व्यावसायिक प्रशिक्षण को सुदृढ़ बनाने हेतु कई राज्य स्तरीय पहलें की गई हैं। झारखण्ड कौशल विकास मिशन (JSDMS) इसके प्रमुख घटकों में से एक है, जो युवाओं को उद्योगों की मांग के अनुरूप कौशल प्रशिक्षण प्रदान करता है। इसके अंतर्गत विभिन्न अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं, जिससे युवाओं की रोजगार क्षमता में वृद्धि हो। साथ ही, राज्य सरकार द्वारा स्कूल स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की शुरुआत की गई है, ताकि छात्रों को प्रारंभिक अवस्था से ही कौशल आधारित शिक्षा मिल सके। इसके अतिरिक्त, दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना (DDU-GKY) एवं राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (NSDC) जैसी योजनाएँ भी युवाओं को प्रशिक्षण एवं रोजगार से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

6. निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट रूप से निष्कर्ष निकलता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों के लिए अत्यंत आवश्यक और प्रासंगिक है। वर्तमान वैश्विक एवं प्रतिस्पर्धात्मक युग में केवल सैद्धांतिक ज्ञान पर्याप्त नहीं है, बल्कि छात्रों के लिए व्यावहारिक कौशलों का विकास भी उतना ही महत्वपूर्ण हो गया है। व्यावसायिक शिक्षा छात्रों को विभिन्न तकनीकी एवं रोजगारोन्मुख दक्षताओं से सुसज्जित करती है, जिससे वे भविष्य में रोजगार प्राप्त करने या स्वरोजगार अपनाने के लिए सक्षम बनते हैं।

यह अध्ययन यह भी दर्शाता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण के माध्यम से छात्रों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता तथा कार्यकुशलता का विकास होता है। झारखण्ड जैसे राज्य, जहाँ बेरोजगारी एवं आर्थिक चुनौतियाँ अपेक्षाकृत अधिक हैं, वहाँ इस प्रकार की शिक्षा युवाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। साथ ही, यह राज्य के औद्योगिक विकास एवं आर्थिक प्रगति को भी गति प्रदान करती है।

हालाँकि, अध्ययन से यह भी सामने आता है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण के प्रभावी क्रियान्वयन में अभी कई चुनौतियाँ मौजूद हैं, जैसे- प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, आवश्यक संसाधनों का अभाव तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित पहुँच। अतः आवश्यक है कि सरकार, शैक्षणिक संस्थान एवं अन्य संबंधित निकाय मिलकर इस क्षेत्र को

और अधिक सुदृढ़ बनाएं। इस प्रकार, व्यावसायिक शिक्षा न केवल छात्रों के व्यक्तिगत विकास बल्कि राज्य के समग्र विकास के लिए भी एक महत्वपूर्ण साधन सिद्ध होती है।

संदर्भ सूची (References) :

1. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली।
2. एनसीईआरटी (NCERT). (2019). भारत में विद्यालयी व्यावसायिक शिक्षा पर रिपोर्ट. नई दिल्ली।
3. यूनेस्को (UNESCO). (2015). तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण रिपोर्ट. पेरिस।
4. राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (NSDC). (2021). कौशल विकास रिपोर्ट. नई दिल्ली।
5. अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE). (2021). तकनीकी शिक्षा रिपोर्ट. नई दिल्ली।
6. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC). (2020). उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा रिपोर्ट. नई दिल्ली।
7. केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE). (2019). व्यावसायिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम दिशा-निर्देश. नई दिल्ली।
8. इग्नू (IGNOU). (2018). व्यावसायिक शिक्षा अध्ययन सामग्री. नई दिल्ली।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 39-45
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

औपनिवेशिक इतिहासलेखन से परे नाथ एवं अघोर चिकित्सा परंपराः एक IKS आधारित पुनर्पाठ

प्रो० अरुण कुमार सिंह
(इतिहास विभाग),
डी०ए०वी० पीजी कॉलेज, आजमगढ़
(सम्बद्ध महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय आजमगढ़)

सारांश

भारतीय ज्ञान परंपराओं का अध्ययन लंबे समय तक औपनिवेशिक दृष्टिकोण से प्रभावित रहा है, जिसके परिणामस्वरूप अनेक स्वदेशी परंपराओं को अवैज्ञानिक, रहस्यवादी या सामाजिक रूप से विचलित बताकर हाशिए पर डाल दिया गया। नाथ और अघोर संप्रदाय इसी प्रवृत्ति के प्रमुख उदाहरण हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र इस स्थापित औपनिवेशिक विमर्श को पुनःपरिभाषित करने का प्रयास करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा के वैचारिक ढांचे के भीतर यह अध्ययन नाथ एवं अघोर साधना–पद्धतियों में निहित चिकित्सा–तत्वों का विश्लेषण करता है।इस शोध पत्र में यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि इन परंपराओं की चिकित्सा पद्धतियों को केवल अंधविश्वास या जादुई क्रियाओं के रूप में नहीं देखा जा सकता, बल्कि इन्हें मनो–दैहिक संतुलन, ऊर्जा–आधारित चिकित्सा तथा सामुदायिक स्वास्थ्य के स्वदेशी मॉडल के रूप में समझा जाना चाहिए। शपिंड–ब्रह्मांडश के सिद्धांत के आधार पर यह स्पष्ट किया गया है कि शरीर, मन और चेतना के मध्य अंतर्संबंधों को समझने की एक समग्र पद्धति इन परंपराओं में विकसित हुई थी।यह शोध पत्र नाथों की काया–सिद्धि, रसशास्त्र एवं नाड़ी–विज्ञान तथा अघोर परंपरा की मनोवैज्ञानिक उपचार–पद्धतियों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है और यह प्रस्तावित करता है कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के साथ संवाद स्थापित करते हुए इन परंपराओं का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है।

मुख्य शब्द

औपनिवेशिक इतिहासलेखन, भारतीय ज्ञान प्रणाली, नाथ पंथ, अघोर परंपरा, लोक–चिकित्सा, योग–चिकित्सा, औपनिवेशिक पूर्वाग्रह, वैकल्पिक चिकित्सा, पुनर्पाठ, आध्यात्मिक उपचार।

प्रस्तावना

भारतीय इतिहासलेखन का एक महत्वपूर्ण संकट यह रहा है कि इसकी व्याख्या लंबे समय तक बाहरी दृष्टिकोणों के प्रभाव में हुई। औपनिवेशिक काल में जब यूरोपीय विद्वानों ने भारत के धर्म, संस्कृति और ज्ञान परंपराओं का अध्ययन प्रारंभ किया, तब उनके सामने दोहरे उद्देश्य थे,एक ओर वे ज्ञान संकलन कर रहे थे, दूसरी ओर औपनिवेशिक शासन को सुदृढ़ करने के लिए भारतीय समाज को वर्गीकृत और नियंत्रित भी कर रहे थे। इस प्रक्रिया में भारतीय परंपराओं को समझने के बजाय उन्हें अपनी वैचारिक श्रेणियों में बाँधने का प्रयास किया गया।औपनिवेशिक विद्वानों की बौद्धिक पृष्ठभूमि प्रायः प्रबोधन और विक्टोरियन नैतिकता से प्रभावित थी, जहाँ तर्कवाद, भौतिकवाद और रैखिक प्रगति को सर्वोच्च मूल्य माना

जाता था। परिणामस्वरूप, जो भी परंपराएँ इन मानकों के अनुरूप नहीं थीं, उन्हें श्रहस्यवादश, श्ओकल्टश या श्प्रिमिटिवश कहकर परिभाषित किया गया। नाथ और अघोर संप्रदाय इसी प्रकार की व्याख्याओं के अंतर्गत आए।नाथ परंपरा, जो मूलतः योग, तंत्र और सिद्ध परंपराओं का समन्वय है, को औपनिवेशिक लेखन में अक्सर केवल बाहरी रूपों—जैसे कान छिदवाने की प्रथा या योगिक आसनों—तक सीमित कर दिया गया। इसी प्रकार, अघोर परंपरा को श्मशान साधना और सामाजिक वर्जनाओं के उल्लंघन तक सीमित कर उसकी गहन दार्शनिक और चिकित्सकीय अंतर्दृष्टियों की उपेक्षा की गई।यह दृष्टिकोण केवल एक बौद्धिक त्रुटि नहीं था, बल्कि एक सत्ता—समर्थित विमर्श था, जिसने भारतीय ज्ञान प्रणालियों को निम्नतर सिद्ध करने का कार्य किया। इसके परिणामस्वरूप, भारतीय समाज में भी एक प्रकार की हीनभावना उत्पन्न हुई, जहाँ स्वदेशी ज्ञान को अवैज्ञानिक और पश्चिमी ज्ञान को श्रेष्ठ माना जाने लगा।समकालीन संदर्भ में, विशेषकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति2020 के पश्चात, भारतीय ज्ञान परंपरा के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। यह केवल अतीत का गौरवगान नहीं, अपितु ज्ञान की बहुलता को स्वीकार करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।नाथ और अघोर परंपराएँ इस पुनर्पाठ के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ये केवल आध्यात्मिक साधना तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इनमें शरीर, मन और समाज के समग्र संतुलन की अवधारणा निहित है। श्पिंड—ब्रह्मांडश का सिद्धांत, जो सूक्ष्म और स्थूल के बीच एकता को स्थापित करता है, इन परंपराओं की मूल आधारशिला है। इसके अनुसार, मानव शरीर केवल जैविक संरचना नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय ऊर्जा का प्रतिबिंब है।

औपनिवेशिक लेखन में इन परंपराओं को उनके बाह्य प्रतीकों, अनुष्ठानों और असामान्य प्रतीत होने वाले व्यवहारों के आधार पर समझने का प्रयास किया गया। परिणामस्वरूप, नाथ योगियों की साधना—पद्धति को केवल शारीरिक अभ्यासों या रहस्यमय क्रियाओं के रूप में सीमित कर दिया गया, जबकि अघोर परंपरा को सामाजिक मानदंडों के उल्लंघन और असामान्य जीवन—शैली के रूप में प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार की व्याख्या ने इन परंपराओं के आंतरिक दार्शनिक और चिकित्सकीय आयामों को अदृश्य कर दिया।

यह समझना आवश्यक है कि औपनिवेशिक ज्ञान—निर्माण केवल निष्पक्ष अकादमिक प्रक्रिया नहीं थी, बल्कि यह एक व्यापक सत्ता—संरचना का हिस्सा था, जिसमें ज्ञान को वर्गीकृत करना और पुनर्परिभाषित करना भी शासन की रणनीति का अंग था। इस प्रक्रिया में भारतीय ज्ञान प्रणालियों को यूरोपीय श्रेणियों के भीतर समायोजित करने का प्रयास किया गया, जिससे उनकी मौलिक संरचना विकृत हो गई।नाथ और अघोर परंपराएँ भारतीय ज्ञान परंपरा के भीतर एक विशिष्ट स्थान रखती हैं। ये परंपराएँ केवल धार्मिक साधना तक सीमित नहीं हैं, बल्कि ये शरीर, मन और चेतना के बीच संबंधों को समझने की एक समग्र प्रणाली प्रस्तुत करती हैं। इनका मूल आधार यह धारणा है कि मानव शरीर एक स्थिर जैविक इकाई नहीं, अपितु एक गतिशील ऊर्जा—तंत्र है, जिसमें प्राण शक्ति निरंतर प्रवाहित होती रहती है।नाथ परंपरा में "काया" को साधना का केंद्र माना गया है। यहाँ शरीर को साधारण भौतिक संरचना नहीं, बल्कि चेतना के विकास का माध्यम माना जाता है। हठयोग, प्राणायाम, बंध, मुद्रा, नाड़ी—विज्ञान और रसशास्त्र जैसी साधनाएँ इस परंपरा के महत्वपूर्ण घटक हैं। इन सभी का उद्देश्य शरीर और चेतना के बीच संतुलन स्थापित करना है, जिससे साधक उच्चतर अनुभवात्मक अवस्थाओं तक पहुँच सके।

इसके विपरीत अघोर परंपरा मानसिक संरचना और सामाजिक सीमाओं के अतिक्रमण पर आधारित है। यह परंपरा भय, घृणा और सामाजिक निषेधों को साधना के माध्यम से पार करने की प्रक्रिया प्रस्तुत करती है। अघोर साधक उन परिस्थितियों का सामना करता है जिन्हें सामान्यतः अस्वीकार्य या भयावह माना जाता है। यह प्रक्रिया केवल बाह्य व्यवहार नहीं, बल्कि आंतरिक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन की एक विधि है, जिसमें साधक अपनी चेतना के गहरे स्तरों से परिचित होता है।भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान को केवल बौद्धिक गतिविधि के रूप में नहीं देखा जाता, अतएव इसे अनुभव, साधना और जीवन—व्यवहार से जुड़ी एक जीवित प्रक्रिया माना जाता है। यहाँ ज्ञान स्थिर नहीं है, बल्कि गतिशील और संदर्भ—आधारित है। इस दृष्टिकोण में "सत्य" किसी एक निश्चित कथन में सीमित नहीं होता, बल्कि अनुभव की निरंतरता में प्रकट होता है।"पिंड—ब्रह्मांड" का सिद्धांत इस सम्पूर्ण दृष्टि का महत्वपूर्ण आधार है। इसके अनुसार मानव शरीर ब्रह्मांड का सूक्ष्म प्रतिबिंब है। जो संरचनाएँ ब्रह्मांड में विद्यमान हैं, वे सूक्ष्म रूप में शरीर में भी उपस्थित हैं। इस दृष्टिकोण में शरीर और ब्रह्मांड के बीच कोई मूलभूत विभाजन नहीं है, बल्कि एक निरंतर संबंध है।औपनिवेशिक आधुनिकता ने इस समग्र दृष्टि को समझने के बजाय इसे विभाजित और

वर्गीकृत करने का प्रयास किया। इसके परिणामस्वरूप ज्ञान के ऐसे रूप जो अनुभव और साधना पर आधारित थे, उन्हें अवैज्ञानिक या रहस्यवादी श्रेणी में डाल दिया गया। यह एक प्रकार का मचपेजमउपब तमकनबजपवदपेउ था, जिसमें ज्ञान की बहुलता को एकल मानक में बदल दिया गया।नाथ और अघोर परंपराओं के संदर्भ में यह तमकनबजपवदपेउ विशेष रूप से स्पष्ट दिखाई देता है। जहाँ एक ओर नाथ योगियों की साधना को केवल शारीरिक अभ्यास के रूप में प्रस्तुत किया गया, वहीं अघोर साधना को सामाजिक विचलन के रूप में देखा गया। इस प्रकार इन परंपराओं के चिकित्सकीय, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक आयामों की उपेक्षा हुई।यदि हम इन परंपराओं को उनके मूल संदर्भ में देखें, तो स्पष्ट होता है कि इनमें शरीर और मन के संबंधों को समझने की एक जटिल और सूक्ष्म प्रणाली विकसित हुई थी। नाड़ी विज्ञान शरीर के भीतर ऊर्जा प्रवाह के मार्गों का वर्णन करता है, जबकि स्वरोदय विज्ञान श्वास और समय के संबंध को समझने का प्रयास करता है। इसी प्रकार रसशास्त्र शरीर के रासायनिक संतुलन को प्रभावित करने वाली प्रक्रियाओं का अध्ययन प्रस्तुत करता है।अघोर परंपरा मानसिक संरचना के उन पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करती है जो भय, घृणा और सामाजिक बवदकपजपवदपदह से उत्पन्न होते हैं। यह परंपरा व्यक्ति को इन सीमाओं से मुक्त करने की प्रक्रिया प्रस्तुत करती है, जिससे चेतना अधिक व्यापक और संतुलित अवस्था में पहुँच सके।

समकालीन संदर्भ में जब वैश्विक चिकित्सा प्रणालियाँ धीरे–धीरे समग्रता (ीवसपेउ) की ओर बढ़ रही हैं, तब इन परंपराओं का पुनर्पाठ अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है। आधुनिक मनोविज्ञान, विशेषकर बवहदपजपअम इमींअपवतंस जीमतंचल और म•चवेनतम जीमतंचल जैसे दृष्टिकोण, अप्रत्यक्ष रूप से उन प्रक्रियाओं की ओर संकेत करते हैं जो अघोर साधना में प्रतीकात्मक रूप में उपस्थित हैं।इसी प्रकार शरीर–विज्ञान और ऊर्जा–चिकित्सा के क्षेत्र में भी ऐसे अध्ययन सामने आए हैं जो यह संकेत देते हैं कि शरीर केवल जैव–रासायनिक प्रणाली नहीं है, बल्कि उसमें सूक्ष्म स्तर पर ऊर्जा–गतिशीलता भी विद्यमान है। यद्यपि इन दोनों दृष्टिकोणों के बीच प्रत्यक्ष समानता स्थापित करना वैज्ञानिक दृष्टि से सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए, फिर भी यह स्पष्ट है कि दोनों ही प्रणालियाँ शरीर को एक जटिल और बहु–स्तरीय संरचना के रूप में समझने का प्रयास करती हैं।इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नाथ और अघोर परंपराएँ भारतीय ज्ञान परंपरा के भीतर एक वैकल्पिक मचपेजमउवसवहल प्रस्तुत करती हैं, जो अनुभव, साधना और समग्रता पर आधारित है। इन परंपराओं का अध्ययन केवल ऐतिहासिक पुनर्निर्माण नहीं है, यह ज्ञान की सीमाओं और संभावनाओं को पुनः परिभाषित करने की प्रक्रिया भी है।इस शोध पत्र का उद्देश्य इन परंपराओं को पुनः वैज्ञानिकता के दायरे में लाना नहीं है, अपितु श्विज्ञानश की परिभाषा को व्यापक बनाना है, ताकि अनुभवजन्य, सांस्कृतिक और सामुदायिक ज्ञान को भी मान्यता मिल सके। इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि हम औपनिवेशिक पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर इन परंपराओं को उनके अपने संदर्भ में समझें।

औपनिवेशिक शासन के विस्तार के साथ यूरोपीय विद्वानों, प्रशासकों एवं मिशनरियों ने भारतीय समाज, धर्म, संस्कृति तथा चिकित्सा परंपराओं को समझने के लिए जिस ऐतिहासिक पद्धति का निर्माण किया, उसे औपनिवेशिक इतिहासलेखन कहा जाता है। यह इतिहास दृष्टि केवल तथ्यों का संकलन नहीं थी, बल्कि इसमें एक विशेष वैचारिक संरचना सक्रिय थी, जिसका उद्देश्य भारतीय ज्ञान–व्यवस्थाओं को यूरोपीय सभ्यता के मानकों पर परखना तथा उन्हें आदिम, अवैज्ञानिक और अविकसित सिद्ध करना था। औपनिवेशिक इतिहासलेखन की प्रमुख विशेषता यह थी कि यह भारतीय परंपराओं को आत्मनिर्भर ज्ञान–स्रोत के रूप में देखने के बजाय उन्हें यूरोपीय तर्कवाद और वैज्ञानिकता की कसौटी पर मापता था। परिणामस्वरूप, भारतीय चिकित्सा–विज्ञान के विविध धाराओं–जैसे नाथ योगियों की शरीर–चिकित्सा, अघोर पंथ की समग्र उपचार पद्धति तथा प्ज्ञै आधारित लोक–ज्ञान को–संगठित और वैज्ञानिक ज्ञान–रूप में देखने के बजाय अंधविश्वास, रहस्यवाद अथवा 'ओकल्ट' के रूप में चित्रित किया गया।दार्शनिक स्तर पर यह इतिहासलेखन एथनोसेंट्रिक था अर्थात् यूरोपीय चेतना के दृष्टिकोण से ही भारत के अतीत को देखा गया। इसका मूल आधार प्रगतिकारी इतिहास–दृष्टि था, जिसमें यह मान्यता प्रमुख थी कि मानव सभ्यताएँ एक रैखिक क्रम में आगे बढ़ती हैं और यूरोप उसका सर्वोच्च चरण है। इस विचार के कारण भारतीय परंपराओं को स्वाभाविक रूप से 'पिछड़ा चरण' माना गया। औपनिवेशिक दार्शनिक ढांचे में आध्यात्मिकता, योगशास्त्र, तांत्रिक चिकित्सा, मंत्र–चिकित्सा तथा देह–अध्यात्म को तर्कहीन एवं अवैज्ञानिक ठहराया गया।

जबकि भारतीय परंपरा में ये विषय गहन अनुभववाद, साधनात्मक परीक्षण और समुदाय–आधारित ज्ञान के महत्वपूर्ण माध्यम थे।

पद्धतिगत रूप से औपनिवेशिक इतिहासलेखन दस्तावेज–आधारित था, जिसमें प्रशासनिक अभिलेखों, यात्रा–वृत्तांतों तथा मिशनरी रिपोर्टों को प्राथमिक स्रोत मान लिया गया। भारतीय मौखिक परंपरा, साधना–केंद्रित ज्ञान, गुरु–शिष्य परंपरा तथा अनुभवजन्य चिकित्सा प्रक्रियाओं को ऐतिहासिक प्रमाण नहीं माना गया। इससे भारतीय चिकित्सा परंपराएँ, विशेषतः नाथ एवं अघोर जैसे साधनापरक समुदायों की चिकित्सा जानकारी, इतिहास से लगभग बाहर कर दी गई। इन समुदायों का अधिकांश ज्ञान व्यवहारिक, अनुभवात्मक और मौखिक था, जिसे औपनिवेशिक पद्धति इतिहास की श्रेणी में स्वीकार नहीं करती थी।औपनिवेशिक इतिहासकारों ने नाथ योगियों की देह–विज्ञान संबंधी अवधारणाओं–जैसे नाड़ी, चक्र, प्राण, बिंदु, रसायन आदि को प्रतीकात्मक या दैवीय कल्पना के रूप में प्रस्तुत किया। इसी प्रकार अघोर परंपरा के समग्र उपचार जिसमें मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, औषधीय और आध्यात्मिक आयाम सम्मिलित थे। अंधविश्वास या 'आकर्षक विचित्रता' के रूप में वर्णित किया गया। इस प्रकार इतिहासलेखन ने भारतीय चिकित्सा ज्ञान को न केवल गलत ढंग से प्रस्तुत किया बल्कि उसके वैज्ञानिक तर्क को भी अस्पष्ट कर दिया।औपनिवेशिक इतिहासलेखन की एक और विशेषता थी सत्तात्मक दृष्टि। ज्ञान का निर्माण सत्ता के पक्ष में होता है और औपनिवेशिक राज्य के लिए यह दिखाना आवश्यक था कि भारत की पारंपरिक चिकित्सा प्रणाली कमजोर, अव्यवस्थित और अवैज्ञानिक है, ताकि पश्चिमी एलोपैथिक चिकित्सा को उन्नत और श्रेष्ठ सिद्ध किया जा सके। इस राजनीतिक उद्देश्य से प्रेरित होकर लोक–ज्ञान, आध्यात्मिक चिकित्सा, योग–आधारित उपचार और देह–मन–एकत्व की अवधारणाओं को व्यवस्थित रूप से हाशिये पर रखा गया।इस प्रकार, औपनिवेशिक इतिहासलेखन का दार्शनिक ढांचा यूरोपीय श्रेष्ठतावाद, रैखिक प्रगति सिद्धांत और तर्कवाद पर आधारित था, जबकि उसका पद्धतिगत ढांचा अभिलेख–केंद्रित, सत्ता–नियंत्रित और भारतीय अनुभवजन्य परंपरा की उपेक्षा करने वाला था। परिणामस्वरूप नाथ और अघोर परंपराओं की चिकित्सा प्रणाली का वास्तविक स्वरूप विकृत हो गया। आज प्ज्ञै आधारित पुनर्पाठ की आवश्यकता इसलिए बढ़ी है कि भारतीय चिकित्सा ज्ञान को उसके अपने सांस्कृतिक और दार्शनिक संदर्भ में समझा जा सके।

भारतीय ज्ञान प्रणाली का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

भारतीय ज्ञान प्रणाली एक समग्र, अनुभवाधारित तथा बहुस्तरीय बौद्धिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करती है, जिसका विकास सहस्राब्दियों में सामाजिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक और व्यावहारिक प्रक्रियाओं के माध्यम से हुआ है। इसका सैद्धांतिक आधार केवल तर्क या प्रयोग तक सीमित नहीं है, बल्कि यह प्रत्यक्ष (अनुभव), अनुमान (तर्क) और शब्द (आचार्य–परंपरा) जैसे विभिन्न प्रमाणों के संतुलित उपयोग पर आधारित है। इस दृष्टि से प्ज्ञै ज्ञान को एक जीवित परंपरा मानती है, जो व्यक्ति, समाज और प्रकृति के बीच अंतर्संबंधों को समझने का माध्यम बनती है।प्ज्ञै का प्रमुख सिद्धांत समग्रता (भ्वसपेउ) है, जिसमें शरीर, मन और आत्मा को एकीकृत इकाई के रूप में देखा जाता है। यही कारण है कि भारतीय चिकित्सा परंपराएँ–जैसे योग, आयुर्वेद, नाथ एवं अघोर पद्धतियाँ–रोग को केवल जैविक विकार नहीं मानतीं, बल्कि उसे मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक असंतुलन का परिणाम समझती हैं। इस ढांचे में उपचार भी बहुआयामी होता है, जिसमें औषधि, साधना, आहार–विहार और मानसिक अनुशासन सभी सम्मिलित होते हैं।दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है अनुभव–आधारित सत्यापन। प्ज्ञै में ज्ञान का प्रमाण केवल लिखित ग्रंथों तक सीमित नहीं होता, बल्कि साधना, अभ्यास और सामुदायिक अनुभवों के माध्यम से उसका परीक्षण होता है। नाथ योगियों की प्राण–चिकित्सा या अघोर परंपरा की समग्र उपचार पद्धति इसी अनुभवजन्य प्रक्रिया का परिणाम हैं।इसके अतिरिक्त, प्ज्ञै में स्थानीयता और संदर्भिकता को विशेष महत्व दिया जाता है। ज्ञान को सार्वभौमिक मानते हुए भी उसके प्रयोग को स्थानीय परिस्थितियों, जलवायु, आहार और सामाजिक संरचना के अनुरूप ढाला जाता है। इस प्रकार प्ज्ञै एक लचीली और अनुकूलनशील प्रणाली है।

नाथ पंथ की चिकित्सा परंपरारू प्रमुख सिद्धांत एवं पद्धतियाँ

नाथ पंथ भारतीय साधना–परंपराओं में एक महत्वपूर्ण धारा है, जिसका दार्शनिक और चिकित्सा संबंधी ज्ञान शरीर, मन और प्राण–इन तीनों के संतुलन पर आधारित है। नाथ योगियों ने योग, तंत्र, हठयोग, रसायन और आध्यात्मिक अनुशासन के माध्यम से एक ऐसी चिकित्सा परंपरा विकसित की, जो

व्यक्ति को संपूर्ण रूप से स्वस्थ बनाने का लक्ष्य रखती है। इस परंपरा का मुख्य उद्देश्य केवल रोग–नाश नहीं, बल्कि देह और चेतना को उच्च अवस्था में स्थापित करना है।नाथ चिकित्सा का पहला आधार है शरीर–केन्द्रित साधना (कायास्थान सिद्धांत)। इस सिद्धांत में शरीर को साधना का साधन माना गया है। नाड़ी, चक्र, प्राण, बिंदु तथा अग्नि जैसी अवधारणाएँ नाथ चिकित्सा के मूल स्तंभ हैं। इनके माध्यम से योगी यह मानते हैं कि शरीर का हर विकार प्राण–प्रवाह में असंतुलन से उत्पन्न होता है। अतः उपचार का लक्ष्य प्राण–ऊर्जा का पुनर्संतुलन है।दूसरा प्रमुख सिद्धांत है–हठयोग आधारित चिकित्सा। हठयोग के आसन, प्राणायाम, बंध और मुद्रा शारीरिक रोगों को दूर करने में सहायक माने गए हैं। प्राणायाम को नाथ योगियों ने ऊर्जा–नियंत्रण की सर्वोच्च विधि माना, जिसके द्वारा श्वसन तंत्र, पाचन क्रिया, रक्त–संचार और तंत्रिका–तंत्र में सुधार होता है। कपालभाति, भस्त्रिका, नाड़ीशोधन आदि प्राणायाम रोगों की रोकथाम में उपयोगी बताए गए हैं।तीसरा महत्वपूर्ण आयाम है–रसायन । नाथ योगियों के यहाँ रसायन का अर्थ केवल धातुओं या द्रव्यों का प्रयोग नहीं, यह शरीर को पुनर्जीवित करने की समग्र प्रक्रिया है। दीर्घ जीवन, बल, ओज, और शरीर की पुनर्निर्माण क्षमता इस विधि के केंद्र में हैं। वे जड़ी–बूटियों, खनिजों, योगिक आहार तथा साधना के संयोजन से शरीर को शुद्ध और सबल बनाने पर बल देते हैं।चौथा आयाम है मंत्र और ध्वनि–चिकित्सा। नाथ पंथ यह मानता है कि ध्वनि विशेषकर बीज मंत्र–शरीर के सूक्ष्म केंद्रों पर प्रभाव डालती है और मानसिक तथा ऊर्जा संबंधी विकारों को दूर करती है। यह विधि मानसिक तनाव, भय, अवसाद और असंतुलन को दूर करने में सहायक मानी जाती है।

अघोर परंपरा की चिकित्सा दृष्टिरू सिद्धांत, साधना एवं उपचार

अघोर परंपरा भारतीय साधना–धाराओं में एक विशिष्ट और गहन अनुभव–आधारित प्रणाली है, जिसकी चिकित्सा दृष्टि समग्रता, निर्भेदता और आंतरिक शुद्धि पर आधारित है। "अघोर" का शाब्दिक अर्थ है–जहाँ भय, द्वेष या भेदभाव न हो। इसी सिद्धांत के आधार पर अघोर चिकित्सा शरीर, मन और चेतना के बीच किसी प्रकार का विभाजन नहीं करती, बल्कि इन्हें एकीकृत रूप में देखती है।अघोर परंपरा का मूल सिद्धांत यह है कि रोग केवल शारीरिक विकार नहीं, बल्कि मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक असंतुलन का परिणाम है। अतः उपचार की प्रक्रिया भी बहुआयामी होती है। इसमें साधना, ध्यान, आहार–विहार, औषधीय प्रयोग और आंतरिक अनुशासन सभी सम्मिलित होते हैं। अघोरी साधक यह मानते हैं कि जब व्यक्ति अपने भीतर के भय, विकार और द्वैत को समाप्त कर लेता है, तब स्वास्थ्य स्वतः स्थापित हो जाता है।

साधना अघोर चिकित्सा का केंद्रीय तत्व है।ध्यान, जप और विशेष अनुष्ठानों के माध्यम से साधक अपने मानसिक और ऊर्जा–स्तर को संतुलित करता है। इसके साथ ही, अघोर परंपरा में जड़ी–बूटियों, प्राकृतिक द्रव्यों और कुछ विशिष्ट पारंपरिक औषधियों का प्रयोग भी किया जाता है, जो शरीर की शुद्धि और रोग–निवारण में सहायक माने जाते हैं।अघोर चिकित्सा की एक विशेषता यह भी है कि यह सामाजिक रूप से उपेक्षित या वर्जित माने जाने वाले तत्वों को भी उपचार के दायरे में शामिल करती है, जिससे यह परंपरा निर्भेद और समावेशी बनती है। इस प्रकार अघोर चिकित्सा केवल रोग–उपचार की विधि नहीं, बल्कि आत्म–परिवर्तन और समग्र स्वास्थ्य की एक गहन प्रक्रिया है, जो भारतीय ज्ञान प्रणाली के समावेशी और अनुभवपरक स्वरूप को अभिव्यक्त करती है।

IKS आधारित पुनर्पाठ की आवश्यकता और औचित्य

भारतीय ज्ञान प्रणाली (प्ज्ञै) के संदर्भ में नाथ एवं अघोर जैसी परंपराओं का पुनर्पाठ इसलिए आवश्यक है क्योंकि औपनिवेशिक इतिहासलेखन ने इन परंपराओं को प्रायः अवैज्ञानिक, रहस्यवादी या सीमांत समूहों की मान्यताओं के रूप में प्रस्तुत किया। इससे उनके वास्तविक ज्ञान–सिद्धांत, उपचार–पद्धति और अनुभवाधारित चिकित्सा–विज्ञान हाशिये पर चले गए। प्ज्ञै आधारित पुनर्पाठ इन परंपराओं को उनके अपने सांस्कृतिक, दार्शनिक और साधनात्मक संदर्भों में समझने का अवसर प्रदान करता है।प्ज्ञै का दृ ष्टिकोण समग्रता, अनुभववाद और संदर्भिकता पर आधारित है। इसलिए पुनर्पाठ से परंपरागत चिकित्सा ज्ञान को केवल आध्यात्मिक या लोक–विश्वास के रूप में नहीं, यह एक व्यवस्थित, अनुशासित और परीक्षणीय ज्ञान–प्रणाली के रूप में देखा जा सकता है। नाथ पंथ की प्राण–चिकित्सा, हठयोग और रसायन–विद्या, तथा अघोर परंपरा की मनोदृआध्यात्मिक उपचार पद्धतियाँ आधुनिक वैकल्पिक चिकित्सा–परिप्रेक्ष्य में वैज्ञानिक रूप से प्रासंगिक बन सकती हैं।इसके अतिरिक्त, प्ज्ञै आधारित पुनर्पाठ से

स्वदेशी चिकित्सा परंपराओं की उपेक्षित धरोहर को पुनर्जीवित करने, स्थानीय स्वास्थ्य–ज्ञान को संरक्षित करने तथा आधुनिक स्वास्थ्य–विमर्श में भारतीय दृष्टि को मजबूत स्थान दिलाने में सहायता मिलती है। इस प्रकार प्ज्ञै आधारित पुनर्पाठ न केवल ऐतिहासिक विकृतियों को सुधारता है, और यह भारतीय चिकित्सा–ज्ञान को समकालीन संदर्भों में पुनर्स्थापित करने का औचित्य भी प्रस्तुत करता है।

समकालीन चिकित्सा विमर्श में नाथ–अघोर परंपराओं की प्रासंगिकता

समकालीन चिकित्सा–विमर्श में नाथ और अघोर परंपराओं की प्रासंगिकता इसलिए बढ़ गई है क्योंकि आधुनिक स्वास्थ्य–प्रणालियाँ लगातार यह स्वीकार कर रही हैं कि केवल जैव–चिकित्सा मानव स्वास्थ्य की संपूर्ण व्याख्या नहीं कर सकती। तनाव, जीवनशैली, मानसिक असंतुलन, सामाजिक दबाव और पर्यावरणीय परिवर्तन–ये सभी आज के रोग–प्रसार के प्रमुख कारक बन चुके हैं। ऐसे में नाथ और अघोर परंपराएँ एक बहुआयामी चिकित्सा–दृष्टि प्रस्तुत करती हैं, जो आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप है।नाथ पंथ की योग–आधारित चिकित्सा वर्तमान समय में विशेष महत्व रखती है। विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययनों में प्राणायाम, आसन और ध्यान को मानसिक स्वास्थ्य, श्वसन तंत्र, हृदय–स्वास्थ्य तथा तनाव–नियंत्रण में प्रभावी पाया गया है। नाड़ी–शोधन, कपालभाति और अन्य प्राण–विधियाँ आज 'लाइफस्टाइल मेडिसिन' का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी हैं। नाथ परंपरा का रसायन–विज्ञान रोग–प्रतिरोधक क्षमता, पुनरुत्पादन और दीर्घायु के संदर्भ में आधुनिक पोषण–विज्ञान व पुनर्जनन–चिकित्सा से भी संवाद स्थापित करता है।दूसरी ओर, अघोर परंपरा का मनोदृआध्यात्मिक उपचार मॉडल आज के मानसिक स्वास्थ्य संकट में अत्यंत प्रासंगिक है। अघोर साधना व्यक्ति की भीतरी भय, अपराधबोध, असुरक्षा और नकारात्मक भावनाओं को स्वीकार कर उन्हें रूपांतरित करने पर बल देती है। यह दृष्टि आधुनिक मनोविज्ञान के '।बबमचजंदबम–ठेंमक जीमतंचपमे' और 'डपदकदृठवकल डमकपबपदम' से गहरे स्तर पर मेल खाती है। उनका समावेशी और निर्भेद उपचार–मॉडल स्वास्थ्य को केवल शरीर तक सीमित न रखकर सामाजिक–सांस्कृतिक आयामों से भी जोड़ता है, जो आज की सामुदायिक स्वास्थ्य नीतियों में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है।

इसके अतिरिक्त, नाथदृअघोर परंपराओं का स्थानीय औषधीय ज्ञान, जड़ी–बूटी प्रयोग, जीवनशैली अनुशासन और ध्यान–आधारित चिकित्सा ग्रामीण स्वास्थ्य–व्यवस्थाओं को मजबूत बनाने में सहायक हो सकती है। इस प्रकार, ये परंपराएँ आधुनिक चिकित्सा के पूरक के रूप में एक संतुलित, मानव–केंद्रित और अनुभवाधारित स्वास्थ्य–दृष्टि प्रदान करती हैं, जो आज के वैश्विक स्वास्थ्य विमर्श में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अनुसंधान विधि

इस शोध में गुणात्मक अनुसंधान पद्धति का उपयोग किया गया है। अध्ययन के लिए प्रामाणिक साहित्य, पारंपरिक ग्रंथ, नाथ एवं अघोर परंपराओं से संबंधित उपलब्ध दस्तावेज, शोध–पत्र एवं समकालीन विश्लेषण को आधार बनाया गया। विषय के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक आयामों को समझने हेतु विषय–वस्तु विश्लेषण अपनाया गया। औपनिवेशिक इतिहासलेखन एवं प्ज्ञै संबंधित दृष्टिकोणों का तुलनात्मक अध्ययन कर उनके अंतर्विरोधों और सीमाओं की पहचान की गई। सभी स्रोतों की व्याख्या भारतीय ज्ञान–परंपरा के संदर्भ में की गई, ताकि नाथ–अघोर चिकित्सा परंपराओं का सुसंगत और निष्पक्ष पुनर्पाठ प्रस्तुत हो सके।

निष्कर्ष

इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि नाथ एवं अघोर चिकित्सा परंपराओं को केवल धार्मिक या रहस्यवादी संरचनाओं के रूप में सीमित करना एक ऐतिहासिक और वैचारिक सरलीकरण रहा है, जो मुख्यतः औपनिवेशिक इतिहासलेखन की दृष्टि से निर्मित हुआ। औपनिवेशिक ज्ञान–प्रणाली ने भारतीय परंपराओं को समझने के बजाय उन्हें वर्गीकृत करने और अपनी बौद्धिक श्रेणियों में ढालने का प्रयास किया, जिसके परिणामस्वरूप अनेक स्वदेशी ज्ञान–रूपों का वास्तविक स्वरूप धुंधला हो गया।अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि नाथ और अघोर परंपराएँ केवल आध्यात्मिक साधना तक सीमित नहीं हैं, अपितु इनमें शरीर, मन और चेतना के गहन अंतर्संबंधों को समझने की एक समग्र प्रणाली निहित है। नाथ परंपरा में काया–साधना, नाड़ी–विज्ञान और रस–शास्त्र जैसे तत्व शरीर को एक गतिशील ऊर्जा–तंत्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जबकि अघोर परंपरा मानसिक अवरोधों, भय और सामाजिक वर्जनाओं के

मनोवैज्ञानिक उपचार पर केंद्रित प्रतीत होती है।यह शोध पत्र यह भी स्पष्ट करता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल आधार द्वैत नहीं, अपितु समग्रता है। यहाँ स्वास्थ्य केवल रोग का अभाव नहीं, यह आंतरिक संतुलन, सामाजिक सामंजस्य और चेतना की स्थिरता का नाम है। इसी कारण इन परंपराओं को आधुनिक चिकित्सा या मनोविज्ञान के विकल्प के रूप में नहीं, एक पूरक ज्ञान–प्रणाली के रूप में देखा जाना अधिक उपयुक्त होगा।समकालीन वैश्विक संदर्भ में, जहाँ इंटीग्रेटेड मेडिसिन, होलिस्टिक हेल्थ और माइंड–बॉडी मेडिसिन जैसे दृष्टिकोण विकसित हो रहे हैं, वहाँ नाथ और अघोर परंपराओं का पुनर्पाठ विशेष महत्व रखता है। यह पुनर्पाठ केवल अतीत की पुनर्व्याख्या नहीं है, यह ज्ञान की बहुलता को स्वीकार करने की दिशा में एक बौद्धिक प्रयास है।अतः यह कहा जा सकता है कि नाथ और अघोर परंपराओं का अध्ययन भारतीय ज्ञान प्रणाली के पुनर्जागरण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। आवश्यकता इस बात की है कि इन परंपराओं को पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर, उनके आंतरिक तर्क और अनुभवजन्य आधार के साथ समझा जाए। यह न केवल अकादमिक न्याय की दृष्टि से आवश्यक है, तथा सांस्कृतिक आत्म–समझ और ज्ञान–संप्रभुता के लिए भी अनिवार्य है।

सुझाव

1.नाथ और अघोर परंपराओं पर इंटरडिसिप्लिनरी शोध को बढ़ावा दिया जाए, जिसमें इतिहास, चिकित्सा और मनोविज्ञान शामिल हों।

2. भारतीय ज्ञान परंपरा के अंतर्गत इन परंपराओं के लिए विशेष शोध केंद्र स्थापित किए जाएँ।

3.विश्वविद्यालय स्तर पर "Alternative Medical Systems of India" नामक पाठ्यक्रम विकसित किया जाए।

4.इन परंपराओं के oral history documentation को संरक्षित करने के लिए डिजिटल आर्काइव बनाए जाएँ।

5.नाथ और अघोर साधना–पद्धतियों पर ethnographic field studies को प्रोत्साहित किया जाए।

6.आधुनिक बायोमेडिसिन और IKS के बीच comparative health research को बढ़ावा दिया जाए।

7.इन परंपराओं को केवल धार्मिक अध्ययन तक सीमित न रखकर medical anthropology के अंतर्गत अध्ययन किया जाए।

8.पारंपरिक चिकित्सकों के अनुभवों का systematic documentation किया जाए।

9.नीति–निर्माण में भारतीय ज्ञान परंपरा पर आधारित स्वास्थ्य दृष्टिकोण को शामिल किया जाए।

10.औपनिवेशिक स्रोतों की आलोचनात्मक पुनर्पाठ को शोध का अनिवार्य हिस्सा बनाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ

1. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. (1950). नाथ संप्रदाय. वाराणसीरू नागरी प्रचारिणी सभा, च. 30, 75, 112।
2. शुक्ला, बद्री नारायण. लोक संस्कृति और इतिहास. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, च. 48, 102, 149।
3. सिंह, अवधेश. श्री सर्वेश्वरी समूह और अघोर परंपरा. वाराणसीः सर्वेश्वरी प्रकाशन, च. 60, 95, 138।
4. White, David Gordon- ;1996;- The Alchemical Body: Siddha Traditions in Medieval India- Chicago: University of Chicago Press, p- 210, 233, 268A
5. Mallinson, James- Hatha Yoga and the Nath Tradition- London: Routledge, p- 101, 144, 176।
6. कल्याण (योग और आरोग्य अंक). गोरखपुरः गीता प्रेस, च. 35, 52, 70।
7. पूर्वांचल मौखिक इतिहास (Field Interviews, 2022–2024), अप्रकाशित, नोट सं. 3, 7।

मो०नं० 9451165346

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 46-48
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

भारतीय ज्ञान परम्परा में संगीत और अध्यात्म

डॉ0 श्रुति मिश्रा
शास. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

प्रस्तावना :– भारतीय ज्ञान परंपरा में संगीत को केवल एक कला नहीं बल्कि स्वयं, ब्रह्मंड और दिव्यता की खोज का एक मार्ग माना गया है। यह परंपरा वेदों से उत्पन्न हुई है, और सदियों से गुरू–शिष्य परपरा के माध्यम से विकसित हुई है।

भारतीय ज्ञान परंपरा से संबंधित संगीत विषय पर विस्तृत जानकारी लिखी जा चुकी है।

1. **वैदिक काल :–** भारतीय संगीत की जड़े वैदिक काल में है। चारों वेदों में से सामवेद को संगीत का जनक माना जाता है।
   सामगान :– ऋग्वेद के मंत्रों को विशेष लय और स्वर के साथ गाने की प्रथ सामगान कहलाई।
   स्वरों का विकास :– वैदिक संगीत की शुरूआत एक स्वर (उदाल, अनुदात्त, स्वदित) से हुई, जो धीरे–धीरे साथ मूल स्वरों (सा, रे, ग, म, प, ध, नि) में स्थिर हो गए।
2. **प्रमुख ग्रंथ :–** भारतीय संगीत सिद्धांत को कई प्रचीन एवं आधारभूत ग्रंथ में संहिताबद्ध किया गया है, जो आज भी शास्त्रीय संगीत के आधार है।
   - नाट्यशास्त्र (भरत मुनि) इसे भारतीय, संगीत, नृत्य और नाट्यकला का सबसे प्राचीन एवं आधारभूत ग्रंथ माना जाता है। इसमें स्वर, ताल, वाद्य और गायन शैली का व्यवस्थित वर्णन मिलता है।
   - संगीत रत्नाकर (शारंगदेव) 13 वीं शताब्दी में रचित यह ग्रंथ हिन्दुस्तानी और कर्नाटक दोनों संगीत शैलियों की नींव माना जाता है। इसे संगीत का सागर भी कहा जाता है, और इसमें नाद, श्रुति, स्वर आदि का विस्तृत विवरण है।

शोध सारांश :– ज्ञान के हस्तांतरण की गुरू–शिष्य परंपरा भारतीय संगीत विरासत की पहचान है। इस प्रणाली में छात्र अपने गुरूओं से न केवल तकनीकी पहलुओं को भी गहराई से समझते है। यह शिक्षण मुख्य रूप से अवलोकन, श्रवण और स्मृति (मौखिक संचरण) के माध्यम से होता आया है।

संगीतिक और आध्यत्मिक महत्व :– भारतीय ज्ञान परम्परा में संगीत को नाद (दिव्य ध्वनि) की अभिव्यक्ति माना गया है। यह माना जाता है, कि संगीत में मन और आत्मा को एक सूत्र में पिरोने और आत्मिक उत्थान का कार्य करने की शक्ति है। इसे धर्म में चित्त की एकाग्रता के लिए एक स्वाभाविक सोपान माना जाता है। भारतीय संगीत की आधारशीला आध्यात्मिक है। भारत धर्म प्रधान देश है। भारतीय विचार धारा संघ से आदर्श को भावभूमि पर प्रवाहित होती रही हैं। जिसका प्रमुख उद्‌देश्य लोक कल्याण है। यहां की धरती में राम, कृष्ण, बुद्ध, रामकृष्ण, परमहंस विवेकानंद, महावीर की आत्मा कण–कण में समाहित है। सभ्य, अहिंसा, बह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह इन पंच महाव्रतों को इस देश

के निवासी युगों युगों से आत्मसात करते आ रहे है। भारतीय संगीत सदा से धर्म प्रधान रहा है। यहां की समस्त कलाएं, दर्शन, चिंतन आदि इसी और उन्मुख रही। यही वजह है कि धर्म से संगीत पर परस्पर घनिष्ठ संबंध है। धार्मिक दृष्टिकोण के अनुसार संगीत की उत्पत्ति वेदों में निर्माता ब्रह्म द्वारा ब्रह्म ने शिव शिव ने सरस्वती से नारद को और नारद से यह कला स्वर्ग के गधर्व व अप्सराओं को प्राप्त हुई। इस तरह से संगीत के विकास का क्रम आगे बढ़ा। बाद के उपासना का माध्यम माना गया है। ब्राह्मण्ड को प्रत्येक चराचर वस्तु में नाद व्याप्त है, नाद ब्रह्म से ही संगीत की उत्पत्ति हुई। संगीत के महत्व को बनाते हुए दामोदर पण्डित कहते है।

धर्मार्थकाम मोक्षाणा :– अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का साधन संगीत को माना गया है। नाद परमश्रेष्ठ है, इसे सरस्वती देवी की कृपा से ही प्राप्त किया जा सकता है। संगीत का आधारभूत तत्व ही नाद है। नाद को ही चैतन्य आनन्दात्मक ब्रह्म इत्यादि बताते हुए बाद के विषय में नारद ने पद्मपुराण में कहा है–

नाहं वसामि बैकुष्ठे योगिनां ह्रदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायान्ति तत्र तिष्ठामि नारदः।।

संगीत रत्नाकर में शारंड्देव ने नाद के विषय में कहा है कि नाद से वर्ण, वर्ण से शब्द, शब्द से वाक्य और वाक्यों से इस जग के व्यवहार अंजिल होते है। अर्थात् सारा जगत नाद के अधीन है। जीवन में चेतना का प्रतीक भी स्पदन रूप में नाद है, सत्पूर्ण सृष्टि ही नादत्मक है। योगियों और महर्षियों ने इसे निर्गुण ब्रह्म का चैतन्य, आनंदात्मक सगुण रूप कहा है। इसकी अनुभूति ¬ की साधना से प्रमाणित होती है।

प्राचीन काल से ही संगीत जन–मानस के निकट था। यही कारण है, कि संगीत लौकिक हो या आध्यात्मिक भक्ति भावना से ओत–प्रोत था। इसका प्रयोग ईश्वरोपना हेतु किया जाता था। चाहे नृत्य द्वारा भगवान शिव को आकर्षित करना हो या फिर वृन्दावन में ब्रज गोपियों का श्री कृष्ण के साथ रासलीला करना। रामायण और महाभारत काल में भी संगीत ने योग का रूप ले लिया था। श्री कृष्ण ने स्वयं को प्राप्त करने व मोक्ष, प्राप्ति का सरलतम उपाय भक्ति संकीर्तन को बताया। इस समय भक्ति व कीर्तन का महत्व था।

विष्णु पुराण में कहा गया है कि–

''जिस प्रकार अग्नि से स्वर्णादि धातुओं के मल का नाश होता है, उसी प्रकार भक्तिपूर्वक किया हुआ भगवत कीर्तन सभी पातकों का नाश करने का उत्तम साधन है।''

निष्कर्ष :–

अर्थात् भारतीय ज्ञान परम्परा में जितना अधिक स्थान आध्यात्म का है, उतना ही संगीत का भी है। भारतियों के दैनिक जीवन में अध्यात्म का स्थान सर्वोपरि है, एवं संगीत हमारे जीवन में सुख, शांति, प्रेम और आनंद का बोध कराती है।

भक्ति के आदिकाल में हुए ऐसे ऋषि मुनियों ने जब परमात्मा से अद्वैत रचाया, तब ही उनमें सृजनशीलता के रचनात्मकता के नवीन विचार उत्पन्न हुए। नये–नये विचार दुनिया में आगे प्रस्तुत किये। सूर, मीरा, गुरूनानक, तुलसी, कालीदास आदि के पास झांझ, इकवारा, करताल लेकर प्रभु भक्ति में तल्लीन होकर प्रभु भक्ति से ओत प्रोत गीत गये। सूर पदों से और मीरा नृत्य से कृष्ण को रिझाते थे। सूरदास उच्च कोटि के कवि एवं गायक थे। इन सभी भक्तों के पास अंतदृष्टि थी एवं संगीत के माध्यम से ही सूर, तुलसी, मीरा आदि ने अध्यात्म में विजय प्राप्त किये एवं साक्षात प्रभु के दर्शन हुए। मोक्ष को प्राप्त किये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. संगीतायन–सीमा जौहरी– पृं. 19
2. दामोदर पण्डित, संगीत दर्पण अ– 1 श्लोक 21
3. संगीत और संवाद– अशोक कुमार पृं. 79
4. श्रीमद्भागवत, पुराण– 15 पृं. 23, 24
5. अहोवल, संगीत परिजात, पृं. श्लोक 15

6. भारतीय संगीत का ऐतिहासिक विश्लेषण– प्रो. स्वतंत्र शर्मा पृं. 21, 22, 23
7. निबंध संगीत, – लक्ष्मी नारायण गर्ग– 305
8. ज्ञानामृत मासिक पत्रिका जुलाई पृं. 14

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 49-54
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

"काव्य में 'इन्सान' की खोज करते कवि सदानंद भोसले (मानवता के परिप्रेक्ष्य में)"

डॉ. दादासाहेब नारायण डांगे
सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, राहाता

शोध आलेख सारांश:

आज मनुष्य और इन्सान के बीच जो फ़र्क दिखायी दे रहा है, वह समकालीन हिंदी काव्य में एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभरकर सामने आया है। समकालीन हिंदी कवियों ने मनुष्य और इंसान के बीच के अंतर को अपने काव्य के माध्यम से सूक्ष्मता से अधोरेखित किया है। मनुष्य केवल जैविक अस्तित्व का द्योतक है, जबकि इन्सान संवेदनशीलता, प्रेम, दया, करुणा, नैतिकता, और सह-अस्तित्व की चेतना का प्रतीक है। मनुष्य तो सभी हैं, परंतु वे सभी इंसान नहीं बन सकते हैI उनमें हृदयगत भावों का अभाव होता हैI मनुष्य से इंसान बनने की यह प्रक्रिया वर्तमान समय में अत्यंत कठिन हो चुकी हैI आज सभी मनुष्य अपना स्वार्थ सिद्ध करने में लगे हुए हैI सभी पैसों के पीछे भाग रहें हैंI पैसों के पीछे की इस दौड़ ने मनुष्य को अंधा बना दिया हैI वह असंवेदनशील होता जा रहा हैI धीरे- धीरे समाज में नैतिक मूल्यों का ऱ्हास होता जा रहा है, जैसे की मनुष्य के भीतर का इंसान कहीं खो गया होI कवि सदानंद भोसले अपने काव्य के माध्यम से मनुष्य के भीतर खोये इसी इन्सान की खोज करते दिखायी दे रहें हैं, जहाँ वे वर्तमान समाज में बढ़ती अनैतिकता, स्वार्थता, असंवेदनशीलता, अमानवीयता के बीच मानवता का पुनर्निर्माण करने की कोशिश करते हैं। उनके काव्य में निरंतर इंसान की खोज की गयी हैI इसी बहाने वे मनुष्य को मानवीय मूल्यों की सही परख कराना चाहते हैं, साथ ही समाज को मानवता का संदेश भी देते हैI इस शोध आलेख में कवि के इसी उद्देश्य को विस्तृत रूप से विवेचित करने का प्रयास किया गया हैI

बीज शब्द: मनुष्य, इंसान, खोज, मानवता, मानवीय मूल्य, परिप्रेक्ष्य आदिI

प्रस्तावना:

कवि सदानंद भोसले एक जन कवि के रूप में वर्तमान समय में उभरकर सामने आये हैंI उनका काव्य कवि तुलसी की उक्ति 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' तथा 'वसुधैव कुटुंबकम्' के समान जन सामान्य के हित तथा मानवता का वाहक हैI वे अपने काव्य के द्वारा इंसान की खोज कर रहें हैंI उनके काव्य में अमानवियता, सामाजिक असमानता,

रिश्तों में आयी कृत्रिमता, संवेदनहीनता, मानवीय मूल्यों का होता जा रहा पतन, मनुष्य पर यांत्रिकता का प्रभाव, मनुष्य से इंसान बनने की प्रक्रिया आदि को उजागर किया गया हैI इससे यह स्पष्ट होता है कि, कवि सदानंद भोसले मानवता के कवि हैI समाज में पनप रही अमानवियता तथा असंवेदनशीलता को देख कवि व्यथित होते हैंI इसीलिये वे अपने काव्य के माध्यम से मानवीय मूल्यों की खोज करते नजर आते हैंI उनका काव्य निरंतर मनुष्य के भीतर से इंसान की खोज करता आया हैंI इससे स्पष्ट होता है कि, कवि का स्वर मानवतावादी एवं आशावादी हैI जन सामान्य के प्रति उन्हें विशेष सहानुभूति हैI उनके इसी दृष्टिकोन पर प्रस्तुत शोध आलेख में विचार विमर्श किया गया हैI

शोध विषय का विश्लेषण:

सामाजिक जीवन में मानवता को अत्यधिक महत्व प्राप्त हैI समाज का सबसे बड़ा धर्म मानवता ही हैI मानवता धर्म का मूल अर्थ है, इंसान के प्रति दया, प्रेम, करुणा और सेवाभावI मनुष्य का कल्याण ही मानवता का सबसे बड़ा धर्म हैI सबको समान अधिकार देना, दुसरों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करना, सभी के दुख एवं पीड़ा को समझना, सभी के साथ प्रेम से रहना, किसी को भी हानि नहीं पहुंचाना, जरूरतमंदों की मदद करना ही मानवता हैI वर्तमान समय में इन तत्वों की अधिक आवश्यकता जान पड़ रही हैI आज समाज में चारों ओर अमानवियता तथा संवेदनहीनता को बढ़ावा मिल रहा हैI जिससे समाज में नैतिक मूल्यों का पतन हुआ हैI मानवता मर रही हैI ऐसे में समाज में मानवता को बनाये रखना एक बहुत बड़ा आवाहन हैI समकालीन हिंदी कवि सदानंद भोसले ने इस आवाहन को मन से स्वीकारा हैI उन्होंने अपने कविताओं में मानवता के विकास के लिये भरसक प्रयास किया हैI वे एक संवेदनशील कवि हैI उनके मत से मनुष्यता का अर्थ केवल मनुष्य होना नहीं है बल्कि मनुष्यता का धर्म निभाना मनुष्यता हैI वे अपने काव्य के द्वारा मनुष्य को यही संदेश देना चाहते हैंI अपनी 'दो वचन मीठे बोलो' कविता में वे कहते हैं-

"मरणोपरांत तो आत्मा के, वृथा बंधन खोलो,
जिंदा जब तक है इंसान....
दो वचन मीठे बोलो"I**1**

कवि ने यहां मनुष्यों की असंवेदनशीलता पर व्यंग्य किया हैंI क्योंकि आज समाज में यही स्थिति उत्पन्न हुई हैI मनुष्य जब तक जीवित है, तब तक एक- दुसरे के साथ बात नहीं करतेI एक- दुसरे से कटे- कटे रहते हैंI अपने अहंकार के कारण हमेशा दुसरों को नीचा दिखाने की कोशिश में लगे रहते हैंI परंतु मनुष्य के मरने के बाद झुठ का प्रपंच रचते हैंI मरनेवाले व्यक्ति से अत्याधिक स्नेह होने का ढ़ोंग रचते हैंI सभी के मन में मनमुटाव, ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, दंभ आदि भाव तो भरे पड़े हैं, परंतु प्रेम, सद्भाव, करुणा, संवेदना आदि भाव बिलकुल नहीं हैI कवि को मनुष्य की यही असंवेदनशीलता व्याकुल करती हैI इसीलिये कवि यहां वर्तमान समय में मनुष्य में व्याप्त अमानवीयता पर तीखा प्रहार करते हैंI साथ ही मनुष्य को प्रेम एवं सद्भाव का पाठ भी पढ़ाते हैंI

यांत्रिक सभ्यता के इस युग में मनुष्य स्वयं एक यंत्र बन गया हैI अब वह यंत्र- उन्माद पर सवार हैI उसकी यह दौड़ उसे इंसान बनने नहीं देतीI उसे अकेले जीने की आदत लग जाती हैI दुसरों के प्रति उसे बिलकुल सहानुभूति नहीं हैI वह निरंतर अन्य को गिराने की फ़ितरत में लगा रहता हैI च्युंकि कवि के विचार से प्रत्येक मनुष्य के भीतर इंसान होता है, परंतु यांत्रिकता के विकास के कारण बनी उसकी निर्दयी सोच एवं संवेदनहीनता ने उसे अमानवीय बना दिया हैI वह कदम- कदम पर अपने भीतर बसे इंसान को मार रहा हैI कवि ने अपनी कविता 'आदमी में इंसान रहता है' में इसी समस्या पर मार्मिक भाष्य किया हैI वे कहते हैं-

"अपेक्षा से कभी उपेक्षा से, श्रद्धा से कभी निंदा से

आदमी जर्रा- जर्रा इंसान को मारता है

आदमी में इंसान रहता है"I**2**

यहां कवि ने मनुष्य की अमानवीय प्रवृत्ति पर व्यंग्य करने के साथ- साथ उसे मानवता की राह भी दिखायी हैI अर्थात् कवि अपनी कविताओं में केवल समस्याओं को नहीं उठाते, बल्कि उनका समाधान भी प्रस्तुत करते हैंI अन्य एक कविता में कवि मनुष्य की अमानवीय प्रवृत्ति पर तीखा प्रहार करते हैंI कवि कहते हैं, आज मनुष्य अपने स्वार्थ के लिये दुसरों को गिराने में सबसे आगे हैI उनकी 'वजह' नामक कविता की निम्न पंक्तियाँ इस बात को मार्मिकता से उजागर करती हैं-

"और....और.....और, औरों की वजह मैं खडा

औरों का औदार्य भूल, औरों को गिराने

उतावला 'मैं' सबसे आगे खडा"I**3**

वर्तमान समाज में व्याप्त अमानवीयता एवं संवेदनहीनता को देखकर कवि व्यथित हुए हैंI इसीलिये उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से मनुष्य के भीतर से इंसान की खोज करने की कोशिश की है, ताकि समाज में मानवता बनी रहेI उनके विचार से मनुष्य और इंसान में अंतर होता हैI प्रत्येक मनुष्य इंसान नहीं होताI इंसान बनने के लिये उसे बहुत कुछ गलाना होता हैI मनुष्य से इंसान बनने तक की यात्रा बहुत कठिन होती हैI कवि सदानंद भोसले की दृष्टि से प्रत्येक मनुष्य के भीतर एक इंसान होता है, जिसे जगाने की आवश्यकता होती हैI कवि अपनी कविताओं के माध्यम से यही कोशिश करते नजर आ रहें हैंI कवि 'अँजलिभर मिट्टी उठाकर तो देखो' इस कविता के माध्यम से इंसान को आवाहन करते हैं-

"अँजलिभर मिट्टी उठाकर तो देखो,

तज वृथा अभिमान, तमो, रजोगुण से मुक्त, सत्व धारण कर

सत् चित् वृत्ति युक्त,

इन्सा बनने की कोशिश में, अँजलिभर मिट्टी उठाकर तो देखोI**"4**

अर्थात् कवि मनुष्य को इंसान बनने के लिये अहंकार को त्यागने की बात कहते हैंI उन्हें लगता है, मनुष्य को इंसान बनने के लिये अपनी जमीन, अपनी संस्कृति से जुडे रहना जरूरी हैI उसे अपनी मिट्टी से लगाव होना आवश्यक हैI तभी मनुष्य इंसान बन सकता हैI आदमी और इंसान में फर्क देखकर कवि को ताज्जुब होता हैI समाज में चारों ओर आदमियों का बाजार लगा 6हुआ हैI जहां देखो वहां आदमी ही आदमी हैI आदमी के इस बाजार में इंसान कहीं भी नहीं हैI मानो आदमियों के इस बाजार में इंसान कहीं खो गया होI इंसान कई बार इस बाजार में अपना मोल करने गया, अपनी पहचान साबित करने गया, परंतु इतने बडे बाजार में एक भी आदमी इंसान का मोल नहीं कर पायाI इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, आज दुनिया में केवल आदमी हैं, इंसान कहीं भी नहीं हैंI कवि यही कहना चाहते हैंI वर्तमान समाज की इस अमानवीयता को देखकर कवि को ताज्जुब होता हैI इसीलिये वे अपनी 'ताज्जुब' नामक कविता में इसे उद्घाटित करते हुये कहते हैं-

"आदमी के बाजार में मोल करने अपना

कई बार इंसा चला गया

ताज्जुब – कोई आदमी इंसा को खरीद न पाया"I**5**

वर्तमान समाज की इस वास्तविकता को देखकर कवि निराश नहीं होतेI वे आदमी की फ़ितरत से अच्छी तरह वाकिब हैI उसकी अमानवियता तथा संवेदनहीनता को भली- भांति पहचानते हैंI उन्हें यह भी पता है कि, आदमी ने बार- बार

इंसान को मारा हैI परंतु कवि को यह आस है कि, एक- न- एक दिन उसी आदमी से इंसान जागेगाI फिर एक बार मानवता की सुबह होगीI उनकी यही आस 'फ़ितरत' नामक कविता की उक्त पंक्तियों से व्यक्त हुई है-

"उस आदमी ने बार- बार
तार- तार किया इन्सान...
इन्सानी फ़ितरती
उम्मीद लगा बैठे हैं,
एक दिन उसमें जागेगा इन्सान"I**6**

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, आदमी के भीतर इंसान रहता है, परंतु उसे मानवता की राह दिखाकर जगाना पड़ता हैI यह काम आदमी ही कर सकता है और यह एक दिन जरूर होगाI यही कवि की आस है, जो उक्त कविता में व्यक्त हुई हैI

शहरीकरण के इस दौर में नैतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से हो रहा हैI आदमी पर इस शहरीकरण का गहरा प्रभाव पड़ा हैI वह अपनों से अलग होता जा रहा हैI वह स्वार्थ में बुरी तरह फँस गया हैI जरूरत से जादा पाने की होड़ ने उसे हैवान बना दिया हैI जिससे मानवता को हानि पहुंची हैI मानवता पर पूरी तरह से अमानवियता हावी हैI कवि ने वर्तमान समाज में व्याप्त इस अमानवीयता के विरुद्ध अपनी निराशा को व्यक्त किया हैI उन्होंने 'माया' नामक कविता में अपनी निराशा को निम्न प्रकार से अभिव्यक्त किया हैI वे कहते हैं-

"तुझे नामंजूर इंसानियत
हैवानियत तेरी नियत
जब- जहां तेरी हेरा- फेरी छायी
मानवता की शामत आयी......"I**7**

कवि यह कह रहे हैं कि, आज आदमी को इंसानियत मंजूर नहीं हैI उसके भीतर का इंसान मर चुका हैI इसी वजह से मानवता पर संकट आया हैI कवि कहते है मानवता पर आये इस संकट को दूर करने के लिये आदमी के भीतर का इंसान जिंदा रहना जरूरी हैI इसीलिये वे 'आदमी' नामक कविता के माध्यम से अपनी आस को व्यक्त करते हुए कहते हैं-

"बशर्ते मुझ में, उस में और हम सब में जिंदा रहे, आदमी में इंसा"।**8**

कवि कहते हैं, आज मनुष्य ही मनुष्य को लूट रहा हैI वह बहुत ही असंवेदनशील होता जा रहा हैI वह इंसानियत को भूल रहा हैI वह जिस किसी के साथ चलता है, लुटता जाता हैI उसे कदम- कदम पर यह अहसास होता रहा है कि, हर वक्त उसे मनुष्य ने ही लुटा हैI वर्तमान समय की इस वास्तविकता का कवि ने स्वयं अनुभव किया हैI अपनी स्वानुभूति को कवि इसप्रकार अभिव्यक्त करते हैं-

"साथ आदमी के चला, हर दम लुटता गया**"।9**

कवि के कविता का प्रमुख स्वर अमानवीयता एवं संवेदनहीनता के विरोध में है। उनका यह कहना है कि आधुनिक मानव भौतिकता, स्वार्थता और दुसरों के साथ स्पर्धा करने में इतना अधिक उलझ गया है कि, उसके भीतर की संवेदनाएँ बहुत ही क्षीण होती जा रही हैं। उसके भीतर का इंसान ही मर- सं गया हैI जिसके कारण रिश्तों में कृत्रिमता आयी हैI समाज में असमानता की स्थिति उत्पन्न हुई हैI इंसान की पहचान मिट रही हैI यह शहरीकरण, औद्योगिकीकरण तथा यांत्रिकता

के बढते प्रभाव के कारण हुआ हैI इसीलिये कवि के मन में यह सवाल उठता है कि, क्या हम सच में इंसान रह गये हैं? क्या सच में आदमी में इन्सा जिंदा है? इसीलिये वे हमे प्रश्न करते हैं-

"कौन आदमी में है, इन्सा जिंदा"?**10**

आदमी' से 'इन्सान' बनने की प्रक्रिया एक निरंतर चलनेवाली प्रक्रिया हैI आदमी में यह जन्मत: नहीं होती, बल्कि उसके आचरण एवं मूल्यों से पूर्ण होती हैI परंतु आज यही देखने को नहीं मिल रहा हैI जब तक आदमी जीवित है, अपने अहंकार में लिप्त हैI उसके लिये दुसरों की कोई अहमियत नहीं हैI वह मरते दम तक अपनी अमानवीय प्रवृत्ति को नहीं छोडता हैI इंसानियत से वह कोसो दूर होता हैI परंतु अपनों के गुजर जाने के बाद उसे अहसास हो जाता है कि, मनुष्य का अपने जीवन में क्या मूल्य हैI तब वह आदमी से इंसान बनने की प्रक्रिया से गुजर रहा होता हैI उसमें आनेवाले इस बदलाव को कवि निम्न प्रकार से अभिव्यक्त करते है-

"अपनों को कर विदा, जब जब मैं शमशान से लौटा हूँ,
तब- तब मैं आदमी से इंसान बन गया हूँ"I**11**

कवि सदानंद भोसले अपनी कविताओं के द्वारा हमेशा यह आग्रह करते नजर आते हैं कि, मनुष्य अपने भीतर झाँके, अन्य के दुख को पहचाने, संवेदनशीलता को पुन: जीवित करें, मानवता की प्रतिष्ठापना करें तथा दुसरों के साथ प्रेम एवं सद्भाव से रहेंI कवि यहां केवल मनुष्य के अमानवीय व्यवहार की आलोचना नहीं करते, बल्कि मानवता की सीख भी देते हैI ताकि मनुष्य अपने भीतर के इंसान को जगाकर मानवता की राह पर चलेI कवि के मत से सच्चा इंसान वही होता है, जो दुसरों के लिये जिता हैI कवि अपने काव्य के माध्यम से ऐसे ही इंसान की खोज करना चाहते हैंI इसीलिये वे अपनी कविता 'तुम इंसान' में कहते हैं-

"सदाचार- संजीवन – तुम सत्य वचन
तुम इंसान सहृदयी – अमर्त्य
नेह – पनाह – तुम इंसान"I**12**

वैश्विकरण के इस युग में आदमी बहुत ही अकेला और स्वकेंद्रित हुआ हैI वह अकेले अकेले ही जीना चाहता हैI उसके मन में दुसरों के प्रति बिलकुल संवेदना तथा सहानुभूति नहीं हैI इसका कारण आज का तकनीकी युग हैI इसी के प्रभाव से आदमी आत्मकेंद्री बनता जा रहा हैI इसी वजह से मानवीय मूल्यों का पतन हुआ हैI मानवता पर संकट आया हैI इस दृष्टि से देखे तो, कवि का काव्य मनुष्य के लिये एक चेतावनी है भी है और आशा की एक किरण भीI क्योंकि कवि को अभी भी लगता है कि, मनुष्य में इंसान बनने की संभावना शेष हैI इसीलिये वे अपने काव्य के माध्यम से इंसान की खोज करने का प्रयास करते हैं ताकि समाज में मानवता की पुनर्स्थापना होI यह काम मनुष्य के द्वारा ही संभव हो सकता हैI सिर्फ उसे अपने आपको पहचानने की आवश्यकता हैI मनुष्य अगर अपने अहं को त्यागकर सभी को अपना समझेगा, तभी समूचे समाज में मनुष्यता की गूंज उठेगीI इसीलिये कवि आपने काव्य के माध्यम से इंसान की खोज करना चाहते हैंI यांत्रिकता के इस युग में मनुष्य अपनों से अलग हो रहा हैI मनुष्य ही मनुष्य का साथ छोड रहा हैI मनुष्य जैसे यंत्र बन गया होI इसीलिये कवि अपने मराठी काव्य संग्रह 'पांडुरंगाच्या देशा' में संकलित कविता 'आरसा बोलू लागला' में मनुष्य के भीतर के इंसान को खोजने की बात करते हैंI वे कहते हैं-

".....आता तर माणसांना नाही, माणसांची सोबत,
माणसांच्या देशात यंत्रच आहेत बोलत.....
हे भल्या माणसा! रात्रंदिवस माणूस माझ्यातला धडपडतोय,

माणसातला माणूस जिवंत करण्या माणसांना शोधतोय.”I13

कवि का दृष्टिकोन हमेशा से ही आशावादी रहा हैI उन्हें आशा है कि, मनुष्य मिट्टी से जुडा रहेगा, तो जरूर इंसान बनेगाI इसीलिये वे मनुष्य के भीतर के इंसान को खोजने की कोशिश कर रहें हैंI

निष्कर्ष: कवि सदानंद भोसले समकालीन समय में एक जन कवि के रूप में उभरकर सामने आये हैंI उनके काव्य में हमें ग्रामीण और शहरी परिवेश का चित्रण मिलता है, परंतु कवि ग्रामीण परिवेश से जुड़े होने के कारण उनके काव्य में ग्रामीण लोक जीवन एवं संस्कृति का पुट अधिक हैI उनकी कविताओं से हमें गाँव की मिट्टी की महक आती हैI परंतु उनके काव्य का मुख्य उद्देश्य मानवता तथा मानवीय मूल्यों की खोज करना रहा हैI वर्तमान समय में शहरीकरण तथा यांत्रिक सभ्यता के बढ़ते प्रभाव से मनुष्य बहुत अधिक आत्मकेंद्रित हुआ हैI समाज में पारिवारिक विघटन की समस्या बढ़ रही हैI मानवता पर गहरा संकट छाया हुआ हैI नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा हैI मनुष्य स्वार्थ और अहंकार में इतना अधिक घिरा हुआ है कि, अपनों को ही गिराने में लगा हुआ हैI वह बहुत ही असंवेदनशील होता जा रहा हैI उसके भीतर का इंसान मर चुका हैI इसीलिये कवि अपने काव्य के द्वारा मनुष्यों के भीतर के इंसान को जगाने का प्रयास कर रहें हैंI अंततः हम यह कह सकते है कि, कवि सदानंद भोसले का काव्य ‘इन्सान की खोज’ का काव्य है। वे केवल समाज की आलोचना नहीं करते, बल्कि एक मानवीय समाज की कल्पना भी प्रस्तुत करते हैं। उनकी कविता पाठकों को सोचने पर बाध्य करती है कि, क्या हम केवल “आदमी” हैं या सच में “इन्सान”? क्या हमारे भीतर अभी भी मानवीय संवेदनाएँ जीवित हैं? इससे यह स्पष्ट होता है कि, कवि सदानंद भोसले एक मानवतावादी कवि है और उनके काव्य का प्रमुख स्वर मानवता की रक्षा करना हैI कवि सभी को यह आवाहन करते हैं कि, अपने भीतर के इंसान को पहचानो, जिससे समूचे समाज में मानवता की गूँज सुनायी देगीI

संदर्भ सूची:

1. भोसले सदानंद, शूल पर उम्मीद के फूल (काव्य संग्रह), 2023, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 74,75
2. वही, पृष्ठ- 72
3. वही, पृष्ठ- 90
4. भोसले सदानंद, अँजलि भर मिट्टी (काव्य संग्रह), 2022, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 12
5. भोसले सदानंद, मैं जिंदा हूँ (काव्य संग्रह), 2025, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 28
6. वही, पृष्ठ- 29
7. भोसले सदानंद, शूल पर उम्मीद के फूल (काव्य संग्रह), 2023, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 63
8. भोसले सदानंद, अँजलि भर मिट्टी (काव्य संग्रह), 2022, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 11
9. भोसले सदानंद, मैं जिंदा हूँ (काव्य संग्रह), 2025, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 32
10. भोसले सदानंद, अँजलि भर मिट्टी (काव्य संग्रह), 2022, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 81
11. भोसले सदानंद, मैं जिंदा हूँ (काव्य संग्रह), 2025, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 21
12. भोसले सदानंद, शूल पर उम्मीद के फूल (काव्य संग्रह), 2023, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ- 66
13. भोसले सदानंद, पांडुरंगाच्या देशा (मराठी काव्य संग्रह), 2023, परिदृश्य प्रकाशन, मुम्बई, पृष्ठ- 29
14. त्रिपाठी आर., मानवीय मूल्य और समकालीन समाज, 2010, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
15. शर्मा के. एल., मानव मूल्य और शिक्षा, 2005, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली

मेल- dndange@gmail.com.   भ्रमण ध्वनी: ९९२२४६८५०७

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 55-62
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

आधुनिक जीवनशैली में योग और पोषण

पंकज कुमार कुशवाहा
(एम.ए.–योग विभाग)
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)
श्री जीतेन्द्र प्रताप सिंह
सहायक आचार्य (योग विभाग)
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)

1. सार (Abstract)

वर्तमान युग में तेजी से बदलती जीवनशैली ने मानव स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डाला है। असंतुलित आहार, मानसिक तनाव और शारीरिक निष्क्रियता के कारण जीवनशैली रोगों में वृद्धि हुई है। इस संदर्भ में योग और पोषण का समन्वय स्वास्थ्य सुधार का एक प्रभावी माध्यम बनकर उभरा है। यह अध्ययन योग और पोषण के बीच संबंध का विश्लेषण करता है तथा यह दर्शाता है कि दोनों के संयुक्त प्रभाव से शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को बेहतर बनाया जा सकता है।

2. भूमिका (Introduction)

वर्तमान समय में मानव जीवनशैली तेजी से बदल रही है। शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और तकनीकी विकास के कारण लोगों की दिनचर्या पहले की तुलना में अधिक व्यस्त और असंतुलित हो गई है। आज के दौर में लोग अपने स्वास्थ्य की अपेक्षा सुविधा और समय को अधिक महत्व देने लगे हैं। इसके परिणामस्वरूप फास्ट फूड, जंक फूड और प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थों का सेवन बढ़ गया है, जबकि शारीरिक गतिविधियाँ जैसे चलना–फिरना और व्यायाम कम हो गए हैं। इस असंतुलित जीवनशैली के कारण मोटापा, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग तथा मानसिक तनाव जैसी समस्याएँ तेजी से बढ़ रही हैं, जिन्हें सामान्यतः जीवनशैली रोग (Lifestyle Diseases) कहा जाता है।

इन बढ़ती स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान के लिए एक समग्र (holistic) दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिसमें शरीर और मन दोनों का संतुलन बना रहे। इस संदर्भ में योग और पोषण दोनों अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। योग एक प्राचीन भारतीय पद्धति है, जो शरीर, मन और आत्मा के बीच संतुलन स्थापित करने का कार्य करता है। योग में आसन, प्राणायाम और ध्यान के माध्यम से शारीरिक स्वास्थ्य के साथ–साथ मानसिक शांति भी प्राप्त होती है। नियमित योगाभ्यास से तनाव कम होता है, एकाग्रता बढ़ती है और शरीर की कार्यक्षमता में सुधार होता है।

दूसरी ओर, पोषण मानव जीवन का आधार है, जो शरीर को ऊर्जा, वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। संतुलित आहार शरीर की रोग–प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत बनाता है और विभिन्न बीमारियों से बचाव करता है। सही मात्रा में और सही समय पर लिया गया भोजन शरीर को स्वस्थ बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। योग और पोषण का आपस में गहरा और परस्पर पूरक संबंध है। योगाभ्यास व्यक्ति में जागरूकता और आत्म–नियंत्रण की भावना को बढ़ाता है, जिससे वह अपने भोजन के प्रति अधिक सचेत हो जाता है और स्वस्थ आहार का चयन करता है। वहीं, संतुलित और पौष्टिक आहार योग के प्रभाव को और अधिक प्रभावी बनाता है तथा शरीर को योग अभ्यास के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रदान करता है।

आधुनिक जीवनशैली की चुनौतियों को देखते हुए योग और पोषण का संयुक्त उपयोग अत्यंत आवश्यक हो गया है। यदि व्यक्ति नियमित योगाभ्यास के साथ संतुलित आहार को अपनाता है, तो वह न केवल शारीरिक रूप से स्वस्थ रह सकता है, बल्कि मानसिक और भावनात्मक रूप से भी संतुलित जीवन जी सकता है। अतः यह अध्ययन आधुनिक जीवनशैली में योग और पोषण के महत्व को समझने तथा उनके समन्वित प्रभाव का विश्लेषण करने का प्रयास करता है।

3. अध्ययन के उद्देश्य (Objectives)

- आधुनिक जीवनशैली में योग और पोषण की भूमिका का अध्ययन करना।
- योग और आहार के पारस्परिक संबंध को समझना।
- जीवनशैली रोगों पर योग और पोषण के प्रभाव का विश्लेषण करना।
- स्वस्थ जीवन के लिए उपयुक्त उपाय सुझाना।

4. शोध पद्धति (Methodology)

यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। विभिन्न शोध पत्रों, पुस्तकों एवं ऑनलाइन डेटाबेस से संबंधित जानकारी एकत्रित कर विश्लेषण किया गया है।

5. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

आधुनिक जीवनशैली में परिवर्तन के कारण स्वास्थ्य समस्याएँ बढ़ी हैं, जिनके समाधान हेतु योग और पोषण के समन्वय

पर अनेक शोध किए गए हैं।

Mankar et al. (2025) के अनुसार योग एक समग्र प्रक्रिया है जो शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक संतुलन स्थापित

करती है।

Kapatel (2019) ने बताया कि योग तनाव कम करता है और मानसिक स्थिरता बढ़ाता है।

Dwivedi और Tyagi (2016) के अनुसार योग व्यक्ति को स्वस्थ जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

Telles et al. (2018) ने पाया कि योग और संतुलित आहार का संयुक्त प्रभाव मोटापे को कम करने में अधिक प्रभावी है।

Sorout et al. (2024) के अनुसार योग और पोषण से BMI में सुधार होता है।

Annie B. Kay के अनुसार mindful eating योग का एक महत्वपूर्ण अंग है, जिसमें व्यक्ति भोजन को ध्यानपूर्वक

और जागरूक होकर ग्रहण करता है। यह आदत पाचन में सुधार करती है तथा मोटापा और अन्य जीवनशैली रोगों को

नियंत्रित करने में सहायक होती है।

Gogojewicz et al. (2024) ने पाया कि योग करने वाले व्यक्तियों की भोजन आदतें बेहतर होती हैं।

Domingues और Carmo (2021) के अनुसार योग करने वाले लोग संतुलित आहार अपनाते हैं।

McIver et al. (2009) ने बताया कि योग से भोजन संबंधी अनुशासन में सुधार होता है।

6. योग और पोषण का महत्व

योग शरीर और मन को संतुलित करता है, जबकि पोषण शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है। दोनों का समन्वय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सहायक है।

योग का महत्वः

शारीरिक और तंत्रिका–जैविक दृष्टिकोण से योग को आज पश्चिमी जगत में भी स्वास्थ्य के प्रति एक समग्र दृष्टिकोण के रूप में मान्यता दी गई है, जिसे "Complementary and Alternative Medicine" (CAM) के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है। योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है, बल्कि यह शरीर, श्वास और मन के एकीकरण की एक वैज्ञानिक पद्धति है जो आंतरिक ऊर्जा प्रणालियों को संतुलित करती है ।

मांसपेशियों की शक्ति और लचीलापन

योग मुद्राओं (आसनों) का नियमित अभ्यास मांसपेशियों को खींचने और टोन करने के माध्यम से लचीलेपन और शक्ति में सुधार करता है। यह विशेष रूप से उन व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण है जो घंटों डेस्क पर बैठकर काम करते हैं, क्योंकि योग खराब शारीरिक मुद्रा (posture) को ठीक करता है और भविष्य में होने वाले जोड़ों और गर्दन के दर्द से बचाता है। सूर्यनमस्कार जैसी श्रृंखलाएं न केवल मांसपेशियों को मजबूत करती हैं, बल्कि 3.8 से 6.7 kcal/min की दर से ऊर्जा व्यय भी करती हैं, जो वजन नियंत्रण में सहायक है।

तंत्रिका–जैविक प्रभाव और GABA का स्तर

योग का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव मस्तिष्क की रसायन विज्ञान पर पड़ता है। आधुनिक अनुसंधानों ने "वैगल–गामा–अमीनोब्यूट्रिक एसिड (GABA) सिद्धांत" को प्रस्तावित किया है, जो बताता है कि योग मुद्राएं और श्वसन अभ्यास वैगस तंत्रिकाओं को उत्तेजित करते हैं, जिससे मस्तिष्क में GABA के स्तर में वृद्धि होती है। GABA एक प्राथमिक निरोधात्मक (inhibitory) न्यूरोट्रांसमीटर है जो भावनाओं के नियमन और शांति के लिए उत्तरदायी है।

विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि योग का अभ्यास मस्तिष्क में GABA(Gamma–Aminobutyric Acid) स्तर को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसका सीधा प्रभाव मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। अल्पकालिक (बनजम) योग सत्रों में यह पाया गया कि योग समूह में लगभग 27% तक GABA स्तर में वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप चिंता और तनाव में तत्काल कमी देखी गई। इसके अतिरिक्त, 12 सप्ताह के नियमित योग हस्तक्षेप के दौरान नियंत्रण समूह की तुलना में थैलमिक GABA स्तर में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई, जिससे प्रतिभागियों के मूड में सुधार तथा अवसाद के लक्षणों में कमी आई।

आगे के अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ कि सप्ताह में एक बार योग अभ्यास करने से भी GABA स्तर को उच्च बनाए रखा जा सकता है, जो दीर्घकालिक रूप से भावनात्मक स्थिरता और मानसिक संतुलन को बनाए रखने में सहायक है। इस प्रकार, योग न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को सुधारता है, बल्कि मस्तिष्क के न्यूरोकेमिकल स्तर पर सकारात्मक परिवर्तन लाकर मानसिक स्वास्थ्य को भी सुदृढ़ करता है।

तनाव प्रबंधन और स्वायत्त तंत्रिका तंत्र

योग शरीर की तनाव प्रतिक्रिया को "फाइट–ऑर–फ्लैट" (सिम्पैथेटिक) से "रेस्ट–एंड–डाइजेस्ट" (पैरासिम्पेथेटिक) की ओर स्थानांतरित करता है। यह शिफ्ट हृदय गति को धीमा करता है, रक्तचाप कम करता है और कोर्टिसोल के स्तर को घटाता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से, योग शरीर के "ऑटोनोमिक रेगुलेटरी रिफ्लेक्स" तंत्र को बहाल करता है, जिससे व्यक्ति दैनिक जीवन के तनावों के प्रति अधिक लचीला बनता है।

पोषण का महत्वः

सूक्ष्म पोषक तत्व और चयापचय संतुलन से पोषण शरीर के जैविक इंजनों के लिए कच्चे माल और ईंधन की आपूर्ति करता है। आधुनिक जीवन में "अल्ट्रा–प्रोसेस्ड" खाद्य पदार्थों की प्रचुरता ने पोषक तत्वों के अंतर को बढ़ा दिया है, जिससे चयापचय संबंधी समस्याएं और थकान उत्पन्न होती है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों (Micronutrient) की भूमिका विटामिन और खनिज मानव स्वास्थ्य और प्रतिरक्षा को बनाए रखने में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। विटामिन A, C, D, और E प्रतिरक्षा कोशिकाओं के कार्य और शरीर की पहली सुरक्षा पंक्ति (epithelial tissues) की अखंडता के लिए आवश्यक हैं। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को "fहडन हंगर" (छिपी हुई भूख) कहा जाता है, जो तुरंत दिखाई नहीं देती लेकिन लंबे समय में प्रतिरक्षा प्रणाली को कमजोर कर देती है।

स्वास्थ्य देखभाल पेशेवरों (HCPs) के एक सर्वेक्षण के अनुसार, सूक्ष्म पोषक तत्वों की पूर्ति के निम्नलिखित लाभ देखे गए हैं:

98% पेशेवरों ने पाया कि मल्टीविटामिन सप्लीमेंट 2–3 सप्ताह में थकान कम करते हैं।

95% ने तीव्र बीमारियों से रिकवरी में तेजी देखी।

87.6% ने मानसिक सतर्कता और संज्ञानात्मक स्वास्थ्य में सुधार की पुष्टि की।

विटामिन D और मस्तिष्क स्वास्थ्य से, विटामिन D की कमी आधुनिक शहरी निवासियों में एक महामारी बन गई है, जो कम धूप और इनडोर जीवनशैली का परिणाम है। विटामिन D न केवल कैल्शियम चयापचय को नियंत्रित करता है, बल्कि यह सेरोटोनिन के संश्लेषण के लिए भी आवश्यक है, जो मूड नियमन के लिए सबसे महत्वपूर्ण न्यूरोट्रांसमीटर है। इसकी कमी का सीधा संबंध अवसाद, चिंता और संज्ञानात्मक गिरावट से पाया गया है।

सात्विक आहार: प्राचीन पोषण विज्ञान

योगिक जीवनशैली में "सात्विक आहार" की अवधारणा को प्राथमिकता दी गई है, जो ताजे, रसीले और शाकाहारी खाद्य पदार्थों पर केंद्रित है। यह आहार न केवल शारीरिक ऊर्जा प्रदान करता है, बल्कि मानसिक स्पष्टता और आध्यात्मिक विकास में भी सहायक है। सात्विक भोजन में फल, मेवे, बीज, साबुत अनाज और डेयरी उत्पाद शामिल हैं, जो प्रकृति में "शुद्ध" माने जाते हैं।

योग दर्शन के अनुसार आहार को मुख्यतः तीन प्रकारों – सात्विक, राजसिक और तामसिककृमें विभाजित किया गया है, जिनका सीधा प्रभाव व्यक्ति के मन और व्यवहार पर पड़ता है। सात्विक आहार, जिसमें ताजे फल, हरी सब्जियाँ, मेवे, दूध तथा साबुत अनाज शामिल होते हैं, शुद्ध और संतुलित माना जाता है। इस प्रकार का भोजन मानसिक शांति, प्रसन्नता, स्पष्ट सोच तथा ऊर्जा को बढ़ाने में सहायक होता है। इसके विपरीत, राजसिक आहार में अत्यधिक मसालेदार, तला हुआ और उत्तेजक खाद्य पदार्थ आते हैं, जो व्यक्ति में चंचलता, बेचौनी और क्रोध जैसी भावनाओं को बढ़ा सकते हैं। वहीं तामसिक आहार, जिसमें बासी भोजन, मांस, शराब तथा अत्यधिक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ शामिल होते हैं, शरीर और मन दोनों पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। इस प्रकार का आहार सुस्ती, अज्ञानता और अवसाद को बढ़ावा देता है।

अतः योगिक दृष्टिकोण के अनुसार संतुलित और सात्विक आहार को अपनाना मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी माना जाता है। नैदानिक रूप से, सात्विक आहार के उच्च्य सेवन से अवसाद की संभावना 35% तक कम हो सकती है। यह आहार फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है, जो आंत के माइक्रोबायोम (gut microbiome) की रक्षा करता है।

7. आधुनिक जीवनशैली की चुनौतियाँ

समकालीन समाज में स्वास्थ्य संबंधी विसंगतियों का मूल कारण शारीरिक निष्क्रियता और मनोवैज्ञानिक तनाव का एक दुष्चक्र है। आधुनिक जीवनशैली ने मानव स्वास्थ्य के समक्ष चार प्रमुख चुनौतियाँ खड़ी की हैं:

१. फास्ट फूड और प्रोसेस्ड भोजन

भारत दुनिया में अल्ट्रा–प्रोसेस्ड खाद्य पदार्थों (UPF) के लिए सबसे तेजी से बढ़ते बाजारों में से एक बन गया है, जहाँ २००६ से २०२३ के बीच इनकी बिक्री में १५०% से अधिक की वृद्धि दर्ज की गई है। ये खाद्य पदार्थ कैलोरी में सघन लेकिन सूक्ष्म पोषक तत्वों (micronutrient) में बहुत गरीब होते हैं। इनमें चीनी, सोडियम (नमक) और संतृप्त वसा की अत्यधिक मात्रा होती है, जो मोटापे, मधुमेह और हृदय रोगों के जोखिम को सीधे बढ़ाती है।

२. शारीरिक गतिविधि की कमी

द लैंसेट (२०२४) के एक अध्ययन के अनुसार, भारत में लगभग ५०% वयस्क पर्याप्त शारीरिक गतिविधि नहीं करते हैं। शोध इंगित करते हैं कि भारतीय महिलाओं में यह निष्क्रियता ५७% तक है, जबकि पुरुषों में ४२% है। यह गतिहीन व्यवहार चयापचय संबंधी विकारों और मांसपेशियों की कमजोरी का प्रमुख कारण है।

३. मानसिक तनाव

शहरीकरण और डिजिटल निर्भरता ने प्राथमिक तनाव कारकों (stressors) को बढ़ाया है, जिससे अवसाद, चिंता और "बर्नआउट" जैसी स्थितियां सामान्य हो गई हैं। डिजिटल ओवरलोड और निरंतर कार्य की मांग हमारे तंत्रिका तंत्र को "हाई अलर्ट" मोड में रखती है, जिससे शरीर कभी भी पूरी तरह से विश्राम और मरम्मत (rest and digest) की स्थिति में नहीं आ पाता। छात्रों और युवा वयस्कों में शैक्षणिक दबाव और स्क्रीन–आधारित जीवनशैली मानसिक थकान और "ब्रेन फॉग" का कारण बन रही है।

४. अनियमित दिनचर्या

भोजन, नींद और जागने के समय में अनियमितता शरीर की आंतरिक जैविक घड़ी (circadian rhythm) को बाधित करती है। शोध दर्शाते हैं कि रात में देर से खाना और सुबह का नाश्ता छोड़ना (breakfast skipping) इंसुलिन प्रतिरोध और मोटापे को बढ़ावा देता है। यह "क्रोनो–डिसरप्शन" (circadian misalignment) सीधे तौर पर हृदय रोग और टाइप २ मधुमेह के जोखिम को बढ़ाता है।

8. योगिक आहार और Mindful Eating

योग दर्शन में भोजन केवल कैलोरी का स्रोत नहीं, बल्कि शरीर और मन की शुद्धि का साधन है। "योगिक आहार" और "माइंडफुल ईटिंग" का संगम आधुनिक पोषण विज्ञान के लिए एक नया प्रतिमान प्रस्तुत करता है।

१. सात्विक आहार: शुद्धता का विज्ञान योगिक परंपरा में "सात्विक आहार" को प्राथमिकता दी गई है, जिसमें ताजे फल, सब्जियां, साबुत अनाज, मेवे और डेयरी उत्पाद शामिल हैं।

मानसिक प्रभाव: शोध बताते हैं कि सात्विक भोजन सेरोटोनिन के स्तर को संतुलित करता है, जिससे अवसाद का जोखिम ३५% तक कम हो सकता है।

जैव–रासायनिक लाभ: यह आहार फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है, जो आंत के माइक्रोबायोम (gut microbiome) को स्वस्थ रखता है और शरीर में सूजन (inflammation) को कम करता है।

२. मिताहार: संयमित भोजन का सिद्धांत प्राचीन योग ग्रंथों में "मिताहार" (Mitaahar) का वर्णन है, जिसका अर्थ है अपनी भूख से थोड़ा कम और संतुलित मात्रा में खाना।

वैज्ञानिक प्रमाण: आधुनिक शोध "कैलोरी रिस्ट्रिक्शन" (Calorie Restriction) के माध्यम से दीर्घायु और बेहतर चयापचय स्वास्थ्य के लिए मिताहार की पुष्टि करते हैं। यह इंसुलिन संवेदनशीलता को बढ़ाता है और टाइप–२ मधुमेह के प्रबंधन में सहायक है।

३. माइंडफुल ईटिंग (Mindful Eating): वर्तमान में भोजन के अनुभव से माइंडफुल ईटिंग का अर्थ है भोजन करते समय बिना किसी निर्णय के भूख और तृप्ति (satiety) के संकेतों के प्रति पूरी तरह जागरूक होना।

योग और जागरूकता: शोध दर्शाते हैं कि योग का अभ्यास करने वाले व्यक्ति अधिक सचेत (mindful) होते हैं। वे भोजन के स्वाद, गंध और बनावट का अधिक आनंद लेते हैं, जिससे "इमोशनल ईटिंग" और अतिभोजन (overeating) की प्रवृत्ति कम होती है।

BMI पर प्रभाव: नियमित योग और माइंडफुल ईटिंग करने वाले व्यक्तियों का बॉडी मास इंडेक्स (BMI) उन लोगों की तुलना में कम होता है जो बिना ध्यान दिए (distracted eating) भोजन करते हैं।

४. योग और पाचन का विज्ञान

योग न केवल यह बताता है कि क्या खाना चाहिए, बल्कि पाचन की प्रक्रिया को भी सक्रिय करता है।

मेटाबॉलिक रिस्पांस: योगासन जैसे 'वज्रासन' (Vajrasana) भोजन के तुरंत बाद किए जा सकते हैं, जो पाचन अंगों में रक्त के प्रवाह को बढ़ाकर पोषक तत्वों के अवशोषण (nutrient absorption) में सुधार करते हैं।

तनाव और पाचन: योग वैगस तंत्रिका (vagus nerve) को उत्तेजित करता है, जिससे शरीर "रेस्ट–एंड–डाइजेस्ट" मोड में आता है, जिससे पाचन रस का स्राव बेहतर होता है।

9. योग और स्वास्थ्य पर प्रभाव

योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है, बल्कि यह एक समग्र चिकित्सा पद्धति है जो शरीर के विभिन्न तंत्रों पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

१. तनाव में कमी

योग शरीर की तनाव प्रतिक्रिया को "फाइट–ऑर–फ्लैट" से "रेस्ट–एंड–डाइजेस्ट" (पैरासिम्पेथेटिक) मोड में स्थानांतरित करता है। यह कोर्टिसोल (तनाव हार्मोन) के स्तर को कम करता है और हृदय गति को सामान्य बनाता है। प्राणायाम (जैसे नाड़ी शोधन) वैगस तंत्रिका को उत्तेजित करता है, जिससे मन शांत और स्थिर होता है।

२. BMI और मोटापा कम

नियमित योगाभ्यास मेटाबॉलिक स्वास्थ्य में सुधार करता है। सूर्यनमस्कार जैसी श्रृंखलाएं प्रति मिनट 3.8 से 6.7 kcal ऊर्जा व्यय करती हैं। शोध दर्शाते हैं कि योग करने वाले व्यक्तियों का बॉडी मास इंडेक्स (BMI) उन लोगों की तुलना में कम होता है जो योग नहीं करते, क्योंकि योग आत्म–जागरूकता बढ़ाकर अतिभोजन को कम करता है।

३. मानसिक स्वास्थ्य बेहतर

योग का अभ्यास मस्तिष्क में GABA (गामा–अमीनोब्यूट्रिक एसिड) के स्तर को बढ़ाता है, जो शांति और खुशी के लिए उत्तरदायी है। एक अध्ययन के अनुसार, योग के १२ सप्ताह के हस्तक्षेप के बाद मस्तिष्क के थैलमिक GABA स्तर में २७% की वृद्धि देखी गई, जो अवसाद और चिंता को कम करने में सहायक है। यह मानसिक स्पष्टता, एकाग्रता और संज्ञानात्मक कार्यक्षमता में भी सुधार करता है।

४. रोगों से बचाव

योग और संतुलित पोषण का मेल गैर–संचारी रोगों (NCDs) के विरुद्ध एक शक्तिशाली निवारक कवच है।

मधुमेह: योग इंसुलिन संवेदनशीलता बढ़ाता है और उपवास रक्त शर्करा (FBG) में महत्वपूर्ण कमी लाता है।

उच्च रक्तचाप: योग अभ्यास से सिस्टोलिक रक्तचाप में औसतन 4.35 mmHg तक की कमी देखी गई है।

प्रतिरक्षा प्रणाली: योगासन और प्राणायाम शरीर की प्राकृतिक मारक (NK) कोशिकाओं की प्रतिक्रिया को बढ़ाते हैं, जिससे संक्रमणों से लड़ने की क्षमता बढ़ती है।

10. चर्चा (Discussion)

आधुनिक जीवनशैली में समय की कमी, तनाव और फास्ट फूड की बढ़ती आदतों के कारण योग और संतुलित पोषण को अपनाना कठिन हो गया है। अनियमित दिनचर्या और शारीरिक गतिविधियों की कमी से स्वास्थ्य समस्याएँ बढ़ रही हैं। फिर भी, यदि योग और पोषण के मूल सिद्धांतों को धीरे–धीरे दैनिक जीवन में अपनाया जाए, तो स्वास्थ्य में सुधार संभव है। नियमित योगाभ्यास तनाव को कम करता है और व्यक्ति को अपने आहार के प्रति अधिक जागरूक बनाता है, जिससे वह स्वस्थ भोजन का चयन करने लगता है।

इस प्रकार, योग और संतुलित आहार का समन्वय आधुनिक जीवनशैली में स्वस्थ और संतुलित जीवन बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

11. निष्कर्ष (Conclusion)

योग और पोषण का समन्वय आधुनिक जीवनशैली में स्वास्थ्य सुधार के लिए अत्यंत आवश्यक है। इनके माध्यम से समग्र स्वास्थ्य और जीवन गुणवत्ता में सुधार संभव है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि आधुनिक जीवनशैली में बढ़ती स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान के लिए योग और पोषण का समन्वय अत्यंत आवश्यक है। असंतुलित आहार, तनाव और शारीरिक निष्क्रियता के कारण उत्पन्न होने वाले जीवनशैली रोगों को नियंत्रित करने में योग और संतुलित आहार महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। योग न केवल शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है, बल्कि व्यक्ति में जागरूकता भी विकसित करता है, जिससे वह अपने आहार के प्रति अधिक सजग हो जाता है। वहीं, उचित और संतुलित पोषण योग के प्रभाव को और अधिक प्रभावी बनाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि यदि व्यक्ति नियमित योगाभ्यास के साथ संतुलित और स्वस्थ आहार अपनाए, तो वह एक स्वस्थ, संतुलित और सकारात्मक जीवन जी सकता है।

12. सुझाव (Suggestions)

आधुनिक जीवनशैली में योग और पोषण को प्रभावी रूप से अपनाने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति नियमित रूप से योगाभ्यास को अपनी दैनिक दिनचर्या का हिस्सा बनाए, जिसमें आसन, प्राणायाम और ध्यान शामिल हों। इसके साथ ही संतुलित, ताजा और कम प्रसंस्कृत आहार को प्राथमिकता दी जानी चाहिए तथा फास्ट फूड और अत्यधिक तले–भुने भोजन से बचना चाहिए। भोजन को निश्चित समय पर और सीमित मात्रा में ग्रहण करना (मिताहार) स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है। इसके अतिरिक्त, उपदकनिस मंजपदह की आदत विकसित करना भी आवश्यक है, जिससे व्यक्ति भोजन को समझकर और धीरे–धीरे ग्रहण करता है। साथ ही, जीवनशैली रोगों की रोकथाम के लिए योग और पोषण के प्रति जागरूकता बढ़ाना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

13. संदर्भ सूची

- अयंगर, बी. के. एस. (2005). योग पर प्रकाश।
- शिवानंद, स्वामी। (2008). प्राणायाम का विज्ञान।
- सत्यानंद, स्वामी। (2004). आसन, प्राणायाम, मुद्रा और बंध।
- पटंजलि। (2012). योग सूत्र (स्वामी सत्चिदानंद, अनुवादक)।
- व्यास। (2014). भगवद्गीता।
- आयुष मंत्रालय, भारत सरकार। (2017). योग अभ्यास का सामान्य प्रोटोकॉल।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन। (2020). स्वस्थ आहार के दिशानिर्देश।
- भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद। (2020). भारतीयों के लिए आहार संबंधी दिशानिर्देश।

- राष्ट्रीय पोषण संस्थान। (2011). भारतीयों के लिए आहार मार्गदर्शिका।
- शर्मा, एच., एवं क्लार्क, सी. (2012). आधुनिक आयुर्वेद: चिकित्सा और अनुसंधान।
- जोशी, वाई. जी. (2010). आयुर्वेद का पाठ्यपुस्तक (खंड 1)।
- त्रिपाठी, बी. (2008). चरक संहिता (हिंदी व्याख्या सहित)।
- सिंह, आर. एच. (2011). आधुनिक आयुर्वेद का वैज्ञानिक अध्ययन।
- गोयल, एम., आदि। (2014). मनोवैज्ञानिक तनाव और कल्याण के लिए ध्यान कार्यक्रमों का अध्ययन।
- ब्राउन, आर. पी., एवं गर्बर्ग, पी. एल. (2005). सुदर्शन क्रिया योगिक श्वास और मानसिक स्वास्थ्य।
- हॉल, ए., ओफेई–टेंकोरांग, एन. ए., माचन, जे. टी., एवं गॉर्डन, सी. एम. (2016). भोजन विकार उपचार में योग का उपयोग।
- डिटमैन, के. ए., एवं फ्रीडमैन, एम. आर. (2009). योग अभ्यासकर्ताओं में शरीर जागरूकता और भोजन व्यवहार।
- सहाय, बी. के. (1984). योग और मधुमेह।
- बिंद्रा, एम., नायर, एस., एवं दारोटिया, एस. (2013). प्राणायाम और योगासन का रक्त शर्करा और लिपिड प्रोफाइल पर प्रभाव।
- मंकर, डी. डी., प्रीम, पी., एवं मुस्कान। (2025). बदलती जीवनशैली में योग और पोषणरू एक समन्वित दृष्टिकोण। आथियोगा इंडियन जर्नल ऑफ एंशिएंट मेडिसिन एंड योग, 2(8)।
- द्विवेदी, एस., एवं त्यागी, पी. (2016). स्वास्थ्य संवर्धन के लिए योग एक जीवनशैली उपकरण के रूप में।
- टेलेस, एस., आदि। (2018). मोटापे के लिए योग और पोषण संबंधी हस्तक्षेप का अध्ययन।
- सोराउट, जे., आदि। (2024). जीवन गुणवत्ता में सुधार के लिए योग और पोषण।
- गोगोजेविच, ए., आदि। (2024). योग अभ्यासकर्ताओं की पोषण स्थिति का अध्ययन।
- डोमिंगुएस, आर. बी., एवं कार्मो, सी. (2021). योग अभ्यासकर्ताओं में आहार संबंधी व्यवहार (ऑर्थोरेक्सिया)।
- मैकाइवर, एस., आदि। (2009). योग और भोजन व्यवहार का अध्ययन।

Email : Pnkkjkujr@gmail-com
Email : jitendrapsingh91@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 63-69
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

आस्तिक परंपरा में योग का दार्शनिक प्रतिरूप

कु. शशी देवी
(शोधार्थी: योग विभाग)
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)
डॉ. हरिकान्त मिश्र
विभागाध्यक्ष दर्शनशास्त्र विभाग
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)

सारांश

योगदर्शन भारतीय आस्तिक परंपरा के छः प्रमुख दर्शनों में से एक है, जिसके प्रणेता महर्षि पतंजलि माने जाते हैं। इसका मुख्य उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति के लिए व्यावहारिक, मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक मार्ग प्रदान करना है। पतंजलि योगसूत्रों में योग को "चित्तवृत्तिनिरोध" के रूप में परिभाषित करते हैं और योगदर्शन, सांख्यदर्शन की तत्त्वमीमांसा को स्वीकारते हुए "सेश्वरसांख्य" स्वरूप विकसित करता है, जिसमें पुरुष, प्रकृति और ईश्वर की स्वतंत्र सत्ता मानी जाती है। अष्टांगयोग के आठ अंग– यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि– मानव के शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नयन के साथ–साथ आत्म साक्षात्कार, विवेक और दुःख मुक्ति या मोक्ष की राह दिखाते हैं।

इस शोध पत्र में योग के दार्शनिक स्वरूप का विश्लेषण सांख्य–योग, वेदांत और भागवत धर्म के संदर्भ में किया गया है। आधुनिक समय में जहाँ योग को केवल शारीरिक–मानसिक व्यायाम के रूप में देखा जाता है, वहीं प्राचीन परंपरा में यह ईश्वर (पुरुषविशेष) की अवधारणा पर केंद्रित एक गहन दार्शनिक एवं आध्यात्मिक साधना है। भगवद्गीता के ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग तथा विष्णु पुराण जैसे ग्रंथों के सन्दर्भ से यह स्पष्ट होता है कि आस्तिक परंपरा में योग केवल चित्तवृत्तियों का निरोध न होकर ईश्वर प्राप्ति का एक सुनिश्चित, व्यवस्थित और दार्शनिक रूप से समृद्ध मार्ग है।

प्रमुख शब्द (Keywords): योग दर्शन, आस्तिक परंपरा, पातंजलि योगसूत्र, भगवद्गीता, ईश्वरप्रणिधान, भक्तियोग, सांख्य–योग, चित्तवृत्ति निरोध, अष्टांग योग, मोक्ष, ईश्वर, प्रकृति–पुरुष, समाधि, निर्वाण।

भूमिका

भारतीय चिंतन परंपरा में 'योग' की अवधारणा अत्यंत विस्तृत और गहन है। 'युज्' धातु से बने इस शब्द का मूल अर्थ है– 'जोड़ना', 'मिलाना' अथवा 'एकाग्र करना'। आस्तिक दर्शन परंपरा में इस 'जोड़ने' का आशय व्यक्तिगत आत्मा (जीवात्मा) और (परमात्मा) के बीच तादात्म्य या पुनर्मिलन से है। इस प्रकार योग

केवल शारीरिक व्यायाम या साधना का माध्यम न होकर एक उच्चकोटि का दार्शनिक और आध्यात्मिक साधन माना जाता है, जिसका अंतिम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है।

सांख्य दर्शन यद्यपि निरीश्वरवादी है, तथापि महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में 'ईश्वर' की अवधारणा को एक विशेष पुरुष के रूप में प्रस्तुत करके इसे आस्तिक स्वरूप प्रदान किया। इसी कारण योगदर्शन को 'सेश्वरसांख्य' कहा जाता है। भगवद्गीता जैसे ग्रंथों में तो योग का चरम लक्ष्य ही भगवान श्रीकृष्ण की शरणागति के रूप में प्रतिपादित हुआ है– "मामेकं शरणं व्रज" (गीता 18.66)। वैदिक एवं पौराणिक परंपरा में भी योग का अंतिम प्रयोजन मोक्ष है, जो ईश्वर कृपा और उनके साथ तादात्म्य के बिना संभव नहीं है।

षड्दर्शन में योगदर्शन एक विशेष तात्त्विक और व्यावहारिक स्थान रखता है। यह सांख्य दर्शन के तात्त्विक आधारों को स्वीकार करते हुए पुरुष और प्रकृति की द्वैत सत्ता को मान्यता देता है तथा पुरुष की मुक्ति के लिए चित्तवृत्तिनिरोध का मार्ग प्रशस्त करता है। योगसूत्रों में प्रतिपादित अष्टांग योग, शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन का एक व्यावहारिक साधन प्रस्तुत करता है। यह केवल जीवन के परम सत्य तक पहुँचने का पथ नहीं है, बल्कि मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र– संयम, शिक्षा, चिकित्सा और सामाजिक व्यवस्था में भी समान रूप से प्रासंगिक है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य आस्तिक परंपरा के विभिन्न ग्रंथों में निहित योगदर्शन के दार्शनिक आधारों का अनुशीलन करना, उनके बीच के सामंजस्य को स्पष्ट करना तथा योग के वास्तविक लक्ष्य के रूप में ईश्वर प्राप्ति के सिद्धांत को रेखांकित करना है। साथ ही, इसके तात्त्विक और सामाजिक उपादेयता के विविध पहलुओं को भी सामने लाना है।

1. भगवद्गीताः योग का आस्तिक संश्लेषण

भारतीय संस्कृति और दर्शन में योग का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। सामान्य जनमानस में योग का अर्थ प्रायः शारीरिक व्यायाम और आसनों से जोड़ा जाता है, किंतु भगवद्गीता योग को केवल शारीरिक प्रक्रिया नहीं मानती। गीता के अनुसार योग आत्मा और परमात्मा के मिलन की साधना है, जो मानव जीवन को आस्तिकता, नैतिकता और आध्यात्मिकता से एकसूत्र में बाँधता है।

1.2 योग की परिभाषा और उद्देश्य

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जयः।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥"[1]

अर्थात् जब साधक का चित्त सिध्दि और असिध्दि में समान बुध्दि वाला होता है, तब इस अवस्था में साधक का चित्त सुख–दुःख, मान–अपमान, लाभ–हानि, जय–पराजय, शीत–उष्ण, तथा भूख–प्यास आदि द्वन्द्व में समान बना रहता है। इस अवस्था में साधक सभी पदार्थों में समान भाव रखता है। इस अवस्था के कारण उसका अज्ञान नष्ट हो जाता है, सभी दुःख समाप्त हो जाते हैं। इसी समत्वं भाव का नाम 'योग' है। यानी सफलता–असफलता, सुख–दुःख में समान रहना ही योग है। गीता के अनुसार योग का मूल अर्थ है– "आत्मा का परमात्मा से संयोग।"[2]

इसका उद्देश्य जीवन में संतुलन स्थापित कर आत्मा को ईश्वर की ओर मोड़ना है। यह केवल एक साधना या तकनीक नहीं, बल्कि जीवन जीने का सम्यक् मार्ग है। योग का उद्देश्य है–

सांसारिक मोह और बन्धनों का अतिक्रमण, आत्मा की शुद्धि और परम सत्य की अनुभूति। योग वह प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति कर्तव्य करते हुए भी आसक्ति रहित रहता है और अन्ततः ईश्वर का साक्षात्कार करता है।

1.3 योग के प्रमुख प्रकार और उनका आस्तिक दृष्टिकोण

---

[1] हनुमान प्रसाद पोद्दार (सम्पादक), श्रीमद्भगवद्गीता, गोरखपुरः गीताप्रेस, 2018, 2/48.

[2] हनुमान प्रसाद पोद्दार (सम्पादक), श्रीमद्भगवद्गीता, गोरखपुरः गीताप्रेस, 2018, 6/18.

1.3.1 कर्म योग

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥"[3]

मनुष्य को केवल कर्म करने का अधिकार है, फल पर नहीं। आस्तिक दृष्टिकोण यही है कि हर कर्म ईश्वर को अर्पण होना चाहिए, न कि स्वार्थ की पूर्ति का साधन। कर्म करने अर्थात् कर्तव्य करने में ही तेरा अधिकार है, कर्मों के फलों की प्राप्ति में कभी नहीं। कर्मफल को अपना ध्येय (हेतु) बनाकर भी तू कर्म करने वाला मत बन और उन कर्म त्याग (अकर्म) में भी तेरी आसक्ति न हो अर्थात् तू निष्क्रिय भी मत रह। यही बात भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन से स्पष्ट कहा है कि तेरा अधिकार तो अपने कर्तव्य–कर्म करने का है, फल का मिलना न मिलना तेरे वश की बात नहीं। जो कर्म करेगा, वह फल भी पायेगा ऐसा माना जाता है। पर कर्म करने के पश्चात् फल के निर्धारण में और भी कई कारकों का योग होता है। हेतु को लक्ष्य बनाकर कर्म करने वाला भी मत बन और न कर्म त्यागने का आग्रह ही कर, कि यदि इच्छित फल न मिले, तो कर्तव्य ही क्यों करूँ? कर्म से व्यक्ति बंधन में बँधता है। किन्तु गीता ने कार्य में कुशलता को योग कहा है।

1.3.2 ज्ञान योग

"नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।

स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥"[4]

ज्ञान योग आत्मा और ब्रह्म के संबंध का बोध कराता है। यहाँ कहा गया है कि इस मार्ग में किया गया थोड़ा–सा अभ्यास भी महान भय (संसार बन्धन) से मुक्ति देता है। यह तर्क और आस्था का संतुलन है। आध्यात्मिक साधना या धर्माचार में किया गया प्रयत्न कभी व्यर्थ नहीं जाता। इसमें यदि पूरा न भी कर सको तो भी उसका अर्जित फल नष्ट नहीं होता। साथ ही इस मार्ग में कोई विपरीत या हानिकारक परिणाम (प्रत्यवाय) भी नहीं है। थोड़ा–सा अभ्यास भी साधक को जन्म–मरण, अज्ञान और दुःख के महाभय से बचा लेता है।

1.3.3 भक्ति योग

भारतीय चिन्तन में ज्ञान तथा कर्म के साथ भक्ति को कैवल्य प्राप्ति का साधन माना है। भज् सेवायाम् धातु से 'क्तिन' प्रत्यय लगाकर 'भक्ति' शब्द बनता है; जिसका अर्थ सेवा, पूजा उपासना और संगतिकरण करना आदि होता है। भक्तियोग प्रेम की उच्च पराकाष्ठा है। ईश्वर के प्रति अत्यधिक प्रेम ही भक्ति है। जब व्यक्ति संसार के भौतिक पदार्थों से मोह त्याग कर अनन्य भाव से ईश्वर की उपासना करता है भक्ति योग कहलाता है।

"मन्मना भव मद्भक्तोमद्याजी मां नमस्कुरु।

मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥"[5]

ईश्वर को याद करना, भक्ति करना, अर्पण करना और नमस्कार करना। यही भक्ति योग है। आस्तिक संश्लेषण का केंद्र यही है कि साधक का संपूर्ण जीवन ईश्वर–समर्पित हो। भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया परम उपदेश है, जिसमें वे कहते हैं कि अपने मन को सदा मुझमें लगाओ (मन्मना भव), मुझमें पूर्ण श्रद्धा और भक्ति वाले बनो (मद्भक्तो भव), मेरी ही पूजा करो और मुझे समर्पित भाव से नमस्कार करो (मद्याजी मां नमस्कुरु)। इस प्रकार मन, वचन और कर्म से पूर्ण समर्पित होकर मुझमें लीन हो जाओ (युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः), तो निश्चित ही तुम मुझे प्राप्त कर लोगे (मामेवैष्यसि) , भगवान आश्वासन देते हैं कि जो ऐसा करेगा वह निश्चित रूप से उनके पास पहुंचेगा, मोक्ष या परम सुख की प्राप्ति करेगा।

---

[3] हनुमान प्रसाद पोद्दार (सम्पादक), 2/47.

[4] वही 2/40.

[5] वही 9/34

अतः इस श्लोक की सबसे बड़ी शिक्षा है– "मन को भगवान में लगाओ, मुझे भक्त बनाओ, मेरी पूजा करो और समर्पित होकर मुझमें लीन हो जाओ, तो परमपद की प्राप्ति निश्चित है।" यह श्लोक भक्तियोग का सर्वोच्च उपदेश है।

2. योगदर्शन का परिचय और आस्तिक परंपरा में स्थान

योगदर्शन छः आस्तिक दर्शनों (षड्दर्शन) में से एक है, जिसका प्रणेता महर्षि पतंजलि मुनि हैं। इसे सांख्य दर्शन का पूरक दर्शन कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य मनुष्य को वह मार्ग दिखाना है जिससे वह जीवन के परम लक्ष्य, अर्थात् मोक्ष (निर्वाण), की प्राप्ति कर सके। योगदर्शन तत्त्वमीमांसा के प्रश्नों जैसे "जगत क्या है?", "जीव क्या है?" आदि में अधिक उलझता नहीं, बल्कि मोक्षप्राप्ति के व्यावहारिक उपायों को प्रस्तुत करता है। इसके लिए यह सांख्य दर्शन के तत्त्वमीमांसा को स्वीकार करता है, पर उसमें ईश्वर की अवधारणा जोड़ देता है, इसलिए इसे "सेश्वर सांख्य" कहते हैं, जबकि सांख्य को "निरीश्वर सांख्य" कहा जाता है।

योगदर्शन में प्रकृति (प्रकृति तत्व) और पुरुष (चेतन तत्व) के स्वरूपों के साथ ईश्वर के अस्तित्व को भी माना गया है। यह मानव जीवन की आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक उन्नति के लिए एक व्यावहारिक और मनोवैज्ञानिक दर्शन है। इसका आरंभ पतंजलि के योगसूत्रों से माना जाता है, जिनकी व्याख्या महर्षि व्यास ने की। योगदर्शन का मुख्य तत्व है चित्त की वृत्तियों का नियंत्रण (चित्तवृत्तिनिरोध)। योग का लक्ष्य उस अज्ञान और दुःख से मोक्ष प्राप्त करना है जो पुरूष को चित्त के साथ मिल जाने से उत्पन्न होता है।

इस प्रकार, योगदर्शन आस्तिक परंपरा में विशेष स्थान रखता है क्योंकि यह भारतीय दर्शन के छह प्रमुख आस्तिक दर्शनों में से एक है जो मोक्षमार्ग की प्राप्ति हेतु योगाभ्यास के नियम और सिद्धांत प्रदान करता है। यह आध्यात्मिक उन्नति का विज्ञान और व्यक्ति के अन्तर्मन के विकास का मार्ग है, जो ईश्वर और आत्मा के संबंध को केन्द्र में रखता है।

3. पतंजलि योगसूत्र और उनका दार्शनिक महत्त्व

महर्षि पतंजलि योगसूत्र के रचनाकार हैं एवं योगदर्शन इनका एक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण शास्त्र है। इसमें चार पाद हैं। पहले पाद को समाधि पाद कहा जाता है; जिसमें 51 सूत्र हैं। द्वितीय पाद को साधन पाद कहा जाता है; जिसमें 55 सूत्रा हैं। तृतीय पाद को विभूति पाद के नाम से जाना जाता है, इसमें 55 सूत्र हैं और चतुर्थ पाद को कैवल्य पाद से जाना जाता है। इसमें 34 सूत्र हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण योगसूत्र में कुल मिलकर 195 सूत्र हैं।

योगसूत्र का आधार एवं रचनाकाल के सम्बन्ध में एक परम्परा यह कहती है कि हिरण्यगर्भ; ब्रह्माद्ध द्वारा योगसूत्र की रचना हुई थी। परन्तु विभिन्न तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि योगसूत्रों की रचना पतंजलि ने की है। कुछ विद्वानों का मानना है कि योगसूत्राकार पतंजलि का जीवनकाल पाँच हजार वर्ष पूर्व था। योगसूत्र में भी काल से सम्बन्धित एवं समकालीन विद्वानों अथवा राजा से सम्बन्धित कोई तथ्य व प्रमाण नहीं है। अतः विषयवस्तु से योगसूत्र के रचनाकाल के सम्बन्ध में कोई प्रमाण नहीं मिलते हैं। परन्तु विभिन्न विद्वानों के तत्त्व ग्रन्थों एवं ग्रन्थकारों वेफ अध्ययन से यह बात सामने आई है कि योगसूत्रा का रचनाकाल ई. पू. चौथी सदी में रहा होगा। डॉ. राधाकृष्णन ने योगसूत्र का लेखन 300 ई. पू. माना है। प्रो. एस. एन. दासगुप्त ने हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलासॉफी में दोनों पतंजलियों को एक माना है एवं योगसूत्र का लेखन ई. पू. दूसरी सदी में हुआ ऐसा माना है। जिस कारण मनुष्य दुःखों का भोग करता हुआ इस जन्म मरण के बंधन में बँधा रहता है, उनके कारणों को दूर करने के लिए महर्षि पतंजलि ने तीन प्रकार की योग–साधनाओं का वर्णन किया है। जो इस प्रकार हैं–

"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।"

"योगः चित्त–वृत्ति–निरोधः।"

(योग का अर्थ है – चित्त की वृत्तियों का निरोध या रुक जाना।)

यहाँ चित्त की मनोवृत्तियों को रोककर आत्मा के स्वरूप में स्थित होना योग का लक्ष्य है। यह सूत्र योग की संपूर्ण साधना का मूल है, जिससे आत्म साक्षात्कार एवं शांति प्राप्त होती है।

प्रथम साधना– उच्चकोटि के साधकों हेतु साधनामार्ग चित्तवृति निरोध का उपाय बताते हुए महर्षि ने "अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।" अर्थात् अभ्यास और वैराग्य के द्वारा चित्त की समस्त वृत्तियों का निरोध हो जाता है। अभ्यास का तात्पर्य बार–बार दुहराने से है। अभ्यास एक साधना है। प्रयत्न की पूर्ण स्थिति को अभ्यास कहते हैं। इस प्रयत्न के अन्तर्गत वह सभी अभ्यास हैं; जो कि चित्त वृत्तियों के निरोध में सहायक हैं। अभ्यास की नींव में श्रध्दापूर्वक लगातार दीर्घकाल तक साधना करने से दृढ़ता, स्थिरता और निपुणता आती है।

द्वितीय साधना– मध्यम कोटि के साधकों के लिये महर्षि ने क्रियायोग का साधन कहा है, "तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः।" तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान क्रियायोग है। तप से तात्पर्य मन, वचन कर्म से तपना है। जिस प्रकार स्वर्ण को तपाने से उसकी अशुध्दियाँ दूर हो जाती हैं, उसी प्रकार साधक मन की अशुध्दियों को अनुशासन द्वारा दूर कर सकता है। स्वाध्याय से तात्पर्य है– स्वयं के विषय में जानना एवं श्रेष्ठ पुस्तकों का अध्ययन एवं ईश्वर प्रणिधान से तात्पर्य ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण से है।
तृतीय साधना– साधारण साधकों के लिए एवं सामान्य जनों के लिये समान रूप से उपयोगी है। यह साधना अष्टांग योग की साधना है,

"यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि॥"

अर्थात् यम, नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि योग के ये आठ अंग हैं। इनमें से प्रथम पाँच को बहिरंग योग एवं अन्य तीन को अन्तरंग योग कहा जाता है। इस प्रकार महर्षि पतंजलि योग साधकों का मार्ग प्रशस्त करते हैं और त्रिविध दुःखों से पूर्ण निवृति के उपाय बताते हैं।

3.1 पतंजलि योगसूत्र का दार्शनिक महत्त्व

- यह ग्रंथ व्यावहारिक एवं सैद्धांतिक दृष्टि से जीवन का परिष्कार करने का विज्ञान है, जो संसार, दुःख, मृत्यु, पुनर्जन्म, आत्मा और परमात्मा के संबंधों को स्पष्ट करता है।
- पतंजलि का दर्शन द्वैतवादी (सांख्य के निकट) है, जिसमें पुरुष (आत्मा) और प्रकृति को पृथक माना गया है; मोक्ष के लिए इन दोनों की भिन्नता का बोध आवश्यक बताया गया है।
- योगसूत्र का मुख्य लक्ष्य चित्तवृत्तियों के निरोध द्वारा मुक्त अवस्था (कैवल्य) प्राप्त करना है, जिसमें साधक सब बंधनों से मुक्त हो जाता है।

4. सांख्य दर्शन और योगदर्शन का सम्बन्ध

सांख्य दर्शन और योगदर्शन का संबंध अत्यंत घनिष्ठ और पूरक है। दोनों दर्शन भारतीय दर्शन के छः प्रमुख वैदिक दर्शन में से हैं और अधिकांश शास्त्रों में इन्हें एक साथ माना गया है। सांख्य दर्शन एक द्वैतवादी दर्शन है जिसमें ब्रह्मांड को पुरुष (आत्मा) और प्रकृति (माया, तीन गुण: सत्त्व, रज, तम) के दो स्वतंत्र तत्वों के रूप में परिभाषित किया गया है। यह दर्शन चेतना और निर्जीव प्रकृति के बीच स्पष्ट भेद करता है और मुक्ति के लिए आत्मा और प्रकृति के भेद को समझना आवश्यक बताता है। योगदर्शन भी सांख्य दर्शन के तत्त्वमीमांसा को स्वीकार करता है लेकिन इसमें ईश्वर के अस्तित्व को भी जोड़ा जाता है। योग का मूल उद्देश्य चित्त की वृत्तियों (मन की गतिविधियों) को नियंत्रित करना यानी मानसिक चंचलता को रोककर ध्यान और समाधि की स्थिति प्राप्त करना है, जिससे आत्मा की मुक्त अवस्था (कैवल्य) प्राप्त हो सके। योगदर्शन में ज्ञान के साथ–साथ अभ्यास (अष्टांग योग) पर विशेष बल दिया गया है इस प्रकार, योगदर्शन सांख्य दर्शन की तात्विक सिद्धांतों को अपने अंदर समाहित कर उसे अधिक व्यावहारिक और मनोवैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत करता है। सांख्य जहां ज्ञानमार्ग से संसार की व्याख्या करता है, वहीं योग उस ज्ञान को आत्मानुभूति और मानसिक अनुशासन के माध्यम से जीवन में लागू करने का मार्ग बताता है।

5.योगदर्शन में ईश्वर और पुरूष

योगदर्शन में "ईश्वर" और "पुरुष" के अलग–अलग, किंतु महत्वपूर्ण स्थान हैं। "ईश्वर" साक्षी, मार्गदर्शक व प्रेरणास्रोत के रूप में और "पुरुष" मोक्ष का अधिकारी एवं मुक्तिकामी जीवात्मा के रूप में प्रस्तुत है।

पतंजलि के योगसूत्रों ने ईश्वर को "विशेष पुरुष" कहा है, जो सर्वज्ञ, शाश्वत, दुःख–कर्मादि से अतीत तथा प्रेरणादायक आदर्श के रूप में स्वीकार किया गया है। ईश्वर "ईश्वर प्रणिधान" (ईश्वर में समर्पण) साधना के साधन के रूप में महत्त्वपूर्ण है, जिससे साधक को समाधि व मोक्ष प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

योग में ईश्वर को स्वीकार करने का अर्थ भक्ति, समर्पण, मार्गदर्शन प्रदान करना है, न कि हस्तक्षेपकारी (अवतारवादिता जैसे) रूप में भगवान मानना है।

सांख्य दर्शन जहां निरीश्वरवादी है, वहीं योग दर्शन "सेश्वर सांख्य" है, जिसमें ईश्वर का "संकेतक" और ध्यान–केन्द्र के रूप में उपयोग होता है।

योगदर्शन में पुरुष

पुरुष को शुद्ध चौतन्य, अपरिणामी और साक्षी आत्मा के रूप में मान्यता दी गई है, जिसकी संख्या असीम है और जो प्रत्येक जीव में अलग–अलग विद्यमान है। पुरुष स्वयं संसार के बंधन (संसार–चक्र, दुख) में केवल अविद्या (अज्ञान) के कारण फँसता हैय उसका परम लक्ष्य 'कैवल्य' या मोक्ष प्राप्त करना है।

योग का साध्य पुरुष को उसके सच्चे स्वरूप की ओर लौटाना, प्रकृति व चित्त के भेद का विवेक कराकर पूर्ण स्वतंत्रता (मुक्ति) दिलाना है। पुरुष के मुक्त होने के लिए योग में चतुर्व्यूह सिद्धांत (हेय, हेय–हेतु, हान, हानोपाय) की अवधारणा दी गई है।

संक्षेप में अंतर–

- ईश्वर मार्गदर्शक, आदर्श तथा ध्यान–केन्द्र हैं; जबकि पुरुष साध्य, मोक्षार्थी और वास्तविक आत्मा है।
- योगदर्शन में पुरुष की मुक्ति के लिए ईश्वर एक महत्वपूर्ण साधन है, लेकिन पुरुष का स्वरूप असंग, अपरिवर्तनीय और शाश्वत है।
- इन दोनों की अवधारणा मोक्ष (कैवल्य) – पुरुष की स्वतंत्रता – के मार्ग में केन्द्रीय है।

6. निष्कर्ष

आस्तिक परंपरा में योग का दार्शनिक प्रतिरूप अत्यंत समृद्ध, बहुआयामी और सुसंगत है। यह केवल शारीरिक आसनों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन के प्रति एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जिसका केन्द्र बिंदु ईश्वर है। पातंजलि का योगदर्शन, भले ही सांख्य के द्वैतवाद पर आधारित है, ईश्वरप्रणिधान को समाधि प्राप्ति का एक सशक्त साधन मानता है। भगवद्गीता ने कर्म, ज्ञान और भक्ति के समन्वय द्वारा योग के आस्तिक स्वरूप को और भी स्पष्ट किया है, जहाँ अंतिम लक्ष्य भगवान की प्राप्ति एवं शरणागति है। पौराणिक एवं वैदांतिक परंपराओं ने इसी मार्ग का विस्तार कर इसे जन–जन तक पहुँचाया।

आस्तिक परंपरा में योग चित्त की वृत्तियों के निरोध से आरंभ होकर ईश्वर के साथ पूर्ण तादात्म्य स्थापित करने तक की एक सुनियोजित दार्शनिक–आध्यात्मिक यात्रा है। इसका सार तत्व है – "योगः कर्मसु कौशलम्" (योग कर्म में कुशलता है– गीता २.५०) और "मन्मना भव मद्भक्तोमद्याजी मां नमस्कुरु" (मुझमें मन लगाओ, मेरे भक्त बनो, मेरा पूजन करो, मुझे नमस्कार करो – गीता १८.६५)।

संदर्भ सूची

1. श्रीमद्भगवद्गीता. (2018). (हनुमान प्रसाद पोद्दार, Ed.) (18.66). गोरखपुर; गीता प्रेस.
2. श्रीमद्भगवद्गीता. (2018). (हनुमान प्रसाद पोद्दार, Ed.) (2.47). गोरखपुर; गीता प्रेस.
3. श्रीमद्भगवद्गीता. (2018). (हनुमान प्रसाद पोद्दार, Ed.) (2.40). गोरखपुर; गीता प्रेस.
4. पतंजलि. (अनु.). योगसूत्रम्

5. कुमार, रमेश। (2023). योग का महत्त्व एवं सिद्धान्त ख्योग का महत्त्व और सिद्धान्त,। श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय। ISBN: 978–81–966663–0–9।
6. दुर्वे, भास्कर (Ed.). (2018). योगदर्शन का परिचय. दिल्लीः तक्षशिला प्रकाशन. (पृ. २.४८).
7. दुर्वे, भास्कर (Ed.). (2018). योगदर्शन का परिचय. दिल्लीः तक्षशिला प्रकाशन. (पृ. ६.१८).
8. दासगुप्ता, सुरेंद्रनाथ. (1922). A History of Indian Philosophy (Vol-1). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.
9. एलियडे, मिर्चा. (1958). Yoga: Immortality and Freedom. यूनिवर्सिटी प्रेस.
10. फूएरस्टीन, जॉर्ज. (1998). The Yoga Tradition: Its History, Literature, Philosophy and Practice. हॉर्म प्रेस.
11. राधाकृष्णन, एस. (1923). Indian Philosophy (Vol. 2). ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
12. तैमनी, ई.पी. (1961). The Science of Yoga. थियोसोफिकल पब्लिशिंग हाउस.
13. विवेकानंद, स्वामी. (1896). राजयोग. कोलकाताः अद्वैत आश्रम.

Email : shasheedevijrhu@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 70-74
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

माध्यमिक स्तर के हिंदी माध्यम के छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके नैतिक मूल्यों के प्रभाव का अध्ययन

कृष्ण बहादुर सिंह
शोधार्थी,
शिक्षाशास्त्र विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
डॉ. राममणि द्विवेदी
प्राचार्य,
एम.एल.चौरसीया शिक्षा महाविद्यालय, रीवा(म.प्र.)

सार (Abstract)
प्रस्तुत शोध लेख का उद्देश्य माध्यमिक स्तर के हिंदी माध्यम के छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके नैतिक मूल्यों के प्रभाव का अध्ययन करना है। अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। कुल 400 विद्यार्थियों (200 छात्र एवं 200 छात्राएँ) को नमूने के रूप में लिया गया। नैतिक मूल्यों के मापन के लिए मानकीकृत नैतिक मूल्य मापनी तथा शैक्षिक उपलब्धि के लिए वार्षिक परीक्षा परिणामों का उपयोग किया गया। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु माध्य, मानक विचलन, t-test तथा पीयरसन सहसंबंध गुणांक का प्रयोग किया गया। परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि नैतिक मूल्यों और शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सकारात्मक एवं सांख्यिकीय रूप से सार्थक संबंध पाया गया।
मुख्य शब्द- नैतिक मूल्य, शैक्षिक उपलब्धि, माध्यमिक स्तर, हिंदी माध्यम, छात्र, छात्राएं।

प्रस्तावना

प्रायः हम सभी लोग खुद को शिक्षित समझते हैं लेकिन शिक्षा के वास्तविक अर्थ को बहुत कम प्रयोग करते हैं। जन्म से मृत्यु पर्यन्त तक हम जिस भी वस्तु के संपर्क में आते हैं उससे नित नया अनुभव प्राप्त करते हैं। अतः शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं बल्कि विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है।

“मूल्य ऐसी आचरण संहिता या सद्गुण है, जिससे व्यक्ति अपने निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपनी जीवन-पद्धति का निर्माण करता है तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है”। हमार संविधान नैतिक मूल्यों की अमूल्य निधि है। संवैधानिक मूल्य प्रजातन्त्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, न्याय, सहिष्णुता, व्यक्ति की गरिमा, अभिव्यक्ति आदि को शिक्षा द्वारा छात्रों के जीवन में उतारा जाना चाहिए।

वर्तमान समाज में मूल्यों का ह्रास हमारी शिक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती है, जिसे स्वीकार करके शिक्षा को ही मूल्यों का विकास करना होगा तथा शिक्षा में सुधार द्वारा ही इन मूल्यों के ह्रास को रोका जा सकता है। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों का बौद्धिक तथा नैतिक विकास तीव्र गति से होता है। यदि इस स्तर पर सकारात्मक नैतिक मूल्यों का विकास किया जाए तो यह निश्चित ही उनकी शैक्षिक उपलब्धि में भी सुधार करेगा।

जब विद्यार्थी अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर लेता है तो उसे ही 'शैक्षिक उपलब्धि' कहा जाता है जो उसे उसके कार्य के मुल्यांकन स्वरूप अंक में प्राप्त होता है। विद्यार्थी के शैक्षिक उपलब्धि को कई कारण प्रभावित करते हैं, जैसे- परिवार, मित्र, समाज, शिक्षक का व्यवहार, विद्यालय का वातावरण आदि। प्रायः शैक्षिक उपलब्धि में नैतिक मूल्यों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। नैतिक मूल्य जैसे - अनुशासन, सहयोग, ईमानदारी, निष्ठा आदि उसके शिक्षण को प्रभावित करते हैं । परंतु आज की शिक्षा प्रणाली सिर्फ डिग्री तक सीमित रह गयी है। इसमें विद्यार्थियों के अन्य गुणों पर ध्यान नही दिया जाता ।
अतः आज समाज में अनैतिकता, भ्रष्टाचार आदि तेजी से बढ़ रहे हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शैक्षिक उपलब्धि पर नैतिक मूल्य का प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

माध्यमिक स्तर की अवस्था ऐसी होती है जो जिसमें सीखी गई अनुशासन, सद्भावना, सहयोग आदि नैतिक मूल्यों का प्रभाव विद्यार्थी के पूरे जीवन पर पड़ता है । यदि स्तर पर विद्यार्थियों के नैतिकता को कम महत्व दिया जाएगा तो वह बाद में चलकर अन-अनुशासित नागरिक बनेंगे जिसका प्रभाव उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ेगा क्योंकि शैक्षिक सफलता के लिए अनुशासन, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा जैसे नैतिक मुल्य अति आवश्यक होता है।

वर्तमान समय में शैक्षिक उपलब्धि पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है लेकिन नैतिक मूल्य पर नहीं। अतः शिक्षा के क्षेत्र में मूल्य आधारित शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जा रही है। विद्यालयों में नैतिक मूल्यों के विकास के बिना विद्यार्थियों का समग्र विकास संभव नहीं है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि यह अध्ययन किया जाए कि नैतिक मूल्य विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?

अध्ययन के उद्देश्य

1. माध्यमिक स्तर के छात्रों एवं छात्राओं के नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
2. छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
3. नैतिक मूल्यों और शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

H01: छात्रों एवं छात्राओं के नैतिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

H02: छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

H03: नैतिक मूल्यों और शैक्षिक उपलब्धि के बीच कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

अध्ययन की परिसीमन

I. प्रस्तुत अध्ययन मिर्ज़ापुर जिले के छानबे ब्लॉक तक सीमित है।

II. यह अध्ययन सिर्फ हिन्दी माध्यम के कक्षा 10वीं के विद्यार्थियों तक सीमित है।

संबंधित साहित्य की समीक्षा

शर्मा (2010) ने माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि उच्च नैतिक मूल्यों वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अधिक होती है। निष्कर्ष मिला कि नैतिक मूल्य शैक्षिक सफलता के प्रमुख कारक हैं।

रामैया (2024) द्वारा भारतीय बाल-पालन प्रथाओं एवं नैतिक विकास पर अध्ययन किया गया। इसमें पाया गया कि परिवार, संस्कृति एवं सामाजिक परिवेश बच्चों के नैतिक मूल्यों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

विभिन्न शोधकर्ताओं ने यह पाया कि जिन विद्यार्थियों में अनुशासन, जिम्मेदारी तथा सहयोग की भावना अधिक होती है, उनकी शैक्षिक उपलब्धि भी अपेक्षाकृत अधिक होती है।

सामान्य रूप से सभी शोध नैतिक मूल्य और उपलब्धि पर केंद्रित हैं लेकिन हिंदी माध्यम के माध्यमिक स्तर के छात्र-छात्राओं पर विशिष्ट अध्ययन सीमित हैं।

चर

स्वतंत्र चर- नैतिक मूल्य

आश्रित चर- शैक्षणिक उपलब्धि

शोध विधियाँ

प्रस्तुत अध्ययन में शोधार्थी द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। यादृच्छिक विधि द्वारा न्यादर्श के रूप में 400 विद्यार्थी (200 छात्र एवं 200 छात्राएँ) का चयन किया गया।

शोध उपकरण

नैतिक मूल्य मापनी - मधुलिका वर्मा और विन्देश्वरी वक्सर पवार

शैक्षिक उपलब्धि- (वार्षिक परीक्षा अंक)

सांख्यिकीय विधियाँ

1. मध्यमान
2. मानक विचलन
3. t- test
4. पियारसन (r) सहसंबंध

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या

$H0_1$: छात्रों एवं छात्राओं के नैतिक मूल्यों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 1

नैतिक मूल्यों की तालिका

समूह	**N**	**Mean**	**SD**	**t-value**	**सार्थकता स्तर**
छात्र	200	108.40	15.20	2.92	0.05=1.966
छात्राएँ	200	112.75	14.60		

(Df 398- t value, . 05=1.966, .01=2.587)

व्याख्या- उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि छात्रों का माध्य 106.40 तथा छात्राओं का माध्य 110.85 है। मानक विचलन क्रमशः 22.30 तथा 21.90 है। प्राप्त t-value 2.92 है, जो स्वतंत्रता की डिग्री मान 398 पर सारणी मान से बहुत ज्यादा है और 0.05 स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। यह स्पष्ट होता है कि छात्रों एवं छात्राओं के नैतिक मूल्य मे अंतर पाया जाता है।

$H0_2$: छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 2

शैक्षिक उपलब्धि

समूह	**N**	**Mean**	**SD**	**t-value**	**सार्थकता स्तर**
छात्र	200	65.30	10.40	4.12	0.05=1.966
छात्राएँ	200	69.80	9.40		

व्याख्या- उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि छात्रों का माध्य 65.30 तथा छात्राओं का माध्य 69.80 है। मानक विचलन क्रमशः 10.40 तथा 9.40 है। प्राप्त t-value 4.12 है, जो स्वतंत्रता की डिग्री मान 398 पर सारणी मान से बहुत ज्यादा है और 0.05 स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। यह स्पष्ट होता है कि छात्रों एवँ छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि मे अंतर पाया जाता है।

H03: नैतिक मूल्यों और शैक्षिक उपलब्धि के बीच कोई सार्थक संबंध नहीं है।

तालिका 3

नैतिक मूल्य और शैक्षिक उपलब्धि में सहसंबंध

समूह	चर	N	संबंध गुणांक (r)
छात्र×छात्राएँ	नैतिक मूल्यों × शैक्षिक उपलब्धि	400	0.58

व्याख्या- उपरोक्त तालिका में प्राप्त सहसंबंध गुणांक r = 0.58 है, जो मध्यम स्तर का सकारात्मक सहसंबंध दर्शाता है। इसका अर्थ है कि जिन विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों का स्तर अधिक है, उनकी शैक्षिक उपलब्धि भी अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नैतिक मूल्य विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

माध्यमिक स्तर के हिंदी माध्यम के छात्रों एवं छात्राओं के नैतिक मूल्यों और शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सकारात्मक एवं सार्थक सहसंबंध पाया गया।

शैक्षिक निहितार्थ

- विद्यालयों में मूल्य शिक्षा को प्रभावी रूप से लागू किया जाना चाहिए।
- पाठ्यक्रम में मूल्य शिक्षा को अनिवार्य किया जाना चाहिए।
- विद्यालय वातावरण और शिक्षकों को नैतिक रूप से समृद्ध बनाया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य माध्यमिक स्तर के हिंदी माध्यम के छात्रों एवं छात्राओं के नैतिक मूल्यों तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन करना था। अध्ययन के परिणामों से यह ज्ञात हुआ कि जिन विद्यार्थियों में नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च पाया गया, उनकी शैक्षिक उपलब्धि भी अपेक्षाकृत अधिक रही। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नैतिक मूल्य विद्यार्थियों में अनुशासन, आत्मनियंत्रण, जिम्मेदारी एवं अध्ययन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करते हैं, जो उनकी शैक्षिक सफलता के लिए आवश्यक हैं। सहसंबंध विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि नैतिक मूल्य और शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सकारात्मक एवं सांख्यिकीय रूप से सार्थक संबंध विद्यमान है। यदि विद्यालयों में मूल्य-आधारित शिक्षा को प्रभावी रूप से लागू किया जाए, तो विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के साथ-साथ उनके व्यक्तित्व का भी समग्र विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

संदर्भ सूची

- Kohlberg, L. (1984) Essays on moral development, Harper & Row.
- Lickona, T. (1991) Educating for character, Bantam Books.
- पाण्डेय, रामशकल (2015) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, श्री विनोद पुस्तक मंदिर ,आगरा, P- 3,5, 725,730-731।
- Sharma, R. A. (2018) Educational psychology, Vinod Pustak Mandir.
- Singh, K. (2020) Value education and modern society, Radha Prakashan.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 75-79
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

डिजिटल शिक्षा और महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण

डॉ० स्वाति राय
सहायक व्याख्याता,
राजगंज इंटर महाविद्यालय, राजगंज ,धनबाद

सारांश
डिजिटल शिक्षा वर्तमान युग में सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुकी है। विशेष रूप से महिलाओं के संदर्भ में यह शिक्षा उन्हें आत्मनिर्भर, जागरूक और आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में अहम भूमिका निभाती है। इस शोध पत्र का उद्देश्य डिजिटल शिक्षा और महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के मध्य संबंध का अध्ययन करना है। अध्ययन में द्वितीयक स्रोतों (जर्नल, शोध पत्र, रिपोर्ट) का उपयोग किया गया है। निष्कर्ष बताते हैं कि डिजिटल साक्षरता महिलाओं को रोजगार, उद्यमिता और वित्तीय समावेशन के अवसर प्रदान करती है, हालांकि डिजिटल विभाजन, सामाजिक बाधाएँ और संसाधनों की कमी अभी भी प्रमुख चुनौतियाँ हैं। सरकारी योजनाओ के साथ-साथ महिलाओ को जगरूक करना चहिये।

मुख्य शब्द- डिजिटल शिक्षा, डिजिटल साक्षरता, महिला सशक्तिकरण, आर्थिक विकास, डिजिटल इंडिया

प्रस्तावना

डिजिटल युग में शिक्षा का स्वरूप तेजी से बदल रहा है। इंटरनेट, मोबाइल तकनीक और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने शिक्षा को अधिक सुलभ बना दिया है। महिलाओं के लिए डिजिटल शिक्षा विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उन्हें पारंपरिक सीमाओं से बाहर निकलने का अवसर देती है।

भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ महिलाओं की शिक्षा और रोजगार में अभी भी असमानता है, डिजिटल शिक्षा एक परिवर्तनकारी उपकरण के रूप में उभर रही है। डिजिटल प्लेटफॉर्म महिलाओं को घर बैठे सीखने, काम करने और व्यवसाय शुरू करने का अवसर देते हैं।

अध्ययनों से स्पष्ट है कि डिजिटल प्लेटफॉर्म महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और उद्यमिता तक बेहतर पहुँच प्रदान करते हैं।

डिजिटल शिक्षा की अवधारणा

डिजिटल शिक्षा एक ऐसी तकनीक या शिक्षण विधि है जिसमें प्रौद्योगिकी और डिजिटल उपकरणों का उपयोग किया जाता है। यह एक नया और व्यापक तकनीकी क्षेत्र है जो देश के किसी भी कोने से किसी भी छात्र को ज्ञान प्राप्त करने और जानकारी हासिल करने में मदद करेगा। इसमें ई-लर्निंग, ऑनलाइन कोर्स, डिजिटल सामग्री और वर्चुअल क्लास शामिल हैं।

डिजिटल साक्षरता महिलाओं के लिए अत्यंत आवश्यक है क्योंकि यह उन्हें आधुनिक समाज में भागीदारी के लिए सक्षम बनाती है। यह न केवल शिक्षा तक पहुँच बढ़ाती है बल्कि सामाजिक और आर्थिक अवसरों के द्वार भी खोलती है।

महिला आर्थिक सशक्तिकरण की अवधारणा

सशक्तिकरण से तात्पर्य किसी भी कार्य को करने में स्वयं निर्णय लेने की क्षमता विकसित करना। अगर हम महिलाओं के सशक्तिकरण की बात करे तो महिलाओं में ज्ञानार्जन, नियन्त्रण, कार्य करने की क्षमता का विकास, परिवर्तन लाने की क्षमता का विकास, विकल्प चयन क्षमता, स्वाभिमान का विकास आदि। महिलाओं का सशक्तिकरण सर्वांगीण एवं बहुआयामी दृश्टिकोण है। महिलाएं आर्थिक रूप से सशक्त तब होती हैं जब उन्हें संसाधनों तक पहुंच प्राप्त होती है और उन्हें अपने संसाधनों के बारे में आर्थिक निर्णय लेने की शक्ति और क्षमता प्राप्त होती है । इसमें निम्न तत्व शामिल हैं: आय अर्जन के अवसर, वित्तीय स्वतंत्रता, उद्यमिता विकास, सामाजिक निर्णयों में भागीदारी, प्रौद्योगिकी तक पहुंच आदि। डिजिटल तकनीक इन सभी पहलुओं को मजबूत करती है।

डिजिटल शिक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण का संबंध

डिजिटल शिक्षा महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण को कई तरीकों से प्रभावित करती है:

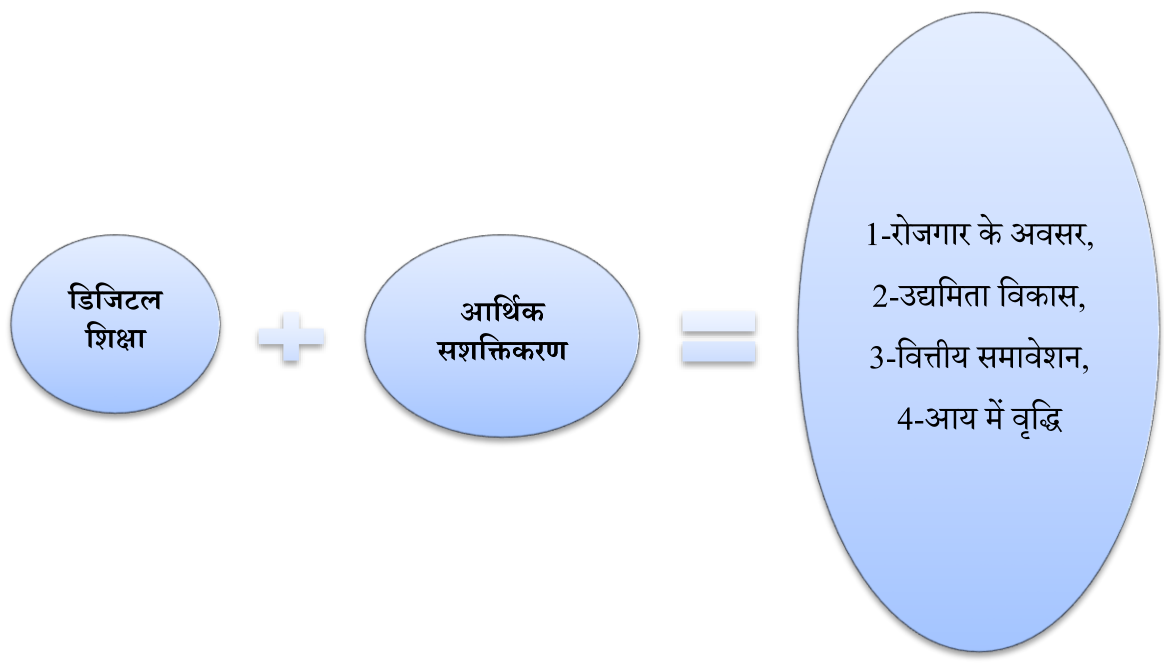

(i) रोजगार के अवसर- डिजिटल कौशल महिलाओं को ऑनलाइन नौकरी, फ्रीलांसिंग और रिमोट वर्क के अवसर प्रदान करते हैं।

(ii) उद्यमिता विकास- महिलाएँ डिजिटल प्लेटफॉर्म (जैसे ई-कॉमर्स) के माध्यम से अपना व्यवसाय शुरू कर सकती हैं। विभिन्न शोध से पता चलता है कि डिजिटल तकनीक महिलाओं को व्यवसाय शुरू करने और विस्तार करने में मदद करती है।

(iii) वित्तीय समावेशन- डिजिटल बैंकिंग, UPI और मोबाइल पेमेंट्स महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाते हैं।

(iv) आय में वृद्धि- एक अध्ययन के अनुसार, डिजिटल साक्षरता से महिलाओं की आय में लगभग 41% तक वृद्धि देखी गई।

साहित्य समीक्षा

Halder (2026) ने पाया कि डिजिटल साक्षरता महिलाओं के लिए रोजगार, शिक्षा और वित्तीय स्वतंत्रता के अवसर बढ़ाती है।

Digital India अध्ययन (2025) में पाया गया कि डिजिटल प्लेटफॉर्म महिलाओं को रोजगार और उद्यमिता के नए अवसर प्रदान करते हैं।

Varanasi आधारित अध्ययन (2025) ने डिजिटल साक्षरता और महिला सशक्तिकरण के बीच सकारात्मक संबंध स्थापित किया।

Gawate (2024) ने डिजिटल इंडिया के माध्यम से महिलाओं के सशक्तिकरण की संभावनाओं और चुनौतियों का विश्लेषण किया।

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि डिजिटल शिक्षा महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है वह समझ में अपने अस्तित्व का निर्माण कर सकते में समर्थ होती हैं किसी भी कार्य के प्रति स्वयं निर्णय लेने में सक्षम होती हैं।

अध्ययन के उद्देश्य

- डिजिटल शिक्षा की भूमिका को समझना
- महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में डिजिटल साक्षरता का योगदान जानना
- डिजिटल शिक्षा और आय स्तर के बीच संबंध का अध्ययन
- चुनौतियों और अवसरों की पहचान करना

अनुसंधान पद्धति

यह अध्ययन वर्णनात्मक (Descriptive) एवं विश्लेषणात्मक (Analytical) है।

डेटा स्रोत: द्वितीयक (शोध पत्र, जर्नल, रिपोर्ट)

विश्लेषण विधि: गुणात्मक (Qualitative Analysis)

डिजिटल शिक्षा के माध्यम से सशक्तिकरण के लाभ

(i) आत्मनिर्भरता- महिलाएँ स्वयं निर्णय लेने में सक्षम होती हैं।

(ii) सामाजिक भागीदार- डिजिटल प्लेटफॉर्म महिलाओं को समाज में सक्रिय भूमिका निभाने का अवसर देते हैं।

(iii) कौशल विकास- ऑनलाइन कोर्स और प्रशिक्षण कार्यक्रम कौशल वृद्धि में सहायक हैं।

(iv) सूचना तक पहुँच- महिलाएँ स्वास्थ्य, शिक्षा और सरकारी योजनाओं की जानकारी प्राप्त कर सकती हैं।

डिजिटल शिक्षा में चुनौतियाँ

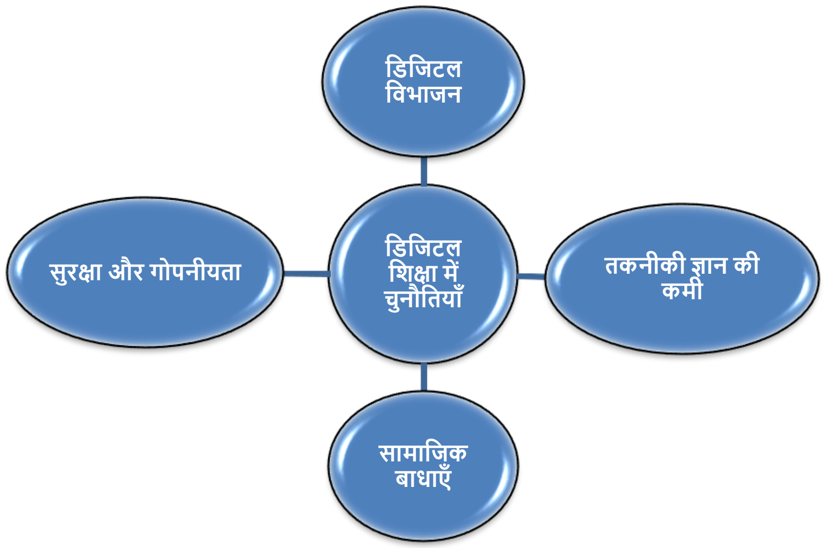

(i) डिजिटल विभाजन- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच डिजिटल असमानता।

(ii) तकनीकी ज्ञान की कमी- कई महिलाओं के पास डिजिटल कौशल का अभाव है।

(iii) सामाजिक बाधाएँ- पारंपरिक सोच और लैंगिक भेदभाव।

(iv) सुरक्षा और गोपनीयता- ऑनलाइन धोखाधड़ी और साइबर अपराध।

अध्ययन बताते हैं कि डिजिटल विभाजन और सामाजिक बाधाएँ महिलाओं के सशक्तिकरण में प्रमुख अवरोध हैं।

डिजिटल सशक्तिकरण हेतु सरकारी प्रयास

भारत सरकार द्वारा कई योजनाएँ चलाई जा रही हैं, -

- **प्रधानमंत्री ग्रामीण डिजिटल साक्षरता अभियान (PMGDISHA):** यह योजना विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं और लड़कियों को डिजिटल उपकरणों (कंप्यूटर, स्मार्टफोन) का उपयोग करना सिखाती है, ताकि वे डिजिटल लेनदेन और ई-सेवाओं का लाभ उठा सकें।
- **डिजिटल नारी (Digital Nari):** यह योजना ग्रामीण महिलाओं को बैंकिंग, बीमा, ई-कॉमर्स और सरकारी सेवाओं के लिए प्रशिक्षित करती है, जिससे वे 'डिजिटल नारी' बनकर आत्मनिर्भर बन सकें।
- **महिला ई-हाट (Mahila E-haat):** यह एक ऑनलाइन मार्केटिंग प्लेटफॉर्म है, जो महिला उद्यमियों को अपने उत्पादों को सीधे ग्राहकों तक बेचने में मदद करता है।
- **स्टैंड अप इंडिया (Stand Up India):** यह योजना महिलाओं को व्यावसायिक उद्यम स्थापित करने के लिए ऋण प्रदान करती है।
- **इंटरनेट साथी (Internet Saathi):** Google और DEF की इस पहल का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को इंटरनेट साक्षर बनाना है, ताकि वे अपने क्षेत्र में डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा दे सकें।
- **मिशन शक्ति (Mission Shakti):** 'सामर्थ्य' (Samarthya) उप-योजना के तहत, महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए उन्हें कौशल प्रशिक्षण और सहायता प्रदान की जाती है।

- **सुकन्या समृद्धि योजना (SSY):** बालिकाओं की शिक्षा और भविष्य के लिए यह एक बचत योजना है।
- **महिला सम्मान बचत प्रमाणपत्र (Mahila Samman Saving Certificate):** महिलाओं के लिए एक विशेष बचत योजना जो उच्च ब्याज दर प्रदान करती है।

इन योजनाओं ने महिलाओं को शिक्षा, रोजगार और वित्तीय सेवाओं तक पहुँच प्रदान की है।

डिजिटल सशक्तिकरण हेतु सुझाव

- डिजिटल शिक्षा का विस्तार ग्रामीण क्षेत्रों तक किया जाए।
- महिलाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम।
- सस्ती इंटरनेट सुविधा उपलब्ध कराई जाए।
- साइबर सुरक्षा के प्रति जागरूकता।
- सरकारी और निजी क्षेत्र का सहयोग।

निष्कर्ष

सशक्तिकरण की प्रक्रिया में समाज को पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण से बाहर आना चाहिए। महिलाओं के निर्णय का उचित सम्मान करना तथा उनके विकास के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराने में सहयोग करना चाहिए। डिजिटल शिक्षा महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण का एक शक्तिशाली माध्यम है। यह उन्हें रोजगार, उद्यमिता और वित्तीय स्वतंत्रता प्रदान करती है। हालांकि, डिजिटल विभाजन, सामाजिक बाधाएँ और संसाधनों की कमी जैसी चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं।

यदि इन चुनौतियों को दूर किया जाए, तो डिजिटल शिक्षा महिलाओं के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है और देश के समग्र आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। भारत सरकार द्वारा अनेक सरकारी योजनाएं एवं गैर सरकारी कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है जिसमें डिजिटल शिक्षा उपचारात्मक प्रक्रिया सिद्ध हो रही है जिसका महिलाओं को पूर्ण उपयोग कर अपने आपको आत्मनिर्भर बनाकर स्वयं को समाज का अहम हिस्सा साबित कर उन्नत समाज के निर्माण में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सहयोग देना चाहिए और यह साबित करना चाहिए कि आज की नारी अबला नहीं सबला है।

संदर्भ सूची

1. Halder, D. (2026). Digital Literacy towards Women Empowerment in India, ResearchGate
2. Singh, S. et al. (2025). Role of Digital Literacy in Women's Economic Empowerment,raijmr.com
3. Sharma, K. (2026). Impact of Digital Literacy on Women Empowerment, IJRSS
4. IHD India (2025). Impact of Digital India on Rural Women. Institute for Human Development
5. Varanasi Study (2025) ,Sage Journals
6. NCERT Journal (2024). ICT and Women Empowerment
7. https://byjus.com/free-ias-prep/digital-education-in-india/
8. https://echetana.com/wp-content/uploads/2020/12/12.-A-H-Brijlata-106-109.pdf
9. https://www.pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1882218

swatiroyanuj19@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 80-88
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में धर्मराज्य

भुनेश्वर सिंह
शोधार्थी,
दीनदयाल उपाध्याय अध्ययन पीठ, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला।
डॉ. हेत राम
सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान, क्षेत्रीय केन्द्र धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र पं. दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में निहित धर्मराज्य की अवधारणा का विस्तृत, तात्त्विक एवं समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। आधुनिक राजनीतिक विमर्श में धर्म तथा राज्य को प्रायः परस्पर विरोधी अथवा पूर्णतः पृथक रूप में मान लिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप राज्य को एक मूल्य निरपेक्ष तथा शक्ति आधारित संस्था के रूप में देखने की प्रवृत्ति विकसित हुई है। दीनदयाल उपाध्याय इस प्रवृत्ति को भारतीय जीवन दृष्टि के प्रतिकूल मानते हैं तथा राज्य को राष्ट्र की आत्मा से जुड़ी नैतिक एवं सांस्कृतिक संस्था के रूप में परिभाषित करते हैं। उनके अनुसार राष्ट्र का निर्माण भूमि, जन और संस्कृति के अन्योन्याश्रित संघात से होता है, जिसमें भूमि, जन को आश्रय और पोषण देती है तथा जन भूमि को चेतना प्रदान करता है। संस्कृति दोनों के पारस्परिक संबंधों से विकसित होती है। इस दृष्टि से राष्ट्र केवल राजनीतिक सत्ता का क्षेत्र नहीं अपितु एक जीवंत सांस्कृतिक सत्ता है, जिसकी रक्षा, अभिवृद्धि तथा समृद्धि तभी संभव है जब राज्य धर्माधिष्ठित हो। यहाँ धर्म का तात्पर्य किसी पंथ, संप्रदाय अथवा उपासना पद्धति से न होकर उस जीवनधारक तत्त्व से है जो व्यक्ति, समाज और सृष्टि को धारण करता है। दीनदयाल उपाध्याय धारणात् धर्मः की परिभाषा के माध्यम से धर्म को व्यापक अर्थ में ग्रहण करते हैं तथा उसे वह तत्त्व मानते हैं जो शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के बीच सामंजस्य स्थापित करता है तथा व्यक्ति और समाज के बीच संतुलन बनाए रखता है। इसी आधार पर वे धर्मराज्य की संकल्पना प्रस्तुत करते हैं जो न तो पंथिक राज्य है और न ही थियोक्रेसी, क्योंकि इसमें राज्य धर्म का निर्माता नहीं बल्कि धर्म का पालनकर्ता होता है और शासन की दिशा, मर्यादा तथा उद्देश्य शासक की इच्छा या बहुमत की अस्थिर भावना के स्थान पर धर्म द्वारा नियंत्रित होते हैं। यह शोध-पत्र दीनदयाल उपाध्याय के वाङ्मय में प्रतिपादित

धर्मराज्य की अवधारणा को आधुनिक प्रजातंत्र, समाजवाद और सेक्युलर राज्य की अवधारणाओं के संदर्भ में समझने का प्रयास करता है और यह स्पष्ट करता है कि धर्मराज्य भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित एकात्मवादी राज्य दर्शन का आधुनिक प्रस्तुतीकरण है, जिसका लक्ष्य लोककल्याण, सामाजिक सामंजस्य और राष्ट्र की आत्मा की रक्षा है।

मुख्य शब्द: धर्मराज्य, दीनदयाल उपाध्याय, धर्म, राष्ट्र, एकात्मता, भारतीय ज्ञान-परंपरा, राज्य-दर्शन, लोककल्याण।

परिचय

भारतीय राजनीतिक चिंतन की परंपरा विश्व की प्राचीनतम तथा सर्वाधिक समृद्ध परंपराओं में से एक मानी जाती है। इस परंपरा में राज्य को केवल सत्ता संरचना अथवा प्रशासनिक व्यवस्था के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि उसे समाज के नैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवन से अभिन्न रूप से जोड़ा गया। प्राचीन भारत में राज्य का उद्देश्य केवल विधि व्यवस्था बनाए रखना या सत्ता का संचालन करना नहीं था, अपितु धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों के संतुलित साधन को सुनिश्चित करना था। राज्य को समाज के नैतिक अनुशासन और सांस्कृतिक निरंतरता का वाहक माना गया, जिसके माध्यम से व्यक्ति तथा समाज दोनों का सम्यक विकास संभव हो सके। इसी कारण भारतीय चिंतन में राज्य को सदैव धर्माधिष्ठित माना गया। शासक से यह अपेक्षा की जाती रही कि वह सत्ता का प्रयोग स्वेच्छाचार के लिए नहीं, बल्कि लोककल्याण तथा सामाजिक सामंजस्य के लिए करे। आधुनिक काल में विशेषतः औपनिवेशिक शासन और पश्चिमी राजनीतिक विचारधाराओं के प्रभाव में भारत में राज्य तथा धर्म के संबंध को लेकर गहरी वैचारिक भ्रांति उत्पन्न हुई। सेक्युलर राज्य की अवधारणा को इस प्रकार ग्रहण किया गया मानो राज्य का धर्म और नैतिकता से कोई संबंध नहीं होना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप राजनीति और शासन धीरे धीरे मूल्य निरपेक्षता की ओर उन्मुख होते गए, जिससे सत्ता और नैतिकता के बीच एक स्पष्ट और गहरी खाई उत्पन्न हो गई (उपाध्याय, 1970)।

पं. दीनदयाल उपाध्याय का चिंतन इसी ऐतिहासिक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि में विकसित होता है। वे मानते हैं कि स्वतंत्र भारत की राजनीतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं का समाधान आयातित विचारधाराओं में खोजने के बजाय भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल तत्त्वों में निहित है। उनके अनुसार धर्म, भारतीय जीवन दृष्टि का केंद्रीय आधार है, जिसे पंथ के सीमित अर्थों में समझना एक गंभीर बौद्धिक त्रुटि है (शर्मा, 2021)। दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में धर्म एक व्यापक, सर्व-समावेशी तथा जीवनधारक अवधारणा के रूप में उपस्थित होता है, जो व्यक्ति के आचरण, समाज की संरचना और राज्य की नीतियों को नैतिक दिशा प्रदान करता है। इसी तात्त्विक आधार पर उपाध्याय धर्मराज्य की संकल्पना प्रस्तुत करते हैं, जोकि न तो धार्मिक कट्टरता को जन्म देती है और न ही सत्ता को निरंकुश बनाती है। धर्मराज्य वह व्यवस्था है जिसमें शासन का लक्ष्य लोकाराधन होता है, और जिसमें शासक तथा प्रजा दोनों धर्म के प्रति उत्तरदायी होते हैं (गोयल, 2015)। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के इसी धर्मराज्य चिंतन को उनके मूल लेखन के आलोक में समझना और उसका तात्त्विक विश्लेषण करना है, ताकि भारतीय राज्य दर्शन की इस मौलिक अवधारणा का सम्यक और संतुलित मूल्यांकन किया जा सके।

शोध उद्देश्य

1. पं. दीनदयाल उपाध्याय के वाङ्मय में प्रतिपादित 'धर्मराज्य' की अवधारणा का गहन एवं तात्त्विक विश्लेषण करना।

2. धर्म, राष्ट्र और राज्य के पारस्परिक संबंधों को भारतीय ज्ञान-परंपरा के संदर्भ में स्पष्ट करना तथा आधुनिक राजनीतिक अवधारणाओं से उसका वैचारिक भेद रेखांकित करना।

शोध प्रविधि

यह शोध गुणात्मक प्रकृति का है तथा मुख्य रूप से विषयवस्तु विश्लेषण पद्धति पर आधारित है। अध्ययन के स्रोत के रूप में, पं. दीनदयाल उपाध्याय के 'संपूर्ण वाङ्मय' के खंड दस में संकलित लेख 'धर्मराज्य क्या और क्यों?' तथा 'धर्म धारण से है?' को ग्रहण किया गया है। शोध में वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक तथा समालोचनात्मक विधियों का प्रयोग करते हुए मूल पाठ में निहित विचारों, अवधारणाओं तथा तर्क क्रम का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है तथा उनके दार्शनिक निहितार्थों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

साहित्य की समीक्षा

साहित्य की समीक्षा का उद्देश्य किसी विषय पर पूर्ववर्ती चिंतन की प्रवृत्तियों, अवधारणात्मक स्पष्टताओं तथा वैचारिक दिशाओं को समझना होता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में साहित्य समीक्षा का क्षेत्र सीमित, किंतु गहन है, क्योंकि इसका आधार पं. दीनदयाल उपाध्याय के वाङ्मय के वही चयनित खंड हैं जिनमें धर्मराज्य और धर्म की अवधारणा का मूल एवं सैद्धांतिक प्रतिपादन मिलता है। 'धर्मराज्य क्या और क्यों?' तथा 'धर्म धारण से है?' शीर्षक लेख उनके राज्य दर्शन और समाज दृष्टि की वैचारिक आधारशिला माने जा सकते हैं। इन दोनों खंडों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि दीनदयाल उपाध्याय का चिंतन किसी एक राजनीतिक लेख या तात्कालिक संदर्भ तक सीमित नहीं है, बल्कि वह एक सुसंगत, परस्पर संबद्ध और समग्र वैचारिक संरचना का निर्माण करता है जिसमें धर्म, राष्ट्र, समाज और राज्य एक दूसरे से अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं।

'धर्मराज्य क्या और क्यों?' शीर्षक लेख में दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्र की परिभाषा से अपने चिंतन की शुरुआत करते हैं। उनके अनुसार राष्ट्र का निर्माण केवल राजनीतिक संप्रभुता, प्रशासनिक सीमाओं या संवैधानिक व्यवस्थाओं से नहीं होता, अपितु वह भूमि, जन और संस्कृति के संघात से उत्पन्न होता है। यह त्रयी राष्ट्र को एक जीवंत सत्ता का स्वरूप प्रदान करती है। इस लेख की प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ राष्ट्र को न तो केवल भौगोलिक इकाई माना गया है और न ही जनसंख्या का यांत्रिक समूह। भूमि जन के लिए साधक, पोषक और रक्षक की भूमिका निभाती है, जबकि जन भूमि को चेतना और अर्थ प्रदान करता है। संस्कृति इन दोनों के पारस्परिक संबंधों से विकसित होती है और वही राष्ट्र की आत्मा का निर्माण करती है। इस प्रकार यह लेख राष्ट्र की उस सांस्कृतिक अवधारणा को स्थापित करता है जो आधुनिक राष्ट्र राज्य की संकुचित और यांत्रिक राजनीतिक परिभाषा से भिन्न है। इसी संदर्भ में दीनदयाल उपाध्याय यह प्रतिपादित करते हैं कि राष्ट्र की रक्षा, अभिवृद्धि और समृद्धि जिन व्यवहारों से संभव होती है उनका अधिष्ठान धर्म है। यहाँ धर्म को किसी धार्मिक विश्वास प्रणाली, उपासना पद्धति या संप्रदाय विशेष के रूप में नहीं अपितु जीवन नियामक तत्त्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह धर्म व्यक्ति और समाज दोनों के लिए अभ्युदय और निःश्रेयस का मार्ग प्रशस्त करता है एवं उनके बीच संतुलन और सामंजस्य स्थापित करता है (नरेन्द्र, 2020)।

'धर्मराज्य क्या और क्यों?' लेख में धर्म की भूमिका केवल व्यक्तिगत नैतिकता तक सीमित नहीं रहती। दीनदयाल उपाध्याय धर्म को ऐसे व्यापक तत्त्व के रूप में देखते हैं जो व्यक्ति और व्यक्ति के बीच, व्यक्ति और समाज के बीच, समाज और समाज के बीच तथा जड़ और चेतन के बीच संबंधों को नियंत्रित, मर्यादित तथा समन्वित करता है। यह दृष्टि धर्म को सामाजिक सामंजस्य का केंद्रीय आधार बनाती है। धर्म यहाँ विभाजनकारी नहीं बल्कि एकात्मता

स्थापित करने वाला तत्त्व है। इसी कारण धर्मराज्य संकुचित नहीं हो सकता। भूमि के प्रति श्रद्धा, निस्स्वार्थ देशभक्ति और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे तत्व धर्मराज्य के अनिवार्य गुण माने गए हैं। साहित्य समीक्षा की दृष्टि से यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि दीनदयाल उपाध्याय धर्मराज्य को लोकतंत्र या एकतंत्र जैसे राजनीतिक ढाँचों से ऊपर रखते हैं। उनके अनुसार यदि राज्य धर्माधिष्ठित है तो उसका राजनीतिक स्वरूप गौण हो जाता है, किंतु यदि धर्म का अभाव है तो कोई भी ढाँचा लोककल्याणकारी सिद्ध नहीं हो सकता (शर्मा, 2015, पृष्ठ, 314-317)।

इस लेख का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष, धर्म तथा पंथ के बीच किया गया स्पष्ट वैचारिक भेद है। दीनदयाल उपाध्याय इस भ्रांति को रेखांकित करते हैं कि अंग्रेज़ी के 'रिलीजन' शब्द के माध्यम से धर्म का अनुवाद किए जाने से भारतीय चिंतन को गहरी क्षति पहुँची है। उनके अनुसार धर्म एक व्यापक और सर्वसमावेशी अवधारणा है। वहीं पंथ या संप्रदाय जीवन के केवल एक सीमित अंग से संबंधित होते हैं। इसी आधार पर वे धर्मराज्य को थियोक्रेटिक राज्य से पूर्णतः भिन्न सिद्ध करते हैं। थियोक्रेसी में राज्य किसी विशेष पंथ या मत को समाज पर आरोपित करता है तथा शासक स्वयं धर्मगुरु की भूमिका में आ जाता है। इसके विपरीत धर्मराज्य में शासक धर्म के अधीन होता है न कि धर्म शासक के अधीन। यह विवेचन इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ दीनदयाल उपाध्याय यूरोप, साम्यवाद और समाजवाद जैसे आधुनिक राजनीतिक प्रयोगों की अंतर्निहित पंथिक प्रवृत्तियों की ओर संकेत करते हैं। वह यह स्पष्ट करते हैं कि उनका धर्मराज्य चिंतन किसी प्रतिक्रियावादी धार्मिक शासन का समर्थन नहीं बल्कि आधुनिक विचारधाराओं की सीमाओं का वैचारिक प्रत्युत्तर है।

'धर्म धारण से है?' शीर्षक लेख दीनदयाल उपाध्याय के धर्म चिंतन की दार्शनिक आधारभूमि प्रस्तुत करता है। इस लेख में वे धर्म की परिभाषा को धारणात् धर्मः सूत्र के माध्यम से स्पष्ट करते हैं। उनके अनुसार धर्म वह है जिसके कारण कोई वस्तु, व्यक्ति या समाज टिकता है। यदि धर्म हट जाए तो संपूर्ण व्यवस्था बिखर जाती है। इस लेख में धर्म को शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के बीच सामंजस्य स्थापित करने वाला तत्त्व बताया गया है। यह सामंजस्य स्थिर नहीं बल्कि देश, काल तथा परिस्थिति के अनुसार गतिशील होता है। यहाँ धर्म को जड़ नियमों का संकलन न मानकर एक जीवंत आचार संहिता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। साहित्यिक दृष्टि से यह लेख इसलिए अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह धर्मराज्य की अवधारणा के दार्शनिक आधार को स्पष्ट करता है, और उसे केवल राजनीतिक सिद्धांत न रहकर संपूर्ण जीवन दर्शन का स्वरूप प्रदान करता है। 'धर्म धारण से है?' लेख में धर्म की परिधि केवल मानव समाज तक सीमित नहीं रहती। दीनदयाल उपाध्याय मनुष्य, पशु पक्षी, प्रकृति तथा पर्यावरण के बीच भी सामंजस्य की आवश्यकता पर बल देते हैं। यह दृष्टि धर्म को सृष्टि व्यवस्था का नियामक तत्त्व बनाती है। साहित्य समीक्षा की दृष्टि से यह पक्ष विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे स्पष्ट होता है कि दीनदयाल उपाध्याय का धर्मराज्य चिंतन मानव केंद्रित होने के साथ साथ सृष्टि केंद्रित भी है। यह आधुनिक विकास आधारित और उपभोग प्रधान राज्य मॉडलों से भिन्न एक समन्वयात्मक दृष्टि प्रस्तुत करता है (शर्मा, 2015, पृष्ठ, 297-300)।

समेकित रूप में इन दोनों खंडों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि दीनदयाल उपाध्याय का धर्मराज्य चिंतन किसी एक लेख या तात्कालिक राजनीतिक प्रतिक्रिया का परिणाम नहीं है। यह एक सुव्यवस्थित और गहन वैचारिक ढाँचा है। इसमें राष्ट्र की सांस्कृतिक आत्मा, धर्म की जीवनधारक अवधारणा, राज्य की लोक कल्याणकारी भूमिका तथा सत्ता पर नैतिक नियंत्रण जैसे तत्त्व परस्पर अंतर्संबंधित हैं। साहित्य समीक्षा यह स्थापित करती है कि दीनदयाल उपाध्याय

का धर्मराज्य भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित एकात्मवादी राज्य दर्शन का आधुनिक पुनर्पाठ है जो पंथिक राज्य, थियोक्रेसी तथा मूल्य निरपेक्ष राजनीति तीनों का सशक्त वैचारिक विकल्प प्रस्तुत करता है।

शोध की सीमा

प्रस्तुत शोध की सीमा स्पष्ट रूप से परिभाषित और विषयकेंद्रित है। यह अध्ययन पं. दीनदयाल उपाध्याय के समग्र वाङ्मय अथवा उनके समकालीन अथवा परवर्ती व्याख्याकारों के विचारों का सर्वेक्षण करने का प्रयास नहीं करता, बल्कि केवल उनके द्वारा प्रतिपादित 'धर्मराज्य' की अवधारणा के तात्त्विक एवं दार्शनिक विश्लेषण तक ही सीमित है। शोध का केंद्रीय उद्देश्य धर्म, राष्ट्र और राज्य के पारस्परिक संबंधों को भारतीय ज्ञान-परंपरा के आलोक में समझना है; अतः इसके अंतर्गत आधुनिक राजनीतिक सिद्धांतों, पाश्चात्य राज्य-दर्शनों अथवा तुलनात्मक अध्ययन को विस्तार से सम्मिलित नहीं किया गया है।

शोध की एक महत्वपूर्ण सीमा यह भी है कि अध्ययन के लिए केवल पं. दीनदयाल उपाध्याय के संपूर्ण वाङ्मय के खंड दस में संकलित दो लेख 'धर्मराज्य क्या और क्यों?' तथा 'धर्म धारण से है?' को ही स्रोत के रूप में ग्रहण किया गया है। इन दो खंडों के अतिरिक्त किसी अन्य ग्रंथ, भाषण, लेख को शोध के दायरे में सम्मिलित नहीं किया गया है। उद्धरण, अवधारणाएँ तथा तर्क क्रम सीधे चयनित ग्रंथों से ग्रहण किए गए हैं और उनका विश्लेषण उसी पाठ्य संदर्भ में किया गया है।

अतः शोध की यह सीमाबद्धता जानबूझकर अपनाई गई है, जिससे अध्ययन की मौलिकता, वैचारिक शुद्धता और पाठनिष्ठता बनी रहे तथा 'धर्मराज्य' की अवधारणा को किसी बाह्य वैचारिक आरोपण के बिना उसके स्वाभाविक और प्रामाणिक स्वरूप में प्रस्तुत किया जा सके।

मुख्य विषय

भूमि, जन और संस्कृति: राष्ट्र की मूल अवधारणा

दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में धर्मराज्य की अवधारणा को समझने के लिए राष्ट्र की उनकी परिभाषा को समझना अनिवार्य है। वे राष्ट्र को किसी राजनीतिक संधि, संवैधानिक व्यवस्था अथवा प्रशासनिक ढाँचे तक सीमित नहीं मानते, बल्कि उसे एक जीवंत और स्वाभाविक सत्ता के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार राष्ट्र का निर्माण भूमि, जन और संस्कृति के पारस्परिक और अन्योन्याश्रित संघात से होता है। भूमि केवल भौगोलिक विस्तार नहीं है, बल्कि वह जन के लिए साधक, पोषक और रक्षक का कार्य करती है (माधव, 2002)। इसी भूमि पर जन्म लेकर और इसी के संसाधनों से जीवन यापन कर जन अपनी चेतना, संस्कार और जीवन दृष्टि का विकास करता है। जन और भूमि का संबंध केवल उपयोगितावादी नहीं होता, बल्कि वह गहरे भावात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर स्थापित होता है। जन भूमि को केवल उपभोग की वस्तु नहीं मानता, बल्कि उसे माता के रूप में स्वीकार करता है। यही भाव भूमि को जड़ से चेतन में रूपांतरित कर देता है और राष्ट्र के प्रति आत्मीयता तथा उत्तरदायित्व की भावना को सुदृढ़ करता है (मिश्रा, 2017)।

संस्कृति भूमि और जन के बीच निरंतर होने वाली क्रिया और प्रतिक्रिया का परिणाम है और वही राष्ट्र को स्थायित्व तथा विशिष्ट पहचान प्रदान करती है। जन का आचार, व्यवहार, मूल्यबोध, सामाजिक मर्यादाएँ और जीवन दृष्टि संस्कृति के माध्यम से ही अभिव्यक्त होती हैं। दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार यदि भूमि और जन हों किंतु संस्कृति का अभाव हो, तो राष्ट्र का अस्तित्व अधूरा और दिशाहीन रह जाएगा। इसी प्रकार यदि संस्कृति जीवित हो किंतु वह

भूमि और जन से कट जाए, तो वह केवल एक अमूर्त कल्पना बनकर रह जाती है। इस प्रकार राष्ट्र एक जीवंत इकाई के रूप में उभरता है, जिसमें संस्कृति उसकी आत्मा है और भूमि तथा जन उसका शरीर हैं। इन तीनों के संतुलित और सामंजस्यपूर्ण संबंध से ही राष्ट्र का अस्तित्व और विकास संभव होता है। दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में ऐसे जीवंत राष्ट्र की रक्षा, अभिवृद्धि और संवर्धन के लिए जिस राज्य व्यवस्था की आवश्यकता है, वही धर्मराज्य है, क्योंकि धर्मराज्य राष्ट्र की आत्मा और शरीर दोनों की रक्षा करता है तथा उसे नैतिक दिशा और स्थायित्व प्रदान करता है (शर्मा, 2017)।

धर्म : जीवन को धारण करने वाला तत्त्व

धर्मराज्य की अवधारणा का केंद्रीय आधार 'धर्म' है और दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में धर्म का अर्थ अत्यंत व्यापक तथा तात्त्विक है। वे धर्म को किसी पंथ, मजहब या धार्मिक कर्मकांड तक सीमित नहीं मानते, बल्कि 'धारणात् धर्मः' सूत्र के माध्यम से उसकी मूल व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार धर्म वह तत्त्व है जो किसी भी व्यवस्था को धारण करता है, उसे स्थायित्व प्रदान करता है और उसे टूटने तथा बिखरने से बचाता है। धर्म केवल आस्था या विश्वास का विषय नहीं है, बल्कि जीवन को संचालित करने वाला वह मूल आधार है जिसके अभाव में व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सभी दिशाहीन हो जाते हैं। इस दृष्टि से धर्म जीवन की स्वाभाविक व्यवस्था को बनाए रखने वाला नियामक तत्त्व बन जाता है (शर्मा, 2015, पृष्ठ, 297-300)।

व्यक्ति के स्तर पर धर्म शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के बीच संतुलन और सामंजस्य स्थापित करता है। यदि इन तत्त्वों के बीच संतुलन न रहे, तो व्यक्ति का जीवन तनाव, संघर्ष और विकृति से भर जाता है। समाज के स्तर पर धर्म व्यक्ति और व्यक्ति के बीच, परिवार और परिवार के बीच तथा विभिन्न सामाजिक वर्गों के बीच संबंधों को मर्यादित और समन्वित करता है, जिससे सामाजिक जीवन में सहयोग और सामंजस्य बना रहता है। राष्ट्र के स्तर पर धर्म भूमि, जन और संस्कृति को एक सूत्र में बाँधकर राष्ट्र को जीवंत और स्थिर बनाए रखता है। दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार धर्म न तो जड़ नियमों का संकलन है और न ही मनमानी आस्था, बल्कि वह देश, काल और परिस्थिति के अनुसार व्यवहार को दिशा देता है, जबकि जीवन के मूल सिद्धांतों के विषय में वह अपरिवर्तनशील रहता है। इसी कारण वे धर्म को स्थिर होते हुए भी गतिशील मानते हैं, जो परंपरा और परिवर्तन के बीच संतुलन स्थापित करता है और जीवन को निरंतरता प्रदान करता है (शर्मा, 2015, पृष्ठ, 314-317)।

धर्मराज्य का स्वरूप : राज्य का नैतिक अधिष्ठान

दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार राज्य का मूल उद्देश्य केवल शासन करना या सत्ता का संचालन करना नहीं, बल्कि राष्ट्र की रक्षा और लोककल्याण सुनिश्चित करना है। उनका स्पष्ट मत है कि यदि राज्य धर्म से विमुख होकर कार्य करे, तो वह अपने इस मूल उद्देश्य को कभी पूर्ण नहीं कर सकता (सिंह, 2019)। धर्मराज्य का अर्थ यह नहीं है कि राज्य किसी धर्म विशेष का प्रचारक बन जाए या धार्मिक कर्मकांडों में संलग्न हो, बल्कि इसका अभिप्राय यह है कि राज्य की सभी संस्थाएँ, नीतियाँ और निर्णय धर्म के नैतिक अधिष्ठान द्वारा नियंत्रित हों। धर्म यहाँ राज्य के ऊपर स्थित वह नियामक तत्त्व है, जो सत्ता के प्रयोग को मर्यादा और दिशा प्रदान करता है। इस प्रकार धर्मराज्य में शासन का लक्ष्य सत्ता विस्तार नहीं, बल्कि लोकाराधन होता है।

धर्मराज्य की इस संकल्पना में शासक स्वयं को धर्म के अधीन मानता है और सत्ता को स्वेच्छाचार का साधन नहीं बनाता। नीति और न्याय का स्रोत शासक की व्यक्तिगत इच्छा या तात्कालिक राजनीतिक लाभ नहीं, बल्कि धर्म

होता है। इसी कारण यह राज्य व्यवस्था राजा करे सो न्याय के सिद्धांत को स्वीकार नहीं करती। यहाँ न्याय का निर्धारण राज्य नहीं करता, बल्कि राज्य धर्म के अनुसार न्याय करने का दायित्व निभाता है। इस दृष्टि से धर्मराज्य आधुनिक अर्थों में संवैधानिक शासन से कुछ समानता रखता हुआ प्रतीत होता है, किंतु उससे अधिक गहरा और व्यापक है, क्योंकि यहाँ संविधान मानव निर्मित नियमों का संग्रह न होकर जीवन के शाश्वत सिद्धांतों पर आधारित होता है। इस प्रकार धर्मराज्य सत्ता और नैतिकता के बीच स्थायी संतुलन स्थापित करता है।

धर्मराज्य बनाम पंथिक राज्य और थियोक्रेसी

धर्मराज्य की अवधारणा को लेकर प्रचलित सबसे बड़ी भ्रांति यह है कि इसे पंथिक या धार्मिक राज्य मान लिया जाता है। दीनदयाल उपाध्याय इस भ्रांति का स्पष्ट और तर्कपूर्ण खंडन करते हैं। उनके अनुसार पंथिक राज्य वह होता है जिसमें राज्य किसी विशेष मत या संप्रदाय को समाज पर आरोपित करता है, सत्ता धार्मिक संस्थाओं या मतविशेष के प्रतिनिधियों के हाथों में केंद्रित हो जाती है और विचार की स्वतंत्रता सीमित हो जाती है। ऐसे राज्य में शासन का आधार सार्वभौमिक नैतिकता न होकर संकीर्ण धार्मिक अथवा वैचारिक आग्रह बन जाता है, जिससे समाज में विभाजन और असहिष्णुता उत्पन्न होती है।

इसके विपरीत धर्मराज्य में धर्म पंथ से ऊपर होता है और किसी एक संप्रदाय का प्रतिनिधित्व नहीं करता। यहाँ शासक धर्मगुरु नहीं बनता और न ही धर्म को सत्ता का उपकरण बनाया जाता है। समाज की विधायिनी शक्ति शासक की इच्छा या किसी धार्मिक संस्था में निहित न होकर धर्म में निहित रहती है, जो सभी के लिए समान रूप से बाध्यकारी होता है। दीनदयाल उपाध्याय यह भी स्पष्ट करते हैं कि आधुनिक साम्यवाद और समाजवाद भी अपने अपने ढंग से पंथिक हैं, क्योंकि वे एक विशेष विचारधारा को संपूर्ण सामाजिक और वैयक्तिक जीवन पर थोपने का प्रयास करते हैं। इस दृष्टि से धर्मराज्य किसी भी प्रकार की थियोक्रेसी या वैचारिक तानाशाही का विकल्प प्रस्तुत करता है और एक ऐसी राज्य व्यवस्था की कल्पना करता है, जिसमें सत्ता नैतिक अनुशासन के अधीन रहकर लोककल्याण का साधन बनती है।

धर्मराज्य और प्रजातंत्र : नैतिक नियंत्रण का प्रश्न

आधुनिक प्रजातंत्र में सत्ता और नैतिकता के बीच एक स्थायी और अंतर्निहित संघर्ष दिखाई देता है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में बहुमत की इच्छा को सर्वोच्च मान लिया जाता है, चाहे वह नैतिक मूल्यों के अनुरूप हो या नहीं। इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप शासन निर्णय कई बार तात्कालिक जनभावनाओं, राजनीतिक स्वार्थों और संख्याबल पर आधारित हो जाते हैं, जिससे नैतिकता और न्याय का प्रश्न गौण हो जाता है। दीनदयाल उपाध्याय इस स्थिति को मानव विकास और सामाजिक स्थिरता के लिए अनुपयुक्त मानते हैं। उनके अनुसार यदि शासन व्यवस्था केवल बहुमत की शक्ति पर आधारित हो और उस पर किसी उच्च नैतिक अनुशासन का नियंत्रण न हो, तो वह दीर्घकाल में समाज को संघर्ष, अस्थिरता और मूल्य ह्रास की ओर ले जाती है (शर्मा, 2015, पृष्ठ, 314-317)।

धर्मराज्य इस समस्या का समाधान नैतिक नियंत्रण के सिद्धांत के माध्यम से प्रस्तुत करता है। धर्मराज्य में न तो शासक को मनमानी करने का अधिकार होता है और न ही प्रजा को अराजकता या उच्छृंखल विद्रोह का। शासक और प्रजा दोनों ही धर्म से नियंत्रित होते हैं और धर्म उनके आचरण तथा कर्तव्यों की सीमा निर्धारित करता है। यदि शासक स्वयं धर्म के मार्ग में बाधक बन जाए और लोककल्याण के स्थान पर स्वार्थपूर्ण शासन करने लगे, तो उसे हटाना राजनीतिक अधिकार नहीं, बल्कि धर्मगत कर्तव्य बन जाता है। किंतु यह परिवर्तन अराजक विद्रोह या हिंसक संघर्ष के

रूप में नहीं, बल्कि नैतिक उत्तरदायित्व और सामाजिक चेतना के माध्यम से होता है। इस प्रकार धर्मराज्य प्रजातंत्र की उस मूल कमजोरी को दूर करता है, जिसमें सत्ता निरंतर अस्थिरता और संघर्ष का शिकार बनती है, और शासन को नैतिक आधार प्रदान करता है।

एकात्मता : धर्मराज्य का सांस्कृतिक आधार

धर्मराज्य का मूल दार्शनिक आधार एकात्मता की अवधारणा है, जिसे दीनदयाल उपाध्याय भारतीय संस्कृति की केंद्रीय विशेषता मानते हैं। उनके अनुसार भारतीय जीवन दृष्टि में व्यक्ति और समाज, देह और आत्मा तथा जड़ और चेतन को पृथक नहीं, बल्कि परस्पर संबद्ध और एक दूसरे पर आश्रित माना गया है। यह एकात्म दृष्टि जीवन को खंडों में विभाजित नहीं करती, बल्कि उसे एक समग्र और अविभाज्य इकाई के रूप में देखती है। इसी दृष्टि के कारण भारतीय संस्कृति में संघर्ष की तुलना में सामंजस्य और विरोध की तुलना में समन्वय को अधिक महत्व दिया गया है (ठाकुर, 2022)।

धर्मराज्य इसी एकात्म दृष्टि को राजनीतिक और सामाजिक जीवन में साकार करता है। यह व्यवस्था समाज को वर्गों, समूहों या विचारधाराओं में बाँटकर देखने के स्थान पर समग्र रूप में देखने का आग्रह करती है। धर्मराज्य पृथकतावाद, वर्ग संघर्ष और वैचारिक विभाजन के स्थान पर सामाजिक सामंजस्य, सहयोग और समन्वय को प्राथमिकता देता है। इसमें व्यक्ति का विकास समाज से कटकर नहीं, बल्कि समाज के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए होता है। इस प्रकार धर्मराज्य भारतीय संस्कृति की एकात्म चेतना को राज्य व्यवस्था का आधार बनाकर शासन को केवल सत्ता संचालन का साधन नहीं रहने देता, बल्कि उसे सामाजिक एकता, नैतिक अनुशासन और लोककल्याण का प्रभावी माध्यम बना देता है।

निष्कर्ष

शोध उद्देश्यों के आधार पर निष्कर्ष

प्रथम उद्देश्य का निष्कर्ष: प्रस्तुत शोध का प्रथम उद्देश्य पं. दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में निहित धर्मराज्य की अवधारणा का तात्त्विक विश्लेषण करना था। अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट रूप से स्थापित हुआ कि दीनदयाल उपाध्याय का धर्मराज्य चिंतन किसी तात्कालिक राजनीतिक प्रतिक्रिया अथवा आदर्शवादी कल्पना का परिणाम नहीं है, बल्कि वह भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित राज्य दर्शन का सुविचारित, सुसंगत और गहन दार्शनिक प्रतिपादन है। उन्होंने आधुनिक राजनीति में प्रचलित उस धारणा को चुनौती दी है जिसके अनुसार धर्म और राज्य को पूर्णतः पृथक मान लिया गया है। उनके अनुसार धर्मविहीन राज्य न तो राष्ट्र की आत्मा को सुरक्षित रख सकता है और न ही समाज को दीर्घकालिक दिशा प्रदान कर सकता है।

द्वितीय उद्देश्य का निष्कर्ष: शोध के द्वितीय उद्देश्य के अंतर्गत धर्म, राष्ट्र और राज्य के पारस्परिक संबंधों का विश्लेषण किया गया। अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट हुआ कि दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्र को केवल भौगोलिक या राजनीतिक इकाई नहीं मानते, बल्कि भूमि, जन और संस्कृति के अन्योन्याश्रित संघात से निर्मित एक जीवंत सांस्कृतिक सत्ता के रूप में देखते हैं। इस राष्ट्र की रक्षा, अभिवृद्धि और समृद्धि तभी संभव है जब राज्य धर्माधिष्ठित हो। यहाँ धर्म को पंथ, संप्रदाय या उपासना पद्धति के संकुचित अर्थ में नहीं, बल्कि धारणात् धर्मः के व्यापक तात्त्विक अर्थ में ग्रहण किया गया है। धर्म वह जीवनधारक तत्त्व है जो व्यक्ति, समाज और सृष्टि को स्थायित्व प्रदान करता है। इस दृष्टि से धर्मराज्य की अवधारणा राज्य को नैतिक अधिष्ठान प्रदान करती है और शासन को लोककल्याण की दिशा में उन्मुख करती है।

शोध उद्देश्यों के संदर्भ में यह भी स्पष्ट हुआ कि दीनदयाल उपाध्याय का राज्य दर्शन न तो थियोक्रेसी का समर्थन करता है और न ही किसी पंथिक राज्य की वकालत करता है। उनके अनुसार थियोक्रेसी वहाँ उत्पन्न होती है जहाँ शासक स्वयं धर्मगुरु बन जाता है अथवा राज्य किसी एक मत या विचारधारा को समाज पर आरोपित करता है। इसके विपरीत धर्मराज्य में शासक स्वयं धर्म के अधीन होता है और राज्य की विधायिनी शक्ति शासक की इच्छा में न होकर धर्म में निहित रहती है। इस प्रकार धर्मराज्य सत्ता के केंद्रीकरण और वैचारिक तानाशाही दोनों के विकल्प के रूप में उभरता है।

सामान्य निष्कर्ष

सामान्य रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दीनदयाल उपाध्याय का धर्मराज्य चिंतन भारतीय संस्कृति की एकात्म दृष्टि पर आधारित है। वे व्यक्ति और समाज, देह और आत्मा तथा जड़ और चेतन को परस्पर संबद्ध मानते हैं और धर्मराज्य को इस एकात्मता का सामाजिक एवं राजनीतिक रूप मानते हैं। धर्मराज्य वर्ग संघर्ष, पृथकतावाद और विखंडनकारी प्रवृत्तियों के स्थान पर सामंजस्य, समन्वय और लोकाराधन को प्राथमिकता देता है। इस दृष्टि से यह आधुनिक मूल्य निरपेक्ष राजनीति की सीमाओं को उजागर करता है और सत्ता तथा नैतिकता के बीच स्थायी संतुलन स्थापित करता है। समग्रतः यह कहा जा सकता है कि दीनदयाल उपाध्याय का धर्मराज्य चिंतन न तो पश्चिमी सेक्युलर राज्य की अनुकृति है और न ही किसी धार्मिक कट्टरता का समर्थन करता है। यह एक ऐसा राज्य दर्शन है जो परंपरा और परिवर्तन, व्यक्ति और समाज तथा सत्ता और नैतिकता के बीच संतुलन स्थापित करता है। अंततः यह चिंतन समकालीन भारत के लिए केवल एक वैचारिक विमर्श नहीं, बल्कि एक वैकल्पिक और सकारात्मक दृष्टि प्रदान करता है, जो राष्ट्र की आत्मा को केंद्र में रखकर शासन की कल्पना करता है और भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में आधुनिक राज्य की समस्याओं के समाधान की संभावना प्रस्तुत करता है। इस अर्थ में धर्मराज्य भारतीय राज्य दर्शन की पुनर्प्रतिष्ठा के साथ साथ एक सशक्त, नैतिक और लोककल्याणकारी शासन व्यवस्था की दिशा भी संकेतित करता है।

संदर्भ

1. उपाध्याय, दीनदयाल (1970). भारतीय अर्थनीति का स्वरूप. नई दिल्ली.
2. माधव, गोविंदाचार्य (2002). एकात्म मानववादः विचार और व्याख्या. दिल्ली.
3. गोयल, धर्मेन्द्र (2015) भारतीय राजनीति में विचारधाराएँ. आगरा.
4. शर्मा, ओ.पी. (सं.) (2015). 'धर्मराज क्या और क्यों?' दीनदयाल उपाध्याय: सम्पूर्ण वाङ्मय (खंड 10). भारतीय जनसंघ. नई दिल्ली।
5. शर्मा, ओ.पी. (सं.) (2015). 'धर्म धारण से है?'. दीनदयाल उपाध्याय: सम्पूर्ण वाङ्मय (खंड 10). भारतीय जनसंघ. नई दिल्ली।
6. शर्मा, रमेश (2017). भारतीय दर्शन और एकात्म मानववाद, वाराणसी।
7. मिश्रा, राकेश (2017). एकात्म मानववाद और समकालीन भारत. नई दिल्ली।
8. सिंह, रामबहादुर (2019). दीनदयाल उपाध्याय का राजनीतिक दर्शन. वाराणसी।
9. नरेन्द्र, डी. के. (2020). विकास के भारतीय मॉडल की खोजः एकात्म मानववाद की प्रासंगिकता. दिल्ली।
10. शर्मा, रमेश (2021) भारतीय चिंतन में मानव और प्रकृति. दिल्ली।
11. ठाकुर, रजनीश (2022) समाज और संस्कृति में एकात्म मानववाद की भूमिका. लखनऊ।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 89-92
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

मंजुल भगत कृत 'अनारो' उपन्यास में चित्रित आर्थिक यथार्थ

डॉ. पूनम कुमारी
एसोसिएट प्रोफेसर,
डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम गवर्नमेंट
डिग्री कालेज, पठानचेरू, जिला संगारेड्डी, तेलंगाना – 502319

आजादी के पश्चात देश में तीव्र गति से परिवर्तन होने लगा। इस बदलाव ने वैयक्तिक और समूहगत स्तर पर आर्थिक यथार्थ को सर्वाधिक प्रभावित किया है। आर्थिक अभाव ने आम आदमी के जीवन को घोर निराशा में डाला है। हर युग का सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन किसी हद तक आर्थिक स्थिति से प्रभावित रहा है। 'अर्थ' पर ही समाज का विकास आधरित होता है, यह एक सर्वमान्य सत्य है हालांकि वर्तमान में 'अर्थ' को जितना महत्व प्राप्त हुआ है, इससे पहले उतना नहीं था। डॉ. प्रेमलता जैन का कहना है कि- "आधुनिक काल में सम्बंधों में जितना बिखराव आया है, पहले कभी नहीं आया था। नगर-महानगर के जीवन की जटिलता, व्यस्तता को कहीं अधिक एकात्मप्रिय बना दिया है। वह समूह में रहने का आदि नहीं रहा। नाते-रिश्तेदार, गली-पड़ोस वाले ही नहीं, खून के रिश्ते और सम्बंधी भी अनचाहे प्रतीत होते हैं। वह बदलाव मूलतः आर्थिक दबावों के कारण हुआ है।"[1] 'अर्थ' मनुष्य के जीवन को संचालित करने के लिए आवश्यक साधन है।

मंजुल भगत कृत 'अनारो' उपन्यास में उस निम्न वर्गीय स्त्री का चित्रण है, जो घर-घर चौका बर्तन का काम करती है। सामान्य तौर पर बर्तनवाली, कामवाली, नौकरानी के रूप में समाज में प्रचलित इन स्त्रियों के जीवन पर लिखित उपन्यासों में यह उपन्यास अपना विशिष्ट स्थान रखता है। सन् 1960 के बाद हिंदी कथा साहित्य में स्त्री कथा लेखिकाएँ सामने आने लगी है। चौदह वर्ष की उम्र में नंदलाल की दुल्हन बनकर अनारो बरेली से दिल्ली आती है। माँ-मौसी ने ढेरों नसीहतें देकर विदा किया कि आजीवन चाहे हंसाए या रुलाए, पति के पाँव धो-धोकर पीना होगा। नंदलाल आवारा, निकम्मा, भगौड़ा व्यक्ति है। जब तक ये सारी बातें अनारों को समझ आती है तब तक वह गर्भवती रहती है। तभी मदनगीर की झोपड़ी में अनारो और सभी लोगों को पुराने स्थान को छोड़ कर बसना पड़ा था। अपनी झुग्गी को अकेली बनाने और संवारने वाली अनारो तबसे वहीं रहती है। आवारा नंदलाल अपने वर्गीय संस्कारों से युक्त अपनी पत्नी को छोड़ छबीली पर मरता है, यहाँ तक कि छबीली को झोपड़ी में लेकर आता है। अनारो घर-घर झाड़ू-बर्तन कर वह अपनी जीविका

चलाती है और अपने दोनों बच्चों का पालन-पोषण करती है। यही से अनारो की कामकाजी जीवन की शुरुआत होती है। इसी काम ने उसका पेट पाला और वह अपने काम को, श्रम को कम नहीं मानती है। न वह अपने मालकिनों से दबती है न ही उनके आगे दयनीय बनती है। अनारो अपनी कमाई, अपने काम पर गर्व करती है। तभी वह मालकिनों को खरी-खोटी सुनाते हुए कहती है कि- ''मेरे काम को नजर लगाते हैं। कभी कहेंगी, दस-दस घर तो पकड़ रखे हैं। लेट नहीं आएगी तो और क्या होगा। छोड़ क्यों नहीं देती एक-आधा काम? आजी वह! क्यों छोड़ दूँ दो-एक काम? अपने हाड़-गोड़ तोड़कर कमाती हूँ, तुम्हारी छातियों पे साँप काहे लोटता है?''[2] अपने भगौड़े पति के कारण न वह भूखी मरती है न तो अपने बच्चों को अनाथ की तरह खाने लिए मोहताज होता देखती है। आर्थिक अभाव के कारण इस वर्ग का जीवन स्तर निम्न है। इस वर्ग की आजीविका श्रम पर चलती है और दूसरे वर्ग की अपेक्षा शारीरिक श्रम अधिक करना पड़ता है। इस वर्ग का जीवन समस्याओं से व्याप्त है। इस वर्ग की समस्याओं के केंद्र में अर्थ है। यह वर्ग अपनी न्यूनतम जरूरतों को पूरा करने के लिए जी तोड़ श्रम करता है। निम्न वर्ग के परिवार के सभी सदस्य मजदूरी करने पर अभिशप्त है। बच्चे पढ़ाई छोड़कर बाल मजदूरी करते हैं। शिक्षा के अभाव में इस वर्ग में निरक्षरता अधिक है।

आर्थिक साधनों के अभाव में यह वर्ग हमेशा समस्याओं से जूझता रहता है। स्त्री, पुरुष, बच्चे, बूढ़े परिवार के सदस्य श्रम करते हैं बावजूद परिवार का पालन-पोषण ठीक से नहीं कर पाता है। इस वर्ग के पास रहने के लिए अच्छा घर, पहनने को अच्छे कपड़े, अच्छा खाना तक नसीब नहीं होता है। इस कारण निम्न वर्ग के लोग अपने बच्चों के लिए शिक्षा का उचित प्रबंधन नहीं कर पाते हैं। विवाह करने कुछ ही दिनों बाद अकेली असहाय अपने पति द्वारा छोड़ भागने के बाद भी अनारो अपने स्वाभिमान के कारण न केवल जीती है बल्कि अपने बच्चों को जन्म देती है और उनका पालन-पोषण करती है। केवल जीना नहीं, अर्थपूर्ण और सम्मानसहित जीने के लिए संघर्ष भी करती है। बनिए के बेटे के जरिए गंजी को छेड़े जाने पर वह भभक पड़ती है- ''जा, जाके अपनी अम्मा कने सो, अभी तो। अभी तो तेरे लिए उसका दूध टपकना भी बंद नहीं हुआ।...घर बिरादरीवाली है गंजी, कोई राह पड़ी नहीं।''[3] मंजुल भगत ने अपने उपन्यासों में अधिक रूप कामकाजी स्त्री का चित्रण किया है। यह निम्न वर्ग की स्त्री सदियों से इस रुढ़ियों में बंधी हुई है। मूल रूप महानगरीय घरेलू निम्न वर्ग की स्त्री अनारो हर दिन घर छोड़कर महानगर की जान लेवा सड़क पर दौड़ती हुई गाड़ियों से बचती हुई दूसरों को घरों में बर्तन माँजने और कपड़े धोने का काम करने जाती है। अनारो अपने आपसे कोसते हुए कहती है कि- ''सबेरे की बारी निपटाई, तो घर-घर साँझ की बारी शुरु। साँझ-सवेरा उनके घरों में होता होगा। अपनी तो बस, या भोर होती है, या फिर रात के तड़के-तड़के उठो, दिशा जंगल जाओ। बंबे से पानी भर लाओ। गंजी और छोटू के लिए रोटियाँ पतो।''[4] सही रूप में निम्न वर्ग की स्त्री के जीवन दासता को मंजुल भगत ने पाठक वर्गों के सामने रखा है।

इस उपन्यास में लेखिका ने दिल्ली की स्लम बस्ती में रहनेवाली अनारो के संघर्षमय जीवन के द्वारा स्लम बस्तियों में जीवन यापन करनेवाली तमाम गरीब स्त्रियों के जीवन संघर्ष को पूरी ईमानदारी के साथ व्यक्त किया है। मंजुल भगत के शब्दों में- ''यह एक निम्नवर्गीय स्त्री की कहानी, जो घर-घर चौक-बर्तन कर गुजारा करती है, मदनगीर की छोपड़पट्टी में अपने दो बच्चों और शराबी नकारा पति के साथ रहती है, उसी का नाम अनारो। अनारो एक जीवट वाली, संघर्षशील स्त्री है, जो कभी हार नहीं मानती है। उसे जीवन से भरपुर लगाह है और यह जुड़ाव जीने के प्रति उसके मोह और उत्साह को कभी मरने नहीं देती।''[5] विवाह से पहले सुखमय दापंत्य जीवन और सुखी परिवार का सपना अनारो ने देखा पर वह कभी पूरा नहीं हो सका।

झुग्गी झोपड़ियों में निवास करनेवाले गरीब स्त्रियों के जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि उसके श्रम का मूल्य न तो समाज देता है न पति। अनारो भी इससे अलग है। अनारो का संघर्ष पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर फैला

है। मंजुल भगत के उपन्यासों में मुख्य रूप से स्त्री विमर्श केंद्र में है। उपभेक्तावादी संस्कृति के कारण आम जनता आर्थिक रूप से विपन्न हो रही है और पीड़ा, वेदना, निराशा, घूटन के कुचक्र में फंसी है। अपनी आर्थिक आकांक्षा को पूरा करने की भागदौड़ में लोग विशेष रूप से युवा वर्ग में भकटाव की स्थिति में है। इस तरह देखा जाए तो लोगों के जीवन को आर्थिक स्थितियों ने काफी प्रभावित कर दिया है। आज का साहित्यकार आर्थिक कुचक्र में फंसे लोगों की अभिव्यक्ति अपने साहित्य में करने लगा है। जीवन मूल्यों में विघटन स्वतंत्रता पूर्व भी था और स्वतंत्र्योत्तर परिस्थितियाँ इतनी तीव्र गति से घटित हो रही है कि समाज और जीवन मूल्यों में तेजी से परिवर्तन आने लगा है। परंपराओं के टूटने, आस्थाओं में परिवर्तन से जीवन मूल्य परिवर्तित हुआ है और नये और पुराने के बीच असंतुलन विकृतियाँ, असंगतियाँ और विरोध उत्पन्न हुआ है, जिससे समाज में मूल्य में विघटन होना स्वाभाविक है। देश की यंत्र शक्ति का निरंतर विस्तार, कारखानों का विस्तार और नई मजदूर बस्तियाँ बढ़ने लगी हैं। गांव शहर बनते जा रहे हैं और गांवों के लोग शहरों की ओर पलायन करने लगे हैं। मनुष्य की जीवन दृष्टि, इच्छाएँ, लक्ष्य जिन्हें समाज स्वीकृति देता है, वही चिंतन बन जाते हैं और इन्हीं के द्वारा मनुष्य के व्यवहार को नापा-तौला जाता है। धीरूभाई सेठ के शब्दों में- "दरअसल, गाँव आज पुराने अर्थ में गाँव नहीं रह गया है। अंतर्व्यावसायिक संबंध बदल चुके हैं। एक श्रेणीबद्ध समाज व्यवस्था का प्रतीक समझा जानेवाला गाँव आज प्राथमिक रूप से आर्थिक संबंधों पर आधारित स्थानिक समुदाय का रूप प्राप्त कर रहा है। अंतर्समूह संबंध जो नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे की श्रेणियों में अवरुद्ध थे, तब क्षैतिज प्रसार की तरफ जा रहे हैं। इन्हीं संरचनात्मक परिवर्तनों के कारण दलित समेत गैरद्विज जातियाँ ग्रामीण क्षेत्र में अपने अधिकारों का दावा कर पा रही है। उन्होंने अपने ऊपर परंपरा द्वारा थोपी गयी आर्थिक-सामाजिक भूमिकाओं को ठुकरा दिया है। आज के जाति-संघर्ष इसी बदले हुए गांव का सूचक है।"[6] समाज में संस्कृति और सभ्यता की आधारशिला आर्थिक चिंतन ही है। निम्न वर्ग कर्ज के बोझ तले दबा रहता है। इसी तरह 'अनारो' उपन्यास में अनारो अपनी बेटी शांति के विवाह के लिए कर्ज लेती है। शांति भी अपनी माँ से नाराज है- "अब दुनिया जहान का कर्जा लेकर खूब खिला-पिला। फिर उम्र भर उधारी उतारने को अपने हाड़ पीसियों और मुझे कोसियों।"[7] इस तरह निम्न वर्ग की आर्थिक स्थिति का चित्रण लेखिका ने मार्मिक रूप से दर्शाया है। समाज के सभी दिशाओं को अर्थतंत्र ने जकड़कर रखा है। शहरीकरण, औद्योगीकरण और युवा पीढ़ी के आधुनिकता के प्रति आकर्षण ने अर्थ लिप्सा को अधिक बढ़ावा मिला है। आत्मिक और निजी रिश्ते भी अर्थतंत्र की भेंट चढ़ रहे हैं।

अत: अर्थतंत्र के दबाव से रिश्तों की आत्मीयता प्रभावित होने लगी है। व्यक्ति को इस दबाव के आगे घुटने टेकने पड़ रहे हैं। वर्तमान में समाज भूमंडलीकरण, बाजारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति की चपेट में आया है। समाज में परिवार का ढाँचा, आत्मिक और निजी रिश्ते, स्त्री-पुरुष की जीवन शैली, महानगर जीवन शैली, उलझन, अकेलनापन आदि सभी कुछ इससे प्रभावित होने लगा है। समाज में सबसे महत्वपूर्ण इकाई परिवार है। यह समाज की ऐसी इकाई है जिसके सभी सदस्य आपसी रिश्तों में बंधे हैं। परिवार में विभिन्न संबंध माता-पिता, पति-पत्नी, बच्चे आदि होते हैं, जो एक-दूसरे पर निर्भर हैं। परिवार का ढांचा परस्पर एक-दूसरे की जरूरतों की पूर्ति करता है। उनका परस्पर व्यवहार खट्टा और मीठा भी होता है। उनमें आपसी प्रेम और सद्भाव होता है। एक दूसरे के साथ उनके संबंध मधुर और कटु भी होते हैं। आधुनिकीकरण के कारण सामाजिक और आर्थिक मान्यताओं में व्यापक बदलाव आने लगा है। हमारी पुरानी मान्यताओं को आधुनिक सोच ने नकार दिया है।

संदर्भ :

1. डॉ. प्रेमलता जैन – समाजवादी यथार्थवाद और हिंदी कथा साहित्य, पृ. 65
2. मंजुल भगत – अनारो, पृ. 8

3. मंजुल भगत – अनारो, पृ. 52
4. मंजुल भगत – अनारो, पृ. 8
5. संपा. कमल किशोर गोयनका – मंजुल भगत का समग्र साहित्य-1, पृ. 68
6. संपादक अभय कुमार दुबे – आधुनिक के आईने में दलित, पृ. 187
7. मंजुल भगत – अनारो, पृ. 100

मो.नं. 9542842120

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 93-96
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

भारतीय मध्यवर्गीय जीवन-संघर्ष और सामाजिक यथार्थ 'थके पाँव' उपन्यास के सन्दर्भ में

डॉ. जिनु जॉन
सहायक आचार्या, हिंदी विभाग,
मार अत्तनेशियस कॉलेज(आटोनोमस), कोतमंगलम, केरलं – 686666

हिन्दी के उपन्यासकारों में प्रमुख भगवतीचरण वर्मा का एक प्रमुख उपन्यास है – 'थके पाँव' | इस उपन्यास में भगवतीचरण वर्मा ने भारतीय समाज की मध्यवर्गीय सोच, नैतिकता और कुंठाओं का एक मार्मिक चित्रण किया है | आजादी पूर्व के चित्रित इस मध्यवर्गीय परिवार की इच्छाओं - आकांक्षाओं में आज भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है |

'थके पाँव' उपन्यास के नायक केशव के माध्यम से उपन्यास की कथा कही गयी है | केशव एक निम्न मध्य वर्गीय परिवार का सदस्य है | पिता रामचन्द किसी ऑफीस में क्लर्क हैं | घर में माँ, दो छोटे भाई और एक बहन है | केशव की पत्नी माधुरी भी घर का एक सदस्य है | बी. ए. पास करते ही केशव को नौकरी की दौड़ में लग जाना पड़ता है | बहन का विवाह तय हो गया है | उसके लिए दहेज का पैसा इकट्ठा करना है | पिता की तन्ख्वाह सीमित है | बहत दौड भाग करने के बाद केशव को भी एक दफ्तर में क्लर्क की नौकरी मिल जाती है | उसकी तन्ख्वाह से आर्थिक संकटों से जूझते उसके परिवार को एक नया सहारा मिला | एक भाई रमेश पढ़ने में तेज था | वह बाद में एक छोटा अफसर बनकट परिवार से अलग हो गया |

दूसरा भाई सुरेश गैर जिम्मेदार स्वभाव का था | पढ़ाई में उसका मन न लगा। वह राजनीति में चला गया | बंबई जाकर वह एक कम्युनिस्ट नेता बन गया | केशव अपने पिता रामचन्द्र के जीवन का ही अनुसरण कर रहा था | अब उसके तीन बच्चे थे मोहन, किशन और माया | पूरी मेहनत करने के बाद भी उसकी तन्ख्वाह से घर का खर्च किसी प्रकार ही निकल पाता | मोहन पढ़ने में तेज था | लेकिन कंपीटीशन में सफलता न मिलने पर उसने बी.ए करके वकालत में प्रवेश ले लिए | इस बीच केशव ने मोहन की शादी भी कर दी | मोहन की पत्नी सुशीला सुगृहिणी थी | किन्तु घर की आर्थिक समस्या केशव को खाए जा रही थी | मोहन के जीवन में जैसे केशव के संघर्षों का इतिहास

दुहराया गया और उसने एक नौकरी पाने के लिए भाग दौड़ शुरू कर दी | चीजों के दाम बढ़ रहे थे, परिवार के सदस्य भी बढ़े थे और केशव की सीमित तन्ख्वाह में परिवार चलना नामुकिन हो रहा था | मोहन को एक क्लर्क की नौकरी मिल जाने से केशव को कुछ राहत पहुँची | मोहन केशव के समान ही कड़ी मेहनत कर रहा था। लेकिन उसके छोटे भाई किशन की प्रवृत्ति कुछ अलग थी | पढ़ने - लिखने में उसका मन नहीं लगता था | फिल्मों में काम करने का उसे शौक था | वह गैर जिम्मेदार स्वभाव का था | उसकी खर्च करने की अन्धाधुंध आदत थी | अपनी माँ का वह बेहद दुलारा था | एक दिन वह अपनी माँ और भाभी से पैसे उधार लेकर चुपचाप बंबई चला गया | केशव को बहुत क्रोध आया, किन्तु वह विवश था | जैस-जैसे महंगाई बढ़ रही थी वैसे - वैसे घर का खर्च चलाना और मुश्किल हो रहा था | इसी बीच छंटनी में मोहन की नौकरी छूट गयी | केशव अपनी परेशानियों में कभी - कभी अपने इस परेशानियों भरे जीवन के जाल को तोड़ कर निकल जाता, पर इसी में फँसे छटपटाते रहना उसकी विशेषता थी | केशव को अनुभव हुआ कि शायद उसके छोटे बेटे किशन में इस मध्यवर्गीय जाल से बाहर निकलने की क्षमता है | केशव का निर्माण तो उसी ढाँचे में हो चुका है, जिसमें केशव का निर्माण हुआ है |

मोहन की तबीयत गिरती जा रही थी | शायद इसका कारण उसकी बेकारी ही थी | इधर माया की आयु भी विवाह के योग्य हो चुकी थी | केशव को इसकी भी चिंता थी | होली के दिनों में बम्बई से केशव आया तो उसके रंग ढंग ही और थे | उसकी शाने शौकत देखकर पूरा घर फूला नहीं समा रहा था | मोहन की पत्नी सशीला के मन में यह कंठा अवश्य थी कि उसके पति को बेकार होने के कारण उपेक्षा मिल रही है | किशन अपने स्वभाव के अनुरूप ही झूठे वायदे कर के चला गया | केशव ने माया के विवाह के लिए सहायता माँगी, पर उसने इनकार कर दिया |

घर की गिरती आर्थिक स्थिति के कारण सुशीला ने मोहन से स्कूल में नौकरी की अनुमति माँगी तो उसने क्रोधपूर्वक मना कर दिया | इधर माया की शादी के लिए एक रिश्ता आयी | लड़के की पत्नी की मृत्यु कुछ महीने पूर्व हुई थी और उसके तीन बच्चे थे | वैसे वह डाक्टर था और प्रैक्टिस अच्छी चलती थी | दहेज की ऊँची माँगों को केशव पूरा करने में असमर्थ था | फिर भी विवश होकर उसने इस रिश्ते को स्वीकार कर लिया | किन्तु बदलते समय का माया पर भी प्रभाव पड़ा था | उसने विद्रोह कर यह रिश्ता करने से साफ मना कर दिया | " आपने मुझे पढ़ा – लिखाकर मनुष्य बनाये है तो मेरे साथ आप मनुष्यता का व्यवहार कीजिए | मैं जानवर नहीं हूँ , जिसके साथ चाहा उसके साथ मुझे बाँध दिया , मैं संपत्ति नहीं हूँ जिसे चाहा उसे दे दिया | मुझ में भी भावना है , मुझमें भी व्यक्तित्व है | मैं अपना हित – अहित समझ सकती हूँ |[1] " केशव बहुत चिल्लाया, किन्तु माया अडिग रही | माया स्वावलंबी बनना चाहती थी |

इसी बीच मोहन की तबीयत और गिरती गयी | डाक्टर को दिखलाने पर पता चला कि उसे टी. बी हो गयी है | परिवार पर यह एक वज्रपात था | मोहन की दवाई और इन्जेक्शनों का खर्च बहुत अधिक था | इलाज से मोहन कुछ ठीक हुआ तो डाक्टर ने पहाड़ पर जाकर रहने की राय दी | केशव ने घर के गहने आदि बेचकर किसी प्रकार इनतजाम किया | सुशीला मोहन के साथ परिचर्या के लिए गयी | सुशीला के त्याग और अथक सेवा के कारण मोहन की तबीयत संभलने लगी | सुशीला गर्मियाँ बितने के पश्चात् पति के साथ वापस आ गयी | डाक्टर ने मोहन के लिए फिर से दवाइयाँ और इंजेक्शन लिख दिए | केशव के सामने फिर से बड़ी समस्या आ खड़ी हुई थी | सुशीला नौकरी का प्रस्ताव रखते समय आर्थिक विषमता में पिस्ता हुआ मध्यवर्गीय परिवार का केशव इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करता , उन्होंने कहा – " तुम नौकरी करोगी , यह कैसे होगा ? हमारे खानदान में कभी औरतें घर से बाहर नहीं निकली है , नौकरी करना तो दूर रहा |"[2] लेकिन आर्थिक संकट को दूर करने के लिए सुशीला ने एक स्कूल में पढ़ाना शुरू कर दिया था | मोहन की

दवाइयों के खर्च की चिन्ता में डूबे केशव को एक व्यवसायी राम किशोर ने एक हजार रुपए की रिश्वत देने की बात कही | अपने संकटों से विचलित केशव ने समझौता कर लिया। पर उसे लगा कि जैसे उसकी आत्मा मर गयी हो | दफ्तर में एक सहयोगी राम अधार ने बताया कि उसने राम किशोर की पार्ट टाइम नौकरी छोड़ दी; क्योंकि वह उससे कोई गलत काम करवाने को कह रहा था | उसने कहा कि राम किशोर केशव को भी बेईमान बता रहा था | केशव ने सीधे मैनेजर के पास जाकर रिश्वत की बात स्वीकार कर के त्यागपत्र दे दिया | वह रिश्वत के रुपए अनाथालय में देने को सोच रहा था | उसी समय पोस्टमैन ने केशव को एक लिफाफा ला दिया | उसमें माया और किशन के पत्र तथा 1500 रुपए रखे थे | अचानक केशव का मन हल्का हो गया | वह हजार रुपए लेकर अनाथालय में दान देने के लिए चल पड़ा|

उपसंहार

'थके पाँव' हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री भगवतीचरण वर्मा के प्रसिद्ध उपन्यासों में से एक है | इस उपन्यास में उन्होंने भारतीय मध्य वर्गीय जीवन की विसंगतियों और संघर्षों का अनूठा चित्रण किया है | यद्यपि उन्होंने स्वतंत्रता पूर्व के समाज की कहानी ली है, पर इस कथा का सच सर्वकालीन होने के कारण उपन्यास को इक्कीसवीं सदी में भी समकालीन बनाता है |

मध्यवर्गीय परिवार की सबसे बड़ी समस्या बेरोजगारी की होती है जो इस उपन्यास में मार्मिक रूप से चित्रित है | उपन्यास बाबू रामचंद के परिवार के चित्रण से प्रारम्भ होता है | बाबू रामचंद एक क्लर्क थे और ऐसा लगता है कि यह क्लर्की उनके साथ विरासत के रूप में चल रही थी | उनका बड़ा बेटा केशव भी क्लर्क बनकर मशीन का एक पुर्जा मात्र रह जाता है | दिन भर की मेहनत के बाद इतने ही पैसे पाते हैं कि घर का अर्च किसी प्रकार निभ सके | इस पर मध्यवर्गीय परिवारों की सफेद पोशी और आडम्बरों के अलग खर्च होते हैं | बाबू रामचंद इन्हीं समस्याओं का सामना करते करते गुजर जाते हैं | केशव इन्हीं समस्याओं से जूझता बूढ़ा हो जाता है | केशव का बेटा मोहन इसी बेरोजगारी और क्लर्की की दौड़ में टी. बी का रोगी बन जाता है | वर्मा जी ने दिखलाया है कि जिन लोगों में मध्यवर्गीय नैतिकता बोध कम होता है, जो नौकरी करने की इस सफेद पोशी से कतराते हैं, वे ही ये जाल तोड़कर बाहर निकल पाते हैं | केशव का एक भाई रमेश अफसर बनकर इस दुनिया से बाहर निकल जाता है | दूसरा भाई सुरेश पढ़ाई में मन न लगने के कारण राजनीति की दुनिया में चला जाता है | इसी प्रकार केशव का छोटा पुत्र किशन बंबई फिल्मों की दुनिया में संघर्ष के लिए चला जाता है | बड़े बेटे मोहन का निर्माण उसी मध्यवर्गीय ढाँचे में हुआ है जिसमें से होकर पिता केशव या दादा रामचंद का जीवन निर्मित हुआ है | वह क्लर्की, नौकरी की छंटनी और कम पैसों में संघर्ष करते रहने को अभिशप्त है |

मध्यवर्ग में शादी - विवाह भी एक समस्या बन जाता है | उच्चा वर्ग के पास इतना पैसा है कि वह खर्च की परवाह नहीं करता। निम्न वर्ग संपत्ति का मोह नहीं करता | नैतिकता का मारा मध्यवर्ग ही अपनी इज्जत बचाने में लगा रहता है | केशव को अपनी बहन सुधा के विवाह के समय दहेज का प्रबंध करने में इस कटु वास्ताविकता का भान होता है | बाबू रामचंद को इधर-उधर से उधार लेकर किसी प्रकार दहेज की रकम पूरी करनी पड़ती है | किन्तु मोहन की शादी के समय केशव दहेज लेता है | दहेज में मिले रुपयों से वह अपने किराए के घर को ही खरीद लेता है | पर बाद में घर की आर्थिक स्थिति बिगड़ने पर पुत्री माया के विवाह के समय दहेज की ऊँची माँगों के कारण वह एक दुहाजू और तीन बच्चों के पिता से माया का रिश्ता करना मान लेता है | अगर माया विद्रोह नहीं करती तो यह विवाह हो ही जाता | इस प्रकार दहेज, झूठा दिखावा और शान मध्यवर्गीय नैतिकता के ऐसे लक्षण हैं जो व्यक्ति को भीतर से तोड़कर

कुंठाग्रस्त कर देते हैं | उपन्यास का नायक केशव और उसका पुत्र मोहन अपने जीवन के ऐसे ही कारुणिक प्रसंगों द्वारा मध्य वर्गीय परिवारों की त्रासदी को जीवन्त कर देते हैं |

सहयक ग्रन्थसूची

1.थके पाँव – भगवतीचरण वर्मा - साहित्य सदन - देहरादून – पृ: 100

2.थके पाँव – भगवतीचरण वर्मा - साहित्य सदन - देहरादून – पृ: 134

9526864182

jinuj@macollege.in

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 97-99
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में पुरुष–विमर्श और नैतिक संकट

रिम्पल सिंह
शोधार्थी,
डॉ. दिनेश कुमार मीणा
शोध निदेर्शक,
जे.जे.टी. विश्वविद्यालय, चुडैला, झुंझुनू (राजस्थान)

प्रस्तावना :

साहित्य मानव समाज की दिशा–दशा का दर्पण है। यह अवधारणा सत्य है कि जब लेखक 'मनुष्य विमर्श' की अंतरिक गहराइयों में प्रवेश करता है, तो वह केवल सामाजिक यथार्थ मानसिक, भावात्मक यथार्थ नहीं बल्कि नैतिक संकट की पहचान भी करता है। आधुनिक हिंन्दी कथा साहित्य में भीष्म साहनी एक ऐसे लेखक है, जिन्होने मनुष्य के भीतर पल रहे द्वंद्वो कठिनाइयों और मानसिक संघर्षो की गहराई से अभिव्यक्ति की है। उनका कथा साहित्य भारतीय समाज के विभिन्न पक्षो – सांप्रदायिकता, वर्ग–विभाजन, सामाजिक असमानता, और नैतिक मूल्यों का अत्यंत थयार्य वादी चित्रण किया है।

भीष्म साहनी की रचनाओं में पात्र केवल घटनाओं के प्रतीक नहीं, बल्कि अंतरिक संघर्ष के संचालक है। उनके कथा साहित्य में जहां स्त्री पात्रो की स्थिति का चित्रण मिलता है, वही पुरुष पात्रो की मानसिकता, संघर्ष, और नैतिक संकट भी स्पष्ट रूप से सामने आते हैं। यह संकट केवल व्यक्तिगत नहीं है, बल्कि सामाजिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में विस्तारित होता है।

समकालिन साहित्यक विमर्श में स्त्री–विमर्श, दलित–विमर्श और आदिवासी विमर्श के साथ–साथ पुरुष विमर्श भी एक विषय बनकर उभरा है। पुरुष–विमर्श का उद्देश्य केवल पुरुष की सत्ता का विश्लेषण करना नहीं, जबकि समाज में पुरुष की भूमिका, और उसके नैतिक संघर्षों को समझाना है।

इस शोध–आलेख माध्यम से भीष्म साहनी के कथा साहित्य में पुरुष विमर्श का मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है इसमे न केवल मानसिकता को समझने का प्रयास है, बल्कि समाजिक दबाव, व्यक्गित स्वार्थ और मानवीय मुल्यों के बीच चुनाव करना पड़ता है। यही उनके भीतर नैतिक संकट का प्रमुख कारण है।

भूमिका :–

भीष्म साहनी हिन्दी कथा साहित्य के विरल कथाकारों में शुमार है जिन्होने आधुनिकता, आत्मबोध सामाज यथार्थ, मानवीय संवेदनाओं और नैतिक द्वंद्व का गहन चित्रण किया है। उनका कथा साहित्य विचार विमर्श और नैतिक संवेदना का ऐसा सम्मेलन है, जहाँ व्यक्ति के बाहरी संसार से ज्यादा उसका अंतरिक संसार महत्वपूर्ण हो जाता है।

भीष्म साहनी के कथा के पात्र किसी विशेष समूह का प्रतिनिधि नहीं है, बल्कि मनुष्य के सार्वभौमिक अनुभव को अभिव्यक्ति करते हैं जो भय, संकोच नैतिक असुरक्षा अस्तित्व की चिंता को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। भीष्म साहनी ने अपने रचनात्मक दायित्वो को पूरी चतुराई से गंम्भीर रूप से निभाया है, इसलिए उनके कथा साहित्य को विशेष स्मरणीय और सगृहणीय बनाने के लिए हिन्दी साहित्य उनके प्रति समपर्ण

प्रदर्शित करता है। आम मानव की नब्ज की परख उनके कथा साहित्य की देन है। जीवन–सत्य और घटना प्रंसगों के बीच सत्य की जाँच को प्रस्तुत करना है। डा० चव्हाण के अनुसार – विमर्श शब्द मूलतः गहन सोच विचार, विचार–विनिमय, तथा चिंतन, मनन को उदघोषित करता है अथवा विमर्श से सीधा तात्पर्य सोच–विचार, विनिमय तथा विवेचन से है।"

हिन्दी साहित्य में प्रमुख स्थान रखने वाले रचनाकार भीष्म साहनी के कथा साहित्य मे पुरुष विमर्श परम्परा से जुड़ी मर्दानगी के निकमेपन, सम्प्रदायिक हिंसा में पुरुष की स्थिति और मध्यवगीर्य नैतिक संकट को उच्चतम भूमिक के रूप में रेखाकिंत करता है।

मुख्य बिन्दु :– नैतिक संकट, सामाजिक परिवर्तन, पुरुष विमर्श, हिन्दी कथा साहित्य

भीष्म साहनी के कथा साहित्य की मुख्य विशेषताओं में निम्न सिद्धान्तों को शामिल किया गया हैः

- सामाजिक यथार्थ का सशक्त चित्रण
- मानवीय संवेदनाओं की गहराई
- नैतिक मूल्यों और सामाजिक विषमताओं की प्रस्तुती
- वर्ग संघर्ष से उत्पन्न असमाजिकता
- इतिहास और समाज के पारस्परिक संबन्धों की व्याख्या करना

भीष्म साहनी एक अत्यन्त संवेदनशील कथाकार थे उनका प्रमुख उपन्यास 'तमस' है। जिसमें उन्होंने विभाजन की त्रासदी और हिंसात्मक घटनाओं के बीच मनुष्य की नैतिकता और संवेदनशीलता का चित्रण किया है उन्होंने कहानी विघा के क्षेत्र में मानव विमर्श और नैतिक संकट को पुरी तरह से सामान्य जीवन का आधार बनाकर अभिव्यक्त किया है समान्य मनुष्य के जीवन संघर्ष को यथार्थवादी रूप दिया। सामाजिक परिस्थितियों से होते हुए वे केवल शक्तिशाली या प्रभुत्व के रूप में नही बल्कि संवेदनशील संघर्षशील व्यक्तित्व के समान हमारे सामने खड़ी है।

पुरुष पात्रों की सामाजिक और मानसिक अवस्था सामाजिक संकट और मध्यवर्गीय हीन भावनाः

भारतीय समाज में परिस्थितियों के बढ़ते बोझ के कारण मानव को अपना व्यक्तित्व कायम करने में आर्थिक और सामाजिक रूप से संघर्ष का सामना करना पडता है जिससे पुरुष में नैतिक हीनता का शिकार होना पड़ता 'पटरिया' उनकी प्रमुख कहानी है। जिसमें मध्यवर्गीय पुरुष की असुरक्षा, हीन भावना और संघर्षो का सूक्ष्म चित्रण हुआ है भीष्म साहनी के कई पुरुष पात्र इन जिम्मेरारियों को निभाने के लिए सघर्ष का सामना करते हैं। कई बार यह जिम्मेदारी इतनी भारी पड़ती है कि उनके व्यक्तिगत जीवन और इच्छाओं पर भारी पड़ती है।

आत्मसंघर्ष विचारिक द्वंद्व : भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' में नैतिक मूल्यों और सामाजिक परिस्थितियों के बीच संघर्ष करते हुए विचारिक ढकराव को प्रस्तुत किया गया है इस सन्यास में विभाजन के कारण उपजे मानसिक द्वंद्व और नैतिक दुविधा से उपजे आदर्श और यथार्थ के बीच संघर्ष है।

संवेदन शीलता और मानवियता : उनके कथा साहित्य के पुरूष पात्र नैतिक मूल्यों और सामाजिक परिस्थितियों के बीच संघर्ष करते हुए दिखाई देते है वे कई बार ऐसी स्थिति में होते हैं जहाँ उन्हें सही और गलत के बीच कठिन निर्णय लेना पड़ता है।

नैतिक संकट का निरूपण : नैतिक संकट अन्धाधुन्ध बाजारीकारण वैचारिक टकराहट तथा अलोचनात्मक अविश्वसनीयता के कारण उपजा है साहित्य अब उत्पादक के रूप में प्रयोग हो रहा है। जहां अब सता–समीप्य और सतही विषय को पहले स्थान मिल रहा है। भीष्म साहनी के कथा साहित्य में नैतिक संकट का विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सम्प्रदायिकता और मानवीय संघर्ष 'अमृतसर आ गया' कहानी मे संकट के रूप स्पष्ट दिखाई देता है

साम्प्रदायिक उन्माद के प्रभाव से लोग किस प्रकार हिंसा को जन्म देते हैं 'कड़िया' कहानी में पुरूष पात्र पारिवारिक और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए संघर्ष करते हैं। समाज में शासन और स्वार्थी प्रवृतियाँ व्यक्ति नैतिक संकट की और धकेल रही है। 'चीफ की दावत' कहानी में कि प्रकार अपने नैतिक कर्तव्य को भूल जाता है और अपने चीफ की खुशामद के लिए अपने माँ को उस स्वागत से दूर रहने के लिए कहता है अन्त भीष्म साहनी ने अपने कथा पात्रों के माध्यम से नैतिक संकट की स्थिति को बहुत ही यथार्थ वारी रीति से अभिव्यक्त किया है।

परावर्तीत समाजिक सम्बन्धो में पुरुष चरित्र :

आधुनिक समाज में शिक्षा, औद्योगीकरण और आर्थिक मुक्ति के कारण सामाजिक संरचना में परिवर्तन आया है परिवार की पारंपरिक व्यवस्था भी धीरे–धीरे बदलाव की ओर जा रही है इससे पुरुष का चरित्र और जिम्मेदारिया भी बदल रही है। भीष्म साहनी के कथा साहित्य में यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उनके पुरुष पात्र कभी–कभी इन परिवर्तनों को स्वीकार करते हैं और कभी–कभी उनसे संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं।

मानवीय चेतना और पुरुष मंत्रणा भीष्म साहनी के साहित्य का एक महत्वपूर्ण भाग है। उनके कथा साहित्य में यह स्पष्ट होता है कि पुरुष भी भावात्मक रूप से संवेदनशील होते है और वे भी सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होते है। उनकी कहानियों और उपन्यासों में पुरुष पात्रों के माध्यम से यह दिखाया गया है कि मनुष्य की पहचान केवल उसकी सामाजिक भूमिका से नही बल्कि उसकी मानवीय सवेंदनाओं से भी होती है।

उपसंहार :–

पुरुष विमर्श और नैतिक संकट के विषय के तहत लेखक ने स्थिति व्यवहार रहन सहन और शिक्षा सांस्कृति को ध्यान में रखकर चित्रण किया है। उनके कथा साहित्य में पात्रों के जीवन में आने वाले उतार चढाव, संघर्ष, नैतिक संकट, और बदलते वातावरण का सूक्ष्मता से चित्रण पस्तुत किया है। भीष्म साहनी के साहित्य का मुख्या उद्देश्य केवल मनोरंजन और सरसता नहीं रहा बल्कि सामाज के गम्भीर विषय का उद्घाटित करना है। उनके पुरूष पात्र सामाजिक दवावो, पारिवारिक जिम्मेदारियों और नैतिक दुविधा से जुझते हुए दिखाई देते है। यह अकेले पुरुष को केवल शक्ति और वर्चस्व के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत नहीं करता बल्कि उसके भीतर के मानवीय संघर्ष और संवेदनशीलता को प्रकट करता है।

संदर्भ सुचि :–

- भीष्म साहनी, प्रतिनिधि कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2006, पृष्ठ–74
- भीष्म साहनी, 'तमस' राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली पृष्ट =44
- विवेक दिवेद्धी : भीष्म साहनी उपन्यास साहित्य, पृष्ठ = 266
- पुस्तक वार्ता पत्रिका, अंक 39, 2012, पृष्ठ 49
- नामवर सिंह, 'कहनी : नई कहानी', राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2001 पृष्ठ 156
- रामविलास शर्मा, हिन्दी साहित्य और समाज, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2008 पृष्ठ 210

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 100-103
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य साहित्य में मध्यमवर्गीय मानसिकता का द्वंद्व

कुलबीर सिंह
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, नीलम विश्वविद्यालय, कैथल
डॉ. सुमन देवी
शोध निर्देशिका,
हिन्दी विभाग, नीलम विश्वविद्यालय, कैथल

सार
हरिशंकर परसाई हिन्दी व्यंग्य साहित्य के ऐसे सशक्त हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज की गहरी विसंगतियों और पाखंडों को उजागर किया। उनके व्यंग्य में मध्यमवर्गीय समाज की मानसिकता का अत्यंत यथार्थ,तीक्ष्ण एवं स्पष्ट चित्रण मिलता है। मध्यमवर्ग एक ऐसा वर्ग है जो आदर्श और यथार्थ, नैतिकता और व्यवहार, परंपरा और आधुनिकता के बीच निरंतर संघर्ष करता रहता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में "भोलाराम का जीव", "तब की बात और थी" तथा "निठल्ले की डायरी" के आधार पर मध्यमवर्गीय मानसिकता के अंतर्विरोध, पाखंड, अवसरवादिता तथा आत्मसंघर्ष का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि परसाई का व्यंग्य सामाजिक आत्मालोचन का सशक्त माध्यम है, जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना अपने समय में था।

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य विधा का प्रमुख उद्देश्य केवल हास्य उत्पन्न करना नहीं, बल्कि समाज के भीतर व्याप्त विसंगतियों और अंतर्विरोधों को उजागर करना है। इस दृष्टि से हरिशंकर परसाई का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने अपने व्यंग्य के माध्यम से समाज के उस चेहरे को सामने लाया है, जिसे सामान्यतः लोग अनदेखा कर देते हैं।

भारतीय समाज में मध्यमवर्ग एक ऐसा वर्ग है जो सामाजिक संरचना का केंद्र माना जाता है। यह वर्ग अपने को नैतिक, आदर्शवादी और संस्कारी मानता है, परंतु व्यवहार में वह अक्सर इन मूल्यों से विचलित हो जाता है। यही स्थिति उसके भीतर एक प्रकार का मानसिक द्वंद्व उत्पन्न करती है। हरिशंकर परसाई जी ने मध्यम वर्ग के इस मानसिक द्वंदव को अपनी "**भोलाराम का जीव**" में उजागर करते हुए करते हुए कहा है_**"मध्यमवर्ग अपने आदर्शों से अधिक अपने**

आडंबरों में जीता है।"[1]यह कथन इस वर्ग की मूल प्रवृत्ति को उजागर करते हुए स्पष्ट रूप से दिखता है कि मध्यम वर्ग किस प्रकार अपने मानसिक द्वंदव में उलझा हुआ है। वह सदाचार की बात तो करता है, परंतु मौका मिलते ही अपने लालच के वसीभूत होकर सदाचार के आचरण को छोड़ देता है।

मध्यमवर्गीय मानसिकता का स्वरूप और अंतर्विरोध

मध्यमवर्गीय समाज अनेक विरोधाभासों से भरा हुआ है। यह वर्ग एक ओर उच्च आदर्शों की बात करता है, तो दूसरी ओर परिस्थितियों के दबाव में समझौता भी कर लेता है। परसाई जी मध्यम वर्ग की इस विरोधाभासी प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए अपनी रचना "**भोलाराम का जीव**" में लिखते हैं—**"हमारे समाज में आदमी जैसा है, उससे अधिक वैसा दिखना चाहता है।"**[2]परसाई जी का यह कथन मध्यमवर्गीय व्यक्ति की दिखावटी प्रवृत्ति को उजागर करता है। यहां परसाई जी यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि मनुष्य अंदर से जैसा है वैसा वह बाहर से दिखना नहीं चाहता। वह अंदर से विसंगतियों एवं दुर्बलताओं से भरा हुआ है।परंतु बाहर वह अपने आप को सदाचारी एवं मजबूत दिखाना चाहता है। इसी मानसिक अंतर्विरोधों के बीच वह हमेशा फसा रहता है।

मध्यमवर्गीय मानसिकता आदर्श और व्यवहार के बीच अंतर करती हुई,ईमानदारी की बात तो करती है, पर वह अपने व्यवहार से समझौता भी कर लेती है।उसे अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा की चिंता भी सताती है, जिससे उसका आत्म संघर्ष और निष्क्रियता बढ़ जाती है।यह सभी तत्व मिलकर मध्यमवर्गीय मानसिकता में द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न करते हैं।

"भोलाराम का जीव" में व्यवस्था और व्यक्ति का द्वंद्व

"भोलाराम का जीव" परसाई की प्रसिद्ध व्यंग्य रचना है, जिसमें एक साधारण व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसकी आत्मा सरकारी कागजों में अटक जाती है। यह रचना प्रशासनिक व्यवस्था की विसंगतियों को उजागर करती है। और हमारे भ्रष्ट प्रशासन एवं सरकारी कार्यालयो में व्याप्त भ्रष्टाचार की परतों को उजागर करने का काम करती है।

भोलाराम का अस्तित्व उसकी जीवित अवस्था में भी सीमित था और मृत्यु के बाद तो वह पूरी तरह कागजी प्रक्रिया में फंस जाता है। इस संदर्भ में परसाई जी सरकारी कार्यालयो की कार्यप्रणाली पर कटाक्ष करते हुए अपनी रचना "**भोलाराम का जीव**" में लिखते हैं_**"यहाँ आदमी से ज्यादा उसकी फाइल की कीमत है।"**[3]यह कथन उस व्यवस्था का प्रतीक है जिसमें व्यक्ति की पहचान उसके अस्तित्व से नहीं, बल्कि कागजों से निर्धारित होती है। अपनी रचना के द्वारा परसाई जी सरकारी कार्यालयो की कार्यप्रणाली पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए बताते हैं कि मनुष्य जीवित रहते हुए अपने काम के लिए इन सरकारी कार्यालयो में भटकता ही रहता है, परंतु मरने के बाद भी उनकी आत्मा सरकारी फाइलों में ही अटकी रहती है फिर भी उनका काम नहीं बनता।मध्यमवर्गीय व्यक्ति इस व्यवस्था से परेशान भी है और उसी पर निर्भर भी। वह इसका विरोध करता है, परंतु इससे मुक्त होने का साहस नहीं जुटा पाता। यही उसका द्वंद्व है।

"तब की बात और थी" में अतीत-बोध और वर्तमान का संघर्ष

इस रचना में परसाई ने मध्यमवर्गीय मानसिकता के उस पक्ष को उजागर किया है जिसमें व्यक्ति अतीत के आदर्शों का गुणगान करता है।मध्यमवर्गीय व्यक्ति अक्सर यह कहता है कि पहले के लोग अधिक ईमानदार और नैतिक थे। परंतु स्वयं वह वर्तमान में उन्हीं मूल्यों का पालन नहीं करता। और उसे जब भी मौका मिलता है वह अपने लालच की पूर्ति के लिए अपनी सदाचारी वेशभूषा का आवरण उतार कर अपने स्वार्थ की पूर्ति करता है। मध्यम वर्ग की ऐसी दोहरी मानसिक द्वंदता को उजागर करते हुए परसाई जी अपनी रचना **"तब की बात और थी"** में लिखते हैं_**"हम अतीत की**

सच्चाई का गीत गाते हैं और वर्तमान की झूठ में जीते हैं।”[4] परसाई जी का यह कथन मध्यमवर्गीय मानसिकता के गहरे अंतर्विरोध को उजागर करता है।यहाँ द्वंद्व इस रूप में दिखाई देता है कि अतीत के प्रति उनका आकर्षण तो है परंतु वर्तमान में नैतिक गिरावट भी उनके अंदर विद्यमान है।यह प्रवृत्ति व्यक्ति को आत्मसंतोष देती है, लेकिन उसे वास्तविक परिवर्तन से दूर रखती है।

“निठल्ले की डायरी” में आत्मसंघर्ष और निष्क्रियता

“निठल्ले की डायरी” में हरिशंकर परसाई ने मध्यमवर्गीय व्यक्ति के भीतर चल रहे आत्मसंघर्ष (inner conflict) और निष्क्रियता (inaction) को बेहद सूक्ष्म, व्यंग्यात्मक और यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत किया है। यह रचना किसी एक व्यक्ति की डायरी मात्र नहीं, बल्कि पूरे मध्यमवर्ग की मानसिकता का प्रतिनिधित्व करती है।“निठल्ले की डायरी” का नायक अपने आसपास की सामाजिक, आर्थिक और नैतिक विसंगतियों से भली-भाँति परिचित है। वह यह समझता है कि समाज में भ्रष्टाचार, पाखंड और अवसरवादिता व्याप्त है, परंतु वह स्वयं इनसे पूरी तरह अलग नहीं हो पाता।यही स्थिति उसके भीतर द्वंद्व उत्पन्न करती है।एक ओर वह आदर्शों, नैतिकता और ईमानदारी की बात करता है,दूसरी ओर व्यवहार में उन्हीं मूल्यों से समझौता करता है।इस प्रकार उसका मन लगातार आदर्श और यथार्थ के बीच झूलता रहता है।

इस रचना का पात्र अपने जीवन की समस्याओं और विसंगतियों को समझता है, लेकिन उन्हें बदलने के लिए कोई ठोस प्रयास नहीं करता। परसाई जी मध्यवर्ग की इसी मानसिकता पर करारा व्यंग्य करते हुए अपनी रचना की**“निठल्ले की डायरी”** में लिखते हैं_**“हम सोचते बहुत हैं, पर करने के समय चुप हो जाते हैं।”[5]**यह कथन मध्यमवर्गीय समाज की निष्क्रियता को उजागर करता है।यहाँ मध्यवर्गीय द्वंद्व के रूप में—विचार और कर्म का अंतर एवं जागरूकता और निष्क्रियता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।इस रचना का प्रमुख पक्ष यह है कि नायक अचेत नहीं, बल्कि अत्यंत सचेत है। उसे अपनी कमजोरियों का बोध है। वह जानता है कि वह जो सोचता है, वैसा कर नहीं पाता।यही जागरूकता उसे और अधिक पीड़ित करती है। वह स्वयं पर व्यंग्य भी करता है और अपनी स्थिति को समझते हुए भी बदल नहीं पाता।

मध्यमवर्गीय पाखंड और अवसरवादिता

मध्यमवर्गीय समाज की एक प्रमुख विशेषता उसका पाखंड है। यह वर्ग नैतिकता और ईमानदारी की बात करता है, परंतु अवसर मिलने पर उससे समझौता कर लेता है।परसाई इस मध्यमवर्ग की इस मानसिकता पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं—**“ईमानदारी का भाषण देना आसान है, ईमानदार रहना कठिन।”[6]**यह कथन मध्यमवर्गीय मानसिकता के वास्तविक स्वरूप को उजागर करता है। मध्यमवर्गीय समाज की सबसे बड़ी यह विडम्बना है कि वह भ्रष्टाचार का विरोध तो करता है, पर सुविधा मिलने पर उसे स्वीकर भी तुरंत कर लेता है। वह आदर्शों की चर्चा तो करता है, पर व्यवहार में अपनी सुविधानुसार समझौता भी कर लेता है।यह सभी स्थितियाँ मध्यमवर्गीय मानसिकता के द्वंद्व को स्पष्ट करती हैं।

परसाई के व्यंग्य का सामाजिक महत्व

परसाई का व्यंग्य केवल आलोचना नहीं है, बल्कि वह समाज को जागरूक करने का एक सशक्त माध्यम है।उनकी रचनाएँ पाठक को यह सोचने के लिए विवश करती हैं कि—

क्या हम वास्तव में अपने आदर्शों का पालन करते हैं?

क्या हमारा व्यवहार हमारे विचारों के अनुरूप है?
क्या हम अपनी सुविधानुसार अपने आचरण के साथ समझौता तो नहीं कर रहे?
इस प्रकार परसाई का व्यंग्य आत्मचिंतन को प्रेरित करता है।

समकालीन संदर्भ में प्रासंगिकता

आज के समय में भी मध्यमवर्गीय मानसिकता का द्वंद्व बना हुआ है।
उपभोक्तावाद और नैतिकता का संघर्ष
आधुनिकता और परंपरा का टकराव
सामाजिक प्रतिष्ठा और व्यक्तिगत मूल्यों के बीच संतुलन
इन सभी समस्याओं के कारण मध्यमवर्ग आज भी उसी प्रकार के द्वंद्व से गुजर रहा है जैसा परसाई के समय में था।
इस दृष्टि से परसाई का साहित्य आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि हरिशंकर परसाई ने अपने व्यंग्य साहित्य के माध्यम से मध्यमवर्गीय मानसिकता के द्वंद्व को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।मध्यमवर्ग एक ऐसा वर्ग है जो अपने आदर्शों और व्यवहार के बीच संतुलन स्थापित नहीं कर पाता। वह नैतिकता की बात करता है, परंतु व्यवहार में उससे विचलित हो जाता है।

परसाई ने अपने व्यंग्य के माध्यम से इस वर्ग की कमजोरियों, पाखंड और अंतर्विरोधों को उजागर करते हुए समाज को आत्मचिंतन के लिए प्रेरित किया है। और यहां यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि मानसिक द्वंद्व तब तक बना रहेगा जब तक मनुष्य अपने स्वार्थ में उलझ कर अपनी अंतरात्मा को दबाता रहेगा,एवं अपने लालच एवं सुविधानुसार अपने बुरे आचरण पर पर्दा डालता रहेगा।
अतः कहा जा सकता है कि परसाई का व्यंग्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हरिशंकर परसाई, भोलाराम का जीव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 48
2. वही, पृ. 50
3. वही, पृ. 52
4. हरिशंकर परसाई, तब की बात और थी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 82
5. हरिशंकर परसाई, निठल्ले की डायरी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, पृ. 15
6. वही, पृ. 18

मोबाईल नं_7988422425
ई. मेल_Kulbir8464@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 104-108
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

झारखण्ड की उराँव जनजाति की महिलाओं में साक्षरता के प्रति दृष्टिकोण: एक अध्ययन

पूर्णिमा किस्पोट्टा
शोधार्थी,
इतिहास विभाग, राधागोविंद विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड
डॉ. पूनम कुमारी
सहायक प्राध्यापिका,
इतिहास विभाग, राधागोविंद विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

सारांश (Abstract):

यह शोधपत्र झारखण्ड की प्रमुख उराँव जनजाति की महिलाओं में साक्षरता एवं शिक्षा के प्रति विकसित हो रहे दृष्टिकोण का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि पारंपरिक सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताएँ, आर्थिक परिस्थितियाँ तथा भाषाई पहचान किस प्रकार महिलाओं की शिक्षा के प्रति सोच और व्यवहार को प्रभावित करती हैं। उराँव समाज में लंबे समय तक चली आ रही परंपराएँ, लैंगिक भूमिकाएँ तथा संसाधनों की सीमित उपलब्धता ने महिलाओं की शैक्षिक प्रगति को प्रभावित किया है, किंतु वर्तमान समय में सरकारी नीतियों, गैर-सरकारी प्रयासों तथा जागरूकता के बढ़ते स्तर के कारण सकारात्मक परिवर्तन भी देखने को मिल रहे हैं।

इस अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आँकड़ों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक डेटा साक्षात्कार, प्रश्नावली एवं क्षेत्रीय अवलोकन के माध्यम से संकलित किया गया, जबकि द्वितीयक डेटा विभिन्न सरकारी रिपोर्टों, शोधपत्रों एवं जनगणना आँकड़ों से प्राप्त किया गया। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि गरीबी, अशिक्षा, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ, प्रारंभिक विवाह तथा मातृभाषा में शिक्षा की कमी जैसी समस्याएँ आज भी महिलाओं की शिक्षा में बाधक हैं। इसके बावजूद, शिक्षा के प्रति जागरूकता में वृद्धि, स्व-सहायता समूहों की सक्रियता, तथा क्षेत्रीय भाषा आधारित शिक्षण के प्रयासों ने महिलाओं में आत्मविश्वास और शैक्षिक सहभागिता को बढ़ावा दिया है।

अंततः, यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि यदि शिक्षा को स्थानीय भाषाओं और सांस्कृतिक संदर्भों से जोड़कर प्रस्तुत किया जाए तथा सामाजिक-आर्थिक बाधाओं को दूर करने के लिए समन्वित प्रयास किए जाएँ,

तो उराँव जनजाति की महिलाओं में साक्षरता दर और शैक्षिक सशक्तिकरण को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाया जा सकता है।

बीज शब्द: उराँव जनजाति, महिला साक्षरता, शैक्षिक दृष्टिकोण, क्षेत्रीय भाषा आधारित शिक्षा, सामाजिक-आर्थिक कारक।

प्रस्तावना (Introduction):

झारखण्ड की उराँव (कुड़ुख) जनजाति अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं, सामुदायिक जीवन शैली और श्रमशीलता के लिए जानी जाती है। यह जनजाति मुख्यतः झारखण्ड के विभिन्न जिलों में निवास करती है और अपनी विशिष्ट भाषा, रीति-रिवाजों तथा पारंपरिक ज्ञान प्रणाली के कारण सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से विशेष स्थान रखती है। उराँव समाज में महिलाओं की भूमिका सदैव महत्वपूर्ण रही है; वे न केवल घरेलू कार्यों का संचालन करती हैं, बल्कि कृषि, पशुपालन और पारिवारिक आर्थिक गतिविधियों में भी सक्रिय भागीदारी निभाती हैं। इसके बावजूद, ऐतिहासिक रूप से उनकी शिक्षा और साक्षरता के अवसर सीमित रहे हैं, जिससे उनके समग्र विकास में बाधाएँ उत्पन्न हुई हैं।

आधुनिक युग में साक्षरता को किसी भी समाज के विकास और प्रगति का प्रमुख सूचक माना जाता है। यह केवल पढ़ने-लिखने की क्षमता तक सीमित नहीं है, बल्कि व्यक्ति के बौद्धिक, सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम भी है। उराँव महिलाओं के संदर्भ में साक्षरता का अर्थ और भी व्यापक है, क्योंकि यह उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाती है, निर्णय लेने की क्षमता विकसित करती है और समाज में उनकी भागीदारी को सुदृढ़ करती है। हालांकि, सामाजिक परंपराएँ, लैंगिक असमानताएँ, आर्थिक कठिनाइयाँ और शिक्षा के प्रति पारंपरिक दृष्टिकोण जैसी अनेक चुनौतियाँ अभी भी उनके मार्ग में अवरोध के रूप में मौजूद हैं।

वर्तमान समय में वैश्वीकरण, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के प्रसार तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी प्रयासों के कारण उराँव समाज में शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ी है। विशेष रूप से महिलाओं के बीच साक्षरता के महत्व को लेकर सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिल रहा है। डिजिटल माध्यमों, मोबाइल तकनीक और ऑनलाइन शिक्षा के प्रसार ने शिक्षा तक पहुँच को आसान बनाया है, जिससे दूरस्थ क्षेत्रों की महिलाएँ भी सीखने के नए अवसर प्राप्त कर रही हैं। इसके साथ ही, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 जैसी पहलें मातृभाषा आधारित शिक्षा को प्रोत्साहित करती हैं, जो उराँव महिलाओं के लिए शिक्षा को अधिक सुलभ और प्रभावी बना सकती हैं।

फिर भी, यह आवश्यक है कि इन परिवर्तनों का गहन अध्ययन किया जाए ताकि यह समझा जा सके कि उराँव महिलाओं के दृष्टिकोण में किस प्रकार के बदलाव आ रहे हैं और किन कारकों के कारण ये परिवर्तन संभव हो रहे हैं। यह अध्ययन इसी दिशा में एक प्रयास है, जो उनके शैक्षिक दृष्टिकोण, चुनौतियों और संभावनाओं का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

शोध के उद्देश्य (Objectives):

- उराँव महिलाओं के बीच साक्षरता की वर्तमान स्थिति का आकलन करना।
- शिक्षा के प्रति उनके व्यक्तिगत और सामुदायिक दृष्टिकोण का विश्लेषण करना।
- साक्षरता के मार्ग में आने वाली बाधाओं (जैसे- पलायन, भाषा और आर्थिक तंगी) की पहचान करना।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) और क्षेत्रीय योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।

साहित्य समीक्षा (Review of Literature):

संबंधित साहित्य का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि जनजातीय महिलाओं की शिक्षा केवल शैक्षिक मुद्दा नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं भाषाई कारकों से गहराई से जुड़ा हुआ है। मोहंती

(2009) ने मातृभाषा आधारित बहुभाषिक शिक्षा को जनजातीय बच्चों, विशेषकर बालिकाओं, के लिए अधिक प्रभावी माना। सिंह (2010) के अनुसार सामाजिक असमानता और लैंगिक भेदभाव जनजातीय महिलाओं की साक्षरता दर को प्रभावित करते हैं। सिन्हा (2014) ने पाया कि उराँव समुदाय में आर्थिक कठिनाइयाँ और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ बालिकाओं की शिक्षा में बाधा उत्पन्न करती हैं। एक्का (2016) के अध्ययन में यह सामने आया कि उराँव महिलाओं में शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण तो विकसित हो रहा है, परंतु अवसरों की कमी एक प्रमुख समस्या है। UNESCO (2015), NCERT (2019) तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) ने भी मातृभाषा आधारित शिक्षा को बढ़ावा देने पर जोर दिया है, जिससे जनजातीय महिलाओं की साक्षरता में सुधार संभव है।

इस प्रकार, उपलब्ध साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि उराँव महिलाओं की साक्षरता के प्रति दृष्टिकोण सकारात्मक दिशा में बढ़ रहा है, किन्तु संरचनात्मक एवं परिस्थितिजन्य बाधाएँ अभी भी विद्यमान हैं।

डेटा विश्लेषण और मुख्य बिंदु (Data Analysis & Key Findings):

कारक	वर्तमान दृष्टिकोण	प्रभाव
सामाजिक-सांस्कृतिक	उराँव महिलाएँ पारंपरिक रीति-रिवाजों के साथ शिक्षा को जोड़ने लगी हैं, जिससे शिक्षा के प्रति सकारात्मक सोच विकसित हो रही है।	उच्च शिक्षा हेतु घर से बाहर जाने पर सुरक्षा की चिंता एवं सामाजिक प्रतिबंध अभी भी बाधा बनते हैं।
आर्थिक	शिक्षा को आत्मनिर्भरता, रोजगार और बेहतर जीवन स्तर के साधन के रूप में देखा जा रहा है।	गरीबी, मजदूरी और पलायन के कारण पढ़ाई में निरंतरता नहीं रह पाती और ड्रॉपआउट बढ़ता है।
भाषाई (Linguistic)	कुडुख (मातृभाषा) के प्रति गहरा लगाव है और इसी में सीखना अधिक सहज लगता है।	विद्यालयों में हिंदी/अंग्रेजी माध्यम के कारण प्रारंभिक स्तर पर समझ की कमी और अरुचि उत्पन्न होती है।
तकनीकी	कुडुख (मातृभाषा) के प्रति गहरा लगाव है और इसी में सीखना अधिक सहज लगता है।	विद्यालयों में हिंदी/अंग्रेजी माध्यम के कारण प्रारंभिक स्तर पर समझ की कमी और अरुचि उत्पन्न होती है।

चुनौतियाँ और बाधाएँ (Challenges):

पलायन (Migration): उराँव जनजाति की महिलाओं और बालिकाओं की शिक्षा के सामने एक गंभीर चुनौती के रूप में उभरता है। झारखण्ड के अनेक जनजातीय क्षेत्रों में आर्थिक संसाधनों की कमी, रोजगार के सीमित अवसर और गरीबी के कारण परिवारों को जीविकोपार्जन हेतु अन्य राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, महाराष्ट्र आदि की ओर पलायन करना पड़ता है। इस प्रक्रिया में परिवार के साथ जाने वाली बालिकाओं की शिक्षा अक्सर बीच में ही बाधित हो जाती है, क्योंकि नए स्थान पर उनके लिए विद्यालयों में नामांकन, भाषा की समस्या तथा सामाजिक समायोजन कठिन हो जाता है।

भाषाई भिन्नता भी एक महत्वपूर्ण समस्या है, क्योंकि नए राज्यों में शिक्षा का माध्यम अलग होने के कारण बालिकाएँ स्वयं को असहज महसूस करती हैं। परिणामस्वरूप, उनमें पढ़ाई के प्रति रुचि कम हो जाती है। इस प्रकार, पलायन न केवल शैक्षिक अवसरों को सीमित करता है, बल्कि साक्षरता दर और शैक्षिक उपलब्धि पर भी नकारात्मक

प्रभाव डालता है। इसलिए, इस समस्या के समाधान हेतु विशेष नीतियों और स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन की आवश्यकता है।

मौसमी पलायन (seasonal migration): के कारण भी बालिकाएँ नियमित रूप से विद्यालय नहीं जा पातीं, जिससे उनकी पढ़ाई में निरंतरता नहीं बन पाती और वे धीरे-धीरे शिक्षा से दूर हो जाती हैं। कई मामलों में वे स्थायी रूप से स्कूल छोड़ देती हैं। इसके साथ ही, पलायन के दौरान उन्हें घरेलू कार्यों, छोटे भाई-बहनों की देखभाल या मजदूरी में लगना पड़ता है, जिससे उनकी शिक्षा और अधिक प्रभावित होती है।

भाषाई अंतर भी एक बड़ी समस्या है, क्योंकि नए राज्यों में शिक्षा का माध्यम अलग होने से बालिकाएँ असहज महसूस करती हैं और उनकी रुचि कम हो जाती है। इसके अलावा, असुरक्षा की भावना, संसाधनों की कमी और शैक्षिक सहयोग के अभाव से उनकी सीखने की प्रक्रिया प्रभावित होती है। परिणामस्वरूप, पलायन साक्षरता दर और शैक्षिक उपलब्धि दोनों पर नकारात्मक प्रभाव डालता है, इसलिए, इस समस्या के समाधान हेतु विशेष नीतियों और स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन की आवश्यकता है।

घरेलू उत्तरदायित्व: घरेलू उत्तरदायित्व उराँव जनजाति की महिलाओं और बालिकाओं की शिक्षा के सामने एक महत्वपूर्ण बाधा के रूप में देखा जाता है। जनजातीय परिवारों में बालिकाओं से अपेक्षा की जाती है कि वे कम उम्र से ही घरेलू कार्यों में योगदान दें, जैसे छोटे भाई-बहनों की देखभाल, खाना बनाना, पानी लाना, लकड़ी इकट्ठा करना तथा अन्य दैनिक कार्य। इसके साथ ही, वे खेती-बाड़ी और पशुपालन से जुड़े कार्यों में भी सक्रिय रूप से भाग लेती हैं। इन जिम्मेदारियों के कारण उनके पास पढ़ाई के लिए पर्याप्त समय और ऊर्जा नहीं बच पाती।

अक्सर बालिकाएँ स्कूल से लौटने के बाद भी घरेलू कार्यों में व्यस्त रहती हैं, जिससे होमवर्क और स्वाध्याय प्रभावित होता है। कई बार फसल के मौसम में या पारिवारिक आवश्यकताओं के कारण उन्हें स्कूल छोड़कर पूर्णतः काम में लगना पड़ता है। इससे उनकी शिक्षा की निरंतरता टूट जाती है और धीरे-धीरे उनका स्कूल से जुड़ाव कम हो जाता है।

इसके अतिरिक्त, समाज में प्रचलित लैंगिक भूमिकाएँ भी इस स्थिति को और मजबूत करती हैं, जहाँ लड़कियों की शिक्षा की अपेक्षा घरेलू कार्यों को अधिक प्राथमिकता दी जाती है। परिणामस्वरूप, उनकी शैक्षिक प्रगति बाधित होती है और वे उच्च शिक्षा से वंचित रह जाती हैं। अतः आवश्यक है कि समाज में जागरूकता बढ़ाई जाए तथा बालिकाओं की शिक्षा को प्राथमिकता देने के लिए सकारात्मक पहल की जाए, ताकि वे अपने भविष्य को सशक्त बना सकें।

संस्थागत दूरी: उराँव जनजाति की बालिकाओं की शिक्षा में एक प्रमुख बाधा है। ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में उच्च शिक्षण संस्थानों की कमी के कारण विद्यार्थियों को दूर-दराज़ के शहरों में जाना पड़ता है। दुर्गम रास्ते, परिवहन की सीमित सुविधा और सुरक्षा संबंधी चिंताएँ नियमित उपस्थिति को कठिन बनाती हैं। विशेषकर बालिकाओं के लिए यह स्थिति और चुनौतीपूर्ण हो जाती है, जिससे वे उच्च शिक्षा से वंचित रह जाती हैं।

निष्कर्ष (Conclusion):

अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि उराँव जनजाति की महिलाओं में साक्षरता के प्रति अब नकारात्मकता या अज्ञानता प्रमुख समस्या नहीं रह गई है, बल्कि वास्तविक चुनौती संसाधनों की कमी, अवसरों का अभाव और संरचनात्मक बाधाएँ हैं। वर्तमान समय में उराँव महिलाएँ शिक्षा को न केवल ज्ञान प्राप्ति का माध्यम, बल्कि सामाजिक सम्मान, आत्मनिर्भरता और सशक्तिकरण के एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में देखने लगी हैं।

फिर भी, आर्थिक कठिनाइयाँ, घरेलू उत्तरदायित्व, पलायन, भाषाई असमानता और शैक्षणिक संस्थानों की दूरी जैसी समस्याएँ उनके शैक्षिक विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं। यदि शिक्षा को उनकी मातृभाषा कुड़ुख के

माध्यम से प्रारंभिक स्तर पर सुलभ बनाया जाए तथा इसे स्थानीय रोजगारोन्मुखी कौशल (Vocational Skills) से जोड़ा जाए, तो सीखने की प्रक्रिया अधिक प्रभावी और प्रासंगिक बन सकती है।

इस प्रकार, समावेशी नीतियों, स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप योजनाओं और सामाजिक जागरूकता के माध्यम से उराँव महिलाओं की साक्षरता में उल्लेखनीय सुधार संभव है।

संदर्भ (References) :

1. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT). (2019). राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण रिपोर्ट।
2. यूनेस्को. (2015). सभी के लिए शिक्षा: वैश्विक निगरानी रिपोर्ट ।
3. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय।
4. झारखण्ड शिक्षा परियोजना परिषद. (2017). वार्षिक प्रतिवेदन. जेईपीसी।
5. सिन्हा, आर. के. (2014). झारखण्ड में जनजातीय महिलाओं की शिक्षा.
6. एक्का, ए. (2016). उराँव जनजाति का सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन. राँची।
7. तिग्गा, एन. (2018). झारखण्ड में जनजातीय बालिकाओं की शैक्षिक स्थिति.
8. शर्मा, एस. (2016). भारत में जनजातीय शिक्षा: समस्याएँ और चुनौतियाँ.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 109-113
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

आधुनिक समय में डॉक्टर बी आर अंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता

Dinesh kumar
Research scholar history,
P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur
Dr.Shrikrishna singh
professor history,
P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur

परिचय

"मै किसी समुदाय की प्रगति को महिलाओं द्वारा हासिल की गई प्रगति की डिग्री से मापता हूँ"। -डॉ भीमराव अंबेडकर

डॉक्टर भीमराव अंबेडकर का मानना था कि राष्ट्रवाद तभी पूर्ण औचित्य पा सकता है जब लोगों के मध्य जाति अंतर भेद, नस्लीय श्रेष्ठता तथा शारीरिक रंग की जैसे श्रेष्ठता के भेदभाव पर ध्यान न कर सामाजिक भाईचारे को ऊंचा स्थान दिया जाए। वही समाज सच्चे अर्थों में प्रगति कर सकता है। डॉ भीमराव अंबेडकर प्रतिभा संपन्न राष्ट्रदूत थे। वे केवल एक व्यक्ति ही नहीं अपितु स्वयं में अनेक संस्था भी थे। उनका व्यक्तित्व अपने ढंग का अंगूठा था। कोमल हृदय से युक्त भीमराव अंबेडकर को कभी किसी ने द्वेष और ईर्ष्या के बस में आकर कार्य करते हुए नहीं देखा। उनकी श्रेष्ठ नैतिकता ने ही देशवासियों के हृदय में उनको श्रेष्ठतम स्थान प्रदान किया। वे संविधान निर्माता, विद्वान, क्रांतिकारी लेखक और परिवर्तन के प्रथम पंक्ति के नायक के रूप में जाने जाते हैं। डॉ भीमराव अंबेडकर ने अपने जीवन के प्रारंभिक काल में छुआछूत और जाति प्रथा जैसे दंस को झेला, लेकिन उन्होंने अपने आचरण पर इसे कभी हावी नहीं होने दिया। फलस्वरूप उनकी आकांक्षा थी कि हसाए से युक्त दलित समाज के लिए ऐसे सार्थक आयाम स्थापित किए जाएं जिससे आने वाले आगे के काल में वह अपने जीवन ऐसे सामाजिक बुराइयों से बच सके। उन्हीं का एक लोकप्रिय कथन है कि "शिक्षा ऐसी शेरनी का दूध है जो इसे पिएगा वह दहाड़ेगा"। वे शिक्षा को एकमात्र ऐसा साधन मानते थे जिसके द्वारा परिवर्तन लाकर समाज को श्रेष्ठ बनाया जा सकता है। यह परिवर्तन तभी संभव है, जब संविधान में ऐसे प्रावधान करने होंगे जिससे सभी को समान अवसर और सुविधा प्राप्त हो सके। उनका मानना था कि भारत का लोकतंत्र तभी सफल होगा जब इसको मानने वाले अच्छे किस्म के होंगे। डॉ भीमराव अंबेडकर अपने जीवन में विशेष सुख सुविधा छोड़कर भारतीय समाज को ऊंचा उठाने में अपना संपूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। लंबे समय से चले आ रहे कुरीतियों, बुराइयों तथा रूढ़िवादिता को जड़ से खत्म करने का प्रयास करते हुए, उन्होंने दलित वर्ग के लिए संविधान में समानता का दर्जा प्रदान करने का

महत्वपूर्ण कार्य किया। तथा भारतीय समाज की आधी आबादी रखने वाली माता - बहनों की इसकी स्थिति सुधारने में डॉक्टर भीमराव अंबेडकर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनके द्वारा स्थापित राजनीतिक आयाम से हमारे देश में एक नई चेतना का प्रादुर्भाव हुआ। डॉक्टर भीमराव अंबेडकर द्वारा दिया गया आर्थिक विचार समानता के क्षेत्र में आज मिल का पत्थर साबित हो रहा है। वे एक ऐसे श्रेष्ठ समाज सुधारक सच्चे अर्थों में मानवता के पुजारी थे। जिन्होंने एक ऐसे श्रेष्ठ राष्ट्र की संकल्पना की जिसमें भेदभाव रहित समतामूलक समाज हो का सपना देखा।

समय के अनुरूप हमारी धरा ने स्थितिजन्य समस्याओं के निराकरण हेतु समय-समय पर ऐसे महापुरुषों को जानती है, जिनके माध्यम से संसार को एक नई दिशा प्राप्त होती है। भारत राजनीति में डॉक्टर भीमराव अंबेडकर का बहुत बड़ा योगदान रहा। डॉ भीमराव अंबेडकर के जीवन काल में हमारे जो राजनीतिक नेता थे, वह अनेक प्रकार के और अनेक विचारों के पोषक थे। वह ऐसा युग था, जिसमें हमारे देश में अनेक महापुरुष पैदा किया। बी. आर. अंबेडकर ने न केवल स्वयं सम्मान के साथ अपना जीवन व्यतीत किया। अपित उन्होंने अपने देशवासियों को सम्मानित जीवन की कला सिखाई। वे जिस समाज में जन्म लिए थे तथाकथित उसे नीचा समझा जाता था। वे भारत में चले आ रहे सदियों के शोषण और रूढ़िवादी विचारों को परिवर्तित करने तथा समाज में संविधान के माध्यम से समानता के मानक को स्थापित करने का कार्य किया। यह उनके कुशल नेतृत्व से ही संभव हो सका।

आधुनिक समय में डॉक्टर भीमराव अंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता

डॉक्टर भीमराव अंबेडकर अपने विशाल अध्ययन से प्राप्त ज्ञान के माध्यम से भारत के संविधान के प्रारूप की रचना करके समूचे राष्ट्र को दलदल से निकाल कर एकता का जो मार्ग प्रशस्त किया, वह उनकी योग्यता को ही नहीं दर्शाता है। अपित यह बताता है कि किसी श्रेष्ठ के घर में जन्म लेने या किसी उच्च जाति मैं पैदा होकर ही श्रेष्ठ कार्य नहीं किया जा सकता है। उसे ज्ञान अध्ययन से प्राप्त किया जाता है न की उसे विशेष जाति में पैदा होकर। इसके अतिरिक्त उन्होंने समाज में व्याप्त विभिन्न कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया। तथा सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीति के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। महिला सशक्तिकरण में उनका कार्य उल्लेखनीय है।

डॉ भीमराव अंबेडकर का भारत में सामाजिक चेतन तथा सामाजिक परिवर्तन को जागृत करने में महत्वपूर्ण स्थान रहा रहा है। उन्होंने दलितों को शोषण से बचाने के लिए सबसे पहले उनको उच्च जातियों की तरह अधिकार दिलाना था। जिससे कि निम्न वर्ग के लोग भी उच्च वर्ग के समान सुखप्रद जीवन व्यतीत कर सके। उन्होंने अपने अध्ययन में यह पाया कि कई शताब्दियों से दलितों का शोषण हो रहा है। दलित वर्ग पीढ़ी दर पीढ़ी असामान्य जीवन जीने के लिए बाध्य किए जाते रहे हैं। जिसके कारण उनका जीवन नर्क के समान था। न तो उनके पास आवश्यक संसाधन होते थे न ही जीवन को ऊंचा बनने के लिए उनके पास शिक्षा होती थी। किंतु अब उन्हें यह अधिकार आवश्यक रूप से मिलने चाहिए। जिसके माध्यम से दलित वर्ग अपने जीवन के वास्तविक उद्देश्य और लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। उन्होंने कहा कि अब और अधिक सहन नहीं किया जा सकता। इस कार्य को पूर्ण करने के लिए समाज में समानता और समन्वय का होना अति आवश्यक है। ऐसा होने से ही समाज में खुशी व्याप्त हो सकती है। किसी भी समाज के विकास को केवल एक पहलू से पूरा नहीं किया जा सकता। बल्कि इसके लिए अनेक क्षेत्रों में संयुक्त रूप से कार्य करना आवश्यक होगा। इसी से समाज में समानता आ सकती है। डॉ. भीमराव अंबेडकर सर्वप्रथम समाज से छुआछूत हटाने का निश्चय किया। वे सदैव सार्थक परिवर्तन में विश्वास किया करते थे। इसीलिए उन्होंने संविधान में ऐसे प्रावधान का समावेश करने का सुझाव दिया जिससे कि संवैधानिक प्रक्रिया के माध्यम से उच्च जाति तथा निम्न जाति का अंतर समाप्त हो सके। अनुच्छेद 17

के माध्यम से हमारे संविधान में छुआछूत को निषिद्ध किया गया है। अस्पृश्यता के अंत के माध्यम से हमारे संविधान में छुआछूत को निषिद्ध किया गया। यदि कोई व्यक्ति छुआछूत को बढ़ावा देगा या उल्लंघन करेगा तो उसे कानून के माध्यम से उसपर कार्यवाही की जाएगी। यह उन्हीं के प्रयासों से संभव हो सका।

अपने अध्ययन में डॉक्टर भीमराव अंबेडकर ने यह पाया कि सामाजिक परिदृश्य में महिलाओं की स्थिति सभी जाति, धर्म और वर्गों में निम्न अस्तर पर है। उन्होंने यह पाया कि सभी जातियों में पुरुषों की तरह महिलाओं को स्थान प्राप्त नहीं है। इस संदर्भ में उन्हें व्यापक सुधार की आवश्यकता महसूस हुई। क्योंकि सामाजिक रूढ़ियों के कारण महिलाओं की स्थिति बदतर बनी हुई थी। महिलाओं को पुरुष के समान स्थान प्राप्त नहीं था। समाज में व्याप्त विभिन्न रूढ़ियों के माध्यम से महिलाओं एवं बच्चियों की स्थिति दयनीय थी। उन्हें पुरुष के भांति बहुत से अधिकार नहीं प्राप्त थे। इसलिए महिला वर्ग को समाज में समान अधिकार और सम्मान मिलना अति आवश्यक समझा। अतः हमारे संविधान में इसीलिए मूल अधिकार स्थापित किया गया। जिससे कि सभी नागरिकों को बिना भेदभाव के कुछ अधिकार प्रदान किए गए। संविधान के भाग 3 में जिसमे की पहले सात मूल अधिकार थे लेकिन संपत्ति को अधिकार को अब विधिक अधिकार 300 (क) में प्रतिस्थापित कर अब 6 मौलिक अधिकार प्रदान किए गए हैं। जो अनुच्छेद 12 से लेकर 35 तक है। यह देश के समस्त नागरिकों के लिए बिना भेदभाव के मूल अधिकार प्रदान करता है। मूल अधिकार साधारण सी बात नहीं है इसके माध्यम से महिलाएं अपनी शक्ति का आभास कर सकी।

इसी का परिणाम था कि सन् 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गयी। वे समाज में महिला की हिन दशा को लेकर सदैव विमर्श में रहते थे। महिलाओं के दीन स्थिति सुधारने के लिए वे शिक्षा को आवश्यक समझते थे। डॉक्टर भीमराव अंबेडकर सदैव स्त्री पुरुष समानता का समर्थन किया। यही कारण था कि उन्हे भारत के स्वतंत्रता के पश्चात जब प्रथम विधि मंत्री बनाए गए तो उन्होंने हिंदू कोड बिल संसद में प्रस्तुत कर हिंदू स्त्रियों के लिए न्याय की वकालत किया। इस विधि में उन्होंने व्यापक प्रावधान रखे थे। यह उल्लेखनीय है कि जब वे संसद में हिंदू कोड बिल मसौदे को रोका जाता देख कर उन्होंने मंत्रिमंडल से इस्तीफा देना उचित समझा। इस बिल में लैंगिक समानता की बात तथा उत्तराधिकार विवाह और अर्थव्यवस्था के कानून महिला सशक्तिकरण के लिए था। आज भी हमारे समाज में महिलाओं के लिए दहेज उत्पीड़न संपत्ति का अधिकार न मिलाना पुरुषों के समान शिक्षा न प्राप्त करना तथा लैंगिक भेदभाव आदि जैसी बड़ी समस्याओं से जूझ रही हैं। इस संदर्भ में ध्यान देने योग्य बात यह है कि समान नागरिक संहिता का प्रश्न पुनः उठाया जाने लगा है। इसका व्यापक पैमाने पर विरोध किया गया जबकि डॉक्टर भीमराव अंबेडकर ने समान नागरिक संहिता का प्रबल समर्थन किया था। उन्हीं के प्रयासों से आज महिलाएं अपना अधिकार जानने लगी है। तथा दलदल से निकलकर समाज में अब पुरुषों के साथ पूर्ण नहीं तो आंशिक ही कंधे से कंधा मिलाकर समाज का प्रतिनिधित्व कर रही हैं।

राजनीतिक क्षेत्र में समानता के लिए डॉक्टर भीमराव अंबेडकर ने निरंतर संघर्ष किया। उनके विचार व सिद्धांत भारतीय राजनीति के लिए हमेशा से प्रासंगिक रहे हैं। और आगे भी समाज का मार्गदर्शन करते रहेंगे। वह ऐसी राजनीतिक व्यवस्था के हिमायती थे। जिसमें राज्य सभी को सामान राजनीतिक अवसर प्रदान करें तथा धर्म, लिंग, जाति, रंग आदि के आधार पर भेदभाव निषिद्ध हो। डॉ. भीमराव अंबेडकर का राजनीतिक दर्शन व्यक्ति और समाज के परस्पर संबंधों पर जोर देता। उनका मानना था कि जब तक हमारे समाज से आर्थिक और सामाजिक विषमता समाप्त नहीं हो जाती तब तक सच्चे अर्थों में लोकतंत्र की स्थापना अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सकता। वास्तविक अर्थों

में सामाजिक चेतना के अभाव में लोकतंत्र आत्महीन हो जाता है। जब तक सामाजिक जनतंत्र स्थापित नहीं होता है, तब तक सामाजिक चेतना का विकास भी संभव नहीं हो पता है। इसी प्रकार से डॉक्टर भीमराव अंबेडकर जनतंत्र को एक जीवन पद्धति के रूप में स्वीकार करते हैं। वह व्यक्त की श्रेष्ठता पर बल देते हुए सत्ता के परिवर्तन को साधन मानते हैं। वह कहते हैं कि कुछ संवैधानिक अधिकार देने मात्र से जनतंत्र की जड़े गहरी नहीं हो जाया करती। डॉ. भीमराव अंबेडकर की जनतांत्रिक व्यवस्था कल्पना में नैतिकता और सामाजिकता दो प्रमुख मूल्य रहे हैं। जिसकी प्रासंगिकता वर्तमान समय में बढ़ जाती है। वास्तव में आज राजनीति में जोड़ तोड़ बहुत उच्च्च स्तर पर बढ़ गया है। जिसके कारण राजनीति में नैतिकता के मूल्य का गला घोटकर उनका किसी प्रकार से सत्ता स्थापित हो रही है। सत्ता स्थापित होने से पहले तो राजनीतिक दल बड़ी नैतिकता ईमानदारी तथा सामाजिक एकता की बात करते हैं , किंतु सत्ता प्राप्ति के उपरांत वे आदर्शवादी सिद्धांतों को ताक पर रखकर कार्य करते हैं।

उन्होंने महाड. में जब दलितों के लिए एक सम्मेलन का आयोजन किया तब इस सम्मेलन में सभी आयु वर्ग के लोगों ने हिस्सा लेकर इस सम्मेलन को बृहद आकार दिया। तब डॉक्टर भीमराव अंबेडकर को यह समझ गए कि दलित वर्ग भी अपने अधिकारों को लेकर कितना प्रयत्नशील है। केवल आवश्यकता यह है कि उन्हें संगठित किया जाए। इसी सम्मेलन में उम उन्होंने दलित वर्ग को कहा कि अशिक्षित होना ही उनकी राह का सबसे बड़ा रुकावट है। शिक्षा के अभाव के कारण ही दलित वर्ग शोषण हो रहे हैं। उनका कहना था कि जो लोग ईश्वर को मानते हैं। उनको यह समझना चाहिए कि ईश्वर की दृष्टि में भेदभाव करना या दूसरों को छूने योग्य न समझना अपराध ही नहीं महापाप है। महाड. में उनके द्वारा दिए गए मार्मिक जोशीले एवं विद्युतापूर्ण भाषण से दलितों पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने न केवल दलितों को शिक्षा के लिए प्रेरित किया बल्कि उन्होंने कहा कि शिक्षा के माध्यम से अपने अधिकार को जानों तथा अपने जीवन में उच्च स्तर प्राप्त करने के लिए निरंतर संघर्ष करो। संघर्ष से ही व्यक्ति को कामयाबी मिल सकती है। संगठित रहने का उनके उपदेश बड़ा ही सार्थक था। क्योंकि संगठित होने से अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य और उद्देश्यों को प्राप्त करने में आसानी होती है। उन्होंने अपने समाजशास्त्री आर्थिक चिंतन में कृषि समस्याओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया। वे कृषि की समस्या से भली बात अवगत थे। डॉ. भीमराव अंबेडकर कृषि को जीवन निर्वाह का महत्वपूर्ण कार्य मानते थे। उनके अनुसार कृषि एक प्राचीनतम् उद्यम है। तथा पूर्ण या आंशिक रूप से अन्य उद्यम भी कृषि पर ही आधारित होते हैं। कृषि उत्पादन से संबंधित कृषि क्षेत्र में अनेक समस्याएं होती हैं। जो किसानों को समय-समय पर प्रभावित करती रहती हैं। उन्होंने अनुमान लगाया कि भारत में खेती लायक कितनी जमीन है। तथा उसका 70% भाग बिना जोत का है। केवल 30% भाग पर ही अन्न उपजाए जाते हैं। वह चाहते थे कि इसके लिए अधिक से अधिक भूमिका उपयोग कर लोगों का जीवन सुखमय बनाया जा सके। वे चाहते थे कि किसानों की समस्याएं दूर किया जाए। इसी संदर्भ में उन्होंने मुंबई की काउंसिल में एक विधेयक पेश किया। इससे स्पष्ट होता है कि किसानों के प्रति डॉ. भीमराव अंबेडकर कितने प्रयास रत थे। उन्होंने कृषि से संबंधित मुंबई विधानसभा में खोटि बिल पेश किया। जिसमें राजस्व प्राप्त करने की जो व्यवस्था थी उसी को खोटि व्यवस्था कहा गया था।

इसके अतिरिक्त डॉ भीमराव अंबेडकर ने श्रमिकों के शोषण के विरुद्ध भी समय-समय पर आवाज उठाई। उन्होंने मजदूर वर्ग के कल्याण के लिए उल्लेखनीय कार्य किया। पहले श्रमिक वर्ग को कंपनियों में प्रतिदिन 12 से 14 घंटा तक बिना किसी सुविधा उपलब्ध कराए निरंतर कार्य लिया जाता था। निरंतर बड़े विरोध के बाद यह प्रतिदिन 8 घंटे

के कार्य पर इसका ठहराव हुआ। इससे इतर उनके प्रयासों से मजदूरों के लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम, इंडियन ट्रेड यूनियन अधिनियम तथा मुआवजा आदि से संबंधित सुधार हुए।

भारतीय संविधान के निर्माण में डॉक्टर भीमराव अंबेडकर का स्थान उल्लेखनीय है। भारत के वर्तमान संविधान का निर्माण एक संविधान निर्मात्री सभा द्वारा किया गया। जिसकी स्थापना 1946 में हुई थी। इस संविधान निर्मात्री सभा में कल 389 सदस्य निश्चित किए गए। किंतु कांग्रेस की अधिक सफलता को देखकर मुस्लिम लीग बड़ी निराशा हुई। और संविधान सभा का बहिष्कार करने का निर्णय लिया। मुस्लिम लीग के लगातार पाकिस्तान के मांग के कारण देश को विभाजन का दंस झेलना पड़ा। 9 दिसंबर को संविधान सभा का विधिवत उद्घाटन किया गया। तथा 11 दिसंबर 1946 को डॉ राजेंद्र प्रसाद को संविधान सभा का स्थाई अध्यक्ष चुना गया था। इसके बाद पंडित जवाहरलाल नेहरू ने संविधान सभा के उद्देश्य संबंधित प्रस्ताव पेश किया। संविधान सभा के संवैधानिक सलाहकार बी. एन. राव थे। डॉ. भीमराव अंबेडकर को 6 अन्य सदस्यों के साथ मसौदा समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। इस समिति के द्वारा तैयार किए गए मसौदे पर 15 नवंबर 1948 को संविधान सभा में विचार आरंभ हुआ। तथा मसौदे में संशोधन के लिए 7635 प्रस्ताव पेश किए गए। जिनमें से 2473 पर विचार किया गया। संविधान का तीसरा वचन 14 नवंबर 1949 को आरंभ हुआ। और 26 नवंबर 1949 को डॉक्टर भीमराव अंबेडकर द्वारा संविधान को पारित करने के लिए रखा गया प्रस्ताव संविधान सभा द्वारा पास कर लिया गया। इस पर डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद के हस्ताक्षर किया गया। अंततः भारत का संविधान 2 वर्ष 11 मा 18 दिन में बनकर तैयार हुआ। जिसे 26 जनवरी सन् 1950 को लागू कर दिया गया।

निष्कर्ष

अतः यह कहां जा सकता है कि डॉक्टर भीमराव अंबेडकर एक महान समाज सुधारक, राष्ट्र चिंतक, एक अच्छे अर्थशास्त्री, लेखक उनका पूरा जीवन लोगों के भलाई में बीता। उन्होंने धन से ज्यादा समाज को महत्व दिया। उनके संघर्षों का ही परिणाम है कि आज हम सभी भारतीय मिलकर साथ रहते हैं। उन्होंने एक ऐसे संविधान की रचना में अपना योगदान दिया जिससे सभी भारतीय सम्मान के साथ अपना जीवन व्यतीत करने में सहायक समझते हैं। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किया। जो आदर्श समाज की स्थापना में एक मील का पत्थर साबित हुआ। शिक्षा के से क्षेत्र में जो उन्होंने अलख जगायी। वह निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। उनके असाधारण कार्यों के कारण उन्हें भारत सरकार ने भारत रत्न से विभूषित किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. महर्षि मनु बनाम अंबेडकर- डॉ सुरेंद्र कुमार
2. मेरी कथा दलित यातना संघर्ष और भविष्य - मार्टिन मकवान
3. डॉ बाबासाहेब आंबेडकर व्यक्ति और विचार -किशोर मकवाणा
4. डॉ अंबेडकर का विचार दर्शन- राय गोपाल सिंह
5. डॉ अंबेडकर का मानववादी चिंतन - डॉ आर जाटव
6. बाबा साहब की वाणी- रविंद्र सिंह
7. डॉ बी आर अंबेडकर के विचार और दर्शन- सी डी नाइक
8. डॉ आंबेडकर आर्थिक विचार एवं दर्शन -नरेंद्र जाघव

Mob.no.9911250279 Email.dineshkumar9717@gmail.com, Email.Skrishana51@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 114-118
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

बैसवारा के अमर साहित्यकार जवाहर इंदु : जीवन परिवेश एवं रचनाधर्मिता

डॉ0 आजेन्द्र प्रताप सिंह
असि0 प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
फीरोज गांधी कॉलेज रायबरेली लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

'लालन की भूमि यह वीर बैसवाड़े की,' के सन्दर्भ में मधुकर खरे जी कहते हैं :– ''कभी चमकी कलम तो/कभी चमका दुधारा/धनी है हर विधा में /ये मेरा बैसवारा।''इसी बैसवारे के बहुचर्चित ग्राम जलालपुर धई जनपद रायबरेली (उ0प्र0) में 30 जून 1956 ई0 को एक विरले सृजनधर्मी जवाहर इन्दु जी का जन्म हुआ। माता श्रीमती जगरानी देवी व पिता स्व0 हीरालाल का यह वरद पुत्र गद्य व पद्य में समान आधिकार के साथ अपनी अद्‌भुत मेधाशक्ति के सहारे गीत, गजल, कविता, कहानी उपन्यास, लघुकथा तथा हाइकु आदि विविध विधाओं में देखते ही देखते बैसवारे के बहुचर्चित साहित्यकारों में शुमार हो गये थे। देश के प्रमुख पत्र पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों में नियमित प्रकाशन आपकी साहित्य के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता रहा है। सरिता, नवगीत, आजकल, सानुबंध, केरल ज्योति, अनुगमन, शब्दलता, इन्द्रप्रभा, अग्रगामी, पूर्वावर आदि पत्र–पत्रिकाएं आपकी रचनाओं के बिना अधूरी सी लगती। संकलन एकादश (कविता), प्रतिध्वनि (कविता), कथा बिम्ब, कथा काव्य आदि में आपकी बेजोड़ रचनाएं संकलित हैं। अनवरत साहित्य साधना करते–करते 01 सितम्बर 2008 ई0 में आपका देहावसान हो गया।

सन् 1982 में प्रकाशित साझा कविता संकलन 'प्रतिध्वनि' में अपनी बात में जवाहर इन्दु जी लिखते हैं– ''कविता मेरे लिए मेरे भीतर के आदमी का एक बयान है, जो सहज होकर शब्दों के शिल्प में कागज पर उतर आता है। कविता का संबंध सीधे आज के वातावरण एवं परिवेश से है, जो भोगता हूँ, उसे ही स्पष्ट करना मेरा दायित्व है, बस़................. ।''

इस साझा संकलन के वक्त यानी वर्ष 1982 ई0 में जब इन्दु जी 313 निराला नगर में रहते थे। अंधेरे की ओर दो क्षणिकाएं और समय इसमें आपकी संकलित है। अंधेरे की ओर के यह अंश दृष्टण्य हैं:– ''ढ़िढोरा पीटते रहने/ या कि अन्दर ही अन्दर/सभी कुछ सहते रहने से/मेरे दर्द का अहसास/तुमको नहीं होगा। क्योंकि/रोशनी की चाह तो / सिर्फ अंधेरे को होती है। मैं अंधेरा हूँ/ खोज रहा हूँ रोशनी/ मैं नहीं देख सका/ रोशनी नहीं देख सका/मैं फिर छला गया/इसी लिए वापस/फिर अंधेरे में चला गया।'' दो क्षणिकाएं, ''एक'':– ''जब जब भी छवियाँ/ मेरी आंखों में उभरी/ तब तब यह आभास हुआ है। कि –/ मेरी आँखें झील नहीं सागर है/ जो बहुत गहरी हैं।''2 ''दो'':– ''जहाँ पहुँचना चाहता था। नहीं पहुँच पाया/ और जहाँ नहीं जाना चाहता था/चला गया।/मित्र!यह सच है कि/मै स्वयं ही अपने हाथों छला गया।''[3] 'समय–''समय किसी को काटता नहीं/ बस चलता रहता है/ मौन स्तब्ध जब कोई खिलवाड़ करता है/समय/छोड़ता नहीं/एक खाई की तरह/बीच देकर फिर चल देता है/ समय/कोई रथ नहीं, गाड़ी नहीं/और समय के रूकने का कोई/निश्चित स्टेशन नहीं/समय तो बस एक समझौता है/मन से मन का/आदमी से आदमी

का/और काल से काल का।''4 इस संकलन में इन्दुजी के साहित्यिक सहचर श्री शम्भू दयाल सिंह 'सुधाकर' वर्तमान नाम स्वामी गीतानन्द जी गिरि महाराज बड़ा मठ डलमऊ की दो कविताएं (1) पागल आकाश और (2) कहां से कहां। दादा श्री राम निवास ''पंथी'' की तीन कविताएं– (1) रात (2) सपेरे की आँत और (3) भिखारिन की बोरी तथा दादा राजेन्द्र बहादुर सिंह राजन की दो कविताएं–(1) रूपरेख और (2) तुमने संवारा। भवानी भीख 'हिमाशू' की दो कविताएं (1) चरण मेरे व (2) चीख। दिलबाग सिंह 'अनजान' की दो कविताएं– (1) यात्रा (2) आँख बचा न जाना तथा कमलेश भट्ट 'कमल' की तीन कविताएं–(1) आदमी और पत्थर (2) स्वार्थ की परिधि और (3) आदमी से पत्थर तक खूब चर्चित रहीं हैं।

बैसवारे के लोकप्रिय साहित्यकार जवाहर इन्दु की प्रकाशित कृतियों में प्रमुख हैं–

(1) मछली नाची उछल–उछल (बाल कविता संग्रह) 1988 ई निराला प्रकाशन डलमऊ रायबरेली (उस समय 72 सेक्टर 2 दूरभाष नगर रायरेली मे आप रहते थे।) पुनः 2010 ई में अयन प्रकाशन दिल्ली से यह संकलन प्रकाशित हुआ।

(2) करनी का फल (बाल कहानी संग्रह) 1991 ई0 इन्द्रधनुष प्रकाशन, दिल्ली।

(3) खरा सोना (बाल कहानी संग्रह) 1993 ई0 ललित प्रकाशन शाहदरा, दिल्ली।

(4) इतना कुछ (हाइकु संग्रह) 2000 ई0 अंकुर प्रकाशन, जलालपुर धई, रायबरेली

(5) जिदंगी का नाम (गजल संग्रह) 2001 ई इन्द्रप्रभा प्रकाशन रायबरेली।

(6) एक और कुन्ती (कहानी संग्रह)।

(7) कला का मूल्य (लघुकथा संग्रह) 2010 ई0 अयन प्रकाशन–दिल्ली।

(8) नियति चक्र (उपन्यास) 2011 मरणोपरान्त धर्मपत्नी विमला इन्दु की देख रेख में अयन प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित हुआ।

मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह):– जो कि वर्ष 1990 ई में निराला प्रकाशन मुराईबाग डलमऊ रायबरेली से डलमऊ के पूर्व ब्लाक प्रमुख तथा निराला सस्थान व निराला प्रकाशन के संस्थापक श्रद्धेय राजाराम भारतीय जी से संरक्षण में प्रकाशित हुआ था। प्रस्तुत संकलन के समर्पण में इन्दु जी लिखते है– '' जिनके हँसने से/फूल झरते है। जिनके गलफुल्ले मौन ने सदा/अंतस और मन को गुदगुदाया है। जिनकी तुतलाती बोली ने सारे दिन की थकान को/ घर आते ही उतार फेका है।/जिनके खेलने कूदने/और चहचहाने से/आंगन की गौरैया/फुदकती रहती है। उन्हीं प्यारी बिटिया/प्रतिभा इन्दु/ प्यारे राजा बेटे/आकाश और विकास इन्दु/ सहित सभी बच्चों को/सस्नेह, सप्रेम।''5

इस संकलन के संदर्भ में इन्दु जी के साथी श्री शम्भू दयाल सिंह 'सुधाकर' वर्तमान नाम स्वामी गीतानंद गिरि जी महाराज बड़ा मठ डलमऊ कहते है कि ''मछली नाची उछल उछल कविता का नया अध्याय है। मछली नाची उछल उछल काव्य के अंतरतम को छूने का बड़ा ही सफल प्रयास है।'' (25 जनवरी 1990 रायबरेली)

मछली नाची उछल उछल संग्रह में अपने दो शब्द लिखते हुए इन्दु जी कहते है, ''14 सितम्बर 1986 ई को रचनात्मक संघ द्वारा एक बाल कवि सम्मेलन को सुनकर रात घर वापस आया था। घर आते ही बिटिया ने सबसे छोटे रिंकू की शिकायत की रात भर विस्तर पर लेटा रहा नीद नहीं आयीं रिंकू का अपनी सफाई में तर्क प्रस्तुत करना कौधता रहा– उसी रात कुछ पंक्तियां लिखीं– ''देखो, पापा भइया ने यह / मुझे चिकोटी काटी/डांटो दिन भर खेल रहा था,। गलियारे में माटी।।''6 इन पंक्तियों को पूरा कर लिया हो तो नीदं आयी। सुबह अपने मित्रों को इन्दु जी ने सुनाई तो सबने और लिखने को प्रेरित किया। भाई अजीत आनन्द, प्रमोद शर्मा प्रखर, राजेन्द्र राजन, रामनारायण रमण, राम निवास पंथी, बृजेश त्रिपाठी मधुपर्क आदि प्रमुख रहे। दादा (स्वामी गीतानंद जी महाराज) तो सदैव आपके प्रेरणा स्रोत रहे। कमलेश भट् 'कमल' के प्रति दो शब्द आभार के कहनाा जैसे स्वयं के बारे में कुछ कहना वे मुझसे अलग नहीं, उनसे अलग होने का एहसास मात्र रिक्तत देता हैं। वही श्रेद्धेय डॉ गिरिजा शंकर त्रिवेदी का आशीर्वाद कहते है। कि सदैव मेरे साथ रहा। अग्रज पं0 बालकृष्ण मिश्र डॉ पाण्डेय रामेंन्द्र शम्भू शरण द्विवेदी 'बन्धु' व चक्रधर नलिन की भी आपने सदैव अनुशंसा प्रशंसा की है। (4 मई 1987 72 सेक्टर व दुरभाष नगर रायबरेली)

इस संकलन कीं प्रथम कविता 'अच्छे बच्चे' में इन्दु जी कहते है ''सूर्य निकलते तक मत सोओ। प्रातः उठो और मुंह धोओ। मात–पिता को करो प्रणाम। फिर ईश्वर का गाओं गान।''7 बच्चों ऐसा करो जो काम आपस में जो करते प्यार/नामक दो गीत बच्चों के लिए अत्यंत प्रेरणादायी है।

बंदर मामा बाल कविता दृष्टव्य है–''बंदर मामा सुना रहे थे/सबको नई कहानी/ सज–धज करके आ धमकी तब/वहाँ बंदरिया मामी/देख बंदरिया मामी को/मामा के होश गुड़म भालू/नाना से बोले अब/कहो कहानी तुम/ मामी वापस जाते–2/ सुना गयी यह बात/ मै पिक्चर को चली, देखना/लौटूगी कुछ रात/नाना बोले, देखो कैसा/ आया आज जमाना/मामी रोज सिनेमा देखे/रोटी सेंके मामा।''8

'होगी यही भलाई बाल कविता का बूढ़ा बंदर, वहीं चूं चूं करती है/गौरइया, बच्चों के लिए बेहद संदेशप्रद कविताएं हैं।

एक अतीव महत्वपूर्ण कविता है, ''चूहे को नेता बनने का/नया शौक चर्राया/एक दुकान से राजनीति की/ कुछ किताब ले आया। रट–रट करके याद किया/हर अक्षर अक्षर चाटा/ याद हो गयी जब किताब तो,/ कुतर कुतर कर काटा/चुहिया रानी बन ठन आयी/कर पूरा श्रृंगार बोली प्रियतम अब तो अपने/ घर भी होगी कार/ बड़े मौज से बैठे कार मैं। घूमूँगी मैं दिल्ली/ जमकर मजा चखाऊंगी फिर/क्या कर लेगी बिल्ली।।''9

'चूहिया रानी कविता में चूहिया रानी की मनमानी टेलीफोन नम्बर डायल करना अनजाने में थाने फोन लगना, दरोगा का गुर्राना बेहद मजेदार कविता है। शनिवार बाल कविता में बच्चे शनिवार के आधे दिन की पढ़ाई (हाफ डे) का जश्न और अगले दिन इतवार की पूरी (फुल डे) मस्ती का आनंद लेते हैं, का इन्दु जी ने सुंदर चित्रण किया है। 'सोमवार' अगली कविता में मम्मी की डांट का हास्य, पर संदेशप्रद कविता है।

''बिल्ली और चुहिया फिर अगली कविता 'मेरे गांव बीच है/ताल/भादो में भरता हर साल/ मेढक गाता टर्र–टर्र कर/ मछली नाची उछल–उछल कर/घोंघा मस्त हुआ बेहाल/मेरे गांव बीच है ताल/माटी देकर घर चमकाता/सूरज चंदा को नहलाता/ रोज मछेरा डाले जाल/मेरे गांव बीच है ताल/ कभी बाढ़ जब आ जाती है/धारा डेहरी छू जाती है/कर जाता है बुरा हवाल/मेरे गांव बीच है ताल।।''10

'मेरे गांव बीच है ताल' नामक कविता बड़ी रोचक, मार्मिक व जलालपुर धई गांव की आंचलिकता को अपने में समेटे हुए है। इसी प्रकार 'भूखा स्यार' बाल कविता में इन्दु जी लिखते है–

''एक स्यार गांव में आया/कुत्तों ने उसको दौड़ाया''/ जमा हो गया पूरा टोला।/हुआ हुआ कर फिर वह बोला''/ आया था मै ककड़ी खाने/ भूख लगी थी उसे मिटाने''/ जाने दो अब मत आऊंगा/जंगल में सीधे जाऊंगा/ लेकिन कोई बात न माना/पड़ा स्यार को फिर पछताना/जमकर उसकी हुई पिटाई/नानी उसको तब याद आयी।।''11

इन्दु जी की 'चंदा मामा' कविता में बच्चों का चंदा मामा को बुलाना मम्मी/की खीर का लालच देना/ रामू का टाफी लेकर चंदा मामा को लालच देना/ बाल जगत का अनुपम रूप है।

'टी.वी.' कविता में टी.वी. के माध्यम से बच्चों को जागरूक करने की चेष्टा है। 'मुन्ना और कबूतर' कविता में अपने गांव की आंचलिकता की ओर इन्दु जी का ध्यानाकर्षण है– ''यूकिलिप्टस की फुनगी पर/उड़कर बैठा एक कबूतर/टुकुर टुकुर झांक रहा था। बड़े शिकारी मुन्ना का घर/ छटपट मुन्ना बाहर आया/और गुलेल साथ में लाया।।''12 मुन्ना का अपनी गुलेल से कबूतर को बचाना और बाज का भगाना गौतम बुद्ध के दर्शन को चरितार्थ करता है। ''बुद्धम शरण गच्छामि धम्मं शरणं गच्छामि।''

'गांव हमारे बिजली आई' कविता में जलालपुर धई गांव का चित्रण चित्ताकर्षक है। 'गांव हमारे बिजली आई/नई खुशहाली लायी/दरवाजे पर बल्ब है। जलते घर्र घर्र टयूबबेल है 'चलते जीभर कर फसल उगायी/गांव हमारे बिजली आई/ काका ने टीबी लगवाया/पूरा गांव देखने आया/ एक एक ताके जुम्मन भाई/गांव हमारे बिजली आई/मुन्ना गुड़िया रटें पहाड़ा/ सर्दी गर्मी या हों जाड़ा/अच्छी होने लगी पढ़ाई/गांव हमारे बिजली आयी।''13

इसी प्रकार अगली कविता में इन्दु जी कहते है– ''अरहर अलसी बन ठन आई / घुंघरू बांध छनन छन नाचा धान कुंवार/दूल्हा राजा बना ज्वार मुसकाता है/बन सहिबाला गीत बाजरा गाता है।''14

इसी प्रकार 'आलू ही बारात' कविता में ''आलू दुल्हा राजा बनकर/चला बारात लिए धनिया घर/सहिबाला बन गया टमाटर/लहसुन भी चल पड़ा बराबर/शकरकंद बोले दद्दू जी/कहाँ रह गये कद्दू जी/ गोभी फूल लगाकर आयी/मूली देख–देख शरमायी/अदरख साली मरी लाज से लड़ बैठी सौतन पियाज से।।''15

'आपस में नहीं झगड़ना' कविता ''देखो पापा भइया ने/यह मुझे चिकोटी काटी'' कविता संग्रह के उद्गम स्थल की कविता है।' चन्नू बना मोछन्दर कविता' 'चून्नू मुन्नू' दो बच्चों पर आधारित कविता है।'' बोले पापा चून्नू बेटा/आज लग रहा बंदर/ देखों विमला, देखो कमला/चून्नू बना मोछन्दर कविता के माध्यम से इन्दु ने अपनी धर्मपत्नी विमला इन्दु को चित्रित किया है।

फिर 'दो का पहाड़ा', 'तीन का पहाड़ा', 'चार का पहाड़ा', पाँच का पहाड़ा, 'छः का पहाड़ा', 'सात का पहाड़ा', आठ का पहाड़ा, नौ का पहाड़ा, दस का पहाड़ा, गिनती–पहाड़ा पर आधारित रोचक बाल कविताएं हैं और अतिंम कविता 'सबसे प्यारा भारत देश में भारत देश' की सांस्कृतिक ऐतिहासिक धरोहर को बाल मनोविज्ञान में स्थापित करना इन्दु जी का ध्येय रहा है।

'इतना कुछ' इन्दु जी का प्रसिद्ध हाइकु संग्रह है। अंकुर प्रकाशन जलालपुर धई रायबरेली से वर्ष 2000 ई में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में इन्दुजी ने अपने तमाम साथियों के प्रति आभार प्रकट किया। इन्दु जी लिखते हैं ''तुम न बनों ढलता सूरज जैसा। खोटा है पैसा।''16 वहीं देखिए होली की गुझिया से हाइकु का विषय उठाते हैं और कहते है ''गुझिया नहीं/देश का विकास है। टी0वी फ्रिज में–।''17

'जिंदगी के नाम' वर्ष 2001 में प्रकाशित इन्दु जी का प्रसिद्ध गजल संग्रह है, जो इन्द्रप्रभा प्रकाशन रायबरेली से प्रकाशित हुआ। इसमें मानव मन के द्वन्द्व, उमडन, टूटन व घुटन का चित्रण है। देखिए गजल का एक नमूना–

''इन हादसों के बाद भी बाकी निशान है/खंडहर ही देख करके मुझे इत्मीनान है/उस ओर से आई है/बस्तियों में साजिशे/जिस ओर दूर पर खड़ा ऊँचा मकान है/चेहरे पर बुढ़ापे की शिकन छोटी उम्र में/पूछा किसी ने तो कहा बिटिया जवान है/इंसान को शौक से दफनाइये हुजूर/चिंता नही जब तलक गीता, कुरान है।''18 इस संग्रह में जिंदगी की मिठास व खटास की सार्थक अभिव्यक्ति इन्दु जी ने की है।

डॉ रोहिताश्व अस्थाना हरदोई ने इस संग्रह को आम आदमी की जिंदगी के नाम एक पैगाम कहकर सम्बोधित किया है। संतोष बाजपेई नोएडा ने इसे संवेदना और घटनाओं की चुप्पी के बीच का सेतु कहा है। शिव ओम अम्बर फर्रूखाबाद ने इसे संवेदना के तरल संस्पर्शो से अभिसिक्त अभिव्यक्तियों का दस्तावेज कहा है। शम्भू दयाल सिंह सुधाकर रायबरेली ने जिंदगी के नाम गजल संग्रह को अदालत और न्याय की तलाश माना है। इन्दु की लिखते है– '' चल रही है जिंदगी बस, जिंदगी के नाम पर/ और कटते जा रहे क्षण, जिंदगी के नाम पर।''19 यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति यानी जब जब होय धरम कै हानी/ बाढहि असुर अधम अभिमानी। पर इन्दु जी लिखते है– '' धर्म निष्ठा सत्य का जब चल रहा व्यापार हो/तब धरा लाजिमी है, कृष्ण का अवतार हो।''20

'खरा सोना' इन्दु जी का बाल कहानी संग्रह है, जो 1993 ई में ललित प्रकाशन शाहदरा दिल्ली से प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में पांच बाल कहानियाँ– (1) सुमन दीदी (2) खरा सोना बून्दे बंदर की बात (4) झूठ का फल और (5) लगन संग्रहित है। खरा सोना कहानी प्यारे और न्यारे नाम के दो भाइयों की कहानी है। प्यारे पढ़ा लिखा नही था और प्यारे अपने बेटे की शिक्षा हेतु घर की अगूंठी गिरवी रखता है। अगूंठी खरा सोना है। वहीं न्यारे जो पैसा नहीं दे रहा था वहीं एक सौ साठ रूपये अंगूठी के देकर कहता है घर में पैसे नहीं थे यह किसी और के हैं परंन्तु प्यारे समझ जाता है कि मेरा भाई–न्यारे मेरे साथ छल करता है जबकि मै इसे अपना भाई मानता हूँ प्यारे अपने बेटे मोहन को दौ सौ रूपये देता है और कहता है कि ''बड़ा खरा सोना था तूं भी इसी तरह परीक्षा में खरा उतरना और इतना कहते कहते उसकी आंखो से आंसू छलक पड़े। मोहन को छात्रवृत्ति मिली फिर लोक सेवा आयोग की परीक्षा पास कर वह परगनाधिकारी बना वही न्यारे अपनी नौकरी में रिश्वत लेते पकड़ा गया। उसकी हेकड़ी निकल गयी। भाई से पश्चाताप किया, माफी मांगी। प्यारे ने कहा भाई न्यारे हम भाई–भाई हैं। आपकी वजह से ही मेरा बेटा मोहन परगनाधिकारी बना है। फिर दोनो भाई सबकुछ भूलकर एक हो गये।''21

'एक और कुन्ती' कहानी संग्रह भी इन्दु जी का खूब चर्चित रहा है।

'कला का मूल्य' इन्दु जी का लघुकथा संग्रह है जो अत्यंत लोक प्रसिद्ध है। इन्दु जी लिखते हैं– '' लघु कथा बहुत कुछ दे जाती है। वर्ना लम्बी कहानी पढ़ने का समय यहाँ किसको है।''22

इन्दु जी का 'नियति चक्र' उपन्यास वर्ष 2011 में अंक मरणोपरान्त उनकी धर्मपत्नी विमला इन्दु, पुत्र आकाश–विकास व पुत्री प्रतिभा इन्दु के सौजन्य से अयन प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित हुआ। उपन्यास की बनावट और बुनावट बेजोड़ है। पाठक पात्रों से आन्तरिक सम्बंध स्थापित करते चलते हैं। संप्रेषणीयता इन्दु जी के प्रस्तुत उपन्यास में दिखती है। ग्रामीण अंचल के वर्तमान परिवेश और उसकी आस्थाओं के बदलती हुई जन भावनाओं के साथ स्वीकार किया गया है। गिरिजाशंकर त्रिवेदी कहते हैं कि ''प्रस्तुत उपन्यास की पृष्ठभूमि बताती है कि रायबरेली में डलमऊ होकर बस से अपने गांव जलालपुर धई जा रहे थे। अगली दो पंक्ति छोड़कर तीसरी पंक्ति की सीट पर बैठे थे। अगली सीट पर दो सज्जन आपस में बात कर रहे थे दहेज प्रथा पर। जगतपुर में किसी पंडित घराने की चर्चा थी। वहीं उपन्यास का विषय बना और बड़ी बेबाकी व साफगोई से इन्दु जी ने उपन्यास लिखा 'नियति चक्र'। एक उदाहरण देखें– ''वह ससुरा जिस पत्तल में खा रहा था/उसी मे छेद कर कर रहा था''23

निःसंदेह जवाहर इन्दु जी बैसवारे की माटी में जन्में एक विलक्षण रचनाकार है, जिनका गद्य पद्य पर समान अधिकार है।

सन्दर्भ

1. प्रतिध्वनि (साझा कविता संकलन) सं0 निहाल एवं सुधाकर (साकार प्रकाशन रायबरेली 1982 ई प्र0 संस्करण) प्र0 सं0 52
2. प्रतिध्वनि (साझा कविता संकलन) सं0 निहाल एवं सुधाकर (साकार प्रकाशन रायबरेली 1982 ई प्र0 संस्करण) प्र0 सं0 53
3. प्रतिध्वनि (साझा कविता संकलन) सं0 निहाल एवं सुधाकर (साकार प्रकाशन रायबरेली 1982 ई प्र0 संस्करण) प्र0 सं0 53
4. प्रतिध्वनि (साझा कविता संकलन) सं0 निहाल एवं सुधाकर (साकार प्रकाशन रायबरेली 1982 ई प्र0 संस्करण) प्र0 सं0 53
5. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 समर्पण से
6. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 दो शब्द से
7. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 1
8. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 8
9. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 9
10. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 18
11. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 19
12. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 22
13. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 24
14. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 25
15. मछली नाची उछल उछल (बाल कविता संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0स0 26
16. इतना कुछ (हाइकु संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 3
17. इतना कुछ (हाइकु संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 5
18. जिदंगी के नाम (गजल संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 3
19. जिदंगी के नाम (गजल संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 1
20. जिदंगी के नाम (गजल संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 9
21. खरा सोना (कहानी संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 12–17
22. कला का मूल्य (लघु कथा संग्रह) जवाहर इन्दु पृ0 स0 7
23. नियति चक्र (उपन्यास) जवाहर इन्दु पृ0 स0 भूमिका से

मो0 न0 9005678285 ईमेल–singhajendra92@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 119-123
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Communicative Justice and the Margins : Evaluating Media Accessibility and the Democratic Agency of Persons with Disabilities in India

Dr. Shourya Pratap Singh
Assistant Professor,
(UGC-Net & PhD in Political Science)
Janta Mahavidyalaya Prashikshan Sansthan, Amdahi, Gonda (U.P.)
(Maa Pateshwari University, Balrampur, U.P.)

Abstract

The vitality of a democracy is intrinsically linked to the vibrancy of its public sphere, largely mediated by mass communication. However, the normative democratic discourse in India frequently overlooks the communicative exclusion of marginalized groups, particularly persons with disabilities. This paper examines the intersection of media accessibility, political communication, and democratic participation in contemporary India. By analyzing the gap between formal rights—specifically the Rights of Persons with Disabilities Act, 2016—and the lived realities of accessible information, this study argues that the lack of media accessibility constitutes a profound barrier to political agency. Furthermore, the paper explores the transformative role of higher education—specifically pioneering institutions dedicated to inclusive learning and rehabilitation—in bridging this democratic deficit. Drawing upon the Capability Approach, theories of the public sphere, and contemporary Indian disability studies, the article critically evaluates the challenges posed by the digital divide and inaccessible political discourse. It concludes that true democratic inclusion necessitates a paradigm shift from passive welfare models to active, rights-based communicative justice, empowering persons with disabilities as informed political actors.

Keywords: Communicative Justice, Democratic Participation, Media Accessibility, RPwD Act 2016, Disability Studies, Inclusive Higher Education, Political Agency, Indian Democracy.

1. Introduction

Indian democracy, characterized by its vast demographic complexity and universal adult suffrage, relies heavily on mass media to disseminate information, shape public opinion, and foster political accountability. As the "fourth pillar" of democracy, the media is tasked with facilitating a robust public sphere where citizens can engage in informed deliberation. However, the assumption that this public sphere is universally accessible remains deeply flawed. For persons with disabilities, who constitute approximately 2.1% of the Indian population according to the 2011 census, the mass media often acts as a site of exclusion rather than empowerment.

While recent legislative milestones have anchored the principles of equality, non-discrimination, and full participation in the legal framework, a critical chasm persists between formal inclusion and substantive democratic participation. Political communication in India—ranging from televised electoral debates to digital campaign trails—frequently lacks the necessary accessibility features. This exclusion from the informational ecosystem severely curtails the political agency of persons with disabilities, relegating them to the periphery of the democratic process.

This paper critically analyzes the role of mass media in Indian democracy through the lens of disability and inclusion. To systematically examine this intersection of media accessibility and democratic participation, this study adopts a qualitative analytical methodology. Relying on policy reviews, legal frameworks, and secondary literature across political science, media studies, and disability studies, the paper addresses three primary objectives: evaluating the structural barriers in contemporary political communication, assessing the implementation gap of the RPwD Act (2016) regarding media accessibility, and analyzing the vital role of inclusive higher education institutions in cultivating the political agency of marginalized communities. Ultimately, it seeks to demonstrate how the institutionalization of "communicative justice" is essential for substantive democratic citizenship.

2. Conceptual and Theoretical Framework

To understand the disenfranchisement of persons with disabilities in the informational realm, this paper relies on a dual theoretical framework: Jürgen Habermas's conceptualization of the "Public Sphere," as critiqued by Nancy Fraser, and Amartya Sen's "Capability Approach."

Habermas (1989) posited the public sphere as a domain of social life where public opinion can be formed through rational-critical debate, ideally accessible to all citizens. However, Nancy Fraser (1990) accurately critiqued this bourgeois model, noting that it inherently marginalizes certain groups, forcing them to form "subaltern counterpublics." For persons with disabilities in India, the mainstream public sphere is often impenetrable due to structural and communicative barriers.

To bridge this, Amartya Sen's (1999) Capability Approach provides a robust normative framework. Sen argues that freedom and justice should not be measured merely by formal rights, but by the actual capabilities of individuals to achieve functioning. In the context of political communication, possessing the legal right to vote is a formal freedom; however, if the media landscape does not provide accessible information, the capability to cast an informed vote is severely diminished.

Furthermore, as noted by pioneer scholars of disability studies in India such as Nilika Mehrotra and Anita Ghai, an understanding of disability in the Indian context requires moving away from paternalistic medical or charity models toward acknowledging the socially lived realities, intersectional exclusions, and the necessity of a rights-based framework. Therefore, this paper proposes the concept of Communicative Justice as a prerequisite for democratic participation, demanding that the infrastructure of public discourse be universally designed.

3. Media and Accessibility in India: The Legislative Mandate vs. Digital Paradox

The Indian media landscape has undergone a radical transformation over the last two decades, transitioning from a state-dominated broadcasting model to a hyper-commercialized, digitally saturated environment. To address the historical exclusion of marginalized groups in this space, the state enacted the Rights of Persons with Disabilities (RPwD) Act, 2016, which represents a landmark legislative shift.

Specifically, Section 42 of the RPwD Act mandates that the appropriate government take measures to ensure that all contents available in audio, print, and electronic media are in

an accessible format. It explicitly calls for providing access to electronic media through audio description, sign language interpretation, and closed captioning. Despite this clear statutory mandate, the rapid digitization of news and political communication in India has largely occurred without integrating universal design principles.

3.1. The Visual and Auditory Hegemony in Broadcasting

Indian television news, a primary source of political information, operates on a paradigm of visual and auditory hyper-stimulation. Debates are rapid and highly visual. However, the provision of closed captioning or Indian Sign Language (ISL) interpretation remains glaringly absent from mainstream news channels outside of tokenistic broadcasts. This auditory hegemony excludes the Deaf and hard-of-hearing communities from real-time political discourse.

3.2. Digital Media and Structural Inaccessibility

While news portals and social media platforms have become the new arenas for political campaigns, their structural design frequently marginalizes the visually impaired. Without mandatory Alt-Text or screen-reader-friendly web architecture, these digital artifacts become digital walls. The design of many Indian news applications and even higher education portals frequently fails to comply with the Web Content Accessibility Guidelines (WCAG). A study analyzing Indian open universities revealed that approximately 45% of their websites lack the fundamental accessibility mechanisms required for persons with disabilities to engage with educational and administrative information.

4. Role of Higher Education in Democratic Inclusion

If mass media serves as the macro-level public sphere, higher education institutions function as vital micro-democracies. Universities are critical spaces for socialization, ideological formation, and the cultivation of political agency.

Institutions explicitly dedicated to inclusive education and rehabilitation—such as Dr. Shakuntala Misra National Rehabilitation University (DSMNRU) in Uttar Pradesh—play a vanguard role in this ecosystem. Recognized as the first university of its kind in Asia, DSMNRU is structurally designed to offer accessible and world-class higher education within a completely barrier-free environment. By mandating a 50% horizontal reservation for differently-abled students, it ensures a natively integrated environment. These institutions act as vital incubators for democratic agency by:

- Fostering Peer Networks and Counterpublics: By providing a critical mass of students with diverse disabilities, inclusive universities facilitate the creation of solidarity networks. These networks allow students to articulate shared grievances, formulate political demands, and engage with the broader democratic process.
- Pioneering Accessible Knowledge Production: Inclusive universities lead by example in utilizing and developing accessible media, assistive technologies, and inclusive pedagogy (such as computer labs equipped with JAWS screen-reading software). When students are educated in an environment where information accessibility is the norm, they are conditioned to demand the same from the state and the media.
- Shaping Policy Discourse: Academic research generated within institutions focused on rehabilitation directly informs evidence-based policymaking, bridging the gap between grassroots disability activism and formal political structures.

5. Analysis of Participation of Persons with Disabilities

The political agency of persons with disabilities in India is frequently conceptualized in a restrictive manner, primarily limited to the act of voting. The Election Commission of India (ECI) has made commendable strides in recent years regarding voting logistics. For example, during the 2024 Lok Sabha elections, the ECI promoted the 'Saksham-ECI' app to facilitate

voter registration and wheelchair requests, alongside extending a home voting facility for senior citizens and individuals with a 40% benchmark disability.
However, democratic participation extends far beyond the logistics of casting a ballot on election day.

5.1. The Illusion of Informed Consent

True democratic participation requires informed consent, which is impossible without equitable access to the media ecosystem. Despite logistical improvements at polling booths, a critical analysis of recent elections reveals that political representation and manifesto commitments regarding disability remain deeply limited. When political parties release manifestos that are inaccessible, or frame persons with disabilities purely as beneficiaries of state welfare rather than active political citizens, they implicitly signal that the disabled electorate is not a target audience worthy of ideological persuasion.

5.2. Representation and Media Portrayal

Furthermore, the participation of persons with disabilities is hindered by their portrayal in the media. Media coverage of this demographic remains insufficient and often inappropriate, frequently oscillating between the "medical model" (portraying disability as a tragedy) and "inspiration porn" (objectifying persons with disabilities). These portrayals strip individuals of their complex political and social identities, maintaining societal stereotypes that hinder true social inclusion.

6. Critical Gap Analysis: Policy vs. Practice

The contemporary Indian state operates within a progressive legislative paradigm anchored by the RPwD Act, 2016, which aligns deeply with the United Nations Convention on the Rights of Persons with Disabilities (UNCRPD). However, a critical gap analysis reveals a systemic failure in translating this policy into practice within the media and political communication sectors.

- The Enforcement Deficit: While Section 42 of the RPwD Act, 2016, establishes a clear legal mandate for accessible broadcasting and digital communication, there is a profound lack of enforcement mechanisms. Media conglomerates frequently view accessibility features as a financial burden rather than a democratic obligation.
- Tokenism over Structural Change: Where accessibility measures are implemented, they often suffer from tokenism. Providing a sign language interpreter in a small corner of the screen for highly specific national broadcasts does not constitute equitable access to a 24/7 news cycle.
- The Intersectionality Gap: Policies often treat "disability" as a monolithic category, ignoring the intersectional realities of gender, caste, class, and geography. The digital divide in rural India disproportionately affects persons with disabilities, rendering digital accessibility policies moot for a vast majority.

7. Conclusion and Practical Suggestions

The role of mass media in a democracy is to illuminate the public sphere, yet for millions of Indians with disabilities, this sphere remains partially or entirely obscured. The transition from a paternalistic approach to a rights-based model of disability requires urgent, structural reforms in how political communication is mediated and consumed.
To bridge this gap and foster genuine inclusive democracy, the following practical interventions are necessary:

- Mandatory Broadcast Accessibility: The Ministry of Information and Broadcasting must strictly enforce Section 42 of the RPwD Act, 2016, mandating phased implementation of closed captioning, audio descriptions, and ISL interpretation across all major news channels.

- Digital Accountability: The Election Commission of India should expand its logistical mandates to include "Accessible Campaigns." Political parties must be required to ensure their digital content, manifestos, and social media outreach comply strictly with WCAG guidelines.
- Curriculum Integration in Media Studies: Higher education institutions must integrate modules on accessible media production, digital inclusion, and disability studies. Future media professionals must be trained to view accessibility as a core tenet of journalistic ethics.
- Empowering Specialized Institutions: State and central governments must increase funding and support for pioneering institutions like DSMNRU. By positioning these universities as nodal centers for research in accessible technology and disability rights advocacy, the state can leverage academic expertise to inform public policy.
- Authentic Representation: Media organizations should actively recruit persons with disabilities into newsrooms, editorial boards, and content creation roles to dismantle patronizing narratives.

Ultimately, Indian democracy will only fulfill its constitutional promise of equality when its public discourse is radically inclusive. Ensuring media accessibility is not an act of charity; it is an essential structural fortification of the democratic republic itself.

References

- Census of India. (2011). Data on Disability. Office of the Registrar General & Census Commissioner, India.
- Election Commission of India. (2024). Initiatives for PwD Voters: Saksham ECI and Electoral Accessibility.
- Fraser, N. (1990). Rethinking the Public Sphere: A Contribution to the Critique of Actually Existing Democracy. Social Text, (25/26), 56-80.
- Ghai, A. (2002). Disabled Women: An Excluded Agenda of Indian Feminism. Hypatia, 17(3), 49-66.
- Habermas, J. (1989). The Structural Transformation of the Public Sphere: An Inquiry into a Category of Bourgeois Society. MIT Press.
- Mehrotra, N. (2020). Disability Studies in India: Interdisciplinary Perspectives. Springer Nature.
- Ministry of Law and Justice. (2016). The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016. Government of India.
- Sen, A. (1999). Development as Freedom. Oxford University Press.
- World Wide Web Consortium (W3C). (2018). Web Content Accessibility Guidelines (WCAG) 2.1.

Email: Shouryapps@gmail.com
Mob: 9699365051
Address- H.No 173, Lane-04, Paschim Vihar Colony, Salempur Pataura, Mohan Road, Near Dr. Shakuntala Mishra University, Lucknow-226101, Uttar Pradesh

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 124-128
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

परसाई के व्यंग्य में राजनीतिक-सामाजिक विडम्बनाओं का यथार्थ चित्रण

कुलबीर सिंह
सहायक प्राध्यापक,हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, बहु, झज्जर (हरियाणा)।

सार

हरिशंकर परसाई हिन्दी व्यंग्य साहित्य के ऐसे सशक्त हस्ताक्षर हैं जिन्होंने अपने लेखन के माध्यम से भारतीय समाज और राजनीति की गहरी विसंगतियों को उजागर किया। उनके व्यंग्य में राजनीतिक भ्रष्टाचार, प्रशासनिक अक्षमता, सामाजिक पाखंड तथा नैतिक मूल्यों के क्षरण का यथार्थ चित्रण मिलता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में परसाई की प्रमुख रचनाओं— "भोलाराम का जीव", "सदाचार का ताबीज" तथा "वैष्णव की फिसलन"—के आधार पर राजनीतिक एवं सामाजिक विडम्बनाओं का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि परसाई का व्यंग्य केवल हास्य नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना और आलोचनात्मक दृष्टि का सशक्त माध्यम है।

प्रस्तावना

हिन्दी व्यंग्य साहित्य का मूल उद्देश्य समाज और राजनीति की विसंगतियों को उजागर करना है। इस दृष्टि से हरिशंकर परसाई का साहित्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने अपने व्यंग्य के माध्यम से न केवल सामाजिक कुरीतियों को उजागर किया, बल्कि राजनीतिक व्यवस्था की कमजोरियों पर भी तीखा प्रहार किया।

स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में जिस प्रकार राजनीतिक आदर्शों का ह्रास हुआ, वह परसाई के व्यंग्य का प्रमुख विषय बन गया। उन्होंने दिखाया कि किस प्रकार सत्ता, नैतिकता और जनहित के नाम पर केवल आडंबर किया जा रहा है।जैसा कि एक स्थान पर उनके द्वारा कहा गया है कि —**"राजनीति अब सेवा नहीं, साधन बन गई है।"**[1]यह कथन हरिशंकर जी के व्यंग्य की मूल संवेदना को व्यक्त करता है।

राजनीतिक विडम्बनाओं का स्वरूप

परसाई के व्यंग्य में राजनीतिक विडम्बनाएँ अनेक रूपों में सामने आती हैं जैसे भ्रष्टाचार,सत्ता का दुरुपयोग,जनहित की उपेक्षा,नैतिकता का अभाव आदि परसाई जी ने इन सभी तत्वों को अत्यंत यथार्थ रूप में प्रस्तुत

किया है।वे लिखते हैं—**"नेता जनता के सेवक नहीं, स्वामी बन बैठे हैं।"**[2]यह कथन उस विडम्बना को उजागर करता है जिसमें लोकतंत्र का मूल भाव ही विकृत हो गया है।

"भोलाराम का जीव" में प्रशासनिक विडम्बना

"भोला राम का जीव" भारतीय प्रशासनिक तंत्र की जटिलताओं, असंवेदनशीलता और विडम्बनाओं पर तीखा प्रहार करती है। इस कथा के माध्यम से परसाई यह दिखाते हैं कि किस प्रकार आम आदमी सरकारी मशीनरी के चक्रव्यूह में फँसकर अपनी पहचान तक खो देता है।कहानी का केंद्र बिंदु भोला राम नामक एक साधारण व्यक्ति है, जिसकी मृत्यु के बाद उसका "जीव" यमलोक में पहुँचता है, परंतु वहाँ भी उसका रिकॉर्ड नहीं मिलता। यहीं से प्रशासनिक विडम्बना का व्यंग्यात्मक चित्रण शुरू होता है। यमलोक जैसे दिव्य और व्यवस्थित माने जाने वाले स्थान में भी वही लापरवाही, फाइलों का गायब होना और जिम्मेदारी से बचने की प्रवृत्ति दिखाई जाती है, जो धरती के सरकारी दफ्तरों में आम है।

परसाई यह संकेत देते हैं कि प्रशासन में व्यक्ति की पहचान उसकी वास्तविकता से नहीं, बल्कि कागजी दस्तावेजों से होती है। भोला राम का जीव इसलिए संकट में पड़ जाता है क्योंकि उसका नाम और विवरण फाइलों में दर्ज नहीं है। यह स्थिति बताती है कि यदि कोई व्यक्ति सरकारी रिकॉर्ड में मौजूद नहीं है, तो उसका अस्तित्व ही संदिग्ध हो जाता है। यह एक गहरी विडम्बना है कि जीवित या मृत व्यक्ति की सच्चाई से अधिक महत्व कागजी औपचारिकताओं को दिया जाता है।इसके अतिरिक्त, कहानी में दिखाया गया है कि कैसे अधिकारी अपनी जिम्मेदारी से बचने के लिए एक-दूसरे पर दोष डालते हैं। कोई भी समस्या का समाधान करने के बजाय उसे टालने में अधिक रुचि रखता है। यह प्रवृत्ति भारतीय प्रशासनिक तंत्र की एक बड़ी कमजोरी को उजागर करती है, जहाँ कार्यकुशलता के स्थान पर उदासीनता और टालमटोल हावी रहती है।

भोला राम का जीव अंततः भटकता रहता है, जो इस बात का प्रतीक है कि आम आदमी प्रशासनिक लापरवाही के कारण न्याय और पहचान से वंचित रह जाता है। यह केवल एक व्यक्ति की कहानी नहीं, बल्कि पूरे समाज की स्थिति का प्रतिनिधित्व है, जहाँ आम नागरिक अक्सर व्यवस्था की खामियों का शिकार बनता है।इस प्रकार, "भोला राम का जीव" में परसाई ने व्यंग्य के माध्यम से प्रशासनिक तंत्र की अमानवीयता, जटिलता और विडम्बना को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। यह रचना हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि क्या हमारा प्रशासन वास्तव में जनता की सेवा के लिए है, या केवल कागजी प्रक्रियाओं का जाल बनकर रह गया है।

परसाई लिखते हैं—**"यहाँ आदमी नहीं, उसकी फाइल चलती है।"**[3]यह कथन प्रशासनिक तंत्र की संवेदनहीनता और जटिलता को उजागर करता है।यह विडम्बना केवल एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि पूरे समाज की समस्या है, जहाँ आम आदमी व्यवस्था के सामने असहाय हो जाता है।

"सदाचार का ताबीज" में नैतिकता का पाखंड

हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचना "सदाचार का ताबीज" समाज में व्याप्त नैतिकता के दिखावे और उसके पाखंड पर तीखा प्रहार करती है। इस रचना में परसाई यह उजागर करते हैं कि नैतिकता अब आचरण का स्वाभाविक गुण न होकर एक बाहरी आवरण बन गई है, जिसे लोग अपनी सुविधानुसार ओढ़ते और उतारते रहते हैं।कहानी में "ताबीज" एक प्रतीक के रूप में उभरता है। यह ताबीज सदाचार का नहीं, बल्कि सदाचार के नाम पर चल रहे छल और

ढोंग का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति इसे धारण करके स्वयं को नैतिक घोषित कर देता है, जबकि उसके व्यवहार में कोई वास्तविक परिवर्तन नहीं आता। इस प्रकार परसाई यह संकेत देते हैं कि समाज में नैतिकता का मूल्य अब आंतरिक नहीं, बल्कि प्रदर्शन तक सीमित हो गया है।

रचना में दिखाया गया है कि कैसे लोग अपनी गलतियों और अनैतिक कार्यों को छिपाने के लिए सदाचार का मुखौटा पहनते हैं। वे अपने स्वार्थों की पूर्ति करते हुए भी खुद को नैतिक सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। यह स्थिति उस दोहरे मापदंड को उजागर करती है, जहाँ व्यक्ति दूसरों के लिए कठोर नैतिक नियम बनाता है, लेकिन स्वयं उन नियमों का पालन नहीं करता। इस प्रकार नैतिकता एक साधन बन जाती है, जिसका उपयोग केवल दूसरों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है।परसाई इस प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं—**"सदाचार का ताबीज पहन लेने से आदमी सदाचारी नहीं हो जाता।"**[4] परसाई यह भी स्पष्ट करते हैं कि यह पाखंड केवल व्यक्तिगत स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक और संस्थागत स्तर पर भी व्याप्त है। समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान पाने के लिए लोग सदाचार का दिखावा करते हैं, जबकि भीतर से वे उसी व्यवस्था का हिस्सा होते हैं, जो अनैतिकता को बढ़ावा देती है। यह विडम्बना दर्शाती है कि नैतिकता का वास्तविक उद्देश्य कहीं खो गया है और उसकी जगह केवल औपचारिकता और आडंबर ने ले ली है।

अंततः, "सदाचार का ताबीज" यह संदेश देता है कि सच्ची नैतिकता किसी ताबीज या बाहरी प्रतीक से नहीं आती, बल्कि वह व्यक्ति के आचरण, विचार और व्यवहार में झलकती है। परसाई का यह व्यंग्य हमें आत्ममंथन के लिए प्रेरित करता है कि कहीं हम भी तो सदाचार के नाम पर केवल दिखावा तो नहीं कर रहे।

"वैष्णव की फिसलन" में धार्मिक और सामाजिक विडम्बना

हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचना "वैष्णव की फिसलन" धार्मिक आडंबर और सामाजिक पाखंड की गहरी विडम्बनाओं को उजागर करती है। इस कथा में परसाई ने एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण किया है, जो स्वयं को वैष्णव—अर्थात् उच्च नैतिक और धार्मिक आदर्शों का पालन करने वाला—बताता है, परंतु व्यवहार में वह इन आदर्शों से बार-बार "फिसलता" रहता है।"फिसलन" यहाँ केवल एक शारीरिक क्रिया नहीं, बल्कि नैतिक पतन का प्रतीक है। पात्र बाहर से धर्मपरायण दिखाई देता है—वह नियमों, व्रतों और आचारों का दिखावटी पालन करता है—लेकिन भीतर से उसकी इच्छाएँ, लालसाएँ और स्वार्थ उसे बार-बार अनैतिकता की ओर ले जाते हैं। इस प्रकार परसाई यह संकेत करते हैं कि धार्मिक पहचान का दावा करना आसान है, किंतु उसे व्यवहार में उतारना कठिन।

रचना में धार्मिक विडम्बना इस रूप में सामने आती है कि धर्म, जो व्यक्ति को संयम, सत्य और करुणा की ओर ले जाना चाहिए, वही यहाँ दिखावे और प्रतिष्ठा का साधन बन जाता है। वैष्णव पात्र अपने धार्मिक होने का प्रदर्शन करता है, ताकि समाज में सम्मान प्राप्त कर सके। लेकिन जब निजी स्वार्थ या प्रलोभन सामने आते हैं, तो वही व्यक्ति अपने सिद्धांतों से समझौता कर लेता है। इससे स्पष्ट होता है कि उसकी धार्मिकता गहराई में नहीं, केवल सतही है।

सामाजिक विडम्बना भी इसी के साथ जुड़ी हुई है। समाज ऐसे लोगों को उनके बाहरी आचरण के आधार पर आदर्श मान लेता है, बिना यह देखे कि उनके भीतर क्या चल रहा है। इस प्रकार समाज भी इस पाखंड को बढ़ावा देता है। लोग सच्चे आचरण की अपेक्षा बाहरी प्रतीकों—जैसे वेशभूषा, भाषा और धार्मिक अनुष्ठानों—को अधिक महत्व देने लगते हैं।परसाई लिखते हैं—**"धर्म का नाम लेकर लोग अधर्म करते हैं।"**[5]परसाई का व्यंग्य यह बताता है कि जब

धर्म केवल प्रदर्शन तक सीमित हो जाता है, तब वह अपने मूल उद्देश्य से भटक जाता है। "वैष्णव की फिसलन" हमें यह सोचने के लिए विवश करती है कि सच्ची धार्मिकता आत्मसंयम और ईमानदारी में है, न कि दिखावे में।

अंततः, यह रचना धार्मिक और सामाजिक दोनों स्तरों पर मौजूद उस विरोधाभास को उजागर करती है, जहाँ आदर्शों की बात तो की जाती है, पर उनका पालन नहीं होता। परसाई ने सरल भाषा और तीखे व्यंग्य के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि जब तक आचरण और विचार में एकरूपता नहीं आती, तब तक धर्म और नैतिकता केवल पाखंड बनकर रह जाते हैं।

सामाजिक विडम्बनाएँ और मध्यमवर्ग

परसाई के व्यंग्य में मध्यमवर्गीय समाज की विडम्बनाएँ भी प्रमुखता से सामने आती हैं।

यह वर्ग—नैतिकता की बात करता है,परंतु व्यवहार में समझौता करता है। परसाई इस स्थिति पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं—**"हम नैतिकता का पाठ पढ़ाते हैं और अनैतिकता में जीते हैं।"**[6]यह कथन मध्यमवर्गीय समाज के पाखंड को उजागर करता है।

व्यंग्य का सामाजिक उद्देश्य

परसाई का व्यंग्य केवल आलोचना नहीं है, बल्कि वह समाज को जागरूक करने का माध्यम भी है।

उनकी रचनाएँ पाठक को यह सोचने के लिए विवश करती हैं कि—

क्या हम वास्तव में नैतिक हैं?

क्या हमारी राजनीति जनहित में काम कर रही है?

क्या हमारी कथनी और करनी में अंतर है?

इस प्रकार उनका व्यंग्य सामाजिक चेतना को जागृत करता है।

समकालीन संदर्भ में प्रासंगिकता

आज के समय में भी राजनीतिक और सामाजिक विडम्बनाएँ समाप्त नहीं हुई हैं।

भ्रष्टाचार,सत्ता का दुरुपयोग, नैतिक मूल्यों का ह्रास,धार्मिक पाखंड, भाई-भतीजावाद

ये सभी समस्याएँ आज भी मौजूद हैं।

इस दृष्टि से परसाई का साहित्य आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि हरिशंकर परसाई ने अपने व्यंग्य साहित्य के माध्यम से राजनीतिक और सामाजिक विडम्बनाओं का अत्यंत यथार्थ चित्रण किया है।उनकी रचनाएँ यह दर्शाती हैं कि समाज और राजनीति में व्याप्त विसंगतियाँ केवल बाहरी नहीं, बल्कि व्यक्ति की मानसिकता से भी जुड़ी हुई हैं।परसाई का व्यंग्य हमें आत्मचिंतन के लिए प्रेरित करता है और यह संदेश देता है कि केवल आलोचना पर्याप्त नहीं, बल्कि परिवर्तन के लिए प्रयास भी आवश्यक है।

अतः कहा जा सकता है कि परसाई का व्यंग्य आज भी समाज के लिए उतना ही प्रासंगिक और उपयोगी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची_

1. हरिशंकर परसाई, सदाचार का ताबीज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 22
2. वही, पृ. 25
3. हरिशंकर परसाई, भोलाराम का जीव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 52
4. हरिशंकर परसाई, सदाचार का ताबीज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,2006,पृ. 28
5. हरिशंकर परसाई, वैष्णव की फिसलन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृ. 40
6. वही, पृ. 44

मोबाइल नं_ 7988422425
ई.मेल_ Kulbir8464@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 129-133
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

सततता के लिए उच्च शिक्षा
(Higher Education for Sustainability)

Dr. Archana Mishra
(Assistant Professor),
Gorakh Singh College (Education Department) Maharajganj, Siwan

सारांश

सततता के लिए उच्च शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों में पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक जिम्मेदारियों के प्रति जागरूकता विकसित करना है, ताकि वे वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के हितों की रक्षा कर सकें। यह शिक्षा केवल ज्ञान तक सीमित नहीं रहती, बल्कि व्यवहार, कौशल और मूल्यों में भी परिवर्तन लाने पर जोर देती है।

उच्च शिक्षा संस्थान सतत विकास के सिद्धांतों को पाठ्यक्रम, अनुसंधान और परिसर प्रबंधन में शामिल करके छात्रों को जिम्मेदार नागरिक बनने के लिए प्रेरित करते हैं। इसमें जलवायु परिवर्तन, संसाधनों का संरक्षण, सामाजिक समानता और आर्थिक संतुलन जैसे विषयों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

इस प्रकार, सततता के लिए उच्च शिक्षा न केवल व्यक्तिगत विकास में सहायक होती है, बल्कि समाज और पर्यावरण के समग्र कल्याण के लिए भी एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है।

मुख्य शब्द- सततता, उच्च शिक्षा, पाठ्यक्रम, छात्र, शिक्षक, जलवायु।

1. भूमिका

इक्कीसवीं सदी में मानव समाज के सामने सबसे बड़ी चुनौतियाँ—जलवायु परिवर्तन, संसाधनों का क्षरण, सामाजिक असमानता, और आर्थिक अस्थिरता—सीधे तौर पर विकास की वर्तमान प्रवृत्तियों से जुड़ी हैं। इन चुनौतियों का समाधान केवल तकनीकी या आर्थिक उपायों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो मानव को प्रकृति, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन स्थापित करना सिखाए। इस संदर्भ में सततता के लिए उच्च शिक्षा (Higher Education for Sustainability – HES) की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है।

उच्च शिक्षा न केवल ज्ञान के सृजन और प्रसार का केंद्र है, बल्कि यह भावी नीति-निर्माताओं, शिक्षकों, वैज्ञानिकों, उद्योगपतियों और नागरिकों का निर्माण भी करती है। अतः यदि उच्च शिक्षा सतत विकास के मूल्यों से जुड़ जाए, तो समाज में दीर्घकालिक सकारात्मक परिवर्तन संभव है।

2. सतत विकास की अवधारणा

सतत विकास का अर्थ- ऐसा विकास जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता न करे। यह अवधारणा तीन प्रमुख स्तंभों पर
आधारित है:

1. पर्यावरणीय सततता – प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, जैव विविधता की रक्षा।
2. सामाजिक सततता – सामाजिक न्याय, समानता, समावेशन और मानव गरिमा।
3. आर्थिक सततता – दीर्घकालिक आर्थिक स्थिरता और जिम्मेदार उपभोग।

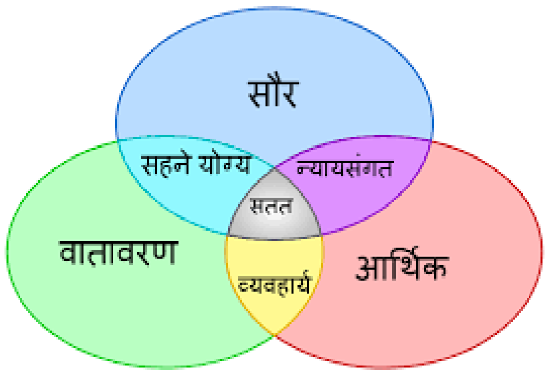

उच्च शिक्षा संस्थानों का दायित्व है कि वे इन तीनों आयामों को अपने पाठ्यक्रम, शोध और विस्तार गतिविधियों में समाहित करें।

3. उच्च शिक्षा और सततता का संबंध

उच्च शिक्षा और सततता का संबंध बहुआयामी है। विश्वविद्यालय केवल डिग्री प्रदान करने वाले संस्थान नहीं हैं, बल्कि वे विचार, नवाचार और सामाजिक परिवर्तन के केंद्र भी हैं। सततता के लिए उच्च शिक्षा निम्नलिखित रूपों में योगदान देती है:

- छात्रों में आलोचनात्मक चिंतन और समस्या समाधान क्षमता का विकास।
- पर्यावरणीय और सामाजिक मुद्दों के प्रति जागरूकता।
- स्थानीय और वैश्विक समस्याओं के समाधान हेतु अनुसंधान।
- सतत जीवन शैली और जिम्मेदार नागरिकता का निर्माण।
- पाठ्यक्रम एकीकरण: स्थिरता को पाठ्यक्रम का केंद्रीय हिस्सा बनाया जाता है, जिससे छात्र हर क्षेत्र में स्थिरता के महत्व को समझ सकें।

4. पाठ्यक्रम में सततता का समावेशन

सततता के लिए उच्च शिक्षा का एक प्रमुख आधार पाठ्यक्रम है। इसके अंतर्गत:

- सभी विषयों में सतत विकास से जुड़े तत्वों को शामिल किया जाना चाहिए।

- बहुविषयक (Interdisciplinary) और अंतर्विषयक (Transdisciplinary) दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए।
- पर्यावरण अध्ययन, जलवायु परिवर्तन, नवीकरणीय ऊर्जा, सामाजिक न्याय और नैतिकता जैसे विषयों को अनिवार्य या वैकल्पिक पाठ्यक्रम के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
- सक्रिय और अनुभवात्मक शिक्षा**:** समस्या-आधारित शिक्षा, केस स्टडी, और समूह परियोजनाओं के माध्यम से छात्रों को सक्रिय रूप से शामिल करना।
- विविध दृष्टिकोण: सभी छात्रों (विकलांग, अल्पसंख्यक आदि) के अनुभवों और दृष्टिकोणों को महत्व देना और पाठ्यक्रम में उनका प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना।

इस प्रकार का पाठ्यक्रम छात्रों को केवल ज्ञान ही नहीं, बल्कि व्यवहारिक समाधान खोजने के लिए भी प्रेरित करता है।

5. शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में नवाचार

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में नवाचार सीखने-सिखाने के पारंपरिक तरीकों को बदलकर नई, सरल और प्रभावी तकनीकों का उपयोग करना है। जिससे छात्र-केंद्रित, आकर्षक और व्यावहारिक शिक्षा मिल सके। सततता के लिए शिक्षा में पारंपरिक व्याख्यान पद्धति के स्थान पर सहभागितामूलक और अनुभवात्मक शिक्षण पर बल दिया जाता है, जैसे:

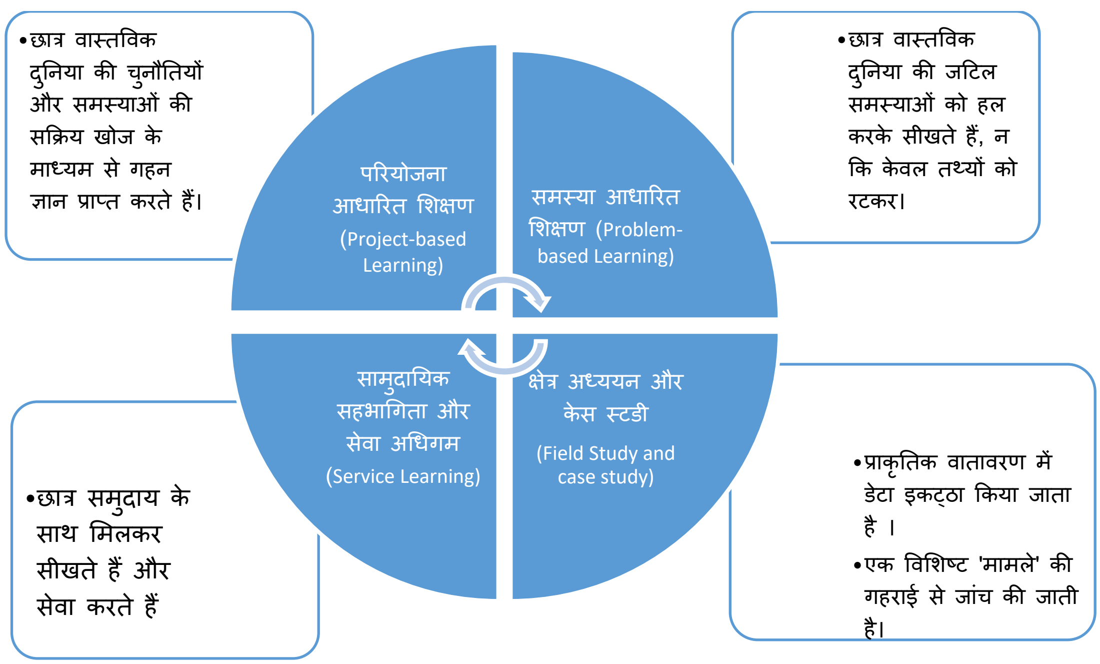

6. अनुसंधान और नवाचार की भूमिका

उच्च शिक्षा संस्थानों में होने वाला अनुसंधान सतत विकास की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है। सततता उन्मुख अनुसंधान के प्रमुख क्षेत्र हैं:

- नवीकरणीय ऊर्जा और स्वच्छ प्रौद्योगिकी
- जल, भूमि और वन संसाधन प्रबंधन

- सतत कृषि और खाद्य सुरक्षा
- सामाजिक समावेशन और गरीबी उन्मूलन

7. परिसर (Campus) में सततता की पहल

उच्च शिक्षा संस्थान स्वयं को एक जीवंत प्रयोगशाला (Living Laboratory) के रूप में विकसित कर सकते हैं। इसके लिए:

- हरित परिसर (Green Campus) का विकास
- ऊर्जा और जल संरक्षण
- कचरा प्रबंधन और पुनर्चक्रण
- प्लास्टिक मुक्त परिसर

8. शिक्षकों और नेतृत्व की भूमिका

सततता के लिए उच्च शिक्षा में शिक्षकों और संस्थागत नेतृत्व की भूमिका निर्णायक होती है। शिक्षक न केवल ज्ञानदाता हैं बल्कि मूल्य और दृष्टिकोण के निर्माणकर्ता भी हैं। इसके लिए आवश्यक है:

- शिक्षकों का सतत विकास और प्रशिक्षण
- नेतृत्व में दूरदृष्टि और सामाजिक उत्तरदायित्व
- नीतियों और निर्णयों में सततता को प्राथमिकता
- शासन और जवाबदेही: यह सुनिश्चित करता है कि AI जैसे उपकरणों सहित सभी प्रक्रियाओं में नैतिक और जिम्मेदार उपयोग के लिए मजबूत शासन और जवाबदेही ढांचे हों।

9. भारत में सततता के लिए उच्च शिक्षा

भारत में नई शिक्षा नीति (NEP 2020) सतत विकास, बहुविषयक शिक्षा और भारतीय ज्ञान परंपरा पर विशेष बल देती है। विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में:

- पर्यावरण अध्ययन को अनिवार्य बनाया गया है।
- कौशल विकास और स्थानीय समस्याओं से जुड़ी शिक्षा को बढ़ावा दिया गया है।
- सामुदायिक सहभागिता और सामाजिक उत्तरदायित्व पर जोर दिया गया है।
- सततता और हरित प्रौद्योगिकियों पर केंद्रित अनुसंधान को बढ़ावा दिया जा रहा है (जैसे अमृता विश्व विद्यापीठम, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी)।
- गिफ्ट सिटी जैसे स्थानों में अंतर्राष्ट्रीय परिसरों की स्थापना से वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं और शिक्षा को भारत लाया जा रहा है।

10. चुनौतियाँ और समाधान

सततता के लिए उच्च शिक्षा के मार्ग में कई चुनौतियाँ हैं, जैसे:

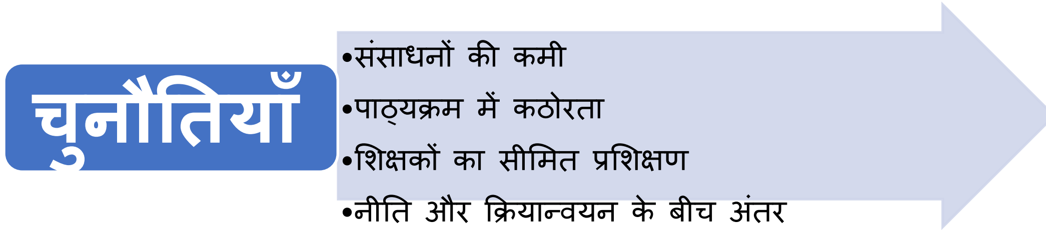

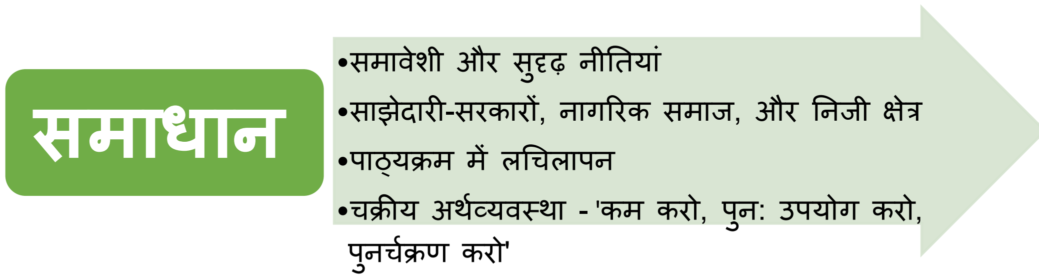

इनका समाधान संस्थागत सहयोग, नीति समर्थन, शिक्षक प्रशिक्षण और नवाचार के माध्यम से किया जा सकता है।

11. निष्कर्ष

सततता के लिए उच्च शिक्षा केवल एक शैक्षणिक अवधारणा नहीं, बल्कि मानव और प्रकृति के भविष्य को सुरक्षित करने की एक अनिवार्य रणनीति है। यदि उच्च शिक्षा संस्थान ज्ञान, मूल्य और क्रिया—तीनों स्तरों पर सततता को अपनाएँ, तो वे एक ऐसे समाज के निर्माण में योगदान दे सकते हैं जो न्यायपूर्ण, समावेशी और पर्यावरण के प्रति उत्तरदायी हो।

अतः यह कहा जा सकता है कि सतत विकास का मार्ग उच्च शिक्षा से होकर गुजरता है, और इस मार्ग पर चलना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

12. संदर्भ ग्रंथ (References)

1. ब्रुंटलैंड आयोग रिपोर्ट (1987). Our Common Future. Oxford University Press.
2. Tilbury, D. & Wortman, D. (2004). Engaging People in Sustainability. IUCN Publications
3. संयुक्त राष्ट्र (2015). Transforming Our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development.
4. यूनेस्को (2017). Education for Sustainable Development Goals: Learning Objectives. Paris: UNESCO.
5. शर्मा, आर. ए. (2018). शिक्षा और सतत विकास. नई दिल्ली: राधा प्रकाशन.
6. कुमार, एस. एवं वर्मा, पी. (2019). उच्च शिक्षा में नवाचार और गुणवत्ता. नई दिल्ली: केन पब्लिकेशन.
7. यूनेस्को (2020). Education for Sustainable Development: A Roadmap. Paris: UNESCO.
8. भारतीय सरकार (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 134-139
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

जसिंता केरकेट्टा की काव्ययात्रा : संघर्ष, पर्यावरण और आदिवासी अस्मिता

राहुल कुमार मीना
शोधार्थी,
दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध सार- समकालीन हिंदी साहित्य में जसिंता केरकेट्टा एक महत्वपूर्ण आदिवासी स्वर के रूप में उभरती हैं, जिनकी कविताएँ आदिवासी समुदाय के जीवन-संघर्ष, प्रकृति-संबंध और सांस्कृतिक अस्मिता को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करती हैं। उनकी काव्य-यात्रा व्यक्तिगत अनुभवों से प्रारंभ होकर सामाजिक, राजनीतिक और पर्यावरणीय सरोकारों तक विस्तृत होती है। 'अंगोर', 'जड़ों की ज़मीन', 'ईश्वर और बाज़ार' तथा 'प्रेम में पेड़ होना' जैसे संग्रह उनके रचनात्मक विकास के प्रमुख पड़ाव हैं।

यह शोध-पत्र उनके काव्य को तीन प्रमुख आयामों—संघर्ष एवं प्रतिरोध, पर्यावरण चेतना और आदिवासी अस्मिता के आधार पर विश्लेषित करता है। उनकी कविताएँ विकास के नाम पर हो रहे विस्थापन, शोषण और बाज़ारवादी ताकतों की आलोचना करती हैं, साथ ही प्रकृति के साथ आदिवासी समुदाय के जीवंत संबंध को रेखांकित करती हैं। शोध का निष्कर्ष यह स्थापित करता है कि जसिंता का काव्य न केवल हाशिये के समाज की पीड़ा और प्रतिरोध का दस्तावेज़ है, बल्कि एक वैकल्पिक और मानवीय सौंदर्यबोध का भी सृजना करता है।

बीज शब्द- अस्मिता, संघर्ष, प्रतिरोध, प्रकृति, विस्थापन, शोषण, बाज़ारवाद, राष्ट्रवाद, मातृभाषा

शोध प्रविधि- अनुसंधान की सामाजिक पद्धति के साथ साथ विश्लेषणात्मक, गुणात्मक, व्याख्यात्मक

प्रस्तावना- समकालीन हिंदी कविता में आदिवासी विमर्श ने हाल के वर्षों में एक सशक्त और स्वतंत्र पहचान बनाई है। इसी परिप्रेक्ष्य में जसिंता केरकेट्टा का काव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। झारखंड के उरांव समुदाय से आने वाली जसिंता ने बहुत कम उम्र में लेखन आरंभ किया और उनकी पहली रचना 1999 में 'राही' पत्रिका में प्रकाशित हुई। इसके बाद उनकी कविताएँ 'नया ज्ञानोदय' और 'परिचय' जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं, जिससे उन्हें व्यापक साहित्यिक पहचान मिली। उनका पहला द्विभाषी काव्य-संग्रह 'अंगोर' (2016) उनके लेखन का महत्वपूर्ण आरंभिक पड़ाव है, जिसके बाद प्रकाशित संग्रहों ने उनके वैचारिक और संवेदनात्मक विस्तार को और अधिक सशक्त बनाया। जसिंता की कविताएँ केवल व्यक्तिगत भावनाओं तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि वे सामाजिक अन्याय, राजनीतिक

संरचनाओं और पर्यावरणीय संकटों पर गहन प्रश्न उठाती हैं। विशेष रूप से, उनके काव्य में आदिवासी जीवन-दृष्टि का एक वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य उभरता है, जिसमें प्रकृति को उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि जीवन-सहचर के रूप में देखा गया है। उनकी रचनाएँ यह भी दर्शाती हैं कि किस प्रकार आधुनिक विकास की अवधारणाएँ आदिवासी समाज के अस्तित्व, संस्कृति और भाषा के लिए चुनौती बनती जा रही हैं। इस पृष्ठभूमि में जसिंता केरकेट्टा के काव्य को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि उनकी रचनाएँ आदिवासी जीवन के उन पक्षों को सामने लाती हैं, जिन्हें मुख्यधारा के विमर्श अक्सर नजरअंदाज कर देते हैं। विशेष रूप से, उनका काव्य आदिवासी समाज के ऐतिहासिक अनुभवों और वर्तमान परिस्थितियों के बीच एक सेतु का कार्य करता है।

संघर्ष और प्रतिरोध का स्वर- आदिवासी समाज के जीवन में संघर्ष कोई नई घटना नहीं है बल्कि उसमें ऐतिहासिक निरंतरता है। उपनिवेशवादी शासन से लेकर स्वतंत्र भारत के तथाकथित विकास मॉडलों तक आदिवासी समुदायों का शोषण और विस्थापन जारी रहा है। यह संघर्ष केवल आर्थिक नहीं है बल्कि उसमें सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक आयाम भी शामिल है। जसिंता की कविताओं में संघर्ष एक केन्द्रीय भाव है। उनकी कविताएँ विस्थापन, शोषण और अन्याय आदि मुद्दों को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करती हैं। विकास के तथाकथित मॉडल की आलोचना करते हुए वे लिखती हैं:

तब दिशाएँ
उजाले का वादा कर
धकेल देती हैं उन्हें
बवंडरों के बीच
और झाड़ लेती हैं पल्ला
कहती हुई
पृथ्वी को बचाने के लिए
किसी न किसी की तो
कुर्बानी देनी ही होगी।[1]

इन पंक्तियों के माध्यम से बताया गया है कि विकास की आड़ में आदिवासी गाँवों का विनाश किस प्रकार हो रहा है। इस प्रकार से जसिंता उस ऐतिहासिक अन्याय को रेखांकित करती हैं जिसमें आदिवासियों को अपनी ही भूमि पर पराया बना दिया है। अपनी एक अन्य कविता‘ विकास की धूल ’में विस्थापन के दर्द को उजागर करते हुए लिखती हैं:

क्या-क्या मिला है मुआवज़े में
जब पूछती है सच्चाई किसी से
तब कोने में बैठा बूढ़ा अनुभव
बस इतना ही कह पाता है -
फाँकती हुई विकास की धूल
दिन-रात खाँसती हुई ज़िन्दगी
उदय की उम्र सिमट गई है
आँखें उम्मीदों की

दिन गिन रही उंगलियों में।[2]

जसिंता की कविताओं में न केवल पीड़ा है, बल्कि सत्ता के शोषण के खिलाफ पर्याप्त प्रतिरोध के स्वर भी मुखर हैं। वे राष्ट्रवाद, धर्म और विकास के नाम पर होने वाले संस्थागत शोषण का गहरा प्रतिरोध करती हैं। 'राष्ट्रगान बज रहा है' कविता में वे दिखाती हैं कि कैसे सत्ता राष्ट्रवाद का उपयोग जनता के प्रतिरोध को दबाने के लिए करती है:

प्रतिरोध की हजारों आवाजें
कमर कस रही होती हैं
घरों से बाहर निकल आने को
कि ठीक उसी समय
बज उठता है राष्ट्रगान
घरों के भीतर।[3]

इन पंक्तियों के माध्यम से कवयित्री यह स्पष्ट करती हैं कि किस प्रकार राष्ट्रवाद के नाम पर समाज के जरूरी सवालों को नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है और गैर-जरूरी सवालों को थोपकर महत्वपूर्ण बना दिया जाता है। अपने प्रतिरोध को वे निडरता से सामने रखती हैं। 'ईश्वर और बाज़ार' संग्रह की भूमिका में वे स्वीकार करती हैं कि "कविताओं ने मुझे भीतर शून्य होना सिखाया है। इसकी वजह से मेरे भीतर कविताओं के एवज में कुछ पाने की लालसा और प्रतिरोध की कविता लिखते हुए मारे जाने का डर, दोनों ही खत्म हो गए हैं"[4] 'सिंहासन की जाति क्या होती है?' कविता में वे सत्ताधीशों की क्रूरता पर सीधा प्रहार करती हैं:

मैं ऐसे हर उन राजा के खिलाफ बोलूंगी
जो मेरे नाम पर
इंसानों की हत्या कर सकता है
ऐसा राजा, भला इंसान कैसे हो सकता है?[5]

पर्यावरणीय चेतना और प्रकृति से संबंध- पर्यावरण का मुद्दा जसिंता की कविताओं का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है। आदिवासी जीवनशैली में प्रकृति को कभी भी केवल उपभोग्य संसाधन नहीं माना गया, बल्कि वह एक जीवंत ईकाई है जिसके साथ मनुष्य का गहरा और अटूट संबंध रहा है। यह संबंध सदैव परस्पर सहयोग और सम्मान का रहा है। जसिंता अपनी कविताओं में यह प्रमुखता से दर्शाती हैं कि आदिवासी जीवनशैली प्रकृति के साथ गहरे सामंजस्य पर ही आधारित है। आधुनिकता और विकास के नाम पर मशीनों द्वारा किए जा रहे प्रकृति के दोहन को वे गहरे प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत करती हैं:

मशीनें,
पेड़ों को उखाड़ चुकने के बाद हाँफती हैं।
अब हाँफती मशीनें ढूंढती हैं
कहीं कोई पेड़ की छांह।[6]

ये पंक्तियाँ मानव के द्वारा प्रकति के शोषण की पराकाष्ठा को दिखाती हैं। मशीनें जो आधुनिकता और विकास का प्रतीक मानी जाती हैं, वे स्वयं पेड़ों को नष्ट करने के बाद अपनी थकान और रिक्तता का अनुभव करती हैं। यह केवल पर्यावरणीय विनाश का संकेत नहीं है, बल्कि आदिवासियों के जीवन से जुड़े प्रकृति के अटूट रिश्ते को भी रेखांकित

करता है ।वर्तमान में जिस अमानवीय तरीके से पर्यावरण को क्षति पहुँचाई जा रही है, उस पर चिंता व्यक्त करते हुए जसिंता विकास के मॉडल पर तीखा प्रश्न करती हैं। बाज़ारवाद और शहरीकरण के प्रभावों पर वे अपनी एक कविता में लिखती हैं:

गाँव में वो दिन था, एतवार
मैं नन्हीं पीढ़ी का हाथ थाम
निकल गई बाज़ार।
सूखे दरख़्तों के बीच देख
एक पतली पगडंडी
मैंने नन्हीं पीढ़ी से कहा,
देखो, यही थी कभी गाँव की नदी।[7]

यह कविता स्पष्टतः पर्यावरणीय विनाश के प्रभाव को दर्शाती है और दिखाती है कि कैसे बाज़ारवाद ने गाँव की उन नदियों और पहाड़ों को उजाड़ दिया है जो कभी आदिवासी जीवन का मुख्य आधार हुआ करते थे। प्रसिद्ध भाषाविद् G.N. Devy का कहना है कि 'ट्राइबल लिटरेचर इस बात पर जोर देता है कि मानव और प्रकृति के बीच एक पारिवारिक रिश्ता है जिसे आधुनिकता भुला रही है।' केरकेट्टा की कविताओं में यह रिश्ता पूरी तरह जीवंत नजर आता है। 'महुआ चकित है' कविता में वे महुआ और आदिवासी जीवन के रिश्ते को इस प्रकार बुनती हैं:

धूप भी चुन रही है
महुआ साथ-साथ
जवनी की माँ थकती नहीं,
चुनती है महुआ शाम तक।[8]

कविता की ये पंक्तियाँ महुआ के फूलों के माध्यम से आदिवासी जीवन की सादगी और प्रकृति के साथ उनके घनिष्ठ संबंध को चित्रित करती हैं। इस प्रकार से हम देखते हैं कि जसिंता की कविताएँ पर्यावरण को केवल एक भौतिक तत्व के रूप में नहीं, बल्कि आदिवासी जीवन और संस्कृति के मूल आधार के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कविताएँ चेतावनी देती हैं कि पर्यावरण का विनाश आदिवासी अस्मिता के लिए भी खतरा है।

आदिवासी अस्मिता और भाषा का संकट- आदिवासी अस्मिता के सवाल को समझने के लिए यह देखना जरूरी है कि किस तरह आदिवासी समाज ने सदियों से अपनी भाषा, संस्कृति और जीवनमूल्यों को संजोए रखा है। इसी कारण अस्मिता का प्रश्न केवल पहचान पत्रों, आँकड़ों या राजनीतिक घोषणाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि लोकस्मृतियों, लोकगीतों, कथा-प्रतीकों, पारंपरिक उत्सवों और भाषाओं की विविधता आदि के साथ जुड़ा हुआ है। केरकेट्टा की कविताओं में अस्मिता का यह प्रश्न बहुत गहराई से अंतर्निहित है। जसिंता जब भी आदिवासी होने की बात करती हैं, तो वे कभी भी मनुष्य होने के व्यापक अर्थ को नजरअंदाज नहीं करती हैं। उनके अनुसार, आदिवासी होने का वास्तविक अर्थ सहज और स्वाभाविक होना है, बिल्कुल प्रकृति की ही तरह। आदिवासी पहचान को प्रकृति के साथ जोड़ते हुए वे लिखती हैं:

जंगल का आदमी सीखता है
पगडंडियों से चलना,

पेड़ों से विकसित होना,
बारिश में नाचना।[9]

अस्मिता के इस प्रश्न में भाषा का सवाल भी अनिवार्य रूप से निहित है, जो जसिंता के काव्य में प्रमुखता से उभरता है। मातृभाषा का खोना किसी भी समुदाय के लिए सबसे बड़ी त्रासदी है। अपनी कविता 'मातृभाषा की मौत' में वे इस पीड़ा को उकेरते हुए लिखती हैं:

माँ के मुँह में ही
मातृभाषा को कैद कर दिया गया
और बच्चे
उसकी रिहाई की मांग करते-करते
बड़े हो गए।
मातृभाषा खुद नहीं मरी थी
उसे मारा गया था।[10]

ये पंक्तियाँ मातृभाषा के विलुप्त होने की गहरी पीड़ा को व्यक्त करती हैं। इसके साथ ही, यह कविता आदिवासी सांस्कृतिक विरासत के नुकसान और उसकी रक्षा के लिए किए जा रहे संघर्ष को भी दर्शाती है। जब हम वर्तमान समय की व्यवस्था को देखते हैं तो कई बार महसूस होता है कि लोग श्रेष्ठता के दंभ में और राष्ट्रवाद के नाम पर सब को एक ही रंग में रंग देना चाहते हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वे हिंसा का सहारा लेने से भी नहीं चूकते हैं। जसिंता 'प्रेम में दो हो जाना' कविता के माध्यम से लिखती हैं:

इधर देश के प्रेम में कुछ लोग
सबको 'एक' कर देना चाहते हैं
जो 'एक' न हो पाए,
वे मारे जाते हैं।[11]

जसिंता की ये कविताएँ आदिवासी अस्मिता को एक जीवंत और गतिशील पहचान के रूप में प्रस्तुत करती हैं, जो अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए निरंतर संघर्ष कर रही है। उनकी रचनाएँ प्रमाणित करती हैं कि आदिवासी अस्मिता केवल अतीत की विरासत नहीं है, बल्कि यह वर्तमान और भविष्य की लड़ाई का एक अनिवार्य हिस्सा है।

निष्कर्ष- निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जसिंता केरकेट्टा की काव्ययात्रा केवल एक साहित्यिक प्रयास नहीं है, बल्कि यह एक शक्तिशाली सामाजिक वक्तव्य है। उनकी रचनाएँ संघर्ष, पर्यावरण और आदिवासी अस्मिता के ज्वलंत मुद्दों को अत्यंत संवेदनशीलता और वैचारिक गहराई के साथ प्रस्तुत करती हैं। जसिंता की कविताएँ यह स्थापित करती हैं कि किस प्रकार साहित्य व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों तरह की पीड़ाओं को व्यक्त करने का माध्यम बन सकता है, और साथ ही समाज को दिशाहीनता से निकालकर बदलने की प्रेरणा भी दे सकता है। उनका मूल उद्देश्य मनुष्यता को बचाना है। मनुष्यों को और अधिक बेहतर तथा संवेदनशील बनाने की चाह में वे बहुत ही मार्मिक ढंग से लिखती हैं:

"वे हमारे सभ्य होने के इंतजार में हैं
और हम उनके मनुष्य होने के।"[12]

संदर्भ ग्रंथ –

1. जसिंता केरकेट्टा,अंगोर ,अनुज्ञा बुक्स 2020,पृष्ठ संख्या 45
2. जसिंता केरकेट्टा,अंगोर ,अनुज्ञा बुक्स 2020,पृष्ठ संख्या 82
3. जसिंता केरकेट्टा, जड़ों की ज़मीन,अनुज्ञा बुक्स 2024,पृष्ठ संख्या 42
4. जसिंता केरकेट्टा, ईश्वर और बाज़ार,राजकमल प्रकाशन 2022,पृष्ठ संख्या 6
5. जसिंता केरकेट्टा, ईश्वर और बाज़ार,राजकमल प्रकाशन 2022,पृष्ठ संख्या 66
6. जसिंता केरकेट्टा, जड़ों की ज़मीन,अनुज्ञा बुक्स 2024,पृष्ठ संख्या 150
7. जसिंता केरकेट्टा,अंगोर ,अनुज्ञा बुक्स 2020,पृष्ठ संख्या 28
8. जसिंता केरकेट्टा, जड़ों की ज़मीन,अनुज्ञा बुक्स 2024,पृष्ठ संख्या 112
9. जसिंता केरकेट्टा, जड़ों की ज़मीन,अनुज्ञा बुक्स 2024,पृष्ठ संख्या 76
10. जसिंता केरकेट्टा, जड़ों की ज़मीन,अनुज्ञा बुक्स 2024,पृष्ठ संख्या 20
11. जसिंता केरकेट्टा, प्रेम में पेड़ होना,राजकमल प्रकाशन 2024,पृष्ठ संख्या 17
12. जसिंता केरकेट्टा, ईश्वर और बाज़ार,राजकमल प्रकाशन 2022,पृष्ठ संख्या 202

फोन नंबर-7240090126
ईमेल-Rahulmeena160899@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 140-145
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

झलकारी बाईः 1857 के विद्रोह की नायिका का पुनर्मूल्यांकन

डॉ0 रिज़वान अहमद
असिस्टेंट प्रोफेसर इतिहास,
राजकीय महाविद्यालय सेहमों, बस्ती(उ0प्र0)

भारत को स्वतंत्र कराने के लिए भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में असंख्य पुरुषों एवं महिलाओं ने अपनी भूमिका निभाई है। ऐसे पुरुष एवं महिलाएं जो राष्ट्रीय स्वतंत्रता के केन्द्र में थी उनका इतिहास हमारे समक्ष मौजूद है। ऐसी बहुत–सी साहसी वीरांगनाओं ने देष को स्वतंत्र कराने में अपना जीवन समर्पित कर दिया परन्तु उनका इतिहास हमारी पीढियों तक बहुत कम पहुँचा है। ऐसी ही साधारण घर में जन्मी वीरांगना थीं झलकारी बाई। झलकारी बाई ने झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई के साथ मिलकर देष के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सन1857 में अंग्रेजी सेना को कई मोर्चो पर नाको चने चबवा दिये। उन्होंने स्वतंत्रता की बलिवेदी पर देष प्रेम से लबरेज होकर अपनी आहूति दे दी। सन् 1857 के विद्रोह की इस नायिका के योगदान का पुनर्मूल्यांकन प्रस्तुत है–

वीरांगना झलकारी बाई बचपन से ही वीर एवं बहादुर प्रकृति की थीं। उनमें नेतृत्वषीलता, उत्साह जैसे गुणों का अदभुत संगम था। उनका जन्म झाँसी के निकट भोजला ग्राम में 22 नवम्बर 1830 को हुआ था।1 वह कोरी जाति (अछूत वर्ग) की कन्या थी। उनके पिता सिद्धू कपड़े बुनने का कार्य करते थे। माता का देहान्त बचपन में ही हो गया था। झलकारी बाई का पारिवारिक जीवन अत्यन्त संघर्षमय था। 2 झलकारी बाई को देष और स्वतंत्रता की बातें बहुत अच्छी लगती थीं। वह अंग्रेजों के अत्याचारों की बातें सुनकर उन पर क्रोधित हो उठती थीं। अंग्रेजो के बारे में अगर किसी से बातें होतीं तो वह चुपचाप खड़ी होकर सुनती। यद्यपि अंग्रेजों द्वारा किसी रजवाड़े को हथिया लेने की तथा किले को घेरने और उसमें रहने वालों को बंदी बनाने की बातें उसकी समझ में नहीं आतीं फिर भी उनका मन व्याकुल हो जाता।

झलकारी बाई अपने उम्र के बच्चों को खेलने के लिए बुलातीं और उन्हें टुकड़ियों में बाँटकर लड़ाई का खेल खेलतीं। बनावटी किलों की रेखा खींच कर उस पर हमला करके उसके अन्दर के लोगों को बाहर निकालने का प्रयत्न करतीं। 3 आपस में युद्ध का अभिनय करतीं। एक–दूसरे के पीठ पर घुड़सवारी करतीं। जिस तरह युद्ध के मैदान में एक टुकड़ी दूसरी टुकड़ी को घेरती है, उसी तरह झलकारी बाई भी खेल खेलतीं। कभी दूसरी टुकड़ी को घेरती तो कभी खुद घेरे जाने पर उसमें से निकलने का सफल प्रयास करतीं।

गाँव की लड़कियाँ–औरतें जंगल से लकड़ियॉ चुनने जाया करती थीं। रोज की तरह झलकारी बाई अपनी सहेलियों के साथ जंगल में लकड़ी चुनने गयी। झलकारी ने आज अपनी कुल्हाड़ी की धार को खूब तेज किया था, उसने अच्छी सी मोटी लकड़ी को काट कर घर ले जाने का विचार बनाया था। बड़ी

उम्र की औरतें जंगल के किनारे ही लकड़ी चुनने लगीं, लेकिन झलकारी बाई अपनी सहेलियों के साथ जंगल के अन्दर चली गयी। कहीं कोयल कूक रही थी, कहीं हिरण कुलाचे मार रहे थे, कहीं खरगोष झाड़ी से निकलता दिखता तो कहीं सियार दुम दबाकर भागता ऐसे मदमस्त वातावरण में दोपहर कब बीत गयी, पता ही नहीं चला। लड़कियों को जब समय का ज्ञान हुआ तो वे जल्दी–जल्दी लकड़ी काटने और इकट्ठा करने में लग गईं। लेकिन झलकारी शीघ्रता करने के बजाय जंगल में और आगे बढ़ गयी, उसकी नजर एक सूखे पेड़ पर गयी। उस पेड़ से कुछ दूरी पर घनी झाड़ियाँ थीं, जो काफी दूर तक फैली थीं। लोगों का विष्वास था कि उन झाड़ियों में बाघ रहा करते हैं, जिसके कारण उधर कोई आता–जाता नहीं था। कोई पषु भूल कर उधर चला गया तो वापस नहीं आता था। उसे बाघ आदि मार कर खा जाते थे। झलकारी पेड़ की एक मोटी टहनी पर कुल्हाड़ी चलाने लगीं। लकड़ी काटने और उसे बाँधने में समय का पता ही नहीं चला कि कब शाम हो गई। चरवाहे अपने पशु को लेकर चल दिये थे, लड़कियाँ भी अपने घर की और काफी दूर निकल गई थीं। झलकारी बाई को जब इस बात का आभास हुआ तो जल्दी से उन्होंने लकड़ियों का गट्ठर बनाया और घर की और चल पड़ी। इस बीच शाम का धुँधलापन हो गया था। अन्जाने में झलकारी बाई भूल कर उस तरफ बढ़ गयी जिधर बाघ आदि रहा करते थे।

एक बाघ मनुष्य की गन्ध पाकर झाड़ी से बाहर निकल आया और झलकारी बाई पर हमला करने की मुद्रा में तैयार हो गया। 4 अचानक झलकारी बाई की नजर बाघ पर पड़ गयी, उसने तेजी से गट्ठर बाघ की और फेंका और दोनों हाथों से कुल्हाड़ी पकड़ ली। गट्ठर के फेकते ही बाघ ने छलांग मारी लेकिन गट्ठर के बीच में आ जाने से उसका वार चूक गया। उसका पंजा झलकारी बाई के बायें कन्धे को हल्की सी खरोंच दे गया और वह अपने ही जोर में लकड़ियों के साथ झलकारी की बायीं और आ गिरा और झलकारी ने अविलम्ब कुल्हाड़ी से बाघ पर वार किया। कुल्हाड़ी बाघ के माथे पर लगी, वह तिलमिला गया, लेकिन झलकारी ने उसे सम्भलने का अवसर नहीं दिया। लगातार उस पर कुल्हाड़ी चलाती रहीं। बाघ का माथा फट चुका था। एक बाजू बेकार हो गया था। अब वह छलांग लगाने में असमर्थ हो गया था और झलकारी को कई नाखून मार चुका था तभी झलकारी का एक जोरदार वार बाघ के कटे हुए माथे पर लगा और उसका दम टूट गया। गाँव की अन्य लड़कियाँ घर पहुँच गयीं लेकिन झलकारी के घर न पहुँचने पर उनके पिता चिन्तित थे। एक लड़की से पूछने पर पता चला कि वह सूखे पेड़ की टहनी काट रही थी हम लोग अपना–अपना गट्ठर लेकर चल दिये कि वह रोज की तरह पीछे–पीछे आयेगी। आज कुछ देर भी हो गयी थी क्योंकि हम खेलते–खेलते कुछ दूर चले गये थे।

जंगल में दूर जाने की बात सुनकर सिद्धू परेषान हो गये। लाठी लेकर वह जंगल की ओर जाने को तैयार हुए तभी खून से लथपथ झलकारी आ गई। सिद्धू अपनी बेटी की हालत देखकर अहसज हो गये। स्वयं पर नियंत्रण रखते हुए झलकारी को चारपायी पर लिटाया। अपने पिता की हालत समझते हुए झलकारी बोली बापू चिन्ता मत कर बाघ से मुठभेड़ हो गई थी उसी का नतीजा है। मैंने उसे मार गिराया। 5 सिद्धू को समझ नहीं आ रहा था कि वह झलकारी की बहादुरी की खुषी मनाये या उसके बचने का धन्यवाद ईष्वर को दे।

झलकारी के घायल होने की खबर पूरे गाँव में दावानल की तरह फैल गयी। गाँव के रामधन बाबा को जंगली पेड़ पौधों और जड़ी–बूटियों की अच्छी जानकारी थी। झलकारी के घायल होने की खबर पाकर वे तुरन्त आये। उन्होंने झलकारी का इलाज किया और कुछ ही दिनों में झलकारी स्वस्थ हो गयी। उनकी बहादुरी का चर्चा धीरे–धीरे पूरे झाँसी जनपद में पहुँच गयी। 6 रानी लक्ष्मी बाई तक भी यह खबर पहुँची। वह ऐसी लड़कियों की तलाष में रहती थीं। उनकी सेवा में पूरन नाम का गोलची सिपाही था। वह भी कोरी जाति का था जो बहादुर, सुन्दर और साहसी था। रानी ने इन दोनों की जोड़ी मिलाने की सोची। पूरन भी झलकारी की बहादुरी सुनकर उसने विवाह को उत्सुक था। रानी ने राज्य की और से पूरन को झलकारी का हाल–चाल लेने के लिए भेजा। जहाँ बातों ही बात में पूरन ने झलकारी के पिता सिद्धू से झलकारी और अपने विवाह की बात भी कर ली। सिद्धू सहर्ष तैयार हो गया और झलकारी विवाह की रस्म के बाद गोलान्दाज की पत्नी बन गई। 7

रानी लक्ष्मी बाई समय–समय पर औरतों को बुलाकर उनमें देष भक्ति की भावना का संचार करने का काम किया करती थीं। हल्दी कुमकुम के त्योहार पर महारानी ने सभी औरतों को विषेष रुप से अपनी सेना के पुरुषों की औरतों को निमंत्रण भेजा। झलकारी भी वहाँ पहुँची। गाँव की औरतों द्वारा दी गयी सीख के अनुसार उसने लम्बा सा घूंघट कर लिया था। झलकारी चुपचाप बैठी थी। उसके मन में रानी को देखने की तीव्र इच्छा थी। तभी रानी का कक्ष में प्रवेष हुआ और माहौल शान्त हो गया। रानी सिंहासन पर बैठ गयीं। सिंहासन पर बैठकर उन्होंने औरतों पर नजर डाला। घूंघट में किसी को देखकर इन्होंने ऊँची आवाज में पूछा अरे यह कौन है? किसी ने बताया पूरन कोरी की पत्नी है। यह जानकर रानी झलकारी को सम्बोधित करते हुए बोलीं अरे मैंने तो सुना था की तूने बाघ को पछाड़ दिया था। फिर यहाँ तो सभी औरतें ही हैं, यहाँ कोई मर्द नहीं है फिर आपस में पर्दा कैसा? जरा घूंघट उठा और इधर आ। सुना है! तू बहुत सुन्दर भी है यह सुनकर किषोरी नव दुल्हन झलकारी और भी सिमट गयी।

रानी स्वयं झलकारी के पास पहुँची और घूंघट उठाया तो देखती रह गयीं। क्योंकि उन्हें लगा वो अपना प्रतिबिम्ब देख रही हैं। झलकारी बाई का चेहरा कद–काठी हूबहू लक्ष्मीबाई से मिलती थी। 8 वह अभिभूत हो उठीं। झलकारी ने उनका पैर छूना चाहा लेकिन रानी ने उन्हें गले लगा लिया। महारानी ने उसी अवसर पर उसे अपनी सुरक्षा टुकड़ी में शामिल करने की घोषणा कर दी और साथ ही सुरक्षा टुकड़ी के आवासों में ही उसके आवास की व्यवस्था का आदेष दिया। इस समाचार ने पूरन को प्रफुल्लित कर दिया। इस प्रकार झलकारी को रानी के साथ रहने का अवसर मिला और अपने सहज–स्वभाव साहस तथा व्यवहार से कुछ ही दिनों में उसे महारानी की अन्तरंग सखी बनने का भी सौभाग्य मिला गया। वह रानी के प्रत्येक काम में साये की तरह रहती। महारानी की देख–रेख में वह जल्द ही फौज के सभी कामों में निपुण हो गई। पति के सहयोग से तोप चलाने, गोला–बारुद भरने आदि के कामों में भी उसने कुषलता प्राप्त कर ली थी। जन कवि बिहारी लाल हरित ने इस प्रसंग का वर्णन इस प्रकार किया है–

लख,पटा, गदका, भाला,
छत्तीस हाथ तलवारों के।
रण कौषल में निपुण हरित,
फण सीखे सब हथियारों के।।
हर रोज समर शाला जाती,
लक्ष्मीबाई सीखलाती थी।
जो विद्या गुरु से सीखी थी,
झलकारी को बतलाती थी।।

झलकारी की योग्यता तथा व्यवहार को देखकर महारानी ने उसे अपनी रानी सेना की टुकड़ी दुर्गा–दल। 9 का नेतृत्व सौंप दिया। झलकारी जब पीठ पर ढाल, कमर के फेटे में तलवार, गले में करतूसों की पेटी और बगल में पिस्तौल लटकाने के साथ कन्धे पर बन्दूक रखकर चलती तो ऐसा लगता मानो युद्ध की देवी चल रही हो। वह घुड़सवार तथा पैदल सैनिक टुकड़ी का निरक्षण करती, निषाने बाजी का निरक्षण करती, किले की चहारदीवारी पर चढ़ कर उसका निरक्षण करती और जहाँ–कहीं भी उसे किसी प्रकार की कमी दिखती रानी को उसे सुधारने की बात बताती। कुछ ही दिनों में वो रानी का दाहिना हाथ बन गई। रानी अपने हर राय–विचार में झलकारी को अपने साथ रखती।

अंग्रेज अक्सर हिन्दुस्तानी लड़कियों से छेड़छाड़ किया करते थे। एक दिन झलकारी अपनी सैनिक वर्दी में बाजार का चक्कर लगा रही थी। उस समय छावनी में रहने वाले अंग्रेज अफसर और कुछ नौजवान उधर पहुँच गये। उन्होंने झलकारी बाई से छेड़छाड़ करने की कोषिष की। इस पर झलकारी बाई बोली इस देष की औरतें अपने सतीत्व की रक्षा अपने प्राण देकर भी करती हैं। वे उन अंग्रेजों के देष की औरतों की तरह चाहे जिसके साथ मटरगस्ती करने के लिए मुँह बाये नहीं रहती। भरे बाजार में अपने लोगों के बीच एक हिन्दुस्तानी औरत के फटकारने से उस अंग्रेज ने स्वयं को लज्जित महसूस किया और बदले की भावना से नीचता पर उतर आया। झलकारी भी तलवार निकालकर अंग्रेजों का सामना करने के लिए

ललकारने लगी। यह स्थिति देखकर बाजार में भगदड़ मच गयी। कुछ लोगों ने झलकारी के इस कार्य की निन्दा की तो कुछ लोगों ने उसकी प्रषंसा की। इस तरह झलकारी दिन–प्रतिदिन चर्चित होती जा रही थी।

झलकारी बाई से ईर्ष्या करने वाले लोग उन्हें अपमानित करने के लिए अवसर की तलाष में थे। चाँदमारी के मैदान में रानी की महिला सेना नियमित अभ्यास किया करती थी। वहाँ मनुष्यों तथा पशुओं का जाना मना था। शरद ऋतु आरम्भ हो चुकी थी। चारों तरफ कुहरा छाया हुआ था। ऐसे में प्रातः ही झलकारी बाई चाँदमारी में बन्दूक का निषाना लगाने पहुँच गयी। झलकारी बाई अपने अभ्यास में लगी थी। तभी एक बछिया भटकती हुयी उधर चली गयी। कोहरे में झलकारी बाई को बछिया दिखाई नहीं दी और एक गोली उसे लग गई। झलकारी बाई ने सोचा बछिया मर गयी होगी। दुखी मन से उसने यह बात अपने पति पूरन को बतायी। वह जानता था कि रानी की नजरों में झलकारी को अब गिराने की कोषिष विरोधियों द्वारा जरुर होगी। लोगों ने कहना शुरु भी कर दिया कि यह छोटी जाति की औरत रानी की मुँह लगी है, इसलिए उसे धर्म–अधर्म की कोई चिन्ता नहीं है। गौ–हत्या के अपराध में उसे दण्ड ही मिलना चाहिए। यह चर्चा रानी के कानों तक पहुँची। रानी असमंजस में पड़ गईं लेकित साधारण जनता की भावनाओं को भी वह ठेस नहीं पहुँचाना चाहती थीं। अतः इस घटना के जाँच–पड़ताल के लिए रानी ने एक गुप्तचर की नियुक्ति की। दो दिन बाद उस गुप्तचर ने बताया कि उस बछिया को गोली जरुर लगी थी लेकिन वह बछिया मरी नहीं है। वह जीवित है। यह एक सोची–समझी योजना थी जिसके तहत कुछ लोग झलकारी को अपमानित करके दण्ड दिलाना चाहते थे। इस तरह रानी की दूरदर्षिता से झलकारी अपराध बोध से मुक्त हुई और उसके विरोधियों की चाल असफल रही। 10

प्रथम स्वतंत्रा संग्राम जिसे सिपाही विद्रोह के नाम से भी जाना जाता है उसमें झँसी के दलितों ने भी बढ़–चढ कर हिस्सा लिया था। जिनमें राजपाठ की कोई लालसा नाममात्र के लिए भी नहीं थी। उन्हें तो मात्र मातृभूमि की रक्षा एवं स्वतंत्रता की अभिलाषा थी। 23 मार्च 1858 को अंग्रेजों ने सर ह्यूरोज के नेतृत्व में झाँसी पर हमला कर दिया। एक सप्ताह तक भीषण युद्ध हुआ। विद्रोह का संचालन भाऊ बक्षी और पूरन कोरी कर रहे थे।11 अंग्रेज बच्चे, बूढ़े, जवान सबको अपने बूटों और घोड़ों की टापों से कुचल रहे थे। पतियों की रक्षार्थ आगे आने वाली स्त्रियों को भी अंग्रेजों ने नहीं छोड़ा। कितनी ही स्त्रियों ने अपनी जान दे दी। अंग्रेजों ने घरों में घुसकर लूट–पाट भी किया। शहर में रानी लक्ष्मीबाई के महल को भी लूटा गया और आग भी लगा दिया गया। केवल झाँसी का किला ही रानी के हाथ में रह गया था। रानी ने दृढ़ता से कहा अपनी झाँसी मैं नहीं दूँगी। झाँसी की दुर्दषा देखकर रानी लक्ष्मीबाई की आखों में आँसू आ गए। तात्या टोपे रानी लक्ष्मी बाई की मदद के लिए अपनी सेना लेकर आए, लेकिन सर ह्यूरोज की सेना ने उन्हें खदेड़ दिया।

ऐसी परिस्थिति में रानी के सामने झाँसी छोड़कर कालपी जाने के अतिरिक्त दूसरा कोई रास्ता नहीं था। लक्ष्मीबाई की रक्षा हेतु झलकारी बाई ने हाथ में तलवार लेकर घोड़े पर चढ़ कर अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई शुरु कर दी।12

तलवारों की टंकार, घोड़ों की हुंकार और झाँसी की सेना के सामने अंग्रेजों के पसीने छूट गये। घोड़ों की टापों तले अंग्रेजो को झाँसी की सेना ने रौंद डाला, परन्तु अंग्रेजों की घेरा बंदी फिर भी नहीं टूट रही थी। लगता था कि अंग्रेजी सेना दो–चार दिनों में झाँसी पर कब्जा कर लेगी।

झलकारी बाई के पति पूरन कोरी, भाऊ बख्शी कोरियों की सेना के साथ अंग्रेजों का नरसंहार कर रहे थे। संघर्ष अपनी चरम सीमा पर था। झलकारी बाई रानी के प्रति चिंतित थीं। झलकारी बाई की इच्छा थी कि रानी किले से कैसे भी हो सुरक्षित बाहर निकल जाएं। इसी सोच के तहत 4 अप्रैल 13 की रात रानी लक्ष्मी बाई घोड़े पर सवार हुई अपने दत्तक पुत्र दामोदर राव को पीठ से बांधा और चुने हुए विष्वास पात्र सवारों व झलकारी बाई के वफादार सैनिकों को साथ लेकर भंडारी फाटक से दुष्मानों के घेरों को तोड़कर झलकारी बाई की सहायता से रानी लक्ष्मी बाई झाँसी से सुरक्षित निकल गईं। उनके साथ मुट्ठी भर सैनिक ही जा सके बाकी सब अंग्रेजी सेना से लड़ते हुए मारे गये। संघर्ष की ऐसी भयंकर स्थिति में भी झलकारी बाई संतुलित थीं। उनमें वीरता और धीरता का अनोखा संगम विद्यमान था।

दतिया द्वार और भंड़ारी गेट से उन्नाव गेट तक युद्ध का संचालन खुद झलकारी बाई कर रहीं थी।14 वह तोपखाने को भी संभाले हुई थीं। उसके पति पूरन कोरी दूसरे स्थान पर भाऊ बख्शी के साथ अंग्रेजों से लड़ रहे थे। झलकारी बाई का रंग रुप रानी लक्ष्मी बाई से मिलता था। लक्ष्मी बाई को स्वयं लगता था कि झलकारी में अपना प्रतिबिम्ब देख रहीं हैं। वैसे ही नैन–नक्ष रंग–रुप और कद–कामद भी बस फर्क था तो एक कि झलकारी बाई की टोड़ी पर एक तिल था 15 झलकारी बाई स्वयं को झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई घोषित करके युद्ध का संचालन कर रहीं थीं। झलकारी बाई चाहती थी कि रानी झाँसी से निकल कर बिट्ठूर तक सुरक्षित पहुँच जायें। उद्देष्य था कि अंग्रेजों को युद्ध में उलझाकर रखूँ ताकि रानी दूर निकल जायें। झलकारी बाई की योजना सफल रही। झलकारी बाई को लक्ष्मी बाई समझ कर अंग्रेजी सेना दिनभर युद्ध करती रही। 16 रानी के पिता मोरोपन्त हाथी पर कीमती सामान लादकर ले जा रहे थे। वे घायल होने पर भी किसी तरह बचकर निकल गये और दतिया पहुँच गए। दतिया का राजा अंग्रेजों का मददगार था। राज्याधिकारियों ने मोरोपन्त का सारा कीमती सामान छीन लिया और उन्हें पकड़कर अंग्रेजों के हवाले कर दिया। बाद में अंग्रेजों ने उन्हें झाँसी में फाँसी दे दी। 17

इधर झलकारी बाई अंग्रेजों से मोर्चा संभाले हुए थी, उधर भाऊ बख्शी और पूरन कोरी। झाँसी से निकलकर रानी सुरक्षित कालपी पहुँच गईं। इधर किले की सुरक्षा का भार सुंदर–मुंदर और झलकारी बाई पर था। अंग्रेजों की तोपो के गोलों से ज्योही किले की दीवार क्षतिग्रस्त होती, झलकारी तुरन्त पवन वेग से पहुँचकर उसकी मरम्मत कराती। सेना का कोई भी अंग उसकी निगाहों से ओझल नहीं था। हर मोर्चे पर झलकारी ही दिखाई देती। कभी यहाँ तो कभी वहाँ। रणचण्डी बनी सैनिकों का मनोबल बढ़ाती हुई वह अंग्रेजी सेना से लोहा ले रही थी। संघर्ष चरम सीमा पर पहुँच चुका था। झलकारी बाई रानी लक्ष्मी बाई के प्रति अधिक चिंतित थी। कि वह कहीं अंग्रेजों के हाथ न आ जाये और अंग्रेज अपनी विजय पताका झाँसी पर न फहरा दें। एक समय ऐसा भी आया जबकि झाँसी की कमान पूरी तरह झलकारी बाई के हाथों में सिमट गई। इसी बीच झलकारी के पति पूरन कोरी भी अपनी मातृभूमि के रक्षार्थ शहीद हो गये। ज्योंही झलकारी बाई को उनकी शहादत का पता चला वह एक पल को भावषून्य–सी हो गयीं लेकित जैसे ही शून्यता भंग हुई घायल शेरनी की भाँति अंग्रेजों पर टूट पड़ीं। अनेकों अंग्रेज सैनिक एवं अधिकारी उसकी नंगी तलवार के आगे खेत रहे। उधर इसी बीच 17 जून 1857 को रानी लक्ष्मी बाई की मृत्यु हो गयी। रानी लक्ष्मी बाई की मौत की खबर सुनकर झलकारी बाई फिरंगियों के लिए मौत की आंधी बन चुकी थीं उसकी नंगी तलवार के वार से अंग्रेजों के छक्के छूट चले थे। सहसा अंग्रेजों की एक गोली झलकारी बाई के सीने को बेधती हुई आर–पार निकल गयी। झलकारी बाई का घोड़े से गिरना क्या हुआ कि सैकड़ों गोलियों ने उसके शरीर को बेध दिया। जय भवानी कहती हुई वह शहीद हो गयी।

रानी लक्ष्मीबाई के प्रति मित्रता की अद्भुत मिसाल मातृभूमि की रक्षा का दृढ संकल्प, स्वतंत्रता की प्रज्वलित ज्योति, राज्य के प्रति कर्तव्य–बोध का पालन करते हुए दलित वीर–बाला झलकारी बाई वीरगति को प्राप्त होकर इतिहास के पन्नो में अमर हो गई। न वह रानी थी, न पटरानी, वह थी तो केवल मातृभूमि की रक्षक एवं स्वतंत्रता की दीवानी। अरुणांचल प्रदेष के राज्यपाल तथा वरिष्ठ लेखक माता प्रसाद के चिचार में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में झाँसी की रानी द्वारा बनाई गयी स्त्रियों की सेना में झलकारी बाई ने सराहनीय कार्य किये थे।18

उनकी निर्भीगता और बहादुरी को देखकर अंग्रेज सेनापति जनरल ह्यूरोज ने भी 4 जून 1858 को कहा था नो स्टूअर्ट इफ वन परसेंट ऑफ इंडियन वीमेन बीकम सो मैड एज दिष गर्ल इज, वी बिल हैव टु लीव आल दैट वी हैव इन दिस कंट्री (स्टुअर्ट ही नहीं, अगर हिन्दुस्तान की एक फीसदी लड़कियाँ इस लड़की झलकारी बाई की तरह आजादी की दीवानी हो गईं तो हम सबको यह देष छोड़कर हाथ झाड़कर भगाना होगा।)19

झलकारी बाई का आदर्ष नारी रुप, त्याग और बलिदान देष भक्तों के लिए एक प्रेरणा है। एक संघर्ष की ज्वाला है जो आगे वाली पीढ़ियों के लिए उनकी धमनियों में स्वतंत्रता की रक्षार्थ उत्सर्ग की

भावना का संचार ही नहीं करेगी, अपितु भारतवासियों के हृदय में स्वतंत्रता की भावना को प्रज्ज्वलित रखेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1–गोस्वामी सुधा, भारत वर्ष की चर्चित महिलाएँ, उपकार प्रकाषन,2012 पृ0सं0 146

2–वियोगी कुसुम, दलित क्रांतिकारी वीरांगनाएँ, सम्यक् प्रकाषन,1997 पृ0सं0 207

3–लाल, मुरारी, स्वतंत्रता आंदोलन में क्रांतिकारी महिलाएँ, रजनी प्रकाषन, नई दिल्ली 1998 पृ0सं0 17

4–गोस्वामी सुधा, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 146

5–लाल, मुरारी पूर्वोद्धृत पृ0सं0 17

6–गोस्वामी सुधा पूर्वोद्धृत पृ0सं0 146

7–नैमिषराय मोहनदास, स्वतंत्रता संग्राम के दलित क्रांतिकारी, नीलकंठ प्रकाषन, नई दिल्ली,1999, पृ0सं0 135

8–गुप्ता चारु, मर्दों से आगे भी मर्दानी महिलाएँ, दैनिक हिन्दुस्तान, लखनऊ, 8 जनवरी, 2005, पृ0सं0 5

9–गुप्ता चारु, पूर्वोद्धृत

10–लाल, मुरारी पूर्वोद्धृत पृ0सं0 29

11–सुमन मंजू, दलित महिलाएँ, सम्यक् प्रकाषन, 2014, पृ0सं0 207

12–गोस्वामी सुधा, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 147

13–सुमन मंजू, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 208

14–गुप्ता चारु, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 208

15–लाल, मुरारी पूर्वोद्धृत पृ0सं0 24

16–नैमिषराय मोहनदास, पृ0सं0 136

17–सुमन मंजू, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 209

18–नैमिषराय मोहनदास, पृ0सं0 137

19–सुमन मंजू, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 210

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 146-151
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਸਮਾਜ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਰੋਕਾਰ

ਹਰਜੀਤ ਸਿੰਘ,
ਖੋਜਾਰਥੀ,
ਗੁਰੂ ਕਾਸ਼ੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ,
ਡਾ.ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ,
ਨਿਗਰਾਨ,
ਗੁਰੂ ਕਾਸ਼ੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ

ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀ ਇਕ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਜੀਵਨ ਸੰਦਰਭ ਤੇ ਸਮੱਸਿਆਕਾਰ ਨੁਕਤਾ ਪ੍ਰਸਤੁਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਸਮੱਸਿਆਕਾਰ ਨੁਕਤੇ ਦੀ ਨਵੀਨਤਾ ਤੇ ਵਖਰਤਾ ਹੀ ਇਸ ਨੂੰ ਮੂਲ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀ ਤੋਂ ਵਖਰਿਆਉਂਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਵਖਰੇਵੇਂ ਭਿੰਨ-ਭਿੰਨ ਪਰਿਵੇਸ਼ ਕਰਕੇ, ਕਹਾਣੀ ਦੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਤੇ ਕਲਾਤਮਿਕ ਸੰਗਠਨ ਦੀ ਭਿੰਨਤਾ ਨੂੰ ਅੰਗੀਕਾਰ ਕਰ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। ਇਸੇ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿਚ ਕੈਨੇਡਾ ਵਿਚ ਰਚੀ ਜਾ ਰਹੀ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀ ਉਚੇਚੇ ਧਿਆਨ ਦੀ ਮੰਗ ਕਰਦੀ ਹੈ। "ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਪਰਵਾਸੀ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਇਸ ਸਮਾਜ, ਸਭਿਆਚਾਰ ਤੇ ਵਿਵਸਥਾ ਵਿਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕਰਨ ਤੇ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਹੋਣ ਦੇ ਵਿਵਿਧ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਜੀਵਨ ਅਨੁਭਵਾਂ ਤੇ ਵਸਤੂ ਵੇਰਵਿਆਂ ਨੂੰ ਕਥਾ ਰੂਪ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ।"[1] ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀਕਾਰਾਂ ਵਿਚ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਅਜਿਹੇ ਨਾਮ ਹਨ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀ ਨੂੰ ਨਿਵੇਕਲੀ ਪਛਾਣ ਦਿੱਤੀ ਹੈ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਵਿਚੋਂ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਨਾਮ ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦਾ ਹੈ। ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦੀ ਰਚਨਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਬਾਰੇ ਸੁਖਿੰਦਰ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਹਨ ਕਿ, "ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀਕਾਰ ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸਿੰਘ ਸੇਖਾ ਅਜਿਹੇ ਕਹਾਣੀਕਾਰਾਂ ਵਿਚ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹੈ ਜੋ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੀਆਂ ਪਰਵਾਸੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ।"[2] ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਜੀਵਨ ਯਥਾਰਥ ਦੇ ਕਠੋਰ ਵਸਤੂ ਪਰਿਪੇਖ, ਆਰਥਿਕ ਸਫ਼ਲਤਾ ਲਈ ਕੀਤੇ ਜਾਂਦੇ ਸੰਘਰਸ਼, ਅਤੇ ਇਸ ਸੰਘਰਸ਼ ਤੋਂ ਉਤਪੰਨ ਤਣਾਉ, ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰੇ,

ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲੇ ਦੇ ਵਿਭਿੰਨ ਸੰਦਰਭ ਤੇ ਪਾਸਾਰਾਂ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਸਮੁਦਾਇ ਵਿਚ ਹੋ ਰਹੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਰੂਪਾਂਤਰਣ ਦੇ ਆਪਸੀ ਵਿਰੋਧਾਂ, ਸੰਘਰਸ਼ਾਂ, ਸਮਾਜਿਕ ਅੰਤਰ-ਸੰਬੰਧਾਂ ਤੇ ਤਣਾਵਾਂ ਨੂੰ ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਆਪਣੀ ਰਚਨਾਤਮਕਤਾ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਆਪਣੇ ਕਥਾ-ਜਗਤ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੀਆਂ ਤੰਦਾਂ, ਸੰਬੰਧਿਤ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਮੂਹ ਦੀ ਲੋਕ ਪਰੰਪਰਾ (folklore) ਰੀਤੀ ਰਿਵਾਜ, ਵਿਸ਼ਵਾਸ, ਰਹਿਣ-ਸਹਿਣ ਦੇ ਢੰਗ, ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਆਦਿ, ਸਾਹਿਤ ਇਤਿਹਾਸ, ਲਲਿਤ-ਕਲਾਵਾਂ, ਧਰਮ, ਭੂਗੋਲਿਕ ਸਥਿਤੀਆਂ, ਫਲਸਫ਼ੇ, ਆਰਥਿਕ ਤੇ ਭਾਸ਼ਾਈ ਪ੍ਰਬੰਧਾਂ ਆਦਿ ਨਾਲ ਇਕਮਿਕ ਹੋਈਆਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਸਭਿਆਚਾਰ ਇਕ ਜਟਿਲ ਵਰਤਾਰਾ ਹੈ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਦਾ ਪਛਾਣ ਚਿੰਨ੍ਹ ਹੈ। ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲੇ, ਅੰਤਰ-ਦਵੰਦ, ਨਸਲੀ ਤਣਾਓ ਜਾਂ ਟਕਰਾਓ ਉਸ ਸਮੇਂ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਦੋਂ ਵਿਭਿੰਨ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਮੂਹ ਇਕ-ਦੂਜੇ ਦੇ ਆਹਮੋ-ਸਾਹਮਣੇ ਆ ਖੜ੍ਹਦੇ ਹਨ। ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲਿਆਂ ਦਾ ਦਖਲ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ, ਸੰਵੇਦਨਾ ਤੇ ਗ੍ਰਹਿਣ ਸਕਤੀ ਵਿਚ ਦਵੰਦ ਤੇ ਤਣਾਓ ਉਤਪੰਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਬਹੁ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਇਹ ਮਸਲੇ ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਮਾਣਿਕ ਅਨੁਭਵ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਮੂਲ ਸਭਿਆਚਾਰ ਪ੍ਰਤੀ ਆਪਣਾਈ ਗਈ ਅਨੁਕੂਲੀਕਰਨ ਤੇ ਵਿਲੀਨੀਕਰਨ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਜੀਵਨ ਪ੍ਰਤੀ ਭਰਦੇ ਹੁੰਗਾਰੇ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ। ਇਹ ਸਮੁੱਚੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲੇ, ਅੰਤਰ-ਦਵੰਦ ਅਤੇ ਨਸਲੀ ਸੰਘਰਸ਼ ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਕੇਂਦਰੀ ਚੂਲ ਵਜੋਂ ਪ੍ਰਗਟ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਸੇਖਾ ਦੀ ਚਰਚਿਤ ਕਹਾਣੀ 'ਪੰਜਾਬੀ ਸੂਟ' ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲੇ ਨਾਲ ਜੁੜੀ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਕਹਾਣੀ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਦੀ ਲਾਈਨ "ਨੋ ਇੰਡੋ-ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਮੈਨ ਪਲੀਜ਼" ਇਸਨੂੰ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਬਣਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਸਭਿਅਤਾ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਵਿਚਕਾਰਲਾ ਦਵੰਦਾਤਮਕ ਰਿਸ਼ਤਾ ਪਰਸਪਰ ਵਿਰੋਧੀ ਮਾਨਸਿਕ ਸੰਤਾਪ ਤੇ ਸੰਵੇਦਨਾ ਰਾਹੀਂ ਪ੍ਰਗਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਦੀ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਪੰਜਾਬੀ ਕੁੜੀ ਮਜਬੂਰੀ ਵੱਸ ਸੈਕਸ ਟ੍ਰੇਡ ਵਰਕਰ ਦਾ ਕੰਮ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਭਾਵੇਂ ਕਿ ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਇਹ ਨਿੱਜੀ ਜਿਸਮਾਨੀ ਚੋਣ ਅਤੇ ਅਜ਼ਾਦੀ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਫਿਰ ਵੀ ਇਹ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਸਮਾਜ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਦਬਾਅ ਅਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਜਟਿਲਤਾਵਾਂ ਵਾਲੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿੱਚ ਜਿਉਂਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਇਸ਼ਤਿਹਾਰ ਵਿਚ 'ਇੰਡੋ-ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਬੰਦਿਆਂ' ਨੂੰ ਮਿਲਣ ਤੋਂ ਮਨਾਹੀ ਪਿਛੇ ਉਸਦਾ ਆਪਣਾ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਅਵਚੇਤਨ ਹੈ। 'ਮੈਂ ਪਾਤਰ ਆਪਣੇ ਪ੍ਰੇਮੀ ਸੁਹੇਲ ਤੋਂ ਮਿਲੇ ਧੋਖੇ ਕਾਰਨ ਆਪਣਿਆਂ ਤੋਂ ਦੂਰ ਤੇ ਇਕੱਲਤਾ ਭਰੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿੱਚ ਸੈਕਸ ਟ੍ਰੇਡਰ ਬਣਨ ਲਈ ਮਜ਼ਬੂਰ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ 'ਪੰਜਾਬੀ ਸੂਟ' ਉਸਦੇ ਸਮਾਜ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਪਛਾਣ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਬਣਕੇ ਉਭਰਦਾ ਹੈ। "ਤ੍ਰਾਸਦਿਕ ਸਥਿਤੀ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਜਿੱਥੇ ਸਾਊਥ ਏਸ਼ੀਅਨ ਸਮੁਦਾਇ ਦੇ ਮਰਦਾਂ ਤੋਂ ਉਹ ਸ਼ੋਸ਼ਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਉੱਥੇ ਪੱਛਮੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਗੋਰਾ ਪਾਤਰ ਵੀ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਬਦਲੇ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਦਾ ਸਾਧਨ ਸਮਝਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਗੋਰਾ ਪਾਤਰ ਆਪਣੀ ਧੀ ਨਾਲ ਹੋਏ ਗੈਂਗ ਰੇਪ ਦਾ ਬਦਲਾ ਉਸ ਸਮੁਦਾਇ ਦੀਆਂ ਔਰਤਾਂ ਤੋਂ ਲੈਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਨਾਲ ਧੀ ਦੇ ਬਲਾਤਕਾਰੀ ਸੰਬੰਧਤ ਸਨ। ਰੋਗੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਅਧੀਨ, ਈਸਟ ਇੰਡੀਅਨ ਕੁੜੀਆਂ ਦੇ ਕੱਪੜੇ ਉਤਾਰਨਾ ਉਸਨੂੰ ਸਕੂਨ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ"[3] ਚਾਰਲੀ ਦੇ ਇਹ ਨਫ਼ਰਤ ਭਰੇ ਬੋਲ 'ਮੈਂ' ਪਾਤਰ ਲਈ ਆਪਣੀ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਪਛਾਣ ਨਾਲ ਜੁੜੇ ਮੋਹ ਨੂੰ ਵੀ ਕੁਰੇਦਦੇ ਹਨ,"ਮੈਂ ਜਦੋਂ ਕਿਸੇ ਈਸਟ-ਇੰਡੀਅਨ ਕੁੜੀ ਦੇ ਕੱਪੜੇ ਉਤਾਰਦਾ ਹਾਂ ਤਾਂ ਮੈਨੂੰ ਬਹੁਤ ਸਕੂਨ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਮੈਨੂੰ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਮੈਂ ਆਪਣੀ ਧੀ ਦਾ ਬਦਲਾ ਲੈ ਰਿਹਾ ਹੋਵਾਂ। ਜੇ ਕਦੇ ਮੈਨੂੰ ਕੋਈ ਈਸਟ-ਇੰਡੀਅਨ ਕੁੜੀ ਨਹੀਂ ਲੱਭਦੀ ਤਾਂ ਮੈਂ ਜਿਹੜੀ ਵੀ ਮਿਲਦੀ ਹੈ, ਉਸ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਸੂਟ ਪਹਿਨਾ ਦਿੰਦਾ ਹਾਂ ਤੇ ਆਪ ਉਤਾਰਦਾ ਹਾਂ। ਪਰ ਅੱਜ ਤਾਂ ਮੇਰੇ ਕੋਲ

ਕੁੜੀ ਵੀ ਈਸਟ ਇੰਡੀਅਨ ਹੈ. ਸੂਟ ਵੀ ਹੈ ਤੇ ਕੁੜੀ ਵੀ ਉਹ ਜਿਹੜੀ ਈਸਟ ਇੰਡੀਅਨਾਂ ਨੂੰ ਆਪ ਵੀ ਨਫ਼ਰਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਅੱਜ ਦੀ ਸ਼ਾਮ ਸਪੈਸ਼ਲ ਹੋਵੇਗੀ।" ਆਖ ਕੇ ਉਹ ਮੁਸਕਰਾ ਪਿਆ। ਮੈਨੂੰ ਉਸਦੀ ਮੁਸਕਰਾਹਟ ਬੁਰੀ ਲੱਗੀ। ਮੈਂ ਕਿਹਾ,"ਮੇਰੇ ਕੋਲ ਪੰਜਾਬੀ ਸੂਟ ਨਹੀਂ"[4] ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਹਾਣੀ ਇਹ ਵੀ ਦਸਦੀ ਹੈ ਕਿ ਕੈਨੇਡਾ ਵਰਗੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦੀ ਸੁਰੱਖਿਆ ਯਕੀਨੀ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਪ੍ਰਤੀ ਦੋਵੇਂ ਸਭਿਆਚਾਰਾਂ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਮਰਦ ਪਾਤਰਾਂ ਦਾ ਵਿਵਹਾਰ ਅਤੇ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਪ੍ਰਗਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਸੇਖਾ ਦੀ ਕਹਾਣੀ 'ਕਵਿਤਾ ਦੇ ਆਰ-ਪਾਰ' ਭਾਵੁਕ ਅਤ੍ਰਿਪਤੀਆਂ ਦਾ ਮਾਰਮਿਕ ਤੇ ਵਿਅੰਗਮਈ ਦ੍ਰਿਸ਼ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖੀ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਵਿਚ ਆਈ ਗਿਰਾਵਟ ਜਦੋਂ ਦੋਗਲਾ ਅਤੇ ਸੁਆਰਥੀ ਰੂਪ ਅਖਤਿਆਰ ਕਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖੀ ਚੇਤਨਾ ਵਿਚ ਖਿਲਾਰ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਦੀ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਦੀਪ ਆਪਣੇ ਮਾਪਿਆਂ ਦੀ ਮਰਜ਼ੀ ਦੇ ਉਲਟ ਹੋਰ ਧਰਮ ਦੇ ਮੁੰਡੇ ਅਨਵਰ ਨਾਲ ਵਿਆਹ ਕਰਵਾ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੇ ਮਾਪੇ ਗ਼ੈਰ ਧਰਮ ਵਿਚ ਵਿਆਹ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ ਤੇ ਉਸਨੂੰ ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਬਣਨ ਦਾ ਮਿਹਣਾ ਮਾਰਦੇ ਹਨ। ਦੀਪ ਦੇ ਅਗਾਂਹਵਧੂ ਸੋਚ ਵਾਲੇ ਚਾਚੇ ਦੇ ਬੋਲ ਵੀ ਉਸਦੇ ਮਨ ਵਿਚ ਖਲਬਲੀ ਮਚਾ ਦਿੰਦੇ ਹਨ, "ਪਹਿਲਾਂ ਤਾਂ ਉਹ ਮੇਰੀ ਗੱਲ ਹੀ ਨਾ ਸਮਝੇ ਜਦੋਂ ਮੈਂ ਚਿੱਠੀ ਬਾਰੇ ਦੱਸਿਆ ਤਾਂ ਬੋਲੇ, "ਕੁੜੀਏ, ਤੂੰ ਬਹੁਤ ਬੋਲਣ ਲੱਗ ਪਈ ਏਂ। ਤੂੰ ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਕਿੱਥੋਂ ਬਣ ਗਈ, ਹਾਲੇ ਦੋ ਸਾਲ ਤਾਂ ਤੈਨੂੰ ਗਈ ਨੂੰ ਹੋਏ ਆ। ਤੂੰ ਤਾਂ ਮੇਰੇ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਜੰਮੀ ਧੀ ਐਂ"[5] ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਦੀ ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਨੇ ਇਥੋਂ ਦੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਹੀ ਆਪਣਾ ਮੂਲ ਸਭਿਆਚਾਰ ਬਣਾ ਲਿਆ ਹੈ ਜਦਕਿ ਪੁਰਾਣੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਪਰੰਪਰਕ ਮੁੱਲਾਂ ਦੀ ਪਕੜ ਵਿਚ ਕੋਈ ਉਸਾਰੂ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਣ ਵਿਚ ਸਫ਼ਲ ਨਹੀਂ ਹੋਈ ਹੈ। ਦੀਪ ਰੂੜ੍ਹੀਵਾਦੀ ਪਰੰਪਰਾ ਦੇ ਦਾਬੇ ਵਾਲੇ ਮਾਹੌਲ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦੀਆਂ ਸਵੈ ਕਾਮਨਾਵਾਂ ਅਤੇ ਸਵੈ-ਚੇਤਨਾ ਦੀ ਖੁੱਲ੍ਹ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰ ਆਪਣੇ ਪਿਆਰ ਨੂੰ ਪਰਵਾਨ ਚੜ੍ਹਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੇ ਮਾਪੇ ਦੀਪ ਨੂੰ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਹੱਦਬੰਦੀਆਂ ਵਿਚ ਦਬਾ ਕੇ ਰੱਖਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਸਨ, ਜਿਵੇਂ ਉਸਨੂੰ ਲਗਦਾ ਸੀ ਕਿ ਚਾਚਾ ਜੀ ਦੀਪ ਤੇ ਅਨਵਰ ਦੇ ਪਿਆਰ ਵਿਆਹ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰ ਲੈਣਗੇ, ਪਰੰਤੂ ਉਸ ਦਾ ਭਰਮ ਉਦੋਂ ਟੁੱਟਦਾ ਹੈ ਜਦੋਂ ਚਾਚਾ ਜੀ ਕੈਨੇਡਾ ਵਿਚ ਇਕ ਕਾਨਫਰੰਸ ਲਈ ਆਉਂਦੇ ਹਨ ਤੇ ਚਾਚਾ ਜੀ ਦਾ ਵਿਵਹਾਰ ਦੀਪ ਤੇ ਅਨਵਰ ਪ੍ਰਤੀ ਰੁੱਖਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਚਾਚਾ ਜੀ ਦੀ ਮਹਿਲਾ ਮਿੱਤਰ ਤੇ ਲੇਖਿਕਾ ਕਵਿਤਾ ਦੀਪ ਨੂੰ ਹੌਂਸਲਾ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਦੀਪ ਤੇ ਕਵਿਤਾ ਦੀਆਂ ਆਪਸੀ ਗੱਲਾਂ ਵਿਚ ਕਵਿਤਾ ਦੀ ਆਪਣੀ ਭਾਵਨਾ ਤੇ ਦਰਦ ਵੀ ਬਾਹਰ ਆ ਜਾਂਦੇ ਹਨ ਕਿ ਔਰਤ ਆਰਥਿਕ ਪੱਖੋਂ ਆਤਮ ਨਿਰਭਰ ਹੋ ਕੇ ਵਿਆਹ ਤਾਂ ਕਰਵਾ ਲੈਂਦੀ ਹੈ, ਪਰ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਭਾਵੁਕ ਅਤ੍ਰਿਪਤੀ ਅਵਚੇਤਨ ਨੂੰ ਬੁਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਝੰਜੋੜ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।

ਪਰੰਪਰਕ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨਾਲ ਟਕਰਾਓ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਪਰਿਵਾਰਕ ਸੰਬੰਧਾਂ ਵਿਚ ਪਰਿਵਰਤਨ ਲਿਆਉਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਵੈ-ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਖੇਰੂੰ-ਖੇਰੂੰ ਕਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਉਂਝ ਤਾਂ ਪਰੰਪਰਕ ਮੁੱਲ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਨਾਲ ਸ਼ਕਤੀਸ਼ਾਲੀ ਸਨ, ਪਰ ਨਵੇਂ ਪਰਿਵਰਤਨਾਂ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਣਾ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਸਾਧਾਰਨ ਲੋਕਾਂ ਦੁਆਰਾ ਪਰੰਪਰਕ ਮੁੱਲਾਂ ਨੂੰ ਛੱਡ ਕੇ ਨਵੇਂ ਪ੍ਰਤਿਮਾਨ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨਾ ਔਖਾ ਹੈ। ਇਸ ਕਾਰਨ ਉਹ ਤਣਾਓ ਤੇ ਸੰਤਾਪ ਹੰਢਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਇਹ ਤਣਾਓ ਉਦੋਂ ਹੋਰ ਵੀ ਵੱਧ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਜਦੋਂ ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਵਿਰੁੱਧ ਲਾਮਬੰਦ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ 'ਛੱਪੜ' ਵਿੱਚ ਸੇਖਾ ਜਾਤੀਵਾਦੀ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦੁਆਰਾ ਸੰਤਾਪ ਹੰਢਾਉਂਦੇ 'ਜੈਲਦਾਰ' ਦੇ ਮਨੋਬਿਰਤਾਂਤ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿਚਲਾ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਕੈਨੇਡਾ ਵਿਚ ਆਪਣੇ ਪਿਉ ਵਾਂਗੂੰ ਜੀਪ ਉੱਤੇ ਜ਼ੈਲਦਾਰ

ਲਿਖਵਾਉਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਅਸਲ ਵਿੱਚ 'ਜੈਲਦਾਰ' ਸ਼ਬਦ ਉਸਦੇ ਮਨ ਵਿਚ ਉੱਚੀ ਜਾਤੀ ਵਾਲਾ ਬਿੰਬ ਹੈ, ਜਿਹੜਾ ਉਸਨੂੰ ਆਪਣੀ ਅਣਖ ਜਾਪਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਲਈ ਇਹ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੇ ਸਿਸਟਮ ਮਨੁੱਖੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਤੇ ਅਣਖ ਤੋਂ ਪਰ੍ਹੇ ਹੈ। ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਦਾ ਪੁੱਤਰ ਆਪਣੇ ਪਿਉ ਦੇ ਇਸ ਵਿਵਹਾਰ ਨੂੰ ਨਕਾਰਦਾ ਹੋਇਆ ਆਖਦਾ ਹੈ, "ਯੂ ਡੌਂਟ ਹੈਵ ਟੂ ਵੇਸਟ ਮਨੀ ਆਨ ਦੈਟ" ਉਸ ਨੇ ਨਸ਼ੇ ਦੇ ਲੋਰ ਵਿਚ ਆਖਿਆ, "ਡੌਂਟ ਵਰੀ ਅਬਾਊਟ ਮਨੀ। ਆਪਾਂ ਵਧੀਆ ਜੀਪ ਲਵਾਂਗੇ ਨਾਲੇ ਪਿੱਛੇ 'ਜ਼ੈਲਦਾਰ ਲਿਖਵਾਵਾਂਗੇ।"

"ਆਈ ਡੌਂਟ ਲਾਈਕ ਬੰਪਰ ਸਟਿਕਰਸ" ਆਪਣੇ ਪੁੱਤਰ ਦੀ ਇਹ ਗੱਲ ਸੁਣ ਕੇ ਉਸ ਨੇ ਝੱਟ ਕਿਹਾ, "ਇਹ ਬੰਪਰ ਸਟਿਕਰ ਨੀਂ। ਯੂਅਰ ਗ੍ਰੇਟ ਗਰੈਂਡਫਾਦਰ ਵਾਜ਼ ਏ ਜ਼ੈਲਦਾਰ ਤੈਨੂੰ ਮਾਣ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ"[6]

ਸਾਮੰਤਵਾਦੀ ਪਰੰਪਰਕ ਸੋਚ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਜਾਤ-ਪਾਤ ਦੇ ਘੇਰੇ ਵਿਚ ਵੰਡੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਫੈਲੇ ਹੋਏ ਜਾਤੀਵਾਦੀ ਸਿਸਟਮ ਦੀਆਂ ਪਰਤਾਂ ਇੰਨੀਆਂ ਸੰਘਣੀਆਂ ਹਨ ਕਿ ਕੈਨੇਡਾ ਵਿੱਚ ਵਸ ਜਾਣ 'ਤੇ ਵੀ ਪੰਜਾਬੀ ਬੰਦਾ ਇਸਨੂੰ ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਪੁਰਾਣੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਤੇ ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਦਾ ਜਾਤੀਵਾਦੀ ਦਵੰਦ ਇਸ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਉਭਰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਜਿਥੇ ਪੁਰਾਣੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਲਈ ਜਾਤੀਵਾਦੀ ਘੇਰੇ ਕਾਫ਼ੀ ਸੰਘਣੇ ਹਨ, ਉਥੇ ਹੀ ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਇਹਨਾਂ ਪਰੰਪਰਕ ਜਾਤੀਵਾਦੀ ਘੇਰਿਆਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੈ, ਉਹ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਯੁੱਗ ਦੇ ਨਵੇਂ ਮੁਹਾਂਦਰੇ ਵਾਲੇ ਸਮਾਜ ਵੱਲ ਅਗਰਸਰ ਹੈ। ਨਵੀਂ ਪੀੜ੍ਹੀ ਪੱਛਮੀ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਅਤੇ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਹੀ ਆਪਣਾ ਮੂਲ ਸਭਿਆਚਾਰ ਸਮਝਦੀ ਹੈ, ਪਰ ਪੁਰਾਣੀ ਪੀੜ੍ਹੀ ਕਾਫ਼ੀ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਪਰਵਾਸ ਵਿਚ ਰਹਿਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਵੀ ਨਵੇਂ ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਕਬੂਲ ਨਹੀਂ ਕਰ ਪਾਉਂਦੀ।ਇਹਨਾਂ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਵਲਗਣਾ ਨੂੰ ਅਣਖ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਵਜੋਂ ਲੈ ਕੇ ਆਪਣੀ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਸੁੱਖ-ਸ਼ਾਂਤੀ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਮਾਨਸਿਕ ਸ਼ਾਂਤੀ ਨੂੰ ਵੀ ਖ਼ਤਮ ਕਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। ਕਈ ਵਾਰੀ ਇਹ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਜਕੜ ਆਨਰ ਕਿਲਿੰਗ ਵਰਗਾ ਖਤਰਨਾਕ ਰੂਪ ਵੀ ਅਖਤਿਆਰ ਕਰ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। 'ਤੂੰ ਹੀ ਬੋਲ' ਕਹਾਣੀ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਤਰਸੇਮ ਦੀ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਜਕੜ ਦਾ ਹੀ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੈ। ਤਰਸੇਮ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਪੱਛਮੀ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰੱਖਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਦਵੰਦ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਪਰਦੇਸ ਦੀਆਂ ਆਰਥਿਕ ਸੁੱਖ-ਸਹੂਲਤਾਂ ਨੂੰ ਤਾਂ ਭੋਗਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਲੇਕਿਨ ਆਪਣੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਇਸਦੇ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਵਿਵਹਾਰ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਰੱਖਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਤਰਸੇਮ ਦੀ ਪਤਨੀ ਆਖਿਆ ਹੈ ਕਿ ਬੱਚੇ ਜਿਵੇਂ ਦਾ ਵੇਖਣਗੇ ਉਵੇਂ ਹੀ ਵਿਵਹਾਰ ਕਰਣਗੇ। ਦੋਵੇਂ ਮਾਪੇ ਧੀ ਗੁਰਨੀਤ ਬਾਰੇ ਚਿੰਤਿਤ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਤਰਸੇਮ ਤੇ ਉਹਦਾ ਸਹਿਕਰਮੀ ਬਰਾਇਨ ਸਦਾ ਹੀ ਪੱਛਮੀ ਤੇ ਪੂਰਬੀ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਬਾਰੇ ਹਾਂ ਤੇ ਨਾਂਹ ਪੱਖੀ ਗੱਲਾਂ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਤਰਸੇਮ ਪਰੰਪਰਕ ਮੁੱਲਾਂ ਦੀ ਜਕੜ ਕਾਰਨ ਬੱਚਿਆਂ ਦੇ ਆਪਣੇ ਵਿਆਹ ਬਾਰੇ ਫ਼ੈਸਲਾ ਲੈਣ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਤੋਂ ਕਾਫ਼ੀ ਗੁੱਸਾ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਆਨਰ ਕਿਲਿੰਗ ਵਰਗੇ ਕਦਮ ਮਾਪੇ ਇਸੇ ਦੁੱਖ ਅਤੇ ਗੁੱਸੇ ਵਿਚ ਚੁੱਕਦੇ ਹਨ, ਨਹੀਂ ਤਾਂ ਕਿਹੜਾ ਪਿਓ ਆਪਣੀ ਧੀ ਨੂੰ ਕਤਲ ਕਰਨਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਤਾਂ ਬੱਚੇ ਕਸੂਰਵਾਰ ਨੇ ਜਿਹੜੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਮੁੱਲਾਂ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਨਹੀਂ ਸਮਝਦੇ ਹਨ। ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਬਰਾਇਨ ਅਨੁਸਾਰ ਸਭਿਆਚਾਰ ਇਕ ਸਵੱਸਥ ਸਮਾਜ ਤੇ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਮਾਪਿਆਂ ਦਾ ਫਰਜ਼ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਾਉਣਾ-ਲਿਖਾਉਣਾ ਤੇ ਕਾਬਿਲ ਬਣਾਉਣਾ ਹੋਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਤੇ ਜੀਵਨ ਸਾਥੀ ਚੁਣਨ ਵਿਚ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪੂਰੀ ਛੋਟ ਹੋਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਹਨ ਕਿ ਬੱਚਿਆਂ ਦੇ ਆਪਣੀ ਮਰਜ਼ੀ ਨਾਲ ਜੀਵਨ ਸਾਥੀ ਚੁਣਨ ਨਾਲ

ਕਲਚਰ ਵਿਚ ਵਿਕਾਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਵਿਨਾਸ਼ ਨਹੀਂ। "ਬਰਾਇਨ ਦੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਸੁਣ ਕੇ ਤਰਸੇਮ ਦਾ ਮਨ ਗੁੱਸੇ ਨਾਲ ਭਰ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਖਿਝ ਕੇ ਬੋਲਦਾ ਹੈ: "ਬਰਾਇਨ ਇਹ ਸਾਡਾ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲਾ ਹੈ, ਤੂੰ ਨਹੀਂ ਸਮਝ ਸਕਦਾ" [7]

'ਦੋ ਰੰਗੀ' ਅਤੇ 'ਗੁਆਂਢ ਮੱਥਾ' ਦੋਵੇਂ ਹੀ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਸੇਖਾ ਨੇ ਨਵੇਂ ਸਮਕਾਲੀ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲੇ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਇਹ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮਸਲਾ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਦੋ ਰੰਗ ਜਾਂ ਨਸਲ ਦੇ ਅੰਤਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ। ਇਕ ਦੀ ਪਿੱਠਭੂਮੀ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਧਰਾਤਲ ਹੈ ਤੇ ਦੂਜੀ ਦੀ ਪਿਠਭੂਮੀ ਕੈਨੇਡਾ ਦੀ ਧਰਾਤਲ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ 'ਦੋ ਰੰਗੀ' ਪੰਜਾਬ ਦੇ 'ਭਈਆਕਰਣ' ਦੇ ਵਿਸ਼ੇ ਨੂੰ ਨਾਲ ਤੋਰਦੀ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਵਿਚ ਬਾਹਰੀ ਪ੍ਰਦੇਸ਼ਾਂ ਤੋਂ ਆ ਕੇ ਵਸੇ ਪਰਵਾਸੀ ਮਜ਼ਦੂਰਾਂ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਸੇਖਾ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਨੂੰ ਖਿੱਚਦੀ ਹਨ, ਉਹ ਭਈਆਂ ਦੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਂਚ ਅਤੇ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੀ ਜੀਵਨ-ਜਾਂਚ ਵਿੱਚ ਤੁਲਨਾ ਕਰਕੇ ਕਹਾਣੀ ਸਿਰਜਦਾ ਹੈ। ਪਰਵਾਸੀ ਮਜ਼ਦੂਰਾਂ ਬਾਰੇ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਦੀ ਜਿਹੜੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਹੈ. ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਕੈਨੇਡਾ ਦੇ ਮੂਲ ਵਾਸੀਆਂ ਦੀ ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀਆਂ ਬਾਰੇ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ 'ਦੋ ਰੰਗੀ' ਦਾ ਬਿਰਤਾਂਤ ਵਾਸਤਵ ਵਿਚ ਸੇਖਾ ਦੇ ਮਨ ਦੀ ਇਸ ਬੇਚੈਨੀ ਦਾ ਵਿਰੇਚਨ ਹੈ। ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਸੇਖਾ ਨੇ ਆਪਣੀ ਬੇਚੈਨੀ ਨੂੰ ਬਾਹਰ ਕੱਢਿਆ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਦੇ ਬਿਰਤਾਂਤ ਅਨੁਸਾਰ:

"ਦੇਖੋ ਨਾ ਇਹ ਸੱਚ ਹੈ ਕਿ ਅਸੀਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਈਆਂ ਨੂੰ ਬੰਦੇ ਨਹੀਂ ਸਮਝਦੇ ਇਥੋਂ ਤੱਕ ਕਿ ਪੰਜਾਬ 'ਚ ਬੱਸਾਂ ਦੇ ਕੰਡਕਟਰ ਵੀ ਆਖ ਦਿੰਦੇ ਆ ਕਿ ਭਈਏ-ਭਈਏ ਬੱਸ ਦੀ ਛੱਤ 'ਤੇ ਚੜ੍ਹ ਜਾਓ, ਪਰ ਇਕ ਨਾਮਵਰ ਲੇਖਕ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸ਼ਬਦਾਵਲੀ ਵਰਤੇ ਬਹੁਤੀ ਸੋਭਾ ਨਹੀਂ ਦਿੰਦਾ।..."ਸੱਚ ਪੁੱਛੋ ਤਾਂ ਮੈਨੂੰ ਲੱਗਾ, ਜਿਵੇਂ ਉਹ ਕੋਈ ਨਸਲਪ੍ਰਸਤ ਅੰਗਰੇਜ਼ ਹੋਵੇ ਤੇ ਸਾਡੇ ਪ੍ਰਵਾਸੀਆਂ ਬਾਰੇ ਆਖ ਰਿਹਾ ਹੋਵੇ ਕਿ ਪ੍ਰਵਾਸੀਆਂ ਦੀਆਂ ਹੋੜ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਹੋੜ੍ਹਾਂ ਆ ਰਹੀਆਂ ਹਨ" ਭਗਤ ਨੇ ਕਿਹਾ।" [8]

'ਗੁਆਂਢ-ਮੱਥਾ' ਕਹਾਣੀ 'ਨਸਲਵਾਦ' ਦੀ ਸਮੱਸਿਆ ਦਾ ਸਕਾਰਾਤਮਕ ਸੁਲਝਾਉ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਸਮਾਜ ਵਿਗਿਆਨੀਆਂ ਦਾ ਕਹਿਣਾ ਹੈ ਕਿ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਨਸਲਵਾਦ ਅਕਸਰ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਵਰਗ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਪ੍ਰਤੀ ਦੂਜਿਆਂ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਜਾਣਕਾਰੀ ਦੀ ਘਾਟ ਤੋਂ ਉਪਜਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਵੀ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਕ ਤੱਥ ਹੈ ਕਿ ਕਿਸੇ ਘਟਨਾ ਪ੍ਰਤੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਵਰਗ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਹੱਦ ਤੋਂ ਵੱਧ ਪ੍ਰਤੀਕਰਮ ਇਸ ਚਿਣਗ ਨੂੰ ਹਵਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਇਕ ਅਪਾਰਟਮੈਂਟ ਬਿਲਡਿੰਗ ਵਿਚ ਆ ਕੇ ਨਵਾਂ ਵਸਿਆ ਜੋੜਾ ਰਾਜਵੀਰ ਤੇ ਸਿੰਮੀ ਨੂੰ ਜਾਪਦਾ ਹੈ ਕਿ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਹੇਠਲੇ ਯੂਨਿਟ ਵਿਚ ਵਸਦੇ ਗੋਰੇ ਨਸਲਵਾਦੀ ਵਿਤਕਰੇ ਕਾਰਨ ਸਿੰਮੀ ਹੁਰਾਂ ਦੇ ਯੂਨਿਟ ਵਿਚ ਇਕ ਪਾਰਟੀ ਦੌਰਾਨ ਹੋਏ ਖੜ੍ਹਾਕੇ ਦੀ ਬਿਲਡਿੰਗ ਮੈਨੇਜਰ ਕੋਲ ਸ਼ਿਕਾਇਤ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਕੈਨੇਡਾ ਦੇ ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਦੇ ਮਨੋ-ਯਥਾਰਥ ਨੂੰ ਵੀ ਬੜੇ ਕਾਰਗਰ ਢੰਗ ਨਾਲ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਸੇਖਾ ਆਪਣੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਦੇ ਮਨੋਯਥਾਰਥ ਤੇ ਮਨੋ-ਸੰਤਾਪ ਬਾਰੇ ਕੇਵਲ ਸੂਚਨਾਤਮਕ ਟਿੱਪਣੀਆਂ ਹੀ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ ਸਗੋਂ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਵਸਤੂ ਯਥਾਰਥ ਦੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚਲੇ ਬਿਰਤਾਂਤ ਜੈਂਡਰ ਇਨ ਇਕੁਆਲਟੀ, ਅਨੈਤਿਕ ਚਰਿੱਤਰ, ਪੀੜ੍ਹੀ-ਪਾੜਾ, ਨਸਲੀ ਵਿਤਕਰਾ, ਨਵੇਂ ਪਰਵਾਸੀਆਂ ਦਾ ਜੀਣ-ਥੀਣ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼, ਪਰਵਾਸ ਲਈ ਵਰਤੇ ਜਾਂਦੇ ਯੋਗ-ਅਯੋਗ ਢੰਗ, ਦੂਜੀਆਂ ਕੌਮਾਂ ਨਾਲ ਇੰਟਰੈਕਸ਼ਨ, ਬਹੁ-ਸਭਿਆਚਾਰਵਾਦ ਕਾਰਨ ਪੈਦਾ ਹੋਇਆ ਵਿਲੱਖਣ

ਜੀਵਨ ਢੰਗ, ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਬਦਲਦੇ ਸਮੀਕਰਨ ਅਤੇ ਪੱਛਮੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਅਧੀਨ ਜਾਗੀਰੂ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਦੇ ਟੁੱਟਣ ਆਦਿ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟਾਉਣ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਤ ਹਨ।

ਹਵਾਲੇ

1. ਹਰਚੰਦ ਸਿੰਘ ਬੇਦੀ(ਸੰਪਾ.), ਪਰਵਾਸੀ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਸੰਦਰਭ ਕੋਸ਼, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ,2004,ਪੰਨਾ-95
2. ਸੁਖਿੰਦਰ, ਕੈਨੇਡੀਅਨ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ,ਵਿਸ਼ਵ ਭਾਰਤੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਬਰਨਾਲਾ,2010 ਪੰਨਾ-152
3. ਅਕਾਲ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਕੌਰ(ਸੰਪਾ.), ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਛੇ ਕਹਾਣੀਆਂ, ਪੀਪਲਜ਼ ਫੋਰਮ ਬਰਗਾੜੀ,2025, ਪੰਨਾ-14
4. ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ,ਪ੍ਰਿਜ਼ਮ,ਗ੍ਰੇਸੀਅਸ ਬੁਕਸ, ਪਟਿਆਲਾ,2017, ਪੰਨਾ-26
5. ਉਹੀ, ਬਾਰਾਂ ਬੂਹੇ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ,2013, ਪੰਨਾ-55
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-8
7. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ-131
8. ਉਹੀ, ਬੀਜੀ ਮੁਸਕਰਾ ਪਏ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ,2011,ਪੰਨਾ-126

harjeetsran@gmail.com, 9878304562

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 152-154
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

भारतरत्न पंडित मदनमोहन मालवीय और हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान

LAV KESH BAHADUR SINGH
Research scholar history,
P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur
Dr.Shrikrishna singh
professor history,
P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur

परिचय

राष्ट्रहित में जीवन समर्पण ना तो साधारण बात है ना ही यह अवसर साधारण जनो को प्राप्त हो सकता है। महामना पंडित मदनमोहन मालवीय के उद्भव का समय वह समय था। जब हमारा देश पराधीनता की वेडियों से जकड़ा हुआ था। उस समय हमार देश नाना प्रकार के संकटों से ग्रस्त था। भयानक अकाल के कारण लोग असामयिक काल के गाल में समाये जा रहे थे। लोग मजबूर थे गरीबी, अशिक्षा, भुखमरी, सामाजिक असमानता तथा इससे भी बढ़कर हमारा समाज विभिन्न प्रकार की कुरीतियों से ग्रस्त था।

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारतीय संसाधनों का प्रयोग अपने हित को सुरक्षित करने के लिए किया। ब्रिटिश शासन के "फूट डालो और राज करो" की नीति ने भारतीय समाज को और अधिक विखंडित करने का कार्य किया। परिणाम स्वरुप जाति, धर्म और क्षेत्रवाद को बढ़ावा मिलने लगा। सभी भारतीय आपस में एक दूसरे से आशंकित रहते थे। गंगा यमुना की सभी अच्छाइयों को अवशोषित कर टेम्स नदी में छोड़ा जाने लगा। हमारे देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से लेकर भारत की आजादी प्राप्ति करने के समय तक का इतिहास अनेक संघर्षपूर्ण उतार चढ़ाव से भरा हुआ है।

पंडित मदनमोहन मालवीय के जन्म के पूर्व देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में हमारी पराजय हो चुकी थी। इस पराजय की व्याकुलता समूचे देश में व्याप्त थी। इसी अवसाद की दशा में पंडित मदनमोहन मालवीय का बचपन बीता। किंतु कुछ ही समय बाद फिर सुबह हुई और राष्ट्रीय चेतना अंगड़ाई लेने लगी। 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में राष्ट्र में जागृत के लक्षण दृष्टिगत होने लगे।

यह वह समय था जब हिंदी, हिंदू और हिंदुस्तान तीनों ही सुषुप्तावस्था में थे। राष्ट्र में नई चेतना का विजारोपण इसी काल में हुआ। आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने वाले विचारशील एवं स्वाभिमानी युवकों को अपने राष्ट्र में इन तीनों की दुरावस्था देखकर बड़ी ग्लानि महसूस करते थे। महामना का बचपन श्रीमद्भागवतगीता एवं उपनिषदों के मत्रों के बीच

बीता। अतः उन्होंने विद्यार्थी जीवन में ही इसका अनुभव किया और आरंभिक समय में ही उन्होंने हिंदू धर्म की रक्षा एवं उसके उत्थान के लिए प्रयास करना आरंभ कर दिया।

वह सदैव एक धर्मिष्ठ ब्राह्मण के साथ ही आधुनिक शिक्षा के प्रबल हितैषी थे। वे महान प्रगतिशील हिंदू विचारक भी थे। उन्होंने तक्षशिला एवं नालंदा की परंपरा को काशी हिंदू विश्वविद्यालय के रूप में पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। उन्होंने पूर्व में व्याप्त अंग्रेजी, फारसी के स्थान पर हिंदी एवं देवनागरी को राष्ट्र की पहचान बनाने में अहम योगदान दिया। पंडित मदनमोहन मालवीय महान शिक्षा प्रेमी प्रथम पंक्ति के हिंदू विचारक एवं अपने नेतृत्व क्षमता से हिंदी को अमूल्य स्थान प्रदान करने में अहम योगदान देने वाले राष्ट्रभक्त थे। उनके विराट व्यक्तित्व में अद्भुत क्षमताओं का मणिकांचन संक्षेप में हुआ है।

अध्ययन का उद्देश्य

1- भारतरत्न पंडित मदनमोहन मालवीय के बारे में जानना।

2- महामना के कृतकार्यों का अध्ययन करना।

3- महामना पंडित मदनमोहन मालवीय के विराट व्यक्तित्व की जानकारी प्रदान करना।

पंडित मदनमोहन मालवीय एवं हिंदी हिंदू हिंदुस्तान

19वीं शताब्दी में जब हिंदी और नगरी के लिए चारों ओर निराश का वातावरण छाया हुआ था। तब पंडित मदनमोहन मालवीय ने इसके लिए अविस्मरणीय महत्वपूर्ण प्रयत्न किया। उनके हिंदी भाषा के प्रति संघर्षों के कारण ही उन्हें प्रथम हिंदी साहित्य सम्मेलन का सभापति मनोनीत किया गया। पंडित मदन मोहन मालवीय को यह सम्मान ऐसे ही सरल रूप में नहीं प्राप्त हुआ। यह उनके योग्यता पूर्ण व्यवहार के कारण यह सम्मान उन्हें अर्जित हुआ। उन्होंने अपने बाल्य काल में ही मीरा और सूरदास के सैकड़ो पदों का उन्होंने उसे उत्कृष्टतापूर्ण संकलन कर लिया था। उन्होंने भारतेंदु कालीन समस्या पूर्ति के क्रम में 'मकरंद' उपनाम से 'राधारानी' की समस्या पूर्ति में अनेक मधुर सवैया लिखें। इसके उपरांत उन्होंने 'जेंटलमैन' नाम का एक प्रहसन की रचना किया था। उन पर प्रताप नारायण मिश्र के बहुमूल्य नारा 'हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान' का गहरा प्रभाव था।

पंडित मदनमोहन मालवीय अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए सदैव चिंतित रहते थे। उन्होंने अपने कुछ साथियों के साथ मिलकर सन् 1884 में प्रयाग में 'केंद्रीय हिंदू सभा' की स्थापना में अहम योगदान दिया तथा सन् 1887 में भारत धर्म महामंडल की स्थापना में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। कुछ ही समय उपरांत ही उन्हीं के प्रयासों से 'सनातन धर्म सभा' की स्थापना हुई। इस सभा का उद्देश्य हिंदू धर्म के उन्नति लिए कार्य करना था। जब राजनीतिक क्षेत्र मैं हिंदू हितों की रक्षा की आवश्यकता महसूस होने लगी तो उन्हीं के अहम एवं अनवरत प्रयासों से हिंदू महासभा की स्थापना हुई।

महामना पंडित मदनमोहन मालवीय का हिंदू धर्म संकुचित विचारों से मुक्त था। वह हिंदू धर्म के उच्च आदर्श में विश्वास करते थे। उच- नीच में उनका विश्वास नहीं था। हरिजन सेवक कहलाने पर वे गर्व महसूस करते थे। उन्होंने प्रयागराज तथा काशी के अलावा कई स्थानों पर अछूतों को स्वयं मंत्र दीक्षा देकर उन लोगों को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि वे सभी हिंदू हैं। तथा उन्हें भी सभी प्रकार के धार्मिक कृत्य करने का अधिकार है। उन्हें निश्चित रूप से मंदिर जाने का पूर्ण अधिकार है। तथा वहां स्थापित देवता का दर्शन तथा निष्ठा पूर्वक पूजा करने का भी पूर्ण अधिकार है। पौराणिक रूप से उन्हें ऐसा करने से कोई रोक नहीं सकता।

पंडित मदन मोहन मालवीय हिंदू धर्म प्रचार के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। इसी संदर्भ में उन्होंने सन् 1933 में काशी से 'सनातन धर्म' नामक साप्ताहिक पत्र का आरंभ करवाया। जिसके माध्यम से हिंदू धर्म के व्यापक सिद्धांत प्रचार के साथ-साथ गोवंश की रक्षा तथा गौ सेवा का प्रचार आम जनमानस तक किया जा सके। लगभग उसी समय मालवीय जी ने लाहौर से प्रकाशित 'विश्वबंधु' पत्र को प्रोत्साहन देने का प्रयास किया। जिसके माध्यम से हिंदू संगठनों द्वारा शुद्धि आंदोलन को समर्थन प्रदान किया जाता था।

इन सब के अतिरिक्त पंडित मदनमोहन मालवीय भारत के एक ऐसे नेता थे, जिन्हें कांग्रेस में सर्वाधिक बार अध्यक्ष पद को सुशोभित करने का अवसर प्राप्त हुआ। पंडित मदनमोहन मालवीय सन् 1909, 1918, 1932 तथा 1933 में कांग्रेस के अध्यक्ष पद हेतु नामित हुए। उन्होंने सदैव कांग्रेस मंच का प्रयोग देशहित के लिए किया। इसी के माध्यम से उन्होंने ब्रिटिश सरकार की दमनकारी नीतियों का विरोध करते हुए राजनीतिक सुधारो की मांग की। उनका संपूर्ण जीवन राष्ट्र सेवा में ही बीता। महामना पंडित मदनमोहन मालवीय के इन्हीं कार्यों से प्रभावित होकर भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उनके बारे में कहा कि "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जब से शुरू हुई, तब से उसे बनाने और बढ़ाने में मालवीय जी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है"। मालवीय जी भारत की स्वतंत्रता के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहे।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्ष स्वरूप में यह कहा जा सकता है कि 'हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान' के हिमायती भारतरत्न पंडित मदनमोहन मालवीय की विमल कीर्ति संपूर्ण भारत में व्याप्त है। उनके सामान विभिन्न क्षेत्र में योगदान देने वाला कोई दूसरा पथ प्रदर्शक शायद ही मिले। सच्चे अर्थों में पंडित मदनमोहन मालवीय आधुनिक भारत के ब्रह्म ऋषि थे। उन्हीं के प्रयासों से ही बनारस हिंदू विश्वविद्यालय जैसे मूर्धन्य शिक्षण संस्था के रूप में स्थान ले सका। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी महामना मदनमोहन मालवीय को अपना बड़ा भाई मानते थे। भारतीय राजनीति, शिक्षा तथा समाज सेवा में पंडित मदनमोहन मालवीय का योगदान अद्वितीय रहा। ऋषिकल्प महामना पंडित मदनमोहन मालवीय का संपूर्ण जीवन आदर्श है। तथा उनका प्रत्येक आचरण प्रेरणा पद के साथ अनुकरणीय है। अतः जब तक हमारी इस पावन धरा पर ज्ञान पोशाक गाथा की एक भी पंक्ति रहेगी तब तक महामना मदनमोहन मालवीय का अमर व्यक्तित्व पुष्प में सौरभ के समान इस देश के एक-एक कण में व्याप्त रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1- भारत भूर्ण महामना पंडित मदनमोहन मालवीय -उमेश दत्त ततवारी।

2- न्यायालय में महामना- अशोक मेहता।

3- महामाना पंडित मदनमोहन मालवीय -सीताराम चतुवेदी।

4- महामना के लेख और भाषण-वासुदेव शरण अग्रवाल।

5- भारत रत्न- अनिल कुमार, मनीष कुमार।

6- प्रज्ञा- पंडित मदन मोहन मालवीय हीरक जयंती विशेषांक 1976,1977 अंक 21, 22, 23।

7- तीस दिनमालवीय जी के साथ- पंडित रामनरेश त्रिपाठी।

Mob.no.9648619567 Email.shaileshbsc9838@gmail.com Mobile .number 9452004646
Email.Skrishana51@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 155-157
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

भारतीय ज्ञान परंपरा का गणितीय आयाम: स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ के 16 सूत्रों का विश्लेषण एवं शैक्षणिक अनुप्रयोग

श्रीमती सरिता आचार्य
सा. प्रा. गणित विभाग,
श्री उमा कन्या महाविद्यालय हाटपीपल्या जिला देवास (मध्य प्रदेश)

सारांश
यह शोध आलेख स्वामी भारती कृष्ण तीर्थजी द्वारा अथर्ववेद के परिशिष्टों से पुनर्गठित 'वैदिक गणित' के 16 सूत्रों का विस्तृत विवेचन करता है। इस अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि कैसे ये सूत्र केवल गणना की युक्तियों के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा के 'तार्किक एल्गोरिदम' के रूप में कार्य करते हैं। यह आलेख इन सूत्रों की गणितीय संरचना, उनकी संज्ञानात्मक उपयोगिता और आधुनिक शिक्षा प्रणाली में उनके एकीकरण की संभावनाओं का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परंपरा में गणित को 'गणित शास्त्र' कहा गया है, जो वेदों के वेदांगों का एक अभिन्न अंग है। प्राचीन भारत में गणितीय चिंतन केवल संख्याओं के जोड़-घटाव तक सीमित नहीं था, बल्कि यह ब्रह्मांड के सूक्ष्म नियमों को समझने का एक माध्यम था। 20वीं सदी के प्रारंभ में, जगतगुरु स्वामी भारती कृष्ण तीर्थजी ने अथर्ववेद के अध्ययनों के आधार पर 16 सूत्रों को प्रतिपादित किया, जो वैदिक गणित की आधारशिला बने। यह शोध इन सूत्रों को एक दार्शनिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करता है।

(अ) 16 सूत्रों का दार्शनिक एवं गणितीय विवेचन

स्वामी भारती कृष्ण तीर्थजी द्वारा प्रतिपादित इन सोलह सूत्रों को यदि हम एक क्रम में देखें, तो वह इस प्रकार से है।

(१) प्रथम सूत्र 'एकाधिकेन पूर्वेण'

प्रथम सूत्र एकाधिकेन पूर्वेण है। जिसका अर्थ है पूर्व से एक अधिक। यह विशेष रूप से वर्ग निकालने और गुणा करने में अत्यंत प्रभावी है।

(२) दूसरा सूत्र 'निखिलं नवतश्चरमं दशतः '

दूसरा सूत्र 'निखिलं नवतश्चरमं दशतःआता है। जिसका शाब्दिक अर्थ है सभी को नौ से और अंतिम को दस से घटाना। यह सूत्र आधार (base) विधि के माध्यम से बड़ी संख्याओं के गुणनफल को सरल बनाता है।

(३) तीसरा सूत्र 'ऊर्ध्वतिर्यग्भ्याम्

'तीसरा सूत्र 'ऊर्ध्वतिर्यग्भ्याम् है।जो ऊर्ध्व और तिर्यक विधि से गुणा करने की एक सार्वभौमिक पद्धति प्रदान करता है।

(४) चतुर्थ सूत्र 'परावर्त्य योजयेत् '

चतुर्थ सूत्र 'परावर्त्य योजयेत्

सूत्र का अर्थ है।स्थानांतरित करना और समायोजित करना, जो बीजगणितीय समीकरणों को हल करने में क्रांतिकारी है।

(५) पांचवां सूत्र 'शून्यं साम्यसमुच्चये '

पांचवां सूत्र 'शून्यं साम्यसमुच्चये

है। जो यह बताता है कि जब समुच्चय समान हों, तो उनका मान शून्य होता है।

(५) छठा सूत्र 'आनुरूप्ये शून्यमन्यत्

छठा सूत्र 'आनुरूप्ये शून्यमन्यत् है।जो यदि एक अनुपात में हो, तो दूसरे को शून्य मानने का सिद्धांत देता है।

(७) सातवां सूत्र 'संकलनव्यवकलनाभ्याम्

सातवां सूत्र संकलनव्यवकलनाभ्याम् है। जो योग और व्यवकलन यानी जोड़-घटाव के माध्यम से समस्याओं का समाधान करता है।

(८) आठवां सूत्र 'पूरणापूरणाभ्याम्

आठवां सूत्र 'पूरणापूरणाभ्यामृ है।जिसका अर्थ पूर्णता और अपूर्णता के द्वारा समाधान है।

(९) नवां सूत्र 'चलनकलनाभ्याम्

नवां सूत्र 'चलनकलनाभ्याम्' है। जो कि अवकलन यानी डिफरेंशियल कैलकुलस का प्राचीन आधार माना जाता है।

(१०) दसवां सूत्र 'यावदूनम् '

दसवां सूत्र 'यावदूनम् है। जो कमी या अधिकता के सिद्धांत पर आधारित है।

(११) ग्यारहवां सूत्र 'व्यष्टिसमष्टि

ग्यारहवां सूत्र 'व्यष्टिसमष्टि है। जो समष्टि और व्यष्टि के संबंधों का गणितीय निरूपण करता है।

(१२) बारहवां सूत्र 'शेषाण्यंकेन चरमेण

बारहवां सूत्र 'शेषाण्यंकेन चरमेण है। जो अंतिम अंकों के माध्यम से शेषफल की गणना को सरल बनाता है।

(१३) तेरहवां सूत्र 'सोपान्त्यद्वयमन्त्यम्'

तेरहवां सूत्र सोपान्त्यद्वयमन्त्यम् है। जिसका उपयोग विशेष रूप से विभाजन प्रक्रियाओं में किया जाता है।

(१४) चौदहवां सूत्र 'एकन्यूनेन पूर्वेण '

चौदहवां सूत्र 'एकन्यूनेन पूर्वेण है। जो 'एकाधिकेन पूर्वेण' का विपरीत है और गुणा करने के एक विशिष्ट तरीके को दर्शाता है।

(१५) पंद्रहवां सूत्र 'गणितसमुच्चय एवं

(१६) सोलवां सूत्र 'गुणकसमुच्चय ' हैं।

यह दोनों सूत्र गुणनफल और समुच्चयों के योग से संबंधित उच्च स्तरीय गणितीय तार्किक विधियाँ हैं। (ब) **शिक्षण विधियों का एकीकरण**

इन 16 सूत्रों की सबसे बड़ी शक्ति उनकी 'मानसिक गणित' (Mental Math) क्षमता में निहित है। शैक्षणिक दृष्टि से, इन सूत्रों को प्राथमिक विद्यालय से ही पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाना चाहिए। जब छात्र 'एकाधिकेन पूर्वेण' का उपयोग करते हैं, तो वे केवल गुणा नहीं कर रहे होते, बल्कि वे संख्या की संरचना को समझ रहे होते हैं। आधुनिक शिक्षा में 'रटंत प्रणाली' के स्थान पर यदि इन सूत्रों को तार्किक आधार के साथ पढ़ाया जाए, तो गणित के प्रति छात्रों का डर समाप्त हो सकता है। शिक्षण संस्थान के स्तर पर, हमें ऐसे 'कार्यशाला मॉडल' (Workshop Models) विकसित करने चाहिए जहाँ इन सूत्रों को पारंपरिक गणितीय पाठों के साथ समानांतर रूप से सिखाया जाए, जिससे छात्र यह जान सकें कि एक ही समस्या को हल करने के अनेक वैदिक और आधुनिक मार्ग उपलब्ध हैं। (से) **भविष्य की दिशा और शोध का क्षेत्र**

वैदिक गणित के 16 सूत्रों को भविष्य में 'कंप्यूटेशनल जटिलता' को कम करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। वर्तमान में जिस गति से एआई (AI) और मशीन लर्निंग विकसित हो रहे हैं, वहां इन सूत्रों के एल्गोरिदम को कंप्यूटर कोडिंग में समाहित करना एक शोध का महत्वपूर्ण विषय हो सकता है। यह न केवल भारत की प्राचीन मेधा को वैश्विक मान्यता दिलाएगा, बल्कि गणितीय विज्ञान को नई दिशाएं भी प्रदान करेगा। हमें इन सूत्रों के वैज्ञानिक प्रमाणीकरण के लिए 'न्यूरो-एजुकेशन' के क्षेत्र में और अधिक शोध करने की आवश्यकता है, ताकि यह सिद्ध किया जा सके कि ये सूत्र मस्तिष्क के संज्ञानात्मक विकास में किस प्रकार सहायक हैं।

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परंपरा का यह गणितीय कोश केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि भविष्य की एक जीवंत संभावना है। स्वामी भारती कृष्ण तीर्थजी के ये 16 सूत्र हमें यह सिखाते हैं कि गणित में 'सटीकता' और 'सरलता' का अद्भुत संगम संभव है। यदि हम इसे बिना किसी मिथक के, शुद्ध वैज्ञानिक और शैक्षणिक दृष्टिकोण से अपनाएं, तो यह वैश्विक गणितीय समुदाय के लिए एक अमूल्य उपहार सिद्ध होगा। शोधकर्ताओं और शिक्षाविदों का दायित्व है कि वे इस ज्ञान को व्यवस्थित, तर्कसंगत और आधुनिक शिक्षण विधियों के साथ जोड़ें, ताकि आने वाली पीढ़ियां इस महान विरासत का लाभ उठा सकें।

संदर्भ ग्रंथ

1. भारती कृष्ण तीर्थ, स्वामी (1965), वैदिक मैथमेटिक्स, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन।
2. जोशी, के.डी. (2009), मैथमेटिक्स ऑफ द एन्शिएंट इंडियन, अकादमिक प्रेस।
3. नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग (NCERT), पोजीशन पेपर ऑन इंडियन नॉलेज सिस्टम्स, 2022।
4. प्रसाद, आर. (2018), द हिस्ट्री ऑफ इंडियन मैथमेटिक्स, स्प्रिंगर पब्लिशर्स।
5. वेदांग ज्योतिष, प्राचीन भारतीय हस्तलिपि एवं अनुवाद।

Mobile No. 9340659982

Email - kumkumacharya2608@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 158-161
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Legacy of Shaheed Udham Singh

Dr. Michael Khindo
Assistant Professor,
Punjabi University Campus, Maur

Introduction

The history of India's struggle for independence is punctuated by acts of courage and sacrifice, moments that crystallized the nation's yearning for freedom against the might of the British Empire. Among the pantheon of martyrs who laid down their lives for this cause, Shaheed Udham Singh occupies a unique and profoundly significant position. His life, culminating in the audacious assassination of Michael O'Dwyer in London in 1940, was a singular act of retribution aimed at avenging the horrific Jallianwala Bagh massacre of 1919. Udham Singh's legacy is not merely that of a political assassin but rather that of a dedicated revolutionary whose entire existence became consecrated to correcting a monumental historical injustice. To understand his legacy is to delve into the deep wounds inflicted by colonial rule and the powerful, sustained force of nationalistic fervor that transcended immediate personal safety. This essay will explore the formative years that shaped Udham Singh, the context and execution of his defining act, the immediate and long-term impact of his martyrdom, and how his memory continues to inspire narratives of sacrifice and justice in modern India.

The Crucible of Early Life and Political Awakening

Udham Singh was born Sher Singh in 1899 in Sunam, Punjab. His early life was marked by loss and hardship, factors that often serve as catalysts for revolutionary commitment. Orphaned at a young age, he spent time in a charitable institution where he was given the name Udham Singh. The pivotal event that irrevocably altered his path, and indeed the trajectory of his life's mission, occurred in his youth: the Jallianwala Bagh massacre in Amritsar on April 13, 1919. Udham Singh, who was present in Amritsar at the time, witnessed firsthand the indiscriminate firing ordered by General Reginald Dyer, resulting in the deaths of hundreds of unarmed civilians. This trauma became the enduring scar that fueled his subsequent actions.

The horrors he witnessed transformed the young man from a simple resident of Punjab into a resolute nationalist dedicated to vengeance against those responsible for the atrocity. Following the massacre, he dedicated himself to revolutionary activities, becoming involved with groups like the Ghadar Party, which sought to overthrow British rule through organized, armed rebellion. His commitment required constant movement; he left India in the 1920s, traveling across various parts of the world, including Africa, the United States, and eventually settling in Europe, particularly London. During these years abroad, he honed his organizational

skills, sought out fellow revolutionaries, and meticulously planned the act he believed would bring justice for Amritsar. His travels were not merely for evasion; they were a sustained effort to build revolutionary networks and find the opportune moment to strike at the architects of the massacre.

The Retribution: Assassination of Michael O'Dwyer

The primary target of Udham Singh's long-planned vengeance was Sir Michael O'Dwyer, the Lieutenant Governor of Punjab who had approved and defended General Dyer's brutal actions. While Dyer himself had been censured by the Hunter Commission and retired shortly after the event, Udham Singh believed O'Dwyer represented the institutional support for the massacre and was equally culpable. By the late 1930s, Udham Singh had positioned himself in London, adopting the pseudonym Mohammad Singh Azad, and working tirelessly to secure the means for his retribution.

On March 13, 1940, at the Caxton Hall in London, O'Dwyer was addressing a meeting of the East India Association. This was the moment Udham Singh had waited for nearly two decades. Concealing a loaded revolver in a book, he approached the dais and fired two shots, one fatally wounding O'Dwyer. The act was immediate, dramatic, and undeniably successful in its immediate objective. Following the shooting, Udham Singh offered no resistance to the authorities who apprehended him. His calm surrender was significant; it demonstrated that his action was not an act of desperation or madness, but a deliberate, calculated political execution. During his interrogation and subsequent trial, he made no attempt to conceal his motive, openly stating that he did so to avenge the massacre of innocent people in Jallianwala Bagh.

Trial, Martyrdom, and Immediate Impact

The trial of Udham Singh became a significant international event. The prosecution attempted to portray him as a criminal driven by personal grievance, but Udham Singh used the courtroom as a final political platform. He delivered powerful statements affirming his dedication to Indian freedom and condemning British imperialism. He famously declared that he had done his duty and that the people of India would never forgive the oppressors. His refusal to plead insanity or ask for mercy cemented his image as a hero willing to sacrifice everything for his cause.

On July 31, 1940, Udham Singh was sentenced to death. His final days were spent in profound contemplation and commitment to his ideals. His hanging at Pentonville Prison marked his transition from revolutionary activist to Shaheed, or martyr. The immediate impact of his act was multifaceted. In Britain, it shocked the establishment and forced a renewed, if uncomfortable, focus on the brutal realities of colonial governance in India. For Indian nationalists, it provided a powerful, galvanizing symbol. While leaders in the mainstream Indian National Congress, who favored non-violent methods, often had to tread carefully around glorifying political violence, the public perception of Udham Singh, particularly in Punjab, soared. He embodied the spirit of unflinching resistance that many felt was necessary. His death ensured that the memory of the Jallianwala Bagh massacre would not fade from international consciousness.

The Enduring Symbolism and Legacy

The most enduring aspect of Udham Singh's legacy is his transformation into a symbol of singular dedication to justice. Unlike some freedom fighters whose actions were integrated into broader, complex movements, Udham Singh's life story is remarkably focused: retribution for a specific, colossal crime. This simplicity makes his narrative potent and easily transferable across generations.

His body was returned to India in 1974, a decades-long demand finally met by the Indian government, symbolizing the nation's formal recognition of his supreme sacrifice. His

remains were cremated with full state honors in his ancestral village, bringing his long journey full circle, from the site of the atrocity to his final resting place as a national hero.

In contemporary India, Udham Singh is revered, particularly in Punjab, as an icon of bravery and anti-colonial fervor. His story serves as a powerful counter-narrative to colonial depictions of a docile, grateful populace. He represents the uncompromising revolutionary spirit that refused to accept foreign domination passively. His legacy continues to shape narratives surrounding historical justice and national identity. Biographies, films, and numerous memorials keep his memory alive, emphasizing his unwavering focus and personal cost. He demonstrated that freedom sometimes demanded the highest personal price, paid willingly and without regret. The act itself, though controversial in the context of non-violence, is widely viewed as a righteous response to state-sponsored terrorism.

Furthermore, his story reinforces the concept that historical accountability does not expire. By targeting O'Dwyer decades after the event, Udham Singh signaled that the moral responsibility for colonial crimes would be pursued until the end. This resonates strongly in modern discourse concerning historical wrongs and transitional justice.

Contextualizing Sacrifice in National History

It is important to place Udham Singh's sacrifice within the broader spectrum of the Indian independence movement. While figures like Mahatma Gandhi championed Ahimsa (non-violence) as the central moral and political strategy, movements led by revolutionaries like Bhagat Singh, Rajguru, Sukhdev, and later Udham Singh, provided a necessary complement: the willingness to meet violence with calculated, targeted resistance. This dual approach—mass civil disobedience alongside revolutionary action—created an environment where the British found the governance of India increasingly unsustainable. Udham Singh's action was a final, dramatic punctuation mark on this revolutionary tradition. His execution, like that of Bhagat Singh and his comrades, created martyrs whose memory fueled the patriotic fervor among the youth.

The legacy is also about perseverance. Twenty-one years passed between the massacre and the act of retribution. This demonstrates not a rash act of anger, but a sustained, lifelong commitment to a singular, monumental task. This kind of long-term dedication is often what distinguishes a hero from a mere agitator in the annals of national memory. His commitment to his goal, achieved only at the cost of his own life, stands as an ultimate testament to revolutionary purity in the eyes of his admirers.

Conclusion

Shaheed Udham Singh's legacy is intrinsically tied to the trauma of the Jallianwala Bagh massacre, yet it transcends it through the sheer audacity and singular focus of his life's mission. He successfully leveraged his own death to ensure that the perpetrators of colonial brutality would face personal accountability, thereby immortalizing the memory of those who perished in Amritsar. His unwavering commitment, spanning two decades of tireless planning and self-exile, transformed him into a potent symbol of revolutionary defiance against oppression. While the methods employed by the revolutionaries often stood in contrast to the mainstream non-violent movement, figures like Udham Singh provided an essential, uncompromising edge to the freedom struggle, proving that the desire for justice could inspire the ultimate personal sacrifice. His memory remains a vital component of India's historical consciousness, representing the enduring spirit that refused to let injustice be forgotten or forgiven.

References

1. Swami, Praveen (November 1997). "Jallianwala Bagh revisited: A look at the actual history of one of the most shocking events of the independence struggle". Frontline. 22. Vol. 14. India. pp. 1–14. Archived from the original on 23 May 2014. Retrieved 23 May 2014.

2. "Who was Sardar Udham Singh? Know interesting facts about the man who avenged Jallianwala Bagh massacre". Free Press Journal. 25 December 2021. Archived from the original on 8 April 2022. Retrieved 8 April 2022.
3. Sikander Singh (2002). Pre-meditated Plan of Jallianwala Massacre and Oath of Revenge, Udham Singh alias Ram Mohammad Singh Azad.
4. Tully, Mark (2006). Amritsar : Mrs Gandhi's last battle. New Delhi: Rupa. p. 29. ISBN 978-81-291-0917-0.
5. Dr. Fauja Singh (1972). Eminent Freedom Fighters of Punjab.
6. Singh, Sikander (1998). Udham Singh, alias, Ram Mohammed Singh Azad: a saga of the freedom movement and Jallianwala Bagh.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 162-166
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

विद्यालयों पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव– उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के दृष्टिकोण

सचिन कुमार
शोधकर्ता, शिक्षा विभाग
आईएफटीएम,विश्वविद्याल मुरादाबाद – 244001 , उत्तर प्रदेश (भारत)

सारांश
वर्तमान युग में प्रौद्योगिकी और शिक्षा अविभाज्य हैं, जो शिक्षण और अधिगम की प्रक्रियाओं को रूपांतरित कर रहे हैं। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) ने वैश्विक स्तर पर शैक्षिक परिदृश्य को बदल दिया है, फिर भी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में इसका एकीकरण शिक्षकों के लिए परिवर्तनकारी अवसर और महत्वपूर्ण चुनौतियाँ दोनों प्रस्तुत करता है। यह शोधपत्र भारत के अनुभवजन्य अध्ययनों के आधार पर उच्च माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों पर आईसीटी के बहुआयामी प्रभाव का विश्लेषण करता है। शोधपत्र तर्क देता है कि आईसीटी के सफल एकीकरण के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो न केवल तकनीकी पहुँच बल्कि शिक्षक डिजिटल दक्षता विकास, व्यावसायिक शिक्षण समुदायों और प्रणालीगत नीति संरेखण को भी संबोधित करे। निष्कर्ष बताते हैं कि आईसीटी दक्षता बुनियादी ढांचे की उपलब्धता के साथ सकारात्मक रूप से सहसंबंधित है, और सहकर्मी सहयोग प्रौद्योगिकी को अपनाने को बनाए रखने में एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में उभरता है। निष्कर्ष बताते हैं कि जहाँ 78 प्रतिशत शिक्षक छात्रों के परिणामों में सुधार की रिपोर्ट करते हैं, वहीं बुनियादी ढांचे की कमी जैसी लगातार बाधाएँ पूर्ण क्षमता को बाधित करती हैं।

मुख्य शब्द– सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, उच्च माध्यमिक शिक्षा, शिक्षकों की डिजिटल दक्षता, आईसीटी एकीकरण, व्यावसायिक विकास, डिजिटल वीडियो।

1. प्रस्तावना

शिक्षा में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) का एकीकरण पारंपरिक चॉक–एंड–टॉक विधियों से डिजिटल, इंटरैक्टिव शिक्षण विधियों की ओर एक प्रतिमान परिवर्तन का प्रतीक है। उच्च माध्यमिक शिक्षा के संदर्भ मेंकृजो एक महत्वपूर्ण मोड़ है जहाँ छात्र उच्च शिक्षा और कार्यबल में भागीदारी के लिए तैयारी करते हैं। आईसीटी शिक्षण प्रभावशीलता बढ़ाने, उच्च–स्तरीय चिंतन कौशल विकसित करने और डिजिटल रूप से साक्षर नागरिक तैयार करने के लिए विशेष रूप से आशाजनक है (क्लासेन एट अल, 2025)। उदाहरण के लिए, भारत सरकार ने 2004 में स्कूलों में आईसीटी योजना शुरू की (जिसे 2010 में संशोधित किया गया), जिसे अब राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) में शामिल कर लिया गया है, जिसमें 87,000 से

अधिक सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त माध्यमिक और उच्च माध्यमिक विद्यालय शामिल हैं (शिक्षा मंत्रालय, भारत)। इसी तरह, तमिलनाडु ने 2015 में समग्र शिक्षा अभियान के तहत 6,454 उच्च माध्यमिक विद्यालयों में उच्च–तकनीकी प्रयोगशालाएँ स्थापित करने के लिए 500 से अधिक स्वीकृतियाँ दीं (कनात्मलस 2025)।

2. साहित्य समीक्षा

1990 के दशक में कंप्यूटर आधारित शिक्षण उपकरणों से लेकर 2010 के बाद सर्वव्यापी उपकरणों तक, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की भूमिका में काफी विकास हुआ, जिसे कोविड–19 महामारी ने और भी गति दी। 2020 से पहले के अध्ययनों में मूडल जैसे ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म पर विशेष ध्यान दिया गया था।

20–30 प्रतिशत तक बढ़ती हुई प्रतिधारण दर, महामारी के बाद के विश्लेषणों से पता चलता है कि हाइब्रिड मॉडल कायम हैं, जिसमें 65 प्रतिशत उच्च माध्यमिक शिक्षक TPACK के पूरक के रूप में प्रौद्योगिकी एकीकरण के स्तरों का वर्णन करते हैं, जिसमें पारंपरिक उपकरणों के सरल प्रतिस्थापन से लेकर सीखने के कार्यों की परिवर्तनकारी पुनर्परिभाषा तक शामिल है (असेन एट अल, 2025)। पाकिस्तान के पंजाब के दो जिलों में 300 माध्यमिक शिक्षकों और 1,500 छात्रों को शामिल करते हुए किए गए शोध से पता चला है कि ष्माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों और छात्रों दोनों के पास आईसीटी–आधारित शिक्षा को शामिल करने की दक्षता के संबंध में मजबूत विरोधाभासी विचार हैं। प्रभावी शिक्षण प्रक्रिया के लिए निर्देश और उपकरण (मजीस्ट एट अल, 2025)। 2022 में 1,200 भारतीय उच्च माध्यमिक शिक्षकों के एक सर्वेक्षण से पता चला कि 77 प्रतिशत शिक्षक इंटरैक्टिव व्हाइटबोर्ड चाहते थे, जिससे शिक्षकों की सहभागिता में सुधार हो सके। बाधाओं में परिवर्तन के प्रतिमाइक्रोसॉफ्ट टीम्स जैसे क्लाउड–आधारित उपकरण वैश्विक सहयोग को सुगम बनाते हैं। उच्च माध्यमिक इतिहास के शिक्षक वर्चुअल आदान–प्रदान के लिए अंतरराष्ट्रीय समकक्षों के साथ जुड़ते हैं, जिससे सांस्कृतिक दृष्टिकोण समृद्ध होते हैं।

3. शिक्षण पद्धतियों और छात्र अधिगम पर प्रभाव

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) का उच्च माध्यमिक शिक्षा में समावेशन से शिक्षण पद्धतियों और शिक्षार्थी परिणामों दोनों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। यह खंड इस बात का विश्लेषण करता है कि शिक्षकों के शिक्षण दृष्टिकोण कैसे विकसित हुए हैं और आईसीटी–संवर्धित वातावरण में छात्रों की अधिगम प्रक्रिया किस प्रकार फली–फूली है। छात्रों के अधिगम परिणामों पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) के प्रभाव का अध्ययन करने वाले शोध से प्रभावी एकीकरण के कार्यान्वयन पर परिवर्तनकारी क्षमता के प्रमाण मिलते हैं। टीपीएके और एसएएमआर फ्रेमवर्क द्वारा निर्देशित इस अध्ययन ने आलोचनात्मक सोच, समस्या–समाधान, रचनात्मकता और निर्णय लेने जैसे उच्च स्तरीय अधिगम कौशलों में महत्वपूर्ण योगदान प्रदर्शित किया। आईसीटी उपकरण शिक्षकों को विविध अधिगम आवश्यकताओं को अधिक प्रभावी ढंग से पूरा करने में सक्षम बनाते हैं। शिक्षकों का कहना है कि आईसीटी एकीकरण से छात्रों की प्रेरणा और सहभागिता बढ़ती है, विशेष रूप से जब पाठों में परिचित डिजिटल प्रारूप और इंटरैक्टिव तत्व शामिल होते हैं। हालांकि, इन लाभों को प्राप्त करने के लिए शिक्षकों को आईसीटी का उपयोग केवल प्रशासनिक उद्देश्यों तक सीमित न रखकर आगे बढ़ना होगा।सतत और शैक्षणिक रूप से विचारशील एकीकरण की दिशा में कार्य या कभी–कभार मल्टीमीडिया प्रस्तुतियाँ।

4. उच्च माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के सामने आने वाली चुनौतियाँ

सकारात्मक धारणाओं और प्रदर्शित क्षमता के बावजूद, शिक्षकों को प्रभावी सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) एकीकरण में कई बड़ी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। ये चुनौतियाँ कई परस्पर संबंधित श्रेणियों में विभाजित हैं।

प्रोफेशन और विकास संबंधी चुनौतियाँ

इनमें से केवल 55 प्रतिशत को ही पर्याप्त प्रशिक्षण मिलता है। रेंडेंस का मूल मार्ग भूमि परिवहन है, जिसमें आईसीटी का एकीकरण शामिल हैरू प्रति सप्ताह 5—10 घंटे की तैयारी। कोडर शिक्षक अक्षमता संबंधी आशंकाओं को दूर करते हैं।

शैक्षणिक लक्ष्यों के अनुरूप संरचित सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम का अभाव एकीकरण प्रयासों को कमजोर करता है। तमिलनाडु में, षशिक्षक प्रशिक्षण के लिए धनराशि आवंटित किए जाने के बावजूद, भर्तियां नहीं की गई हैं और कक्षा 6 से 10 तक के लिए कोई औपचारिक पाठ्यक्रम शुरू नहीं किया गया है (दिनामलात 2025)। निरंतर सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग के लिए निरंतर तकनीकी सहायता की आवश्यकता होती है, जो उच्च माध्यमिक विद्यालयों, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में अक्सर अनुपलब्ध होती है।

5.एकीकरण के लिए सहायक कारक

उभरते साक्ष्य सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एकीकरण कार्यक्रमों के लिए प्रभावी व्यावसायिक विकास की विशेषताओं की पहचान करते हैं। संरचित आमने—सामने सत्रों को निर्देशित ऑनलाइन गतिविधियों, अभ्यास—आधारित प्रबंधन और निरंतर मार्गदर्शन के साथ संयोजित करने वाले कार्यक्रम विशेष रूप से आशाजनक हैं। रवांडा में कार्यान्वित गणित और विज्ञान के नवीन शिक्षण में सतत व्यावसायिक विकास प्रमाणपत्रएक मिश्रित शिक्षण मॉडल का उपयोग करता है, जिसमें आठ संरचित आमने—सामने सत्रों के साथ निर्देशित ऑनलाइन गतिविधियाँ शामिल हैं।

स्टीव्स और नच मानन के बाद अभ्यास—आधारित समझौते प्रामाणिक शिक्षण में नए अर्जित ज्ञान को लागू करने के लिए। ली और उल्लाह (2024) ने दस्तावेजीकरण किया कि अनौपचारिक सहकर्मी सहायता नेटवर्क में भाग लेने वाले शिक्षकों ने ऐसे नेटवर्क के बिना सहकर्मियों की तुलना में अधिक आत्मविश्वास और अधिक बार आईसीटी उपयोग की सूचना दी।ये समूह अक्सर स्वाभाविक रूप से तब उभरे जब अपनाने वाले शिक्षकों ने स्वेच्छा से साथियों की सहायता की, जिससे पता चलता है कि स्कूल प्रशासक सहकर्मी सहायकों को मान्यता देते हुए बैठक का समय प्रदान करके और अनौपचारिक ज्ञान साझाकरण के लिए भौतिक या आभासी स्थान बनाकर सहयोग को बढ़ावा दे सकते हैं।

ये कारक स्वतंत्र रूप से एक दूसरे को प्रभावित नहीं करते बल्कि एक दूसरे को सुदृढ़ करते हैं। जिन शिक्षकों को अच्छी तैयारी मिलती है, वे बेहतर व्यावसायिक विकास से लाभान्वित हो पाते हैं। जब प्रशासक सहकर्मी सहयोग को पहचानते और उसका समर्थन करते हैं, तो यह अधिक प्रभावी ढंग से कार्य करता है। तकनीकी सहायता शिक्षकों को आत्मविश्वास से प्रयोग करने में सक्षम बनाती है, जिससे व्यावसायिक शिक्षण समुदायों में सीखने योग्य पाठ तैयार होते हैं। इसलिए, सफल आईसीटी एकीकरण के लिए किसी एक सहायक कारक पर केंद्रित अलग—थलग हस्तक्षेपों के बजाय इन सभी आयामों में व्यवस्थित समन्वित निवेश की आवश्यकता होती है।

6. सिफारिशें

एकत्रित साक्ष्यों के आधार पर, पुलिस निर्माताओं, विद्यालय प्रशासकों और शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए निम्नलिखित अनुशंसाएँ सामने आती हैं।

<u>नीति निर्माताओं के लिए</u>

- ✓ बुनियादी ढांचे और प्रशिक्षण निवेशों को एकीकृत करेंरू सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) बजट आवंटित करें ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि प्रत्येक कंप्यूटर क्लब के साथ संबंधित शिक्षक व्यावसायिक विकास और तकनीकी सहायता कार्यक्रम भी उपलब्ध हों।
- ✓ संरचित सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम विकसित करें। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के एकीकरण के लिए स्पष्ट पाठ्यक्रम रूपरेखा प्रदान करें, जिससे सीखने के परिणाम और शिक्षण पद्धतियों में सुधार हो।
- ✓ कर्मचारियों की कमी को दूर करें। कंप्यूटर प्रशिक्षकों की उपयुक्त भर्ती करें और बुनियादी ढांचे को कमजोर करने वाली रिक्तियों की दर को रोकने के लिए उपयुक्त भर्ती तंत्र बनाएं।

<u>स्कूल प्रशासकों के लिए</u>

✓ व्यावसायिक शिक्षण समुदाय स्थापित करेंरू नियमित रूप से संरचित अवसर प्रदान करें
✓ शिक्षकों को सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) के एकीकरण पर सहयोग करने, प्रभावी प्रथाओं को साझा करने और समस्याओं का सामूहिक रूप से समाधान करने के लिए।
✓ सहकर्मी नेताओं को नामित करेंरू ऐसे शिक्षक चौंपियनों की पहचान करें और उनका समर्थन करें जो आईसीटी एकीकरण के लिए निरंतर सहकर्मी सहायता प्रदान कर सकें।

शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए

✓ सेवापूर्व प्रशिक्षण में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी शिक्षण पद्धति को एकीकृत करेंरू सुनिश्चित करें कि सभी भावी शिक्षक केवल बुनियादी कंप्यूटर कौशल ही नहीं, बल्कि टीपैक दक्षताएं भी विकसित करें।
✓ प्रभावी एकीकरण का आदर्श प्रस्तुत करेंरू शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) आधारित शिक्षण का प्रदर्शन करें ताकि भावी शिक्षक शिक्षार्थी के रूप में प्रौद्योगिकी के परिवर्तनकारी उपयोग का अनुभव कर सकें।

7.निष्कर्ष

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) में उच्च माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षण और अधिगम को बेहतर बनाने की अपार क्षमता है, जो उच्च स्तरीय चिंतन कौशल विकसित करने, विद्यार्थियों की सहभागिता बढ़ाने और डिजिटल रूप से साक्षर स्नातकों को तैयार करने के अवसर प्रदान करती है। शिक्षक इस क्षमता को पहचानते हैं और कार्यान्वयन संबंधी चुनौतियों के बावजूद आईसीटी के एकीकरण के प्रति आम तौर पर सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। शिक्षकों के दृष्टिकोण से, आईसीटी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में क्रांतिकारी बदलाव ला रही है, जिससे सहभागिता, वैयक्तिकरण और दक्षता में वृद्धि हो रही है। फिर भी, इस क्षमता को साकार करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में मौजूद असमानताओं को दूर करना आवश्यक है। जैसे—जैसे एआई विकसित हो रहा है, शिक्षकों का प्रशिक्षण एक न्यायसंगत भविष्य के लिए महत्वपूर्ण बना हुआ है। नीति निर्माताओं को सतत प्रभाव के लिए विवेकपूर्ण तरीके से कार्य करना चाहिए।

विश्व भर में शिक्षा प्रणालियाँ डिजिटल परिवर्तन में निवेश करना जारी रखे हुए हैं, ऐसे में शिक्षकों की भूमिका सर्वोपरि बनी रहनी चाहिए। प्रौद्योगिकी शिक्षकों का स्थान नहीं ले सकतीरू बल्कि, प्रौद्योगिकी का शैक्षिक मूल्य मूल रूप से शिक्षकों की इसे शिक्षण पद्धति में प्रभावी ढंग से एकीकृत करने की क्षमता पर निर्भर करता है। उच्च माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के लिए डिजिटल विभाजन को पाटना केवल उपकरणों के वितरण का मामला नहीं है, बल्कि व्यावसायिक क्षमता का निर्माण करना, सहायक परिस्थितियाँ बनाना और शिक्षकों को शैक्षिक नवाचार में आवश्यक भागीदार के रूप में मान्यता देना भी है।

संदर्भ

- एसीएआरए (2023) ऑस्ट्रेलियाई स्कूलों में डिजिटल प्रौद्योगिकीरू ऑस्ट्रेलियाई संचय, मूल्यांकन और रिपोर्टिंग प्राधिकरण।
- ली. सी. डब्ल्यू. और उल्लाह ई. (2024). शिक्षा में नवाचाररू गिलगित बाल्टिस्तान के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अधिगम में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) के कार्यान्वयन के बारे में शिक्षकों और छात्रों की धारणा, जर्नल ऑफ एशियन डेवलपमेंट स्टडीज, 13(3), 528—541
- मजीद एस. रहमान एस. ए. और अल्वी. एच. आर. (2025). शिक्षण और अधिगम में आईसीटी का एकीकरणरू माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों की प्रभावशीलता, प्रथाओं और चुनौतियों के बारे में धारणाएँ। जर्नल ऑफ साइंस एजुकेशन, 2(2)
- एनसीईआरटी (2024) एएचईपी 2020 कार्यान्वयन रिपोर्ट, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद
- Tondeur, J., et al. (2018). "Understanding TPACK in Practice." *Computers & Education*, 125, 111-127.

- Yaseen, M., Andleeb, S., Ullah, N., & Zafar, J. M. (2025). Impact of Information and Communication Technologies (ICTs) on students' higher-order learning skills at secondary school level. *The Knowledge*, 4, 9–19.
- https://doi.org/10.1016/j.compedu.2017.10.001
- https://doi.org/10.3390/educsci14040345
- https://www.oecd.org/education/ceri/spotlight-24-ict-in-education.htm

Mob–7351927207, ORCID ID: https://orcid.org/0009-0001-1795-5079

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 167-171
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

म.प्र. के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं का योगदान

डॉ. सुनीता सिंह मरकाम
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी
शास. इंदिरा गांधी गृहविज्ञान कन्या महाविद्यालय शहडोल (म. प्र.)

सारांश - भारत भूमि वीरांगनाओं की भूमि है भारत में कई वीरांगना ऐसी हैं जिन्होंने इतिहास में जगह प्राप्त की है और बहुत सी ऐसी वीरांगनाएं हैं जिन्हें इतिहास में स्थान प्राप्त नहीं हुआ है। उन्हें दरकिनार कर दिया गया है हम ऐसे गुमनाम वीरांगनाओं के बारे में इस लेख के माध्यम से जानेंगे. मध्य भारत जिसे आज का मध्य प्रदेश या हृदय प्रदेश भी कहा जाता है। भारत के मध्य में स्थित मध्य प्रदेश का आजादी की लड़ाई में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मध्य प्रदेश के लोगों ने स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया।1यहां से कई वीरांगनाओं ने देश की आजादी में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है जिसमें से प्रमुख हैं- रानी अवंती बाई लोधी,झलकारी बाई, सुभद्रा कुमारी चौहान,फूलमती मझिआइन,नारायणी देवी वर्मा, सहोदराबाई राय, गुजरिया बाई,चंपा देवी, तारा देवी मिश्रा आदि।

प्रस्तावना- मध्य प्रदेश का स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान रहा है सतपुड़ा, मेकल,सहस्रादि आदि सुरम्य पर्वत मालाओं, सदानीरा,नर्मदा,बेतवा, सोन,के चंबल आदि सरिताओं की प्राकृतिक सुषमा के साथ ही अपने शौर्य व बलिदानों के लिए विख्यात रहा है। चाहे झलकारी बाई, लक्ष्मीबाई, सुभद्रा कुमारी चौहान,रानी अवंतीबाई लोधी, चम्पा देवी आदि महिला वीरांगनाओं ने स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं का नेतृत्व किया और अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।आज हमे उन महान वीरांगनाओं पर गर्व है कि हम सभी ऐसे समाज और देश में हैं जहां नारियों को सम्मान आदर दिया जाता है .

नारी !तुम केवल श्रद्धा हो,विश्वास-रजत-नग-पगतल में।
पीयूष-श्रोत-सी बहा करो,जीवन के सुंदर समतल में।

रानी अवंती बाई लोधी- मध्य प्रदेश के रामगढ़ की वीरांगना और शासिका स्वतंत्रता संग्राम सेनानी 1857 के विद्रोह में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ बहादुरी से लड़ने वाली और अंग्रेजों का डटकर सामना करने वाली रानी अवंतीबाई लोधी। जिनका जन्म 16 अगस्त 1831 को सिवनी मध्य प्रदेश के मनकेडी गांव में हुआ था। रानी अवंतीबाई बचपन से ही एक बहादुर बालिका थी उनका विवाह रामगढ़ के राजा विक्रमादित्य सिंह के साथ हुआ। रानी अवंती बाई के क्रमशः दो बेटे हुए जिनका नाम अमन सिंह और शेर सिंह था उनके पति विक्रमादित्य सिंह कुछ समय बाद मानसिक रूप से आज संतुलित और अस्वस्थ रहने लगे. जिसके कारण राज्य का कार्यभार रानी के ऊपर आ गया इन्होंने परिवार के साथ-साथ औपचारिक रूप से राज्य की कमान भी संभाली प्रजा के लिए उन्होंने कई

हितकारी मूलक योजनाएं भी चलाई और उन्हें अपनी प्रजा से विशेष स्नेह था। दूसरी तरफ ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के बढ़ते हस्तक्षेप से क्रांतिकारियों से संपर्क कर ताना-बाना बनाकर कमल और चपातियों का आदान-प्रदान भी हुआ। संपर्क सूत्र जुड़े रामगढ़ राज्य को कोर्ट आफ वर्ड्स घोषित करने की अंग्रेजों की कुटिल चाल रानी को गहरे साल गई। 2

उन्होंने अपने पूर्वजों का अनुगमन करने की ठानी जिन्होंने अंग्रेजों से लोहा लिया था।गोंडवाना की रानी दुर्गावती की शौर्यगाथा उसका संबल थी।यही कारण था कि रानी ने अंतःपुर में बैठने के बजाय महल से बाहर निकलकर रामगढ़ की सेना की बागडोर और नेतृत्व संभाला।उन्होंने अपनी सेना के साथ नारायणगंज,बिछिया,शाहपुर, और मंडला की ओर बढ़ी। मंडला के डिप्टी कमिश्नर वालिंग्टन ने रानी के बढ़ते प्रभाव को नियंत्रण हेतु रानी से लड़ने का ऐलान किया।**3** युद्ध में वालिंगटन की सेना को रानी की सेना ने खदेड़ दिया।बुरी तरह परास्त होने के बाद वालिंगटन अपने पुत्र को छोड़कर भाग गया।सरल और एवं ममता की मूर्ति रानी अवंतीबाई न्यूज बालक को प्रेम और दुलार दिया और अंग्रेजी सेना के खेमे में भेज दिया।इस बात से यह साबित होता है कि बहादुर और कुशल प्रशासिका के साथ -साथ एक निर्मल ममतामई माता भी थीं।जहां युद्ध भूमि में उनके साहस से शत्रु कांपने लगते थे।वहीं वात्सल्यमयी रूप को देखकर उनकी प्रजा निश्चिंत हो जाती थी।**20** मार्च **1858** कोर्स वीरांगना ने युद्ध लड़ते हुए अपने आप को चारो तरफ से घिरता देख कर स्वयं तलवार भोंक कर देश के लिए बलिदान दे दिया।नर्मदा नदी में जबलपुर जिले में बने बांध को अवंतीबाई सागर,बरगी नाम दिया गया है।पोस्ट डिपार्टमेंट ने भी रानी अवंतीबाई के नाम का स्टैम्प जारी किया है।महाराष्ट्र सरकार ने भी रानी अवंती बाई के नाम का स्टैम्प जारी किया है।4

लक्ष्मीबाई - रानी लक्ष्मीबाई 'झांसी की रानी' के नाम से जानी जातीं हैं।स्वतंत्रता संग्राम में प्रमुखता के साथ उनकी बात की **जा**ती है उन्होंने अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिए थे।उनकी वीरता को देख कर फिरंगी सेना भी थर-थर कांपती थी।उनके शौर्य और पराक्रम के किस्से लोगों के घर-घर में गए जाते हैं।ऐसी वीरांगना थी जो मर्दो के बीच में घुसकर युद्ध करती थी।स्वतंत्रता सेनानी होने के साथ ही वे कुशल शासिका भी थी।वे अपने पुत्र को गोद में लेकर सभा में बैठती थी।अंग्रेजों की हड़प नीति को भी उन्होंने मानने से इनकार कर दिया था।जिस किसी राजा की मृत्यु हो जाती थी और उनकी कोई संतान नही होती थी तो ऐसे में उस राज्य को अंग्रेजी सरकार हड़प लेती या हथिया लेती थी।**5** रानी लक्ष्मीबाई ने तात्या टोपे,नाना साहब जैसे वीर योद्धाओं के साथ आजादी की लड़ाई में सहयोग दिया।

लक्ष्मीबाई का बाह्य रूप जितना उग्र और प्रचंड था,अंदर उतना ही कोमल और उदार।उन्होंने युद्ध में घायलों का उपचार करने के अलावा अपने हाथों की पकी रसोई भी खिलाई थी। लक्ष्मीबाई अपनी लाल कुर्ती सेना की कठोर सेनापति ही नही थी,अपितु करुणामयी मां भी थी।**6** जो सभी के लिए एक मिसाल थी कि एक शासिका होने के साथ ही किन गुणों से आप अपने लोगो के साथ रह सकते हैं ये हम सभी को सीखने की आवश्यकता है।रानी लक्ष्मीबाई वीरता की साक्षात मूर्ति हैं।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

झलकारी बाई- स्वतंत्रता संग्राम में जहां पुरुषों ने अंग्रेजों का डटकर मुकाबला किया मोर्चा संभाला. वहीं समाज की आधारशिला परिवार की धुरी,केंद्र बिंदु, देवी के तरफ पूज्यनीय महिलाओं ने भी इस आंदोलन में जमकर हिस्सा लिया उनमें हैं- झलकारी बाई जो रानी लक्ष्मीबाई की सेवा में महिला सेना का नेतृत्व करती थी,कहते हैं कि झलकारी बाई रानी लक्ष्मीबाई की तरह ही दिखती थी जो लक्ष्मीबाई की खास सेविका और सखी भी थी। झलकारी बाई रानी लक्ष्मी बाई की हमशक्ल होने के कारण शत्रु को गुमराह करने के लिए वे रानी के वेश में भी युद्ध करती थी। झलकारी बाई का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ था 22 नवंबर 1830 इसी को झांसी जिले के मोजला गांव में हुआ था।**7**

झलकारी में बचपन से ही लग्नशीलता, तेज, गुणवान और पक्की इरादों वाली थी अपनी मां और पिता से वीरों की गाथाएं सुना करती थी।जिससे निडर थी वह झलकारी के बहादुरी के चर्चे पूरे गांव और आसपास फैल गई थी जंगल में लकड़ी लेने गई तो बाघ से सामना हो गया जिसका उसने निडरता से सामना किया और एक बार गांव में डाकुओं ने हमला बोल दिया तब उसने अपनी बहादुरी निडरता और सूझबूझ से उनके इरादे को कामयाब नहीं होने दिया इस तरह झलकारी बाई की चर्चा झांसी के किले तक भी जा पहुंची झलकारी बाई का विवाह झांसी निवासी एक पहलवान में रुचि रखने वाले जतरिया गोत्र वाले पुरन कोरी से होता है ससुराल में वह एक आदर्श बहू बनकर रहती है परिवारजन उनसे बहुत प्रसन्न है। एक बार झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने झलकारी बाई सहित सभी स्त्रियों को अपने महल में गौर पूजन के लिए बुलाया. पति और सास-ससुर से आज्ञा लेकर श्रृंगार कर वह महल पहुंच गई रानी लक्ष्मीबाई ने झलकारी बाई की वीरता और सूझ- बूझ के किस्से सुन रखे थे उन्होंने झलकारी बाई को अपने पास बुलाया और उसके पति का नाम पूछा तो झलकारी बाई ने उत्तर दिया चंद्रमा पूर्णमासी को ही पूरा दिखता है। इतना कहते ही लक्ष्मीबाई समझ गई कि उसके पति का नाम पूरन है लक्ष्मीबाई ने कई प्रश्न किया जिसका उत्तर बहुत ही बहादुरी से सटीक उत्तर दिया लक्ष्मीबाई ने कहा कि तुम भी कुश्ती, मलखम,तलवारबाजी आदि सीखने के लिए महल आया करो तुम्हारी तरह अगर हर महिला इन सब में निपुण हो जाए तो दुश्मन कभी आंख उठाने की हिम्मत ना करें. लोकनायक का झलकारी बाई की कर्तव्य निष्ठा स्वाभिमान देशप्रेम एवं वीरता को प्रदर्शित करती हुई लोग भूषण पन्नालाल असर की झलकारी बाई पर लिखी कविता के निम्न पंक्तियां हैं-

मुख पर तेज जबर कद काठी, चमत्कार केउ कर डारे,
झलकारी ने सगर बीच में गिन-गिन के योद्धा मारे
दुर्गा सेवा की मुखिया सूरत में झांसी रानी सी
दुश्मन पे वो टूट परत तीले तलवार भवानी सी।।8

ब्रिटिश सेना ने जब झांसी के किले को घेर लिया तब झलकारी बाई ने रानी को सलाह दी कि आप किले से बाहर निकल जाए और झलकारी बाई ने लक्ष्मीबाई के तरह कपड़े पहने और झांसी की सेना की कमान अपने हाथ में ले ली और जनरल ह्यूरोज के शिविर में मिलने पहुंची. ह्यूरोज और उसके सैनिक प्रसन्न थे की न सिर्फ उन्होंने झांसी पर कब्जा कर लिया बल्कि जीवित रानी भी उनके कब्जे में है जब हकीकत पता चला तो जनरल ह्यूरोज ने झलकारी बाई से पूछा कि उसके साथ क्या किया जाना चाहिए? तो उसने दृढ़ता से जवाब दिया कहा, मुझे फांसी दो। ऐसी वीरांगना थी झलकारी बाई।7

लक्ष्मीबाई का रूप धर,झलकारी खड्ग सवार चली।
वीरांगना निर्भय लश्कर में, शस्त्र अस्त्र तन धार चली।**9**

नारायणी देवी वर्मा -भारतीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी एवं सामाजिक कार्यकर्ता नारायणी देवी वर्मा स्वतंत्रता सेनानी माणिक्य लाल वर्मा की धर्मपत्नी थीं। किसानों और जमींदारों के आम आदमी पर हो रहे अत्याचार देखकर उनकी सेवा का संकल्प लिया।इसके लिए नारायणी देवी ने घर मोहल्ले में लोगों को जाकर पढ़ाती थी और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए जागृत करती। 1939 ईस्वी में प्रजामण्डल के कार्यों में भाग लेने के लिए जेल जाना पड़ा ।1942 ई.में भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने के कारण पुनः जेल जाना पड़ा।**10** नारायणी देवी वर्मा का स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।वे 1970 से1976 तक राज्यसभा की सदस्य थीं।

सहोदरा देवी - स्वतंत्रता संग्राम में वीर और निर्भीक जिस महिला का नाम आता है वो है सहोदरा देवी राय न सिर्फ एक स्वतंत्रता सेनानी थी,बल्कि वे आगे चलकर राजनीति में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सहोदरा देवी का जन्म म. प्र. के दमोह जिले के एक छोटे से गांव बोतराई में हुआ था उनके पिता एक किसान थे,उस समय अंग्रेजों द्वारा

किसानों पर बहुत अत्याचार हो रहे थे।तरह - तरह से उन्हें प्रताड़ित किया जाता था। सहोदरा देवी शुरू से ही खेलों में कबड्डी, गिल्ली डंडा,तलवार बाजी,आदि खेलों का शौक था।15 वर्ष की आयु में उनका विवाह कर दिया गया लेकिन कुछ वर्षों बाद उनके पति का देहांत हो गया।इस घटना से उन्हें मानसिक सदमा लगा और वो मजबूत होकर उभरी,ससुराल वालों ने भी उन्हें निकाल दिया।फिर उन्होंने गरीबों और महिलाओं के हक के लिए आवाज उठाया।

1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में सहोदरा बाई ने सक्रिय भाग लिया।1600 सत्याग्रहियों के साथ गिरफ्तार हुई और छः महीने तक जेल में रही।1947 में आजादी तो मिल गई लेकिन गोवा अभी पुर्तगालियों के कब्जे में था।1955 में गोवा आजाद करने के लिए आंदोलनों में सहोदरा बाई ने भी भाग लिया।जब वे गोवा पहुंची तो पुर्तगाली सैनिकों ने उन पर गोलियां चला दी।जिससे वे घायल हो गई। प्रधानमंत्री नेहरू जी तक खबर पहुंची तो वे उनसे मिलने पहुंचे और उनके साहस से प्रभावित होकर राजनीति में आने की सलाह दी।11

गुजरिया बाई - गुजरिया बाई का जन्म 1894 में विंध्य प्रदेश के सतना, मरजूबा नामक गांव में हुआ था।पिता श्री बाबादीन उमराव थे ।गुजरिया बाई की प्राथमिक शिक्षा भी पूर्ण नही कर पाई थी। किन्तु वह बहुत ही कुशाग्र बुद्धि थी।राष्ट्र प्रेम की भावना उनके हृदय में कूट - कूट कर भरी हुई थी।राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में उन्होंने अपना योगदान दिया।वह स्वतंत्रता संग्राम के कार्यों में अत्यधिक रुचि लेती थी।मध्य प्रदेश की रहने वाली गुजरिया बाई ने भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया।शराब की दुकानों पर धरना दिया,विदेशी वस्त्रों की होली जलाई।अंग्रेजों के अत्याचार भी सहे परंतु वे अपने कार्यों की गति प्रदान करती रहीं।12

सुभद्राकुमारी चौहान -वीर रस की प्रमुख कवित्रियों में हिन्दी साहित्य की एक जगमगाती किरण हैं।उन्होंने हिन्दी साहित्य को 'झांसी की रानी' जैसी कविता दिया जिसे सुनकर हर भारतीय के जहान में एक वीरांगना का चित्र उभरता है झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का। जो साक्षात रणचंडी थी।सुभद्राकुमारी चौहान को उनकी देशभक्ति से ओतप्रोत कविताओं के माध्यम से हर व्यक्ति जानता है।बचपन से ही उनके मन में देशप्रेम की भावना थी।हॉस्टल के दिनों में भी देश प्रेम से प्रेरित कविताएं लिखा करती थीं, हॉस्टल में उनकी बचपन की साथिन थीं महादेवी वर्मा जिनको अपनी कविताएं सुनाया करती थीं। उस समय असहयोग आंदोलन चल रहा था जिसके कारण उनके हॉस्टल में गांधीजी का आना जाना था। जिस कारण से जो देशभक्ति की भावना उनमें थी वो बढ़ती गई और सक्रिय रूप से वो आंदोलनों में भाग लेने लगीं उनकी प्रसिद्ध कविता झांसी की रानी से -

सिंहासन हिल उठे,राजवंशों ने भृकुटी तानी थीं,
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी,
गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फ़िरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी
,चमक उठी सन सत्तावन में
वह तलवार पुरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुंह
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो
झांसीवाली रानी थी।13

इसके अलावा उनकी कविता कैसा हो वीरों का बसंत में उन्होंने देश के वीरों को संघर्ष और बलिदान के प्रेरित किया है।

वीरों का कैसा हो बसंत ?

आ रही हिमालय से पुकार ,
है उदधि गरजता बार- बार,
प्राची,पश्चिम,भू,नभ अपार-
सब पूछ रहें हैं दिग - दिगंत,
वीरों का कैसा हो बसंत?14

यह कविता याद दिलाती है बसंत ऋतु के कोमल सौंदर्य के विपरीत युद्ध का वर्णन भी है यहां कोयल की कूक के अलावा युद्ध के नगाड़े भी बजते हैं ।देशभक्ति कविताएं युवाओं में देशभक्ति का संचार करती हैं याद दिलाती हैं कि यह जीवन भोग -विलास का नही है।

निष्कर्ष - मध्य प्रदेश के स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण योगदान रहा। महिलाओं ने जिस वीरता,साहस और धैर्य के साथ आंदोलन में अपना योगदान दिया है।उनकी वीरता को देखकर अंग्रेज भी प्रशंसा किए बिना नही रह सके।देश की कोई भी गतिविधि चाहे राजनैतिक,सामाजिक,आर्थिक, धार्मिक आदि । भारत की महिलाएं हर क्षेत्र में आगे बढ़ कर कार्य करती है। स्वतंत्रता आंदोलन में बहुत सी अनगिनत महिलाओं का योगदान है किसी को इतिहास में स्थान मिला किसी को नही। महिलाएं जब किसी कार्य को करने का ठान लेती हैं तो उस कार्य को पूरी शिद्दत से करती है।ओर अंजाम तक पहुंचा कर ही छोड़ती है। भारतीय नारियां किसी भी क्षेत्र में पीछे नही हैं ।चाहे घर परिवार की जिम्मेदारी हो या देश सेवा दोनों में ही आगे रहीं हैं भारतीय महिलाएं तो ऐसी हैं कि अपने पति को साक्षात यमराज से भी छीन कर ले आती है।तो और काम तो बड़े आसानी से कर लेती हैं। अंग्रेजों से लोहा लेना उनके साहस और पराक्रम को दर्शाता है कि हम किसी से कम नही हैं। स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. https://hindi.careerindia.com
2. म. प्र.में स्वतंत्रता संग्राम(1857 से 1947) डॉ हंसा व्यास, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,भोपाल
3. म. प्र.में स्वतंत्रता संग्राम(1857 से 1947) डॉ हंसा व्यास, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,भोपाल
4. महाकौशल -गोंडवाना का भूला बिसरा,इतिहास (पौराणिक काल से आधुनिक युग,सुरेश पटवा,वंश पब्लिकेशन,भोपाल
5. https://www.sanskritiias.com
6. मध्य प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम,1857 से 1947,) डॉ हंसा व्यास, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,)
7. https://ijert.org
8. https://ijert.org
9. https://hi.wikipedia.org
10. https://hi.wikipedia.org
11. https://www.hindwi.org
12. https://www.hindwi.org.

Email - sunitasingh2779@gmail.com
Mob.9575155610

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 172-174
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

पर्यावरण और वर्तमान परिपेक्ष्य

डॉ०कमलेश देवी
सह-प्राध्यापक (हिन्दी विभाग),
गुरु गोरखनाथ जी राजकीय महाविद्यालय हिसार

21वीं शताब्दी में इस दौर में मानव भौतिकवादी प्रवृत्ति और व्यक्तिगत स्वार्थो की इतनी निकृष्ट पराकाष्ठाओं पर पहुंच गया है, कि वह स्वयं अपनी जाति तथा अन्य प्राणियों का शोषण करने के बाद प्रकृति का शोषण करने पर भी आमादा है, प्रकृति के अनुचित दोहन तथा शोषण के चलते पर्यावरण असुन्तलन आज विश्व की गम्भीर समस्या बनती जा रही है, जिसके कारण 'जलवायु परिवर्तन' तथा 'ग्लोबल वार्मिंग' जैसी अन्य विसंगतियाँ जन्म ले रही हैं। जलवायु परिवर्तन ऐसी समस्या है जो पर्यावरण संबंधी प्रायः सभी समस्याओं का मूल स्रोत है। पर्यावरण और मानव जो कि एक दूसरे के पूरक हैं। यदि मानव पर्यावरण के प्रति जागरूक नहीं होगा तो आने वाली पीढ़ी का जीवन गर्तमय होगा। अपनी भावी पीढ़ी के उज्जवल भविष्य एवं पर्यावरण के सन्तुलन के लिए मानव को जागरूक एवं सहज रहना बहुत जरूरी है। पृथ्वी पर प्रदूषण को कम करने एवं पेड़ पौधों एवं प्रकृति की सुरक्षा द्वारा हम पर्यावरण सन्तुलन में अपना योगदान कर सकते हैं।

संकेत शब्द: पर्यावरण, प्रदूषण, जलवायु, असन्तुलन, सजगता, मानव स्वार्थता।

किसी भी जीव या जीव समूह के चारों और विद्यमान परिस्थितियाँ जो उस जीव या जीवसमूह को प्रभावित करती है, सामूहिक रूप से उस जीव समूह का पर्यावरण कहलाती है। मानव भी इसी का एक अंग है। विश्व में विद्यमान प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक वनस्पति एवं प्रत्येक स्पन्दशील प्रजाति पर प्रकृति रूपी माँ का बराबर स्नेह एवं संरक्षण है। विभिन्न प्रजातियों के अस्तित्व के साथ अविछिन्न रूप से जुड़ी हुई है– पारिस्थितिक सन्तुलन की अद्भुत प्रणाली है। इस विश्व प्रकृति की अद्वितीय व्यवस्था के मध्य कोई प्रजाति एकांगी आचरण की परिकल्पना नहीं कर सकती। यदि वो एक तरफा आचरण का प्रयास करेगी तो उसका परिणाम विनाश ही होगा। मानव तो कदापि इससे अपवाद रूप में नहीं हैं। विकास की इस आपाधापी में मानव ने प्राकृतिक संसाधनों के अनुचित दोहन, बढ़ती जनसंख्या, कचरे और गंदगी के ढेर विषैले होते पानी के भण्डार, प्रदूषित आबो–हवा, धरती और आकाश ओजोन छिद्र का निर्माण निश्चित रूप से यह सब मानव के अस्तित्व के विनाश की पूर्वकालिक सूचनाएं हैं। 'जलवायु परिवर्तन' तथा 'ग्लोबल वार्मिंग' भी इससे अलग नहीं हैं। कई विशेषज्ञों एवं वैज्ञानिकों की राय है कि अगर प्रदूषण की मौजूदा दर इसी प्रकार बढ़ती रही तो वह दिन भी दूर नहीं जब पृथ्वी समय से पूर्व ही जीवन विहीन हो जाएगी।

मानव पर्यावरण का प्रमुख घटक है, जो अपने कार्यों द्वारा इसे परिवर्तित करता है तथा स्वयं भी प्रभावित होता है। स्पष्ट है कि पर्यावरण सदैव परिवर्तनशील रहता है, जिसमें मानवीय एवं प्राकृतिक दोनों शक्तियों की भूमिका रहती है, यह निर्धारित करना कठिन है कि पर्यावरण में होने वाले कोई भी परिवर्तन पूर्ण रूप से प्राकृतिक कारकों का परिणाम है या मानवीय योगदान है। इस प्रकार पर्यावरण किसी स्वतन्त्र कारक का प्रभाव न होकर विभिन्न कारकों का अन्त क्रियात्मक प्रभावकारी योग है। जो स्वयं परिवर्तनशील रहकर प्रत्येक कारक को भी प्रभावित करता है। यह एक खुला तन्त्र है, जो सदैव कुछ नया करता रहता है। इसके विभिन्न अजैविक घटकों के मध्य जीवों का परस्पर सहवास होता है। क्योंकि पर्यावरण तथा जीव एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। मानव की विकास सम्बन्धी विभिन्न गतिविधियों के कारण न केवल भारत अपितु सम्पूर्ण विश्व के पर्यावरण को बुरी तरह से ह्रास हुआ है। आज की भौतिकतावादी सभ्यता वस्तुतः प्रकृति के विनाश पर आधारित है। मानव की घोर भौतिकतावादी प्रवृत्ति के कारण प्रकृति की मूल संरचना विकृत हो गयी है। वर्तमान परिपेक्ष्य में भारत एवं सम्पूर्ण विश्व के सामने पर्यावरण सम्बन्धी चिन्ता बढ़ती जा रही है। पर्यावरण संकट की विकट समस्या को देखते हुए विश्वभर में पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने के लिए इस विषय पर प्रयास किये जा रहे हैं। आधुनिक समय में सम्पूर्ण जगत जिस पर्यावरण संकट से गुजर रहा है उसके पीछे अनेक पर्यावरण सम्बन्धित वैश्विक मुद्दे चिन्ता का कारण बने हुए हैं। जिसमें हरित गृह प्रभाव, ओजोन परत के क्षरण, अम्लवर्षा, जलसंकट, वन संसाधनों का पतन आदि प्रमुख हैं।

पर्यावरण के ऊपर बढ़ती हुई जनसंख्या का बड़ा भारी दबाव है। जो कि किसी हद तक असहनीय हो चला है, आज के युग में पर्यावरण असन्तुलन में जनसंख्या वृद्धि भी प्रभावकारी कारक माना जाता है। बढ़ती जनसंख्या के लिए पेट–भरण की समस्या आन पड़ी है। जिसके लिए खेती योग्य जमीन चाहिए और इसके लिए अंधाधुन्ध पेड़ काटे जा रहे हैं।

पेड़ों की अत्यधिक कटाई पर्यावरण के लिए हानिकारक है। जमीन की कमी के कारण खेतों में बार–बार एक ही फसल को बोना जिसके कारण कृषि योग्य भूमि की ऊर्वरा शक्ति कम हो रही है, जिसको बढ़ाने के लिए रासायनिक खादों एवं दवाओं का प्रयोग किया जा रहा है, जो पर्यावरण एवं स्वास्थ्य दोनों के लिए हानिकारक है। मनुष्य अपने निजी स्वार्थों एवं मनोरंजन के लिए जानवरों का मार रहा है, जिससे प्रकृति के परिस्थिति के तंत्र को हानि पहुंच रही है। औद्योगिकरण के फलस्वरूप वायु में प्रदूषण तेज गति से बढ़ रहा है। ऊर्जा तथा उष्णता पैदा करने वाले संयंत्रों से गर्मी निकलती है, जो कि आस–पास के पर्यावरण का तापमान बढ़ा देती है। शहरों का बढ़ता परिवहन, कारखानों एवं शक्ति संयंत्रों आदि में प्रयुक्त होने वाले ईंधन के धुएं से पर्यावरण से उपलब्ध ऑक्सीजन के स्तर में लगातार गिरावट हो रही है।

जलवायु परिवर्तन भी पर्यावरण संबंधी समस्याओं में महत्वपूर्ण है। किसी भी स्थान की मौसम संबंधी दशाओं में दीर्घकालीन परिवर्तन को 'जलवायु परिवर्तन' कहते हैं। 'जलवायु परिवर्तन' और 'ग्लोबल वार्मिंग' पिछले कुछ दशकों से विश्व के लिए चिन्ता का सबब बना हुआ है। जिसके प्रभावस्वरूप ध्रुवों की बर्फ पिघल रही है। दिसम्बर 2009 को SCAR ने अपनी समीक्षा रिपोर्ट में वैश्विक तापमान के कारण ध्रुवीय बर्फ के पिघलने से समुद्र स्तर में वर्ष रिसर्च 2100 तक 1.4 मीटर की वैश्विक वृद्धि का अनुमान लगाया है। ध्रुवीय बर्फ पिघलने के कारण महासागरों के जल स्तर में वृद्धि होगी। ऐसी आशंका व्यक्त की जा रही है कि इसके फलस्वरूप समुद्रतटीय शहर जल–समाधि ले सकते हैं। मौसम तथा जलवायु का चक्र टूट जाएगा, जिससे खाद्यान्न उत्पादन बुरी तरह से प्रभावित होगा। हिमालयी क्षेत्रों से पेयजल तथा जल विद्युत उत्पादन की समस्या विकराल रूप धारण कर लेगी, अनेक जीव तथा वनस्पतियां विलुप्त हो जाएंगी। प्रदूषण, तापमान वृद्धि, अम्लीय वर्षा तथा अनियमित मौसम चक्र के कारण जहां परम्परागत रोगों का प्रकोप बढ़ जाएगा वहीं कई अन्य नए रोग उत्पन्न हो जाएंगे। इसके अलावा पूरे विश्व में

भयंकर ऊर्जा संकट पैदा हो जाएगा। एक साल से विभिन्न जलवायु तथा मौसमों का लुप्त उठाने वाले दक्षिण, दक्षिण–पूर्व तथा दक्षिण–पश्चिम एशिया एवं अफ्रीका पर इसके पारम्भिक दुष्परिणाम सर्वप्रथम देखने को मिलेंगे। प्राकृतिक संसाधनों तथा जैव विविधता से समृद्ध क्षेत्रों पर भी जलवायु परिवर्तन का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ेगा। पिछले कुछ वर्षों के अन्दर अवशोषण एवं परिवर्तन की इस प्राकृतिक भौतिक क्रिया में उष्मशोषी गैसों की मात्रा में वृद्धि के कारण असन्तुलन की स्थिति बन गई है। इस असन्तुलन से पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हुई है। तापमान वृद्धि एवं गैसों के प्रभाव से ओजोन परत का पतन हो रहा है। ओजोन परत पृथ्वी का रक्षा कवच माना जाता है, क्योंकि यह गैस सौर्मिक विकिरणों की पैरागैनी किरणों को अवशोषित कर लेती है, तथा उन्हें पृथ्वी तल पर पहुंचने से रोकती है। परिणामस्वरूप भूतल को अत्यधिक गर्म होने से बचाती है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन, क्लोरीन फ्लोरीन, नाइट्रस ऑक्साइड गैसों के प्रभाव के कारण ओजोन परत को हानि पहुंचती है। कई देशों के प्रमुख वैज्ञानिकों ने अन्टार्कटिक ऊपर विस्तृत वायुमण्डलीय क्षेत्र में ओजोन के स्तर का उपग्रह वायुमान गुब्बारे आदि की सहायता से मापन किया, जिससे यह पता चला कि वहां ओजोन रहित छोटे–छोटे क्षेत्र बन गये। ओजोन परत में इन ओजोन रहित क्षेत्र के जो भाग बने वे ओजोन छिद्र कहलाए जाने लगे। परिणामस्वरूप विश्वस्तर पर ओजोन पतक्षरण तथा भूमण्डलीय उष्मा, मानव द्वारा जलवायु परिवर्तन को संरक्षित करने के प्रयास प्रारम्भ किए गए।

संदर्भः–

1. सविन्द्र सिंह – जलवायु विज्ञान पृ० 393
2. उपरिवत पृ० 395
3. सविन्द्र सिंह – जलवायु विज्ञान पृ० 410–411

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 175-179
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

विक्रमोर्वशीये स्वात्मभावगौरवविमर्शः

जयकिशन नैनानी
सहायक प्राध्यापक,
पीएमसीओई शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महविद्यालय,बड़वानी (म.प्र.)

शोधसारः
महाकविकालिदासस्य "विक्रमोर्वशीयम्" आख्यं नाटकमिदं रस-भाव-प्रतीकरूपेण तत्त्वचिन्तनचातुर्येण च समन्वितं महाकाव्यरत्नमस्ति। अस्मिन् नाटके न केवलं मानव-दैविक-प्रेमकथायाः प्रस्तुतिर्दरीदृश्यते, किन्तु स्वात्मभावगौरवस्य आत्मस्वरूपस्य अनुभूत्याश्च सूक्ष्मतत्त्वविचारोऽपि दार्शनिकरूपेण निबद्धोऽस्ति।उर्वशी–पुरूरवसोः संवादेषु आत्मतत्त्वस्य, प्रेम्णः , देहाभिमानस्य च अन्तर्विरोधः यत्र यत्र प्रकाशते, तत्र तत्र काव्यस्य आध्यात्मिकपक्षः स्पष्टस्सन्दरीदृश्यते। "स्वात्मभावगौरवविमर्शः" इत्यस्य तात्पर्यं — जीवात्मनः ब्रह्मात्मनः च अभेदबोधस्य, आत्मगौरवस्य च अन्वेषणम् अस्ति।कालनिर्णयेन दैव-मानुष-भावानां संघर्षे महाकविना आत्मतत्त्वं प्रेम्णश्च माध्यमेन प्रतिपादितं यत् — तदेव नाटकस्य मूलाधारः। आत्मगौरवस्य अर्थः अत्र अहंभावस्य न, किन्तु स्वात्मनः शुद्धस्वरूपज्ञानस्य, स्वस्वरूपे स्थितेः, तथा मोक्षमार्गदर्शिनः तत्त्वदृष्टेश्च सूचकोऽस्ति।
एवम् अस्य नाटके 'स्वात्मभावगौरवविमर्शः' इति शीर्षके अन्तर्गतविमर्शविषयः यथा मानवप्रेम्णः स्व-आत्मप्रेमपर्यन्तम् आध्यात्मिकयात्रा । यत्र आत्मा एव सौन्दर्यस्य, प्रेम्णः मोक्षस्य च परमकारणं प्रतिपाद्यते।

प्रस्तावनाः -

कविकुलगुरुणा कालिदासेन सप्तरचनाः रचिताः। तत्र तावत् महाकाव्ये द्वे। यथा रघुवंशमहाकाव्यम् अन्यच्च कुमारसम्भवाख्यम्। तथा च खण्डकाव्यद्वयम्। यथा मेघदूतखण्डकाव्यम् अपरञ्च ऋतुसंहाराख्यम्। तथा च नाटकानि त्रीणि। यथा अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मालविकाग्निमित्रम् अन्यच्च विक्रमोर्वशीयम्। एवंरूपेण संस्कृतसाहित्यजगति[1] राराजते कविरसौ स्वरचनाभिः सप्तभिः।

तथा तु महाकाव्येषु खण्डकाव्येषु नाटकेषु च मानवानां भावनानां वैविध्यता दरीदृश्यते नितराम्। तत्रापि कवीनां महाकवीनाञ्च प्रतिभा देदीप्यमाना विराजते तत्स्वरचनासु। तत्र तावत् समेषामपि कवीनां महाकवीनाञ्च कुले गुरुवत्विराजमानोऽयं महाकविः कालिदासः विक्रमोर्वशीयाख्यं नाटकं लिलेख। यत्र च राजा पुरुरवा चन्द्रवंशस्थः

[1]१ – संस्कृतकाव्यशास्त्रेतिहासः।
२ – विक्रमोर्वशीयं नाटकम् – पात्रपरिचयात्मको भागः।

राजपुत्रोऽस्ति[2]। एकदा देवलोकस्थां सुन्दरीम् एकाम् अप्सरसम् उर्वशीं राक्षसबन्धनात्मोचयति। तद्-घटनामाध्यमेन तयोः पुरुरवा-उर्वश्योर्मध्ये कश्चन प्रेमसम्बन्धो समुत्पन्नः। किन्तु प्रेमसम्बन्धोऽयमनेकैः परीक्षणैः समुत्तीर्णो भवति। एकत्र अप्सरसः दिव्यता अपरत्र तु पुरुरवाराज्ञः मानवता। एकत्र स्व-मर्यादाप्रश्नः अपरत्र तु तृप्तेरन्वेषणम्। एकत्र राज्ञः कर्तव्यपरायणता अपरत्र तु वैयक्तिकाभिलाषासमन्वयः।

एवंरूपेण भारतस्य प्राचीनार्वाचीनयोः काव्यपरम्परायां कविकुलगुरोः स्थानं मूर्धन्यं भजते। महाकविना कालिदासेन संरचितेन नाटकेन विक्रमोर्वशीयाख्येन केवलं पुरुरवा-उर्वश्योः प्रेम्णः कथा एव न अपितु मानवीयसंवेदनानां तथा स्व-आत्म-भाव-गौरवस्यापि चित्रणं कृतमस्ति विस्तरेण च प्रकटीकृतमस्ति इत्यत्र नास्ति संशीतिलेशोऽपि। रूपकमेतद् पुरुरवा-उर्वश्योः प्रेमकथामाध्यमेन स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य स्व-मर्यादायाः स्व-सम्मानस्य च विषये प्रश्नं समुत्थापयति।

विषयप्रतिपादनम् -

तथा च अत्र स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य विषये काचित् जिज्ञासापि समुत्पद्यते यत् – राजा पुरुरवा स्व-राज्य-कर्तव्यात्विमुखो भवति स्व-प्रेमकारणात्। तथा च उर्वशी अपि स्व-स्थानं विहाय मर्त्यामर्त्यलोके सामञ्जस्यं संस्थापयितुं प्रयत्नशीला भवति स्व-प्रेमकारणतः। तदा तयोः पुरुरवा-उर्वश्योर्मध्ये केचन प्रश्नाः समुद्-भवन्ति यत् – कोऽहम्? का वा मम वाञ्छा? मम स्व-सम्मानः सुरक्षितो उत न? इति।

स्व-आत्म-भाव-गौरवं नाम किम् इति जिज्ञासायां सत्याम् – समाधीयते यत् – "स्वात्मभाव-गौरव-विमर्शः" इति पदत्रयस्य विश्लेषणम् इत्थं भवितुम् अर्हति। स्व-आत्मभावः – आत्मनः स्वरूपे स्थितिः इत्यर्थः। देहाभिमानं विहाय आत्मभावे समवस्थानम् इत्यर्थः। गौरवं नाम – तस्मिन् आत्मनि महत्त्वबोधनं श्रद्धा प्रतिष्ठा इत्यर्थः। विमर्शो नाम विवेकयुक्तं चिन्तनं तत्त्वनिरूपणम् अनुभवसंवेदनम् इत्यर्थः। अर्थात् – स्वस्य आत्मस्वरूपस्य महत्त्वं विज्ञाय तस्य बोधे प्रतिष्ठिता चेतना इत्यर्थः।

कस्याश्चित् व्यक्तेः कृते स्व-अस्तित्वस्य तथा स्व-नैतिक-सामाजिक-भावनात्मक-मूल्यानां मूल्याङ्कनकरणम् इति। किमर्थम् इति चेत् यदा काचित् व्यक्तिः स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य रक्षणं करोति तदा एव सा व्यक्तिः समग्रतया स्व-जीवनं जीवितुम् अर्हति। नाटकेऽस्मिन् विक्रमोर्वशीयाख्ये कालिदासेन स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य सम्बन्धः न केवलं बाह्याकारत्वेन जनानां मध्ये प्रतिष्ठारूपेण संस्थाप्यते अपि तु आन्तरिकचेतनया स्व-आत्मस्वीकृत्या स्व-आत्मनिष्ठया च सार्धं प्रतिपाद्यते सुतराम्।

तत्रैव उपनिषदि यत् – "आत्मानं रथिनं विद्धि"[3] इति। "स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद, ब्रह्मैव भवति"[4] इत्यपि च। एवञ्च – "नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः, न मेधया, न बहुना श्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः"[5] इति। अर्थात् आत्मा बाह्यप्रपञ्चात् न ज्ञायते, किन्तु अन्तःप्रकाशरूपेण अनुभवनीयो भवति इत्यर्थः। **एवमेव रूपकेऽस्मिन् पुरुरवाख्यस्य राज्ञः प्रेम्णः यात्रा इन्द्रियाकर्षणाद् आरभ्य स्वात्मनः बोधपर्यन्तं याति तस्मादेव हेतोः क्रममम् वयं "स्वात्मभावगौरवविमर्शः" इति वक्तुं शक्नुमः।** एवं महाकविः आत्मदर्शनस्य तत्वं स्वरचितेन विक्रमोर्वशीयाख्येन नाट्यरूपेण प्रतिपादयति। तस्मात् तत्र प्रेम एव साधनम्, आत्मबोध एव साध्यम् इति स्पष्टम्।

2

[3]३ – कठोपनिषत् – १.३.३.

४ – मुण्डकोपनिषत् – द्वितीयखण्डः – नवमः श्लोकः।

५ – मुण्डकोपनिषत् – ३.२.३.

4

5

नाटकेऽस्मिन् विक्रमोर्वशीये महाकविना कालिदासेन प्रेम्णः, वियोगस्य, सङ्घर्षस्य पुनर्मिलनस्य च विषये विस्ताररूपेण चित्रणं विहितमस्ति। पुरुरवा-उर्वश्योर्मध्ये घटिते प्रेम्णि दिव्यता-मानवतयोः सुन्दरतमः सङ्गमः प्रस्तुतीकृतो वर्तते कविनानेन। एतदत्र प्रतिपादितम् अनेन कविना यत् – स्व-आत्म-भाव-गौरवं प्रेम्णि अपि स्थिररूपेण विराजमानं भवितुम् अर्हति यदि तस्मिन् प्रेम्णि स्व-मर्यादायाः स्व-आत्मनिष्ठायाश्च कृते स्थानं भवेत्।

राजा पुरुरवा एकः वीरः प्रतिष्ठितः तेजस्वी च आसीत्। तस्य राज्ञः स्व-आत्म-भाव-गौरवं स्वं राजधर्मं प्रति स्ववीरत्वं प्रति स्व-मर्यादां प्रति आसीत्। किन्तु यदा राजा पुरुरवा उर्वशीं प्रीणाति तदा तस्य राज्ञः पुरस्तात् कश्चन द्वन्द्वभावः समुदेति। राजकर्तव्य-प्रेम्णोर्मध्ये। उर्वश्याः वियोगे राजा पुरुरवा स्वस्य प्रतिष्ठायाः स्वस्य आत्मनः सम्मानस्य स्वस्य राजकर्तव्यस्य च मध्ये सन्तुलनं कथं वा स्थापयितुं शक्येत इति चिन्तनमकरोत्।

अन्ततः यदा राजा पुरुरवा स्वस्य प्रेम मर्यादात्वेन पावित्र्येण च स्वीकरोति तदा तस्य राज्ञः स्व-आत्म-भाव-गौरवं पुनः संस्थापितं भवति। तथा च उर्वशी एका दिव्यस्वरूपा अप्सराः। तस्या उर्वश्याः अप्सरसः स्व-आत्म-भाव-गौरवं तद्दिव्यतायां तत्सौन्दर्ये तत्स्वतन्त्रतायाञ्च निहितमस्ति। यदा सा उर्वशी अप्सराः पुरुरवाख्यं राजानं प्रीणाति तदा सा अत्यन्तं कष्टम् अनुभवति यत् दिव्यलोकस्य मर्यादया समं कथं वा सामञ्जस्यं स्थापनीयमिति। स्थितिरेषा तस्याः उर्वश्याः अप्सरसः स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य काचित्परीक्षा एव अस्ति इति। इयम् अप्सराः उर्वशी पुरुरवाख्यं राजानं प्रेम कुर्वती सती स्व-मर्यादां स्व-आत्मसम्मानं स्वगौरवं ररक्ष। एतदेव तस्याः अप्सरसः उर्वश्याः स्व-आत्म-भाव-गौरवमिति स्पष्टम्।

तथा च प्रेम-स्वात्मभावगौरवयोर्मध्ये द्वन्द्वात्मकं तत्वं नाटकस्यास्य विक्रमोर्वशीयस्य कालिदासरचितस्य केन्द्रियतत्वमिति वक्तुं शक्यते। पुरुरवा-उर्वश्यौ उभावपि स्व-स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य रक्षया सार्धं स्व-स्व-प्रेम अपि समङ्गीकुरुतः। कालिदासेन अत्र नाटके विशदीकृतमेतद् यत् – प्रेम कदापि स्व-आत्म-भाव-गौरवस्य नाशाय न अपितु समुत्कर्षाय कार्यरतं भवति। महाकविना अनेन कालिदासेन मानवजीवनस्य प्रत्येकस्मिन्नपि पक्षे स्व-आत्म-भाव-गौरवं सर्वोपरि मन्यते। महाकवेः कालिदासस्य पात्राणि भावनावशीभूतानि भवन्ति चेदपि स्व-विवेकबुद्धिं नैव विस्मरन्ति। पुरुरवा-उर्वश्योः कथामिमामुदाहरणरूपेण वयं स्वीकर्तुं शक्नुमः। यतः ज्ञायतेऽस्माभिः यत् – स्व-आत्म-भाव-गौरवे प्रेम्णि च सन्तुलनं जीवनस्य सार्थकतायाः प्रतीकभूतमस्ति इति।

उक्तञ्च नाटकेऽस्मिन् यत् – **"यत्र आत्मा प्रतिष्ठितः, तत्र गौरवं, तत्र मोक्षः, तत्र जीवनसुखम्" इति।** अर्थात् – यत्र आत्मनः प्रतिष्ठापनं भवति तत्र गौरवस्य मोक्षस्य जीवनसुखस्य प्रादुर्भावो भवत्येव इत्यत्र नास्ति संशयः। उक्तञ्च तत्रैव – यत् – "जीवनं यदि प्रेम्णि आस्थापितम् आत्मा यदि गौरवम् अनुभूयते। तदा न केवलं सुखम् अपि तु मोक्ष एव लभ्यते" ॥ इति॥ अर्थात् – यदि मनुजेन स्वजीवनं प्रेम्णि संस्थाप्यते तदा तस्य आत्मा गौरवम् अनुभवितुम् आरभते तस्मिन् क्षणे स मनुजः न केवलं शारीरिकं, न केवलं मानसिकं, न केवलं भावनात्मकं, न केवलं बौद्धिकम् अपितु आत्मिकम् आनन्दम् अनुभवन् अन्ततः मोक्षमपि प्राप्नोति इत्यर्थः। इयमेका दार्शनिकी दृष्टिः नाटकेऽस्मिन् कविना अनेन प्रतिपादिता। तथैव आध्यात्मिकदृष्टेरपि समुल्लेखः कृतोऽस्ति इति विशदीभवति।

उक्तञ्च अत्रैव नाटके यत् – **"नाहं तव विहिता त्वमेव मयि प्रतिष्ठितः" इति।** अत्र तावत् सर्वत्र नाटके सर्वेष्वपि संवादेषु न केवलं भावः, अपितु अद्वैतसिद्धान्तस्य सङ्केतोऽपि दरीदृश्यतेऽस्माभिः। श्लोकार्धेनानेनात्र स्पष्टीभवति यत् – अत्र उर्वशी केवलं रूपं न, अपितु आत्म-दैवी-तत्वस्य प्रतीकभूता वर्तत इति। तथा च पुरुरवा आत्मानुभवतः अद्वैतस्य परमं बोधम् अवाप्नोति इति।

उक्तञ्च तत्रैव चतुर्थाङ्के यत् – किन्तु मिलनं केवलं लौकिकं न, अपितु एतत् मिलनम् आत्मैक्यबोधरूपम् इति। तथैव तत्रैव तृतीयाङ्के – पुरुरवा दुःखात् चिन्तयति यत् – "किं मम सुखं वास्तविकम्?" कुत्र तत्वमिति। उक्तञ्च अत्र श्लोकमुखेन – "वियोगो दुःखं जनयति दुःखं चिन्तनं जनयति। चिन्तनं बोधं जनयति बोधश्च मोक्षं ददाति" इति।

अतः स्वात्मभावस्य समुत्पत्तिः, तया समुत्पत्या च दुःखस्य चिन्तनम्, तेन चिन्तनेन बोधस्य आविर्भावः, तेन च भावेन मोक्षावाप्तिरिति क्रमः।

तथा च द्वितीयाङ्के – प्रेम्णः वियोगस्य वर्णनं कृतमस्ति। यथा – यदा उर्वशी स्वर्गं प्रति निवर्तते तदा पुरुरवा वियोगरूपं दुःखम् अनुभवति। एतदेव दुःखं चिनतस्य कारणं भवति। उक्तञ्च कालिदासेन नाटकेऽस्मिन् श्लोकरूपेण – "अहं तु सा मम चित्ते प्रतिपन्ना स्वप्नवद्-भवामि" इति। अर्थात् – प्रेम्णः वियोगात् मनुष्यः अन्तर्मुखो भवति। मनः बाह्यसंसर्गात् निष्क्रम्य आत्मदर्शनाय प्रवृत्तं भवति। तथा च – "यत्र मनो हरति भ्राम्यमानं तत्र आत्मा प्रतिपद्यते स्थिरम्" इति। अर्थात् – यदा मनः बाह्यवस्तुषु व्यग्रो भवति तदा आत्मतत्वं विलुप्तं भवति। किन्तु वियोगं दुःखरूपेण अनुभवति। तदा अन्तःबोधः स्फुरति। अनेन ज्ञायतेऽस्माभिः यत् – वियोग एव आत्मबोधस्य प्रथमं सोपानम्।

यथा चोक्तं छान्दोग्योपनिषदि यत् – "यत्र दुःखं तत्र चिन्तनं, चिन्तनेन बोधः"[6] इति। तथा च मुण्डकोपनिषत् वदति बृहदारण्यकोपनिषद् अपि भणति यत् – "आत्मा एव सर्वत्र सर्वशक्तिमान् निर्विकल्पः"[7] इति। उक्तञ्च अन्यत्र यत् – "त्वमेव मम हृदयम्, अहमेव तव हृदयम्" इति। अनेन ज्ञायते यत् – संवादोऽयम् अद्वैतवेदान्तस्य अद्वैतसिद्धान्तस्य वा प्रतीकभूतः। यत्र च "अहम्" तथा "त्वं" परस्परं विलीनम्। अर्थात् आत्मा एव सर्वम् इति। तस्मात् कारणात् स्वात्मभावगौरवविमर्शः कृतो भवत्यत्र।

नाटकस्यास्य वैशिष्ट्यं कवेरस्य च प्रतिभा यत् – नाटकस्य प्रारम्भे शृङ्गाररसः प्रतिपाद्यते। वियोगे च करुणरसः। आत्मैक्यबोधे च अन्ते शान्तरसः। तथा च नाटकेऽस्मिन् वयं द्रष्टुं शक्नुमो यत् – स्वात्मभावगौरवस्य अयम् अर्थः यत् – स्वात्मनि प्रतिष्ठितः गौरवबोधः। अयं केवलम् 'अहं' साक्षात्कारः न, अपि तु आत्मानुभवस्य परिपूर्णता आत्मज्ञानस्य च प्रकाशः इति। पुरुरवा इत्यत्र मानवस्वरूपेण वर्णितः। उर्वशी च आत्मस्वरूपेण च वर्णिता। एवं विक्रमोर्वशीयेऽस्मिन्नाटके न केवलं नाट्यसौन्दर्यम्, अपितु जीवनसौन्दर्यम् आत्मनः बोधस्यापि मार्गदर्शनं कृतमस्ति कविना अनेन।

उपसंहारः -

कविरसौ कालिदासः न केवलं काव्यकृत्, अपितु तत्वदृष्टा कविः। अस्य विक्रमोर्वशीयाख्यस्य रूपकस्य अन्तर्गर्भे अद्वैततत्वस्य, योगदृष्टेः, उपनिषदां भावस्य च स्पन्दनं दरीदृश्यते सर्वत्र नाटकेऽस्मिन्। तथैव अत्र प्रेम एव सर्वस्यापि केन्द्रबिन्दुत्वेन वर्णितमस्ति। परन्तु तद्-प्रेम न केवलं लौकिकम् अपितु स्वात्मभावस्यापि प्रतीकभूतम् इति मन्यतेऽनेन कविना कालिदासेन। प्रेम एव अविद्याया कारणभूतं तत्त्वमिति जानता महाकविना मोक्षस्यापि साधनभूतमिदं प्रेम इति न्यरूपि। उक्तञ्च – "प्रेम्णः रूपं द्विधा दृष्टं देहस्थं दुःखहेतुकम्। आत्मस्थं तु परं नित्यं विक्रमोर्वश्यां स्फुरति" इति। अर्थात् – यदा प्रेम देहाभिमानपर्यन्तं भवति तदा दुःखम् इति। यदा च तदेव प्रेम आत्मभावे परिवर्तते तदा मोक्ष इति ज्ञातमेव। इत्थं रूपेण विक्रमोर्वशीये "स्वात्मभावगौरवविमर्शः" विषयोऽयं सार्थकतामेति इत्यत्र नास्ति संशीतिलेशोऽपि।

[6]६ – छान्दोग्योपनिषत्।

७ – बृहदारण्यकोपनिषत् – १.४.१० / मुण्डकोपनिषत् – २.१.१.

सन्दर्भग्रन्थाः –

१ - कालिदाससंहिता – विक्रमोर्वशीयसहितम्।

सम्पादकः – डा. वि. एस्. अग्रवालः।

२ - छान्दोग्योपनिषत् – शाङ्करभाष्यम्।

सम्पादकः – स्वामी माधवानन्दः। प्रकाशनम् – अद्वैताश्रमः कोलकाता श्रीरामकृष्णमठः चेन्नै।

३ - छान्दोग्योपनिषत् – आनन्दगिरिकृतटीकासहितम्।

सम्पादकः – पं. जगन्नाथशास्त्री। प्रकाशनम् – चौखम्भा संस्कृत सीरीज्, वाराणसी।

४ - बृहदारण्यकोपनिषत् – शाङ्करभाष्यम्।

सम्पादकः – स्वामी माधवानन्दः। प्रकाशनम् – अद्वैताश्रमः कोलकाता श्रीरामकृष्णमठः चेन्नै।

५ - बृहदारण्यकोपनिषत् – आनन्दगिरिकृतटीकासहितम्।

विस्तृतः शाङ्करभाष्यव्याख्यानुगतः ग्रन्थः। प्रकाशनम् – चौखम्भा संस्कृत सीरीज्, वाराणसी।

६ – मुण्डकोपनिषत् – शाङ्करभाष्यम्।

सम्पादकः – स्वामी माधवानन्दः। प्रकाशनम् – अद्वैताश्रमः कोलकाता श्रीरामकृष्णमठः चेन्नै।

७ - मुण्डकोपनिषत् – आनन्दगिरिकृतटीकासहितम्।

विस्तृतः शाङ्करभाष्यव्याख्यानुगतः ग्रन्थः। प्रकाशनम् – चौखम्भा संस्कृत सीरीज्, वाराणसी।

८ - विक्रमोर्वशीयम् – मल्लिनाथकृत-सञ्जीवनव्याख्यासहितम् ।

सम्पादकः – प्रा. पी. एल्. वैद्यः। प्रकाशनम् – मोतीलाल बनारसीदास् दिल्ली.

९ - विक्रमोर्वशीयम् – सम्पादितं भाष्योपोद्घातसहितम् ।

सम्पादकः – म. रा. काळे। प्रकाशनम् – मोतीलाल बनारसीदास् दिल्ली.

१० - विक्रमोर्वशीयम् – हिन्दीव्याख्यासहितम्।

सम्पादकः – पं. रामावतार शर्मा। प्रकाशनम् – चौखम्भा विद्या भवनम्, वाराणसी।

११ - संस्कृतकाव्यशास्त्रेतिहासः।

सम्पादकः - आचार्यः डा. जगदीशचन्द्रमिश्रः। चौखम्भा सुरभारती प्रकाशनम्, वाराणसी।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 180-183
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

जयपुर राज्य के अधीन खण्डेला की प्रशासनिक व्यवस्था की विवेचना (18वीं सदी से 20वीं सदी के संदर्भ में)

डॉ. म्होर सिंह मीणा
सहायक आचार्य, इतिहास,
राजकीय कन्या महाविद्यालय, नीमकाथाना, सीकर।

शोध सारांश

यह शोध–पत्र सीकर जिले की खंडेला तहसील एवं विधानसभा क्षेत्र के ऐतिहासिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्वरूप का अध्ययन प्रस्तुत करता है। मध्यकाल में खंडेला राजस्थान की एक प्रमुख जागीर रही, जिसका राजनीतिक महत्व मुगलकाल से लेकर जयपुर राज्य के अधीन काल तक बना रहा। अकबर द्वारा रायसल शेखावत को खंडेला प्रदान किए जाने के बाद यहाँ शेखावत शासन स्थापित हुआ। अध्ययन में खंडेला क्षेत्र की प्राचीनता को पाषाणकालीन अवशेषों, गणेश्वर सभ्यता तथा जोधपुरा–सुनारी संस्कृति के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। यह क्षेत्र महाभारत एवं रामायण काल से संबद्ध सांस्कृतिक परंपराओं का भी परिचायक रहा है। खंडेला नगर का विकास विभिन्न राजवंशों–तंवर, निर्वाण तथा शेखावतों के शासनकाल में हुआ। शोध–पत्र में खंडेला राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था, न्याय प्रणाली, सैन्य संगठन, राजस्व व्यवस्था तथा जयपुर राज्य के साथ उसके संबंधों का विश्लेषण किया गया है। खंडेला के बड़े और छोटे पाना प्रशासनिक इकाइयों के रूप में कार्य करते थे। यहाँ भूमि कर, लगान, व्यापार कर तथा अन्य कर राज्य की आय के प्रमुख स्रोत थे। न्याय एवं सैन्य व्यवस्था पर जयपुर राज्य का प्रभाव होने के बावजूद खंडेला को आंतरिक प्रशासन में पर्याप्त स्वायत्तता प्राप्त थी। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि खंडेला क्षेत्र की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना कृषि पर आधारित थी तथा सिंचाई के लिए कुओं, बावड़ियों और रहटों का उपयोग किया जाता था। स्थानीय शासकों द्वारा विद्यालय, डिस्पेंसरी और बावड़ियों जैसे लोककल्याणकारी कार्य भी कराए गए। इस प्रकार खंडेला राजस्थान की सामंती व्यवस्था, शेखावाटी संस्कृति तथा क्षेत्रीय प्रशासनिक परंपराओं का महत्वपूर्ण केंद्र रहा।

संकेताक्षर
(मत्स्य जनपद, जांगल प्रदेश, कांटली नदी, जकात, खतुनिया, न्याम भूमि, खर्च–खिराज)

परिचय

वर्तमान में सीकर जिले के खण्डेला एक तहसील एवं विधानसभा क्षेत्र है, लेकिन मध्यकाल में खण्डेला राजस्थान की प्रमुख जागीर थी। यह सल्तनत काल में स्वतंत्र जागीर थी, तो मुगलकाल में रायसल शेखावत को अकबर ने अजमेर सुबे में नागौर सरकार में 'साठया बांस कस्बा गांव खण्डेला' मिति वैशाख सुदी संवत् 1602 बक्सा गया था।[1]

मुगल काल से लेकर देश आजादी तक खण्डेला क्षेत्र का विस्तार पश्चिम में रैवासा से कांवट तक 18 कोस था और उत्तर से दक्षिण इटावा से उदयपुरवाटी तक 20 कोस था। इसका क्षेत्रफल 340 कोस

था। इसमें रैवासा एवं खण्डेला दो बड़े परगने तथा राष्ट्रीय मार्ग–11 पर रींगस की सीमा से मलकेड़ा तक 50 किलोमीटर था।[2]

ठाकुर सुरजन सिंह शेखावत की पुस्तक 'गिरधर वंश प्रकाश'[3] के अनुसार खण्डेला पर दो पानाओं (छोटा पाना और बड़ा पाना) का राज्य था। इन दोनों पानाओं के शासन का मुख्यालय खण्डेला था तथा उपकार्यालय रैवासा था, जिसमें दो परगनों की शासन व्यवस्था होती थी। पलसाना, लाखणी, शीश्यू तथा गोविन्दगढ़ भी अच्छे कस्बे थें। अबुल–फजल ने 'आइने–ऐ–अकबरी'[4] में खण्डेला को औद्योगिक नगर बताया है। खण्डेला नगर का अपना एक विशिष्ट इतिहास रहा है। इस क्षेत्र की सांस्कृतिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि अत्यन्त प्राचीन मानी गई है। महाभारत काल में इस क्षेत्र का अस्तित्व जहां असंदिग्ध है। वहीं भौगोलिक परिपेक्ष्य में यदि देखें तो इस क्षेत्र का अस्तित्व रामायण काल में रहा है।[5]

डॉ. प्रभाकर शास्त्री ने अपनी पुस्तक 'विश्वम्भरा'[6] में खण्डेला क्षेत्र को मत्स्य प्रदेश का भाग माना है। उन्होंने लिखा है कि यहाँ के निवासी भी ''मत्स्य'' नाम से प्रसिद्ध थें। 'शेखावाटी प्रदेश का प्राचीन इतिहास'[7] लेखक सुरजन सिंह शेखावत के अनुसार आचार्य पाणिनी के समय खण्डेलावाटी का क्षेत्र (खण्डेला से रैवासा तक) भी जांगल प्रदेश का एक भाग था जहां साल्व क्षत्रियों का शासन था।

खण्डेला क्षेत्र सभ्यता एवं संस्कृति का विकास पाषाण काल से दिखाई देता है। जिनमें पुराप्रस्तर युग के प्रमुख स्थल – देवली की ढाणी (कालीखेड़ा) से फलक पर निर्मित उपकरण उच्च पुराप्रस्तर युग मिले है। कैरपुरा मोड़ से मध्यप्रस्तर युगीन हस्त कुठार, रामपुरा मोड़ (सलेदीपुरा) में क्वार्टजाइट उपकरण, सलेदीपुरा के बांध पर तलहटी क्षेत्र में क्लीवर, स्क्रेपर, फ्लेक निर्मित उपकरण प्राप्त हुए है, जो खण्डेला क्षेत्र प्राचीनता को पाषाणकाल तक सिद्ध करता है। इसके अलावा खण्डेला के आस–पास क्षेत्र में ताम्रयुगीन गणेश्वर सभ्यता एवं लौहयुगीन जोधपुरा सुनारी सभ्यता दोनों सभ्यता कांटली नदी तट पर पनपी है। कांटली नदी का उद्‌गम खण्डेला के पश्चिमी पहाड़ो से हुआ है, यह नदी खण्डेला की प्राचीनता तथा विभिन्न युगों की वाहक दिखाई देती है।[8]

खण्डेला नगर की स्थापना खड़गल तंवर ने की थी। उस समय इसमें 84 गांव शामिल थें। पूर्व मध्य काल में खण्डेला पर डाहिल वंश का शासन रहा। मध्यकाल में निर्वाणों का शासन रहा। उत्तर मध्य काल और आधुनिक काल में शेखावतों का शासन रहा। निर्वाणों के समय खण्डेला दसवीं से बारहवीं सदी तक अजमेर के चौहानों के नियंत्रण में रहा। बाद में 12वीं से 16वीं सदी तक निर्वाणों ने खण्डेला में स्वतंत्र शासन किया, लेकिन रायसल शेखावत ने अकबर की मदद से खण्डेला पर 16वीं सदी में अधिकार कर लिया, तब से 1726 तक मुगल शासकों के नियंत्रण में प्रशासन व्यवस्था रही। 1726 से 1954 तक खण्डेला की राजनीतिक व्यवस्था पर जयपुर राज्य का प्रभाव रहा।[9]

18वीं सदी में खेतड़ी, सीकर की तरह खण्डेला भी वंश परम्परागत शेखावत का संस्थापक राज्य के रूप में बड़ा ठिकाना था। 1726 ई. सवाई जयसिंह के समय खण्डेला करद राज्य बना दिया गया। 18वीं सदी में खण्डेला राज्य ने जयपुर की अधीनता स्वीकार की इसके कारण थे :– मुगल शासकों का कमजोर होना, खण्डेला के राजाओं का मुगलों से संघर्ष एवं नाफरमानी, सीकर शासक लक्ष्मण सिंह के आक्रमण, मराठा, पिण्डारी के आक्रमण के भय तथा खण्डेला छोटे पाने एवं बड़े पाने के बीच संघर्ष था।[10]

हैमिल्टन के अनुसार शेखावाटी के चीफ नाम मात्र को जयपुर के अधीन थे। वे स्वामी के प्रभाव से मुक्त थे। ऐसे ही राज्यों में खण्डेला भी था। वह जयपुर राज्य की सहायक फौजी जाति का राज्य था।[11] खण्डेला ठिकाने में स्वयं की सेना एवं पुलिस व्यवस्था थी। वास्तव में पुलिस सैन्य व्यवस्था एक ही थी। उसमें आवश्यकता होने पर नौकर, चाकर, स्वयं, परिवार के सदस्य शामिल होते थे। खण्डेला में थानेदार के अधिकार नायब नाजिम के बराबर थे। दीवानी–फौजदारी मामलों की अपील जयपुर में की जाती थी।[12] खण्डेला ठिकाने के फौज में पैदल सैनिक, अश्वारोही, तोपची थे। फौजी अफसर को बडे जात कहा जाता था। अश्व सेना के ऑफिसर को रिसालदार कहते थे। पुलिस–फौज की भर्ती जातियों के आधार पर होती थी। ठिकाने में कर संग्रह जयपुर दादूपंती साधुओं की नागा सेना करती थी।[13] खण्डेला ठिकानों में 18वीं सदी तक कोई व्यवस्थित न्याय व्यवस्था नहीं थी।[14] दीवानी–फौजदारी मामलों का निर्णय बड़े पाना एवं छोटा पाना के राजा स्वयं करते थे।

खण्डेला रियासत में फौजदारी मामलों का निपटारा नाजिम करता था। छोटे–मुकद्दमों को गांव स्तर खण्डेला गांव क्षेत्र चौधरी निपटाते थे।[15] बड़े मामले ही न्यायालय में जाते थे। फौजदारी न्यायालयों

में हत्या, डकैती वाले मामले सुने जाते थें। यह मामले पहले सैशन कोर्ट में चलते थे बाद में इनकी सुनवाई जयपुर कोर्ट में होती थी।[16] खण्डेला रियासत के न्यायिक मामलो पर जयपुर राज्य का पूर्ण नियंत्रण था। यहाँ पर नाजिम जयपुर राज्य द्वारा नियुक्त किया जाता था। नाजिम जयपुर राज्य के अधीन रहता था।[17] जयपुर राज्य में शेखावाटी अन्य ठिकानों की तरह खण्डेलावाटी का वकील भी रहता था। न्याय सस्ता सर्वसुलभ था। न्यायालय के ज्यादा चक्कर नहीं लगाने पड़ते थे। दीवानी मामलों में अपराधी से जुर्माना लिया जाता था।

खण्डेला जैसे रियासते जयपुर राज्य के नियंत्रण के बाद भी आन्तरिक मामलों में स्वतंत्र थी – खण्डेला जैसे शेखावाटी के ठिकाने नियमित खिराज देते थे। अपनी सीमाओं के अन्दर शासित व्यवस्था देखते थे। जयपुर का आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं था।[18] खण्डेला में आय का मुख्य स्रोत लगान (भूमिकर) था। खण्डेला ठिकाने में भूमिकर की निश्चित रकम तय थी। यहाँ किसानों को अपनी भूमि पर खेती करने का हक था। समय–समय पर खण्डेला के राजा प्रजा एवं खेती की जानकारी लेते थे। खण्डेला में पैमाइश करके खतुनिया जारी कर दिया जाता था।[19] खण्डेला के दक्षिण–पूर्वी भू–भाग में रहट, कुँए एवं बावड़ियां से सिंचाई होती थी। खण्डेला क्षेत्र में भूमिकर वसुली में ठेकेदारी प्रथा, बटाई प्रथा तथा कूता प्रथा प्रचलित थी। खण्डेला में धर्मादा, दयोली और न्याम भूमि चारणों, भाटा मंदिरों को दी जाती थी। उस पर भूमिकर नहीं लगता था। न्याम भूमि चारणों, मंदिर के पूजारियों को ठाकुरजी की पूजा निमित दी जाती थी। इन जमीनों का विधिवत ताम्रपत्र एवं पट्टा दिया जाता था। यह जमीन खण्डेला क्षेत्र के हर गांव में है। राजस्थान निर्माण के बाद ऐसी जमीन का बड़ा भाग देवस्थान विभाग को दे दी तथा छोटे मंदिरों की जमीन पुजारी को दे दी। चारणों की जमीन राजस्थान सरकार ने अधिग्रहण कर ली। खण्डेला क्षेत्र में जमीन पट्टा दिया जाता था। भूमिकर की वसूली की खण्डेला क्षेत्र में लगान रसीद दी जाती थी। लगान का खण्डेला ठिकाने के कोष में जमा करते थे, जो ठिकाने की आय–व्यय का ब्यौरा रखता था।

खूँट बन्दी, नालाबंदी, पान चरई, व्यापारियों पर कर (जकात), राहदारी, सीमाकर, नपवाना, खनिज एवं नशीली वस्तुओं के व्यापार से होती थी। खण्डेला ठिकाना मुख्यतः खर्च–खिराज पर, पुलिस सेना पर, कर्मचारियों की तनख्वाह, भेंट–नजराना, सवारी व्यय, जन्म उत्सव, त्यौहार, गढ़ों की मरम्मत, मनोरंजन आयोजन एवं जनकल्याण पर करता था। खण्डेला का राजा हम्मीर सिंह ने मिडिल स्कूल एवं डिस्पेंसरी खोली थी। खण्डेला के राजा बहादुरसिंह, नाथूसिंह निर्वाण ने बावड़ियां भी बनवाई थी।

खण्डेला के राजा अपना व्यय भार उधार लेकर तथा जयपुर रियासत का बकाया छोड़कर घाटे की वित्त व्यवस्था करते थे। खण्डेला के राजा जयपुर के मातहत और सहायक थे। खण्डेला दोनों पाने (बड़ा पाना और छोटा पाना) के राजा जयपुर दरबार को खिराज एवं सैनिक सेवा देते थे। बदले में जयपुर राजा उनकी बाह्य आक्रमण से रक्षा करता था। खण्डेला ठिकाना जयपुर राज्य को यदि सेना भेजता था तो उसका खर्चा जयपुर राज्य उठाता था। खण्डेला के राजा जयपुर राज्य को खिराज देने के बाद अपने क्षेत्र के अन्दरूनी मामलों में पूर्ण स्वतंत्र थे। उनका जकात, लगान, खनिज कर पर अधिकार था। वे आन्तरिक शासन के मामलों में भी स्वतंत्र थे। चार्ल्स मेटकाफ के अनुसार ब्रिटिश सरकार भी ठिकानों के पुराने अधिकारों को सुरक्षित रखना चाहती थी, लेकिन खिराज न देने पर जयपुर राज्य ने बड़ा पाना खण्डेला के राजा वृन्दावन सिंह को बेदखल भी कर दिया था। बड़े पाना खण्डेला एवं छोटा पाना खण्डेला राज्य में मनमुटाव तथा जायदाद का बंटवारा में जयपुर महाराजा का निर्णय अंतिम तथा मान्य होता था। जैसे उदयसिंह एवं धीरजसिंह के मामले में जयसिंह ने किया था। निष्कर्षतः खण्डेला के ठिकाने छोटे–बड़े पाना का प्रशासन दीवानी अधिकार तथा सेना को छोड़कर स्वतन्त्र थे, परन्तु जयपुर के अधीन होने के कारण मनमानी नहीं कर सकते थें। इनकी निगरानी के लिए झुंझुनूं से डिप्टी कमिशनरी ऑफिस बनाया गया था। इस तरह 20वीं सदी में जयपुर के इशारों पर खण्डेला का शासन चलता था।

निष्कर्ष

खंडेला क्षेत्र का इतिहास अत्यंत प्राचीन, समृद्ध एवं गौरवपूर्ण रहा है। पाषाणकाल से लेकर आधुनिक काल तक यह क्षेत्र निरंतर मानव सभ्यता, संस्कृति और राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र बना रहा। मध्यकाल में खंडेला एक प्रभावशाली जागीर के रूप में विकसित हुआ, जहाँ शेखावत शासकों ने प्रशासनिक एवं सैन्य व्यवस्था को संगठित रूप प्रदान किया। यद्यपि खंडेला जयपुर राज्य के अधीन था, फिर भी उसे आंतरिक प्रशासन, कर व्यवस्था तथा स्थानीय शासन में पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त थी। बड़े और

छोटे पाना की प्रशासनिक व्यवस्था ने क्षेत्रीय शासन को प्रभावी बनाया। न्याय, सैन्य संगठन और राजस्व प्रणाली सामंती शासन व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ थीं। खंडेला की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि पर आधारित थी तथा भूमि कर राज्य की आय का मुख्य साधन था। सिंचाई साधनों, व्यापारिक करों तथा स्थानीय संसाधनों ने आर्थिक संरचना को सुदृढ़ किया। साथ ही, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जल–संरचना संबंधी कार्यों से स्थानीय शासकों की जनकल्याणकारी भूमिका भी स्पष्ट होती है।

अंततः कहा जा सकता है कि खंडेला केवल एक जागीर या ठिकाना नहीं था, बल्कि शेखावाटी क्षेत्र की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं प्रशासनिक परंपराओं का महत्वपूर्ण केंद्र था। इसका अध्ययन राजस्थान की सामंती व्यवस्था, क्षेत्रीय राजनीति तथा सामाजिक–आर्थिक संरचना को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

संदर्भ सूची

1. *शर्मा सूर्यनारायण ; खण्डेला का इतिहास, प्रकाशक पं. रेवती रमण शर्मा, जयपुर, वर्ष 1921, पृष्ठ–34*
2. *शर्मा पं. नन्दकिशोर ; खण्डेला राजवंश प्रकाश, वर्ष 1948 ई., पृष्ठ–1*
3. *शेखावत सुरजन सिंह ; खण्डेला का वृहद् इतिहास एवं शेखावतों की वंशावली, गिरधर वंश प्रकाश, प्रकाशक राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, द्वितीय संस्करण, वर्ष 2009, पृष्ठ–25*
4. *अबूल फजल; ''आइने ए अकबरी''*
5. *तिवाड़ी रघुनाथ प्रसाद ''उमड्ड'' ; ''खण्डेला क्षेत्र का सांस्कृतिक वैभव'', प्रकाशक : ऋचा प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2011*
6. *डॉ. शास्त्री प्रभाकर ; विश्वम्भरा, पृष्ठ–113*
7. *शेखावत सुरजन सिंह ; शेखावाटी प्रदेश का प्राचीन इतिहास, पृष्ठ–6*
8. *डॉ. मीणा मदन लाल ; शेखावाटी क्षेत्र का प्रागैतिहासिक एवं आद्यैतिहासिक पुरातत्व, पृष्ठ–48*
9. *डॉ. मीणा म्होर सिंह ; सीकर जिले की खण्डेला की बावड़ियों का ऐतिहासिक अध्ययन, शोध प्रबन्ध, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, पृष्ठ–55*
10. *वही, पृष्ठ–55*
11. *हैमिल्टन, वाल्टर, हिन्दुस्तान, जॉन मरी एलबेमारली स्ट्रीट, लंदन, 1820, पृष्ठ–536*
12. *विल्स, सी.यू., पूर्वोक्त, पृष्ठ–51*
13. *दास, श्यामल, वीर विनोद, दसवां प्रकरण, भाग–4, राजस्थान ग्रंथागार, जोधपुर, 2017, पृष्ठ–1259*
14. *गजेटियर्स, राजपूताना वाल्यूम, 11, जयपुर, 1879, पृष्ठ–138*
15. *शेखावत, भूरसिंह, विविध संग्रह, शेखावाटी का इतिहास, हस्तलिखित, जयपुर, 1968, पृष्ठ–65*
16. *सी.यू., विल्स, पूर्वोक्त, परिशिष्ट, सी 1 से सी 5*
17. *जयपुर एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट 1906 एवं विल्स, सी.यू., खण्डेला रिपोर्ट, 1933, पृष्ठ–56*
18. *शर्मा, झाबरमल, आदर्श नरेश, अजीत सिंह, कलकत्ता, पृष्ठ–278*
19. *ठाकुर, देशराज, शेखावाटी के जनजागरण व किसान संघर्ष के चार दशक, जयपुर, 1971, पृष्ठ–12*

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 184-187
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

सौन्दर्यानुरागी महाकविर्माघः

श्रीमती राजकुमारी
सह आचार्य संस्कृत
महारानी श्री जया राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

धन्येयं राजस्थान–वसुन्धरा या बृहत्त्रयी–प्रणेतृषु महाकविषु मध्यमणिनेव महाकविमाघेन मण्डिता वन्दिता च। प्राचीनसंस्कृतकवीनां कालिदासमाघप्रभृतीनामिदं महत् सौभाग्यं यत्ते विभवमये भारते वर्षे जनिं लेभिरे, सर्वतश्चानन्तसौन्दर्यराशिं प्रतिक्षणं साक्षाच्चक्रुः। कुसुमसुकुमारहृदयास्ते सुरगवी–समुपासकाः सौन्दर्यमधुपानमत्ता भूत्वा काव्योद्गानं विदधति। वस्तुतस्तु तैरेव महाकविभिः सौन्दर्यं सम्यक्तयानुभूतं काव्ये च तदभिव्यक्तम्। सौन्दर्यसम्बन्धे महाकवेर्माघस्येयं सहजा सत्या चोक्तिर्विचारणीया यत् 'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयताया'[1] इति। विविधसौन्दर्यविचारा महाकविनात्रैकार्थसूत्रे प्रोताः। वस्तुनि प्रतिक्षणं वर्तमाना नवीनतैव सुन्दरता–इति वस्तुनिष्ठसौन्दर्यवादिनां मतं समर्थितम्। परं जडवस्तुनि नूतनतानुभयस्तु चेतनसम्पर्कणैव जायते। अनुभवितारं बिना वस्तुनो नवतोपगमनं निर्मूल्यं भवेत्, कथं तत्र सौन्दर्यासौन्दर्य–संज्ञापि स्यात्–इत्यस्मादात्मनिष्ठसौन्दर्यवादिनां मतमपि प्रतिपादितम्। उभयानुमोदनेन उभयपक्षीया सत्यता महाकविना भङ्ग्यन्तरेणोपात्ता। वागुपासकैः कविभिर्लोके काव्य–माध्यमेन वाचस्पत्यं प्रतायते, वाग्मिनां तेषां भारती सत्यपूता भवति। स्वयं महाकविना माघेनोदघुष्टम्–''वागेका वाग्मिनः सतः।"[2] कवीनां सौन्दर्यवर्णने कदाचित् केचिच्छ्रोतारो ऽतिशयोक्तिमसत्यतां वानुभवन्ति परमियमनुभूतिस्तु तदैव सम्भवति यदा कविभावनाभावितहृदयास्ते न जायन्ते[3], कविदृशा च तत् सौन्दर्यं नोपलभन्ते। ऋषयः कवयश्च वस्तु–सौन्दर्यं साक्षात्कुर्वन्ति साक्षात्कृतं च शब्दैरुद्गायन्ति। रैवतकपर्वतस्य सौन्दर्यवर्णनप्रसङ्गे महाकविना माघेन सत्यमेवोक्तम्, यथा–

भवन्ति नोदामगिरां कवीनामुच्छ्रायसौन्दर्यगुणा मृषोद्याः।।[4]

अर्थमिमं श्रुतिरपि जेगीयते 'सुस्फुटम्, यथा–

कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् ।
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।[5]

सौन्दर्यदर्शने वर्णने च कविवाणीषु यः कोऽपि विशेषो दरीदृश्यते स कवीनां व्यक्तित्वभेदेन स्वभावभेदेन वोपजायते। मुखसौन्दर्यदर्शने महाकवेः कालिदासस्य मनो यथा विलोचनचारुतायामभिरमते तथैव महाकवेर्माघस्य मानसं सौन्दर्यालोकने तदभिधान एव मोदं मदं च धत्ते। महाकवि–कालिदासस्य यक्षो मेघं वक्रमार्गामप्युज्जयिनीं प्रति पौरांगनानां लोलापाङ्गैः सह रमणार्थं प्रेषयति तद्विना मेघलोचनवैयर्थ्यं प्रतिपादयति, यथा–

वक्रः पन्थाः यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।
विद्युद्दामस्फुरितचकितैर्यत्र पौराङ्गनानां
लोलापाङ्गैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि।।[6]

महाकविर्माघोऽपि रैवतकपर्वते दन्तोज्ज्वलानां नारीणां सौन्दर्यमुपवर्णयति।[7] न केवलं नर–

नारीणामपितु हस्त्यश्वानां दन्तसौन्दर्यमपि तेन प्रकटितम्। माघमतानुसारं चेदिपस्य शिशुपालस्य हस्ती न केवलं हस्तेन हस्तवानस्ति प्रत्युत दन्ताभ्यां शक्तिमान् भवति। दन्तभग्नादसौ विहस्तो जायते, यथा–

निशितासिलतालूनैस्तथा हस्तैर्न हस्तिनः।
युध्यमाना यथा दन्तैर्भग्नैरापुर्विहस्तताम्।।[8]

प्रगल्भोऽयं महाकविर्माघो वाग्विचक्षणतायां श्रद्दधाति, काव्यस्य कुन्तकोक्तं विचित्रमार्गमनुसरति, वाग्वत्वं च प्रतिपदं प्रदर्शयति। वागुच्चारणे न केवलं दशनततिः सहायिका भवति, तस्याः सौन्दर्यं द्रष्टारं श्रोतारञ्च विमुग्धीकरोति। सम्वादप्रियेण माघेन नारदकृष्ण–सम्वादारभ्य शिशुपालप्रयुक्तकुवाक्यबाणैस्तन्नाशपर्यन्तं शिशुपालवध–महाकाव्यस्य कथा संद्दब्धा। द्वितीयसर्गे श्रीकृष्णबलरामोद्धवानां राजनीतिकमन्त्रणा सविस्तरं ग्रथिता। चतुर्दशसर्गे कृष्णयुधिष्ठिरभीष्माणां पञ्चदशे सर्गे शिशुपालस्य, षोडशे सर्गे च तद्दूतस्य विशद वक्तृता गुम्फिता। मध्ये च यथास्थानं वैतालिककृतं प्रभातादिवर्णनमपि निबद्धम्। सर्वत्रैव' कविना दशन–सौन्दर्यं सविशेषं वर्णितम्। भगवतः श्रीकृष्णस्य दशनाः आकारेण कुन्दकुसुमकुड्मलानीव राजन्ते।[9] रणरतानां मेघश्यामलगजानां संघर्षेण शोणिताक्ता गजदन्ताः समुद्रेऽङ्कुरिता विद्रुमकन्दोद्भेदा इव लसन्ति।[10] रैवतकपर्वते जयं कुर्वतां मुनीनां मुख–शुक्तिषु मौक्तिकानीव ते शोभन्ते, यथा–

प्रकृतजपविधीनामास्यमुद्रश्मिदन्तम्
मुहुरपिहितमोष्ठ्चैरक्षरैर्लक्ष्यमन्यः।
अनुकृतिमनुवेलं घट्टितोद्घट्टितस्य
व्रजति नियमभाजां मुग्धमुक्तापुटस्य।।[11]

अन्यत्र च माघेन मौक्तिकानामुपमेयरूपेण दशनानां चोपमानरूपेणाप्युल्लेखो विहितः। श्रीकृष्ण–शिशुपालयोर्युद्धे हतानां पार्थिवानामुरोदेशेभ्यो भ्रष्टा मुक्ताहाराः विहसतो मृत्योर्दन्ता इव चकासन्ते, यथा–

रेजुर्भ्रष्टा वक्षसः कुंकुमांका युक्ताहाराः पार्थिवानां व्यसूनाम्।
हासाल्लक्ष्याः पूर्णकामस्य मन्ये मृत्योर्दन्ताः पीतरक्तासवस्य।।[12]

संग्रामाङ्गणे कीर्णा दन्तिनां दन्ताः मुसलोपमा मृत्योर्वर्तन्ते–

कृत्तैः कीर्णा मही रेजे दन्तैर्गात्रैश्च दन्तिनाम्।
क्षुण्णलोकासुभिर्मृत्योर्मुसलोलूखलैरिव।।[13]

माघाय दन्तश्वेतिमा भृशं रोचते। श्रीकृष्णस्य मुखे दशनावलिश्चन्द्रकलेव राज्यते।[14] द्विरद–दन्तोऽपि शशिखण्डमिव शुभ्रो हृदयमावर्जयति।[15] शरदर्तौ शुभ्र–शराङ्कुरा दिग्वधूनां मुखेषु श्वेतदन्ता इव प्रतीयन्ते।[16] यदायं श्वेतिमा परं प्रकाशयितुं समर्थः स्यात् तदायमपूर्वो भासते। दशनानामिदं रूपमेव परमं सुन्दरम्। माघेनेयं दशन–शोभा नैकरूपेण वर्णिता। समागतं देवर्षि–नारदं यथोपचारं सम्पूज्य यदा प्रथमवारं श्रीहरिस्तमवोचत् तदा श्रीकृष्ण–मुखान्निर्गतैर्दशनांशुभिः सितमपि मुनिशरीरं सुतरां श्वेतिमानमभजत्।[17] एवमेव यदा युधिष्ठिरसभायां श्रीहरीः राजमण्डलं सम्बोधयितुमुद्युक्तोऽभूत्, तदा तस्य दशनालोकेन तद्वक्षसि कपटहारो व्यराजत येन श्रीकृष्णशरीरं शबलशोभामासादितवान्।[18] मन्त्रणावसरे व्याहर्तुकामस्य बलरामस्य मधुपानमुखामोदेनाकृष्टा भ्रमरा अपि तस्य दशनकान्त्या श्वेतिमानमानीताः–

जगाद वदनेच्छद्मपद्मपर्यन्तपातिनः।
नयन्मधुलिहः श्वैत्यमुदग्रदशनांशुभिः।।[19]

भगवतः श्रीकृष्णस्य दन्तकान्त्या तु न केवलं मूर्तः समस्तः सभाकक्षस्याभ्यन्तरप्रदेश एव द्योतितः परममूर्ती वाण्यपि स्नपितेव शुद्धवर्णा विहिता।[20] वस्तुतस्तूच्चारण–शुद्धता हृद्यता च वक्तुः शुभ्रदशनैरेव समेधेते।

रैवतकपर्वते सद्यो जागरिता काऽप्यंगना यदा पाणिनैकेन मुखं पिधाय व्यजृम्भत तदांगुलिविवरेभ्यस्तस्याः दशनप्रभांकुराः विनिःसृता यैरनिर्वचनीया काऽपि तस्याः शोभा समजायत, यथा–

नलिनान्तिकोपहितपल्लवश्रिया व्यवधाय चारुमुखमेकपाणिना।
स्फुरदंगुलीविवरनिःसृतोल्लसद्दशनप्रभांकुरमजृम्भतापरा।।[21]

तदैव प्रतिपन्नं यदा विलसद्दशनांशुभिस्तत् सकेसरं जातम्–

स्फुरदुज्ज्वलाधरदलैर्विलसद्दशनांशुकेसरभरैः परितः।
धृतमुग्धगण्डफलकैर्विबभुर्विकसद्भिरास्यकमलैः प्रमदाः।।[22]

यदेयं शुभ्रा दशनावलिर्मधुरध्वनियुता वरीवृत्यते तदास्याः सौन्दर्यमनेकगुणितं निष्पद्यते। सुरतोत्सवे कान्तेन कृताधरदंशनाद् हर्षविमिश्रितवेदनया कान्ता यदा सीत्करोति तदा तस्या द्विजप्रभया तदुपरि स्वत एव श्वेतव्रणपट्टिका बध्यते।[23] महाकवये माघायभावोऽयंएतावान्प्रियः यदमुना प्रकारान्तरेणापरस्मिन् पद्येऽसौ व्याहृतः–

व्रणभृता सुतनोः कलसीत्कृतस्फुरितदन्तमरीचिमयं दधे।
स्फुटमिवावरणं हिममारुतैर्मृदुतया द्रुतयाधरलेखया।।[24]

सीत्कारस्य समये नायिकायाः श्वेतदन्तेषु प्रातः सूर्यस्य पीतरश्मयो यदा संपतन्ति तदा तस्या दशनाः पद्मरागच्छविमनुकुर्वन्ति, नायिकायाश्च सौन्दर्यं संवर्धयन्ति।[25]

न केवलं कान्ताकान्तयोः सस्वराः दशना एव परमां शोभामाप्नुवन्ति, ग्रासचर्वणावसरे चुर्चुरशब्दसहिता अश्वदन्ता अपि कामपि शोभाशालितां दधाना माघमानसं, प्रसभं कर्षन्ति, यथोपवर्णयति कविः,

अश्रावि भूमिपतिभिः क्षणवीतनिद्रैरश्नन् पुरो हरितकं मुदमादधानः।
ग्रीवाग्रलोलकलकिंकिणिकानिनादमिश्रं दधद्दशन चुर्चुरशब्दमश्वः।।[26]

मुखमुद्राया नानाविधदशनस्थितयोऽनेकभावान् दर्शयन्ति। शिशुपालवधस्य पञ्चदशे सर्गे भीष्मकृतां श्रीकृष्णपूजामसहमाना राजानः कुपिता अभूवन्। तत्र विरोधवाक्यमभिधित्सतो राज्ञ उत्तमौजसो विकृतं मुखं राहुवदनमिव संजातम्, तत्र च तस्य सिता दन्त–पंक्तिः ग्रस्तचन्द्र इव व्यभात्।[27] अनेनोत्तमौजसो मुखस्य भयंकरता प्रकटयति। तस्मिन्नेव समये दन्तवक्रनामा राजा तारस्वरेणाट्टहासं व्यधात् वक्रदन्तैश्च तस्य कोपः सूचितः।[28] शिशुपालस्तु समधिकं निःश्वसन् यदा वक्तुमारभत, तदा तस्य दशनेभ्यो विकीर्णकिरणा अग्निकणा इव स्फुरन्तस्तस्य क्रोधमेवासूचयत्।[29] चेदिपदूतस्य वचनं संश्रुत्य बलभद्रेण यदाट्टहासः कृतस्तदा तद्दशनैः क्रोधोद्यतमपि तस्य शरीरं स्वाभाविकश्वेतकान्तिमयं विहितं परमनेन तत्कृता शत्रोरवज्ञा प्रकटिता।[30] युद्धे शस्त्रास्त्रविहीना योद्धारो दन्तिन इव कोपात् प्रतिपक्षिणं दन्तैरेव छिन्दन्ति।[31]

गजानां युद्धवर्णने तेषां दन्तच्छटां महत्तां च नैकप्रकारेणाभिव्यनक्ति महाकविर्माघः। दन्तिनो दन्तप्रहारैरन्यमाहतं कुर्वन्ति।[32] परस्परं दन्तसंघट्टनेन तेषां दन्तेभ्यः स्फुल्लिंगाः प्रादुर्भवन्ति, व्योम्नि ये युगान्ते नाशमासादयन्तं, नक्षत्रमाला इव राजन्ते।[33] कदाचित् दन्तिनां स्वर्णिमचामरैः सह तेषां पृथक्तया प्रतीतिरपि न जायते।[34] कश्चिद्गजः शात्रवीयं कुञ्जरं निजदन्तयोरुपरि प्रस्थाप्य मेघाश्लिष्टसानुर्गिरिरिवाशोभत।[35] यदा कोऽपि द्विपोऽन्यस्य नागस्यांगे गाढं दन्तं प्रवेशयति, तदासौ कथमपि दुःखदुःखेन तमुत्खनति (निस्सारयति)।[36] लूनगात्रो गजो यदोर्व्यां पतति, तदा तस्य दन्तयुग्ममेव तस्यावलम्बनं भवति।[37]

एवं सर्वत्र शिशुपालवधमहाकाव्ये नर–नारीणां घोटक–दन्तिनां च दशन–सौन्दर्यं महाकविना माघेन प्रकाशितम्। वागुपासकस्यास्य महाकवेर्मते मुखगता भारती दशनच्छटया परिपूता पावनी च भवति। दशनशोभयैव प्राणिनश्चाहता कामपि काष्ठामधिरोहति। मुखावयवेषु दशनशोभाया अतिशयेन वर्णनं महाकविमाघस्य सौन्दर्यानुरागं दर्शयति, माघस्यौदार्यं हृदय–वैशद्यं च प्रमाणीकरोति, सर्वप्रसादाकांक्षां चाभिव्यनक्ति।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. शिशुपालवधम्, 4/17
2. तत्रैव, 2/109
3. कवेरन्तर्गतं भावं भावयन् भाव उच्यते।। नाट्यशास्त्रम् 7/2
4. शिशुपालवधम्, 4/10
5. ईशावास्योपनिषद्,
6. मेघदूतम्, पूर्वमेघः।
7. शिशुपालवधम्, 4/40
8. तत्रैव, 19/67
9. शिशुपालवधम्, 2/7
10. तत्रैव, 18/36
11. तत्रैव, 11/42

12. तत्रैव, 18/68
13. तत्रैव, 19/81
14. तत्रैव, 1/25
15. तत्रैव, 6/34
16. शिशुपालवधम्, 6/54
17. तत्रैव, 1/25
18. तत्रैव, 14/12
19. तत्रैव, 2/21
20. तत्रैव, 2/7
21. तत्रैव, 13/43
22. तत्रैव, 9/47
23. शिशुपालवधम्, 6/58
24. तत्रैव, 6/59
25. शिशुपालवधम्, 11/54
26. तत्रैव, 5/58
27. तत्रैव, 15/51
28. तत्रैव, 15/52
29. तत्रैव, 15/62
30. तत्रैव, 17/4
31. तत्रैव, 19/25
32 शिशुपालवधूम्, 18/33
33. तत्रैव, 18/35
34. तत्रैव, 18/34
35. तत्रैव, 18/38
36. तत्रैव, 18/37
37. तत्रैव, 18/46

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 188-192
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

" हिन्दी उपन्यास में युवा वर्ग के व्यक्तित्व का संघर्ष"

सुशील कुमार पटेल
शोध छात्र,
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ,वाराणसी

शोध सार :- किसी भी राष्ट्र की प्रगति की दिशा और गति, वहाँ के शिक्षित और जागरूक युवाओं पर निर्भर करती है; अतः युवा वर्ग के व्यक्तित्व के संघर्ष को समझने के लिए पहले उसकी परिभाषा, मनोवैज्ञानिक अवस्थाएँ और सामाजिक अनुभवों को समझना आवश्यक है। युवा वर्ग आमतौर पर 15 से 30 वर्ष की आयु के लोगों को कहा जाता है, जो अपने जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण चरण में होते हैं। युवाओं को शिक्षा और रोजगार के अवसरों की कमी, आर्थिक संघर्ष, जैसे कि कम वेतन, बेरोजगारी और आर्थिक अनिश्चितता, सामाजिक अन्याय जैसे कि जाति व्यवस्था, लिंग भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार, मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है, जैसे कि तनाव, चिंता और अवसाद इत्यादि से संघर्ष करता आया है। आज का युवा वर्ग न केवल अपने जीवन के प्रति सजग है, बल्कि उस पर घर, परिवार, समाज और देश की भी महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ हैं। आधुनिक समय के बदलते परिदृश्य में युवाओं को अनेक सामाजिक, आर्थिक और मानसिक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। विशेष रूप से 1990 के दशक में वैश्वीकरण के आगमन के बाद जब दुनिया में तीव्र गति से परिवर्तन हुए हैं।

बीज शब्द – युवा वर्ग ,व्यक्तित्व ,संघर्ष ,सामाजिक,भूमंडलीकरण ,मनोवैज्ञानिक

मूल आलेख - हिंदी उपन्यास में युवा वर्ग से संबंधित संघर्षों की चर्चा निरंतर होती रही है। इन संघर्षों का सबसे जटिल व गहन पहलू है – 'व्यक्तित्व का संघर्ष'। यह संघर्ष केवल व्यक्ति के बाह्य सामाजिक दबावों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह एक मानसिक और भावनात्मक उलझन का भी रूप लेता है। हिंदी साहित्य ने समय-समय पर इस द्वंद्व को समझने और प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। यह संघर्ष केवल किसी व्यक्ति विशेष की समस्या नहीं, बल्कि समाज और समय की सामूहिक स्थिति का दर्पण है।

व्यक्तित्व का संघर्ष उस सामाजिक, मनोवैज्ञानिक स्थिति को कहा जा सकता है जब व्यक्ति के भीतर विरोधाभासी इच्छाएँ, मूल्य और आदर्श एक-दूसरे से टकराते हैं। यह टकराव व्यक्ति को निर्णय लेने, पहचान बनाने और सामाजिक ढाँचे में अपने स्थान को समझने की प्रक्रिया में उलझा देता है। यह संघर्ष व्यक्ति की आंतरिक चेतना और बाह्य वास्तविकताओं के बीच एक सेतु की तरह होता है, कभी पुल की तरह, तो कभी दीवार की तरह। विशेषतः युवा वर्ग इस संघर्ष से अधिक गहराई से प्रभावित होता है, क्योंकि वह जीवन के उस चरण में होता है जहाँ प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों और आधुनिक जीवन शैली के बीच संतुलन साधना कठिन हो जाता है। एक ओर वह स्वतंत्रता,

आत्मनिर्णय और व्यक्तिगत आकांक्षाओं की ओर आकर्षित होता है, तो दूसरी ओर परंपरा, सामाजिक अपेक्षाओं और पारिवारिक दबावों से बँधा होता है।

युवा जीवन एक संक्रमणकाल होता है, जहाँ एक ओर स्वतंत्रता की आकांक्षा होती है, तो दूसरी ओर जिम्मेदारियों और सामाजिक अपेक्षाओं का बोझ। यही वह चरण होता है जब व्यक्ति अपने आदर्शों और यथार्थ, संस्कार और आधुनिकता, परंपरा और प्रयोग के बीच जूझता है। ऐसे में उसका मन बार-बार दिशा बदलता है और वह स्वयं को पहचानने की कोशिश करता है। हिंदी साहित्य ने युवाओं के व्यक्तिगत संघर्ष को उसके मनोवैज्ञानिक पक्ष को विविध रूपों में उल्लिखित किया है। अज्ञेय के पात्र 'शेखर' में आत्मसंघर्ष की तीव्रता स्पष्ट देखी जा सकती है। शेखर पुरातनपंथी सोच का विरोधी है। वह आधुनिक विचार और स्वतंत्र चेतना वाला पात्र है इसलिये आजादी के आंदोलन में नरम दल की बजाय गरम दल में शामिल होता है। मोहन राकेश ने मध्यवर्गीय युवाओं की मानसिक दुविधाओं को बेहद यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया है।

राजेंद्र यादव के लेखन में युवा पीढ़ी की यौनिकता, अस्मिता और अस्तित्व की तलाश को केंद्रीय विषय बनाया गया। स्त्री चेतना और मध्यवर्गीय सामाजिक व मनोवैज्ञानिक संघर्ष को अपने कथा साहित्य में सूक्ष्म उल्लेख किया गया है। इन रचनाकारों ने यह दिखाया कि व्यक्ति किस प्रकार समाज की अपेक्षाओं और अपने आंतरिक जीवन के बीच तालमेल बिठाने में संघर्ष करता है।

श्रीलाल शुक्ल अपने समय के महत्त्वपूर्ण उपन्यासकार हैं। उनका उपन्यास 'राग दरबारी' 1968 में प्रकाशित हुआ। इसमें ग्रामीण समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और शिक्षा प्रणाली और शासन व्यवस्था की विफलता पर तीखा व्यंग किया गया है। भारतीय युवा का व्यक्तित्व नैतिक शिक्षा, आधुनिक आदर्शों, दूसरी तरफ भ्रष्ट सामाजिक तंत्र और पारंपरिक रूढ़ियों में फँसा हुआ है, "रंगनाथ को लगने लगा कि वह एक ऐसे मंच पर खड़ा है जहाँ अभिनय की नहीं, सिर्फ तालियों की कीमत है।"1

ग्रामीण और शहरी युवाओं के बीच अवसरों की असमानता एक प्रमुख समस्या है। आधुनिकता ने कैरियर, पैसे, प्रेम-संबंधों और पहचान को लेकर युवाओं के सामने असमंजस की स्थिति उत्पन्न कर दी है। संस्कृति बनाम आधुनिकता के प्रभाव का द्वंद्व धीरे-धीरे बढ़ता गया। नयी तकनीक और अस्मिता का संघर्ष बढ़ता गया है। इंटरनेट और मोबाइल तकनीकी के आगमन से सूचना क्रांति हुई। इसने युवाओं के सोच और सामाजिकता में परिवर्तन उत्पन्न किया है। इससे उनके वैश्विक सोच और नेटवर्किंग में गति आयी है। जाति, लिंग, क्षेत्रीय पहचान और लैंगिक अधिकारों को लेकर युवा अधिक मुखर हुए। युवतियों की शिक्षा और आत्मनिर्भरता में वृद्धि हुई , लेकिन पितृसत्तात्मक व्यवस्था से संघर्ष बना रहा।

हिंदी साहित्य केवल समस्या को उजागर नहीं करता, वह समाधान के संकेत भी देता है। आत्ममंथन, संवाद, शिक्षा, संवेदनशील समाज और मार्गदर्शन जैसे माध्यमों के द्वारा व्यक्ति इस संघर्ष से बाहर आ सकता है। साहित्य का उद्देश्य केवल पीड़ा चित्रित करना नहीं है, बल्कि मानव मन की गहराइयों में झाँककर रास्ते सुझाना भी है।

यशपाल आज़ादी के समय के महत्त्वपूर्ण प्रगतिशील, क्रांतिकारी चेतना के लेखक हैं। अपने 'झूठा-सच' के संस्मरण में लिखते हैं, "सामाजिक प्राणी हूँ समाज से बेपरवाह नहीं रह सकता। अनेक बार कुछ सामाजिक स्थितियाँ, समस्याएँ, परंपरागत धारणाएँ और मान्यताओं के अंतर्विरोध मन को गहरा कचोटकर व्याकुल कर देते हैं।"2 "विजय को लगने लगा जैसे उसके भीतर दो लोग लड़ रहे हों – एक, जो सब छोड़ कर जाना चाहता है, दूसरा जो हर हाल में रुकना चाहता है।"3

भूमंडलीकरण का प्रभाव युवाओं पर अधिक पड़ा है। सामाजिक, सांस्कृतिक पहचान के संकट उत्पन्न हो गए हैं। युवाओं में प्रतिस्पर्धा की होड़ मची है।

मैं कौन हूँ?
मुझे क्या करना चाहिए?
अपने सपने और समाज को लेकर उसकी उपेक्षाएँ क्या हैं ?
समाज और स्व की पहचान के बीच का अंतर्द्वंद्व? जैसे सवालों और चुनौतियों से व्यक्ति संघर्ष कर रहा है। हिंदी साहित्यकारों ने इन आंतरिक द्वंद्वों और संघर्षों को अपनी रचनाओं में जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। अज्ञेय, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, निर्मल वर्मा जैसे लेखक विशेष रूप से इस विषय में उल्लेखनीय हैं। उनकी रचनाओं में युवा पात्र अक्सर स्वयं की खोज और समाज की विडंबनाओं के बीच फँसे दिखाई देते हैं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि व्यक्तित्व का संघर्ष केवल व्यक्तिगत नहीं होता, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों से भी जुड़ा होता है। एक युवा जब किसी सामाजिक अन्याय या सांस्कृतिक दुविधा के विरुद्ध खड़ा होता है, तो वह एक बड़े विमर्श का हिस्सा बन जाता है। ममता कालिया के 'बेघर' उपन्यास में परमजीत के माध्यम से व्यक्ति के अंतर्मन की गहराई, आधुनिकता और रूढ़िवादिता के बीच व्यक्तित्व के संघर्ष को देखा जा सकता है,
"परमजीत ने उसे कई बार समझाया कि वह छोटी-छोटी बातों की फिक्र ना किया करें वह इतना कमाता है तो उसी के लिए। इस बात की रमा पर मूड के अनुसार अलग-अलग प्रतिक्रिया होती। अगर वह अच्छे मूड में होती तो कहती मर्द का काम है कमाना, औरत का काम है बचाना और अगर वह उग्र मनःस्थिति में होती तो, "क्या कमाते हो! दो सौ तो सिर पड़ी पोपटी की माँ ही ले लेती है, जान निकल जाती है जब नए-नए नोटों का जत्था उसे पकड़ाती हूँ, सौ तुम घर भेज देते हो। आजकल छह सौ में क्या होता है! और तुम्हारी सिगरेट है कि कम की जगह ज्यादा होती जा रही है।"4

इस प्रकार 'व्यक्तित्व का संघर्ष' विषय को केवल एक भावनात्मक या निजी समस्या न मानकर उसे समाज और समय की बदलती धारणाओं का साहित्यिक प्रतिबिंब समझा जाना चाहिए। यह संघर्ष ही वह बिंदु है जहाँ साहित्य जीवन से गहराई से जुड़ता है और व्यक्ति की आत्मचेतना, सामाजिक स्थिति और भविष्य के सपनों के बीच संवाद स्थापित करता है।

व्यक्तित्व संघर्ष परंपरागत मूल्यों (धार्मिकता, संयुक्त परिवार, नैतिकता) और आधुनिक आदर्शों (स्वतंत्रता, व्यक्तिगत सफलता) के बीच द्वंद्व को प्रदर्शित करता है। आर्थिक उदारीकरण के पश्चात् निजी कंपनियों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन से उपभोक्तावाद की संस्कृति का उदय हुआ, जहाँ ब्रांड, सामाजिक प्रतिष्ठा (स्टेटस) और फैशन को विशेष महत्व दिया जाने लगा। इसने सबसे अधिक युवाओं को प्रभावित किया है। उनके खाने-पीने, कपड़े पहनने, सोचने के तरीकों तक में परिवर्तन हुआ है। आज के युवा संस्कृति के वैविध्य की पहचान खो रहे हैं और नीरस, अजनबीयत की जीवन शैली जीने को अभिशप्त हैं।

भारतीय युवाओं के लिए सामाजिक चेतना, वैचारिक टकराव, आधुनिकता के आकर्षण और परंपराओं के बंधनों के बीच व्यक्तित्व के संघर्ष का दौर गुजरा था। यह संघर्ष केवल बाहरी परिस्थितियों से नहीं, बल्कि आत्ममंथन, पहचान की तलाश और मूल्यबोध के द्वंद्व से भी उपजा। यद्यपि इस संघर्ष ने कई बार युवाओं को भ्रमित किया, परंतु इसी संघर्ष की प्रक्रिया ने उन्हें नया दृष्टिकोण, आत्मनिर्भरता और सामाजिक उत्तरदायित्व की चेतना भी प्रदान की।

जयप्रकाश कर्दम एक प्रमुख दलित उपन्यासकार हैं। उनका उपन्यास 'छप्पर' 1990 के दशक में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास उस दौर की दलित पीढ़ी की सामाजिक स्थिति और चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। जब पहली बार दलित युवा उच्च शिक्षा की ओर अग्रसर होते हुए विश्वविद्यालयों में प्रवेश कर रहे थे, "अभाव और कष्टों को पार करते हुए चंदन ने एम.ए. की परीक्षा पास की और पी-एच.डी के लिए रजिस्ट्रेशन कराया। इस दौरान कई बार ऐसा समय भी आया जब उसे लगा कि उसकी पढ़ाई जारी नहीं रह पाएगी और उसे बीच में ही पढ़ाई छोड़नी पड़ेगी।"5

ऐसे कठिन समय में हरिया उसके लिए संबल बनता, उसे आत्मबल देता। क्योंकि यह दलित समुदाय की वह पहली पीढ़ी थी जो उच्च्च शिक्षण संस्थानों में प्रवेश कर रही थी, इसलिए उसे घर, समाज और शिक्षण व्यवस्था – तीनों ही स्तरों पर गहन संघर्षों से जूझना पड़ा। "शरीर के लिए आराम भी जरूरी है लेकिन चंदन इस समय काम के आगे आराम को भूल जाना चाहता था। उसने हरिया को समझाया, 'आप ठीक कहते हो बाबा! लेकिन हमारा समाज सोया हुआ है।"6

विवेच्य अवधि में भारत सहित पूरे विश्व में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का दौर रहा। इस समयकाल में युवाओं का व्यक्तित्व लगातार संघर्षों और द्वंद्वों से गुजरता रहा। यह समय एक ओर पारंपरिक मूल्यों के साथ संघर्ष का था, तो दूसरी ओर आधुनिकता, वैश्वीकरण, पूँजीवाद और तकनीकी विकास के प्रभाव में बदलते सोच का। युवाओं का व्यक्तित्व इस संक्रमण काल में स्थिर नहीं रहा, बल्कि उनके विचार, जीवनशैली, आकांक्षाएँ और सामाजिक भूमिका निरंतर बदलती रही।

व्यक्तित्व संघर्ष के मूल्य और दृष्टिकोण का अंतर लोगों के बीच प्रायः मिल जाया करता है। जब दो व्यक्तियों के नैतिक मूल्य, सोच या जीवन के प्रति दृष्टिकोण अलग होते हैं, तो उनके बीच मतभेद और टकराव की संभावना बढ़ जाती है। ईगो का टकराव (अहंकार संघर्ष) उस समय होता है जब व्यक्ति अपने विचारों, पद या पहचान को श्रेष्ठ साबित करने की कोशिश करता है, तो यह टकराव का कारण बनता है। संवाद की कमी या गलतफहमियाँ आपसी समझ को बिगाड़ती हैं, जिससे विवाद और तनाव पैदा होते हैं। प्रतिस्पर्धा और ईर्ष्या से भी यह टकराव बढ़ता है। जब व्यक्ति दूसरों की सफलता से ईर्ष्या करने लगे या खुद को उनसे कमतर समझे, तो यह टकराव को जन्म देता है। असमान लक्ष्य से भी यह समस्या आती है। जब दो लोग अलग-अलग उद्देश्यों की ओर बढ़ रहे होते हैं, तो उनके बीच तालमेल की कमी होती है, जिससे संघर्ष उत्पन्न होता है।

रमणिका गुप्ता का उपन्यास 'सीता मौसी' आदिवासी समाज के यथार्थ, शोषण, संघर्ष और चेतना का सशक्त दस्तावेज है। यह उपन्यास वर्ग-संघर्ष और आदिवासी अस्मिता के प्रश्नों को गहराई से उठाता है। 'सीता मौसी' उपन्यास की नायिका सीता एक आदिवासी महिला है, जो समाज की उन हाशिए पर पड़ी आवाज़ों का प्रतिनिधित्व करती है जिन्हें सदियों से दबाया गया है। वह केवल एक महिला नहीं, बल्कि एक प्रतीक है – आदिवासी स्त्री चेतना, प्रतिरोध और नेतृत्व का, "त्याग और तपस्या की प्रतीक सीता जब रामायण के युग में से निकलकर आज के संघर्षों में भूख से जूझती हुई जवान होती है तो वह सर्वहारा वर्ग के लिए आधुनिक रावणों से लड़ती है। आज की सीता जूझी है हर रिश्ते से, उमर के हर मोड़ पर। उसने मौत से छीना है जिंदगी को। सीता अब अपने से बाहर ख़डी सीताओं के लिए लड़ने लगी है। सीता अब एक कतार है, एक शृंखला है, एक बात पाँत है। पाँत! जो चुप थी आज तक, अब बोलने लगी है। पाँत- जो जड़ थी सदियों से, अब पुकारने लगी है। आज की सीता अपने बदलाव की बाढ़ में गली-सड़ी मानसिकता को बहाए ले जा रही है, समुद्र के गर्त में दफनाने के लिए। वह इंतजार में है कि कल जो सूरज निकले, जो हवा बहे, वह उस जैसी सीताओं के हिस्से में भी आए जिससे हुए वंचित रही हैं, सभ्यता के आने के बाद से। सीता ऐसी लपट है जो मनुष्यता के लिए उजाले बाँटती है और दानवता को जलाकर राख करने में समर्थ है।"7

1990 के बाद का समय वंचित समुदायों के सामाजिक और राजनीतिक उभार का काल रहा। दलित, आदिवासी और पिछड़े वर्ग अब केवल उत्पीड़न के शिकार समूह नहीं रहे, बल्कि उन्होंने संगठित होकर अपने अधिकारों की लड़ाई को नया स्वरूप दिया। इन सबमें हर समुदाय के युवाओं की भूमिका अहम थी। शिक्षा, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति जैसे क्षेत्रों में उनकी भागीदारी तेजी से बढ़ी, जिससे भारतीय समाज में एक नए सामाजिक संतुलन की प्रक्रिया शुरू हुई।

व्यक्तित्व संघर्ष मानव जीवन का एक सामान्य हिस्सा है, लेकिन इसे समझदारी से संभालना अत्यंत आवश्यक है। जहाँ संवाद, सहनशीलता और परिपक्वता होती है, वहाँ संघर्ष की संभावना कम हो जाती है। समाज, कार्यस्थल और परिवार में सामंजस्य बनाए रखना चुनौतीपूर्ण है। भारतीय युवाओं के लिए सामाजिक चेतना, वैचारिक टकराव, आधुनिकता के आकर्षण और परंपराओं के बंधनों के बीच एक व्यक्तित्व संघर्ष का दौर था। यह संघर्ष केवल बाहरी परिस्थितियों से नहीं, बल्कि आत्ममंथन, पहचान की तलाश और मूल्यबोध के द्वंद्व से भी उपजा। इसी प्रक्रिया में युवा अधिक जागरूक, आत्मनिर्भर और उत्तरदायी बनते गए।

व्यक्तित्व का संघर्ष किसी भी युवा के लिए एक स्वाभाविक और आवश्यक प्रक्रिया है। यह संघर्ष यदि सकारात्मक दिशा में आगे बढ़े, तो व्यक्ति की चेतना को समृद्ध करता है और उसे आत्मबोध की ओर ले जाता है। हिंदी साहित्य ने इस संघर्ष को एक गहरी संवेदना के साथ चित्रित किया है, जिससे आज के पाठक स्वयं को जुड़ा हुआ महसूस करते हैं। यही साहित्य की सफलता भी है और उसका सामाजिक दायित्व भी।

व्यक्तित्व संघर्ष केवल एक नकारात्मक परिस्थिति नहीं है, बल्कि यह आत्मविकास, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जागरूकता और वैचारिक परिपक्वता का अवसर भी हो सकता है। भारतीय युवा वर्ग ने इस संघर्ष से होकर गुजरते हुए आत्मनिर्भरता, सामाजिक उत्तरदायित्व और सांस्कृतिक समझ विकसित किया है। जहाँ संवाद, सहनशीलता और परिपक्वता होती है, वहाँ संघर्ष से समाधान की ओर बढ़ा जा सकता है। संघर्ष की राह से होकर ही हम एक ऐसे सशक्त, जागरूक और संवेदनशील समाज तक पहुँचते हैं, जिसकी नींव की आधारशीला मजबूत और न्यायपरक होती है।

संदर्भ ग्रंथ –

1 - श्रीलाल शुक्ल, रागदरबारी, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 8 वां संस्करण, पृष्ठ- 63

2 - संपादक- भीष्म साहनी, रामजी मिश्र, भगवती प्रसाद निदारिया, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, चौथा संस्करण 2020, पृष्ठ- 109

3 - यशपाल, झूठा-सच 1960 भाग-2, लोकभारती प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1975 पुनर्मुद्रण, पृष्ठ- 210

4 - ममता कालिया, बेघर, राजकमल प्रकशन, पेपरबैक्स नयी दिल्ली, छठां संस्करण 2023, पृष्ठ- 117

5 - जय प्रकाश कर्दम, छप्पर (उपन्यास), राहुल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2013, पृष्ठ- 71

6 - वही, पृष्ठ- 77

7 - रमणिका गुप्ता, सीता मौसी (उपन्यास), ज्योतिलोक प्रकाशन दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2019, पृष्ठ- 05

मो. न.-9598026415

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 193-197
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Trickster Tales of the Zeme Naga of Assam

Mr. Ijegalakbe Jeme,
Assistant Professor,
Doomdooma College, Rupai Siding, Tinsukia, Assam

Abstract
Oral storytelling among the Zeme Naga, an indigenous community of Northeast India, represents a vibrant tradition that preserves cultural memory, social values, and communal wisdom through folktales, particularly those featuring the trickster figure. Deeply rooted in oral heritage, these narratives serve not only as entertainment but also as tools for moral education and social reflection, encapsulating the worldview and ethical framework of the Zeme people. The trickster, often characterized by cleverness, humour, and moral ambiguity, embodies the dualities of wisdom and folly, order and chaos, and functions as a mirror of human behaviour and social norms. Through wit and deception, trickster tales question authority, expose moral flaws, and impart ethical lessons, reinforcing community cohesion and shared values.
This study explores how narrative structure, symbolism, and performance techniques enrich the educational and philosophical dimensions of Zeme folktales. It also situates these narratives within broader Naga and Southeast Asian trickster traditions to highlight their cultural continuity and uniqueness. Ultimately, the research underscores the role of oral storytelling as a living repository of indigenous knowledge, cultural resilience, and moral education, affirming its significance in sustaining identity amidst modernization and cultural transformation.
Keywords: Oral storytelling, Zeme Naga, Trickster folktales, Moral education,.

Introduction

The Zeme Naga is one of the major Naga tribes of Northeast India, collectively known as the Zeliangrong, the kindred type of Zeme, Liangmei, Rongmei. They are scattered across the three State of Northeast India; Peren district in Nagaland, Tamenglong and Senapati district in Manipur and Dima Hasao in Assam, with a population of around 130,000. The Zeme are the second largest community in the Dima Hasao District. Their settlement across these regions reflect both historical migration pattern and the impact of modern political boundaries. The Zeme speak Zeme language, which belongs to one of the Kacha Nagas and exhibit slight dialectical differences depending on location. The Zeme Naga traditionally lived in remote hill village practicing jhum cultivation or slash and burn shifting agriculture. The Zeme have a vibrant indigenous culture, with festivals, songs, dances, and traditional attire forming an integral part of their identity. Oral tradition, folktales, and myths are passed down through generations.

This research is based primarily on *Zeme Herasam Sadiakbe Benai Napoine Leu (Zeme Folktales & Nursery Rhymes)*, compiled by Igianeing Daime and published in 2020 *(Daime, 2020)*. The book serves as an authentic record of Zeme oral narratives, preserving linguistic richness, traditional humour, and the unique storytelling rhythm of the community. From this collection, thirteen trickster folktales were examined in detail, and five selected stories were translated into English while retaining the indigenous tone, humour, and narrative flow of the originals.

By analysing and translating these tales, the study aims to highlight the narrative features of Zeme trickster stories, the roles played by the trickster figure, and the underlying lessons embedded within these oral narratives. The research also contributes to the wider documentation and interpretation of Zeme oral literature at a time when traditional knowledge systems face challenges from rapid social and cultural change *(Mishra & Newme, 2015; Douglas, 2016)*.

Ultimately, this study seeks to preserve, interpret, and contextualise Zeme trickster folktales as vital expressions of indigenous wisdom, creativity, and moral education. It underscores the importance of oral storytelling as a living tradition—one that continues to teach, inspire, and strengthen the identity of the Zeme Naga people in contemporary times *(Geerling, 2023; Samuel, 1997; Boro, 2018)*.

Objectives

To examine the cultural and moral values reflected in Zeme Naga trickster folktales

To analyse the role of the trickster as a symbol of wisdom, humour, and moral reflection

Research Methodology

The study uses basic method like reading Zeme Nagas Folktales. The primary source used is Zeme Herasam Sadiakbe Benai Napoine Leu (2020) a collection of folktales compiled by Igianeing Daime. And the study also uses written version of tales, and simple method to understand their meaning. Close reading of Zeme Nagas documented folktales, with attention given to their themes, humour, identification of character roles, moral teaching and symbolic symbolic structure, finding and understanding common ideas in the tales.

The study also included face-to-face conversations with Zeme community members to clarify cultural expressions, traditional terms, and the role of the trickster in their stories. These insights helped in understanding common themes such as cleverness, mischief, survival, social responsibility, and the human–nature relationship. By connecting these themes to Zeme beliefs, ecological surroundings, rituals, and social structures, the research highlights how the folktales reflect Zeme identity and preserve indigenous cultural wisdom.

Oral Tradition in Zeme Folktale of Assam

When we talk about the idea of oral tradition in Zeme Folklore, we are talking about the way the Zeme people keep their culture alive through the spoken word. Unlike modern societies where most knowledge is written down in books, records, or in the internet, the Zeme community has traditionally depended on speech as our main way of passing on wisdom, history, and traditions. Folktales are not just stories for fun, but they are living carriers of the community's values and beliefs. Since writing was not a traditional practice in the past, orality became the main way of ensuring that knowledge flowed from one generation to the next.

In Zeme society, storytelling usually happens in communal setting such as festivals, village gatherings, or even around the fireplace at home. Elder are often the storytellers, and they play an important role as keepers of knowledge. When they share stories with children and younger listeners, they are not only entertaining them but also teaching lessons about right and wrong, explaining the mysteries of nature, and reminding everyone about their ancestor and origins. These oral traditions act like a bridge between the past and the present. So, the concept of orality in Zeme folklore is much more than just "telling stories". It is a way of preserving

culture, strengthening community bonds, teaching values, and ensuring that the wisdom of the ancestors continue to live in generation.

Trickster in Zeme Naga folktales

In Zeme Naga Folktales, the trickster is a central and complex figure who embodies both cleverness and mischief. It is mostly depicted as an animal such as monkey, tortoise, tiger, crocodile, birds and occasionally a human figure. The trickster rather than relying upon wit, guile, and deception to outwit more powerful or greater creatures. Unlike using physical power, the trickster endures and prospers by intelligent, resourceful and adaptability. The trickster's action are not always nobles at times, sometime they uncover greed, foolishness, or among others, while in some stories, the trickster's plot haves the opposite effect, resulting in bringing trouble upon themselves. Through them Zeme Naga folktales impart lesson in humility, ingenuity, and the punishment of lies, as well as the promotion of creativity and resilience as essential survival skills in a complicated world.

Trickster Tales in Zeme Oral Tradition

Within Zeme storytelling, trickster tales hold a distinctive and enduring place. The trickster figure—characterised by wit, humour, and cunning—navigates situations that expose human weaknesses, moral dilemmas, and social tensions. Though playful in tone, these stories carry deeper meanings, illustrating the interplay between cleverness and carelessness, honesty and deceit, strength and vulnerability. Scholars of folklore have noted that trickster figures across cultures serve dual roles: they entertain while simultaneously offering moral and social insights *(Athope, 2021; McKenzie, 2014; Qualls, 2008)*.

In the Zeme context, the trickster embodies creativity, adaptability, and resilience—qualities valued within a community that relies on cooperation, survival skills, and social harmony *(Mishra & Newme, 2015)*. Through humour and mischief, these tales encourage critical thought about choices and consequences, ensuring that moral reflection is conveyed in engaging ways *(Moore, 2013; McKenzie, 2014)*.

Types and Characteristic of Trickster in Zeme Naga folktales

The trickster in Zeme Naga folktales is one of the most fascinating and meaning characters in our folktales. This figure appears in many forms- sometimes as an animal, sometimes as a human, and sometimes as a magical or spiritual being. What makes the trickster special is not strength or power but cleverness, humor, and the ability to survive through intelligence and creativity. The trickster breaks rules, plays tricks, and often acts in surprising or funny ways, but behind these actions lies a deeper message about our life, wisdom, and morality. Through the trickster, the Zeme people express important cultural values such as the power of knowledge, the need for balance between humans and nature, and the importance of humility and respect.

In folktales such as Hecha Nau Teube Rasam, Henampui Nai Hekuaipui Rasam, the trickster often takes the form of a clever animal. These animals may be small or weak, but they use their intelligence to outsmart larger or strong creatures. These types of stories teaches that being smart and quick -witted is more valuable harmony with nature and learning from it. The animal trickster, through its playful tricks and smart actions, becomes a symbol of adaptability, survival, and intelligence.

Another important version of the trickster in Zeme Naga tales is human trickster. This character is usually in the human trickster. This character is usually an ordinary person such as the villager, hunter, or traveller who faces challenges from spirit, greedy people or the natural world. Instead of using violence, the human trickster depends on clever thinking, humour, and bravery to solve the problems. This shows that even ordinary individuals can use intelligence and wit to overcome difficulties. The human trickster represents the clever and practical side of the Zeme people, who have always valued mental strength, clever speech, and smart problem

solving an importance quality in life. The trickster teaches that those who think carefully and act wisely can overcome stronger forces without resorting to conflict.

The fool or joker trickster is another unique form found in storytelling. This character seems foolish or funny on the outside but is actually full of hidden wisdom. The fool uses humour, jokes and strange behaviour to make others realize their mistakes, pride, or greed. In Zeme storytelling such characters are often used during social gatherings or festivals to make people laugh while also teaching moral lessons. The joker trickster reminds the audience that laughter can reveal truth and that wisdom can sometimes be found in unexpected places. Even a fool can be wise, and humour can be a gentle way of teaching lessons about life and behaviour.

The witch trickster brings a supernatural and mysterious side to Zeme folktales. This character, often shown as a magical woman & man or forest spirit, uses spells, transformations, or magical powers to test humans. They punished those who are proud, greedy, or disrespectful, teaching the importance of humility and reverence toward nature and the spirit world. The witch trickster symbolizes the spiritual balance between good and evil and reminds people that their actions have consequences.

The trickster in Zeme Naga folktales is a complex and multi-dimensional character. Whether appearing as a clever animal, a witty human, a funny fool, or a magical witch, the trickster always brings valuable lessons through humour, intelligence, and surprise. The trickster entertains listeners but also serves as a teacher, reminding people that life requires both clever thinking and moral understanding. Through these tales, the Zeme Nagas pass or their wisdom, values, and cultural identity, showing that true strength lies not in power, but in intelligence, respect, and the ability to learn from every situation.

A deeper and equally important theme is the connection between humans, nature, and the spirit world. Many Zeme tales show that all living beings – humans, animals, and spirits share a close relationship. The trickster often moves between these worlds, showing that actions in one world can affect the other. This theme reflects the Zeme people's deep belief in harmony, balance, and respect for the natural and spiritual world.

Another important concern in these stories is the use of humour and storytelling as a way of teaching wisdom. The trickster's jokes, funny actions, and unexpected behaviour make people laugh, but they also make people think. Through laughter, listeners learn important truths about life, relationships, and behaviour. Humour is used as a gentle and friendly way to teach lessons without scolding or punishment.

Conclusion

In conclusion, the major themes and concerns of Zeme Naga trickster tales include intelligence over strength, survival through cleverness, moral education, respect for nature and spirituality, and the use of humour as a way to teach wisdom. These stories show the Zeme people's deep understanding of human nature and the world around them. The trickster, whether animal or human, becomes a voice of truth, reminding people that cleverness, kindness, and balance are the key to living a wise and happy life.

References

- **Athope, E.** *Myths and Folklore: Trickster Gods and Goddesses.* Academia.edu, 2021.
- **Bhushan, R.** "Integration of Technology in Culture: Digital Adaptation of Folktales." *Futuristic Trends in Social Sciences*, vol. 3, book 21, part 1, 2025, pp. 1–8.
- **Boro, Anil Kumar.** "Folklore in the Multilingual Perspective." *Prajña*, vol. 28, 2018, pp. 31–98.
- **Devi, L. R. K.** "Women in Northeast Indian Folklore: Voices and Silences." *Studies in Humanities and Social Sciences*, vol. 22, no. 1, 2018, pp. 90–102.

- **Douglas, C.** *Tales of the Tribes: Animation as a Tool for Indigenous Representation.* Bournemouth University, 2016.
- **Geerling, H.** "Biocultural Storytelling Pedagogy in Indigenous Nagaland: The Relational Worlds of Easterine." *UIT Munin Open Research Archive*, 2023.
- **Mishra, Raghavendra, and K. Newme.** "Social Communication and Traditional Folk Media of the Zeme Naga Society." *SSRN Electronic Journal*, vol. 6, no. 2, 2015, pp. 1–15.

Email Id: zephdaime@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 198-206
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

“संत नामदेव का जीवन, भक्ति-दर्शन, संत-मंडली एवं शिष्य-परंपरा : सामाजिक समरसता के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन”

अशोक कुमार
सह आचार्य,
हिंदी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश धर्मशाला
गौरव सेठी
हिंदी शिक्षक,
स्कॉलर्स स्टेयर्स हाई स्कूल चलेट जिला ऊना

शोध-सार :
यह अध्ययन संत नामदेव के जन्म, प्रारंभिक जीवन तथा उनके आध्यात्मिक विकास की पृष्ठभूमि का विवेचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें उनके जीवन से संबंधित विविध ऐतिहासिक, लोकपरंपरागत एवं साहित्यिक स्रोतों विशेषतः अभंग साहित्य का समन्वित अध्ययन किया गया है। संत नामदेव का जन्म एक ऐसे धार्मिक-सांस्कृतिक वातावरण में हुआ, जहाँ विठ्ठल-भक्ति का व्यापक प्रभाव था। उनके माता-पिता की गहन आस्था तथा आध्यात्मिक प्रवृत्तियों ने उनके व्यक्तित्व-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि नामदेव के जन्म से संबंधित विभिन्न मतों में जनाबाई के अभंगों को अपेक्षाकृत अधिक प्रामाणिक माना जा सकता है, क्योंकि वे प्रत्यक्ष अनुभव पर आधारित हैं। इसके अतिरिक्त, संत परंपरा में प्रचलित कथाएँ उनके जीवन के आध्यात्मिक महत्त्व को रेखांकित करती हैं, यद्यपि उनमें चमत्कारिक तत्व भी विद्यमान हैं। यह शोध नामदेव के आध्यात्मिक विकास में संत-संगति की भूमिका को भी रेखांकित करता है। विशेष रूप से ज्ञानेश्वर एवं समकालीन संतों के साथ उनके संबंधों ने उनके भक्ति-दर्शन को परिपक्वता प्रदान की। उनके विचारों में भक्ति का स्वरूप अत्यंत सरल, सर्वसमावेशी एवं सामाजिक समरसता पर आधारित दिखाई देता है, जो जाति-भेद एवं रूढ़ियों के विरुद्ध एक सशक्त आध्यात्मिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि संत नामदेव की भक्ति केवल व्यक्तिगत साधना तक सीमित नहीं रही, बल्कि वह एक व्यापक सामाजिक-आध्यात्मिक आंदोलन का रूप धारण कर गई। उनके अभंगों के माध्यम से भक्ति को जनसामान्य तक पहुँचाने का कार्य हुआ, जिससे भक्ति परंपरा में लोकचेतना का सशक्त

विकास हुआ। इस प्रकार, संत नामदेव का जीवन और कृतित्व भारतीय भक्ति आंदोलन के इतिहास में एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में स्थापित होता है, जिसने आध्यात्मिकता, समानता और सांस्कृतिक एकता को नई दिशा प्रदान की।

मुख्य शब्द : भक्ति , आध्यात्मिक, आध्यात्मिक, जनसामान्य, सामाजिक, सदाचार, विठ्ठल

नामदेव भक्ति यात्रा :

यह अभिव्यक्ति उस आध्यात्मिक सत्य को उद्घाटित करती है कि किसी भूमि, समाज अथवा कुल की वास्तविक महत्ता वहाँ जन्म लेने वाले संतों और भक्तों से निर्धारित होती है। इसी संदर्भ में संत नामदेव का जन्म भारतीय भक्ति परंपरा के इतिहास में एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना के रूप में प्रतिपादित किया जाता है। संत नामदेव के पिता दामासेठ, जो मूलतः एक व्यापारी थे, जो आगे चलकर पंढरपुर में स्थायी रूप से निवास करने लगे। पंढरपुर उस काल में भगवान विठ्ठल की उपासना का प्रमुख केंद्र था और समूचे महाराष्ट्र में इसकी गहन धार्मिक प्रतिष्ठा थी। दामासेठ का व्यक्तित्व सात्त्विकता, सत्यनिष्ठा तथा सदाचार का प्रतीक था। वे विठ्ठल के अनन्य उपासक थे और उनका जीवन पूर्णतः भक्ति तथा धार्मिक साधना के लिए समर्पित था। गोणाबाई, जो उनकी धर्मपत्नी थीं, भगवान की कृपा से जब वह पुनः गर्भवती हुईं। इस अवधि में उनके व्यवहार और मानसिक प्रवृत्तियों में उल्लेखनीय परिवर्तन दृष्टिगत हुआ। उनका मन सांसारिक क्रियाकलापों से विरक्त होकर एकांत साधना एवं हरिभजन की ओर उन्मुख हो गया। वे न केवल स्वयं भक्ति में लीन रहती थीं, बल्कि अन्य लोगों को भी ईश्वर-स्मरण के लिए प्रेरित करती थीं। इस प्रकार के आध्यात्मिक लक्षणों को परंपरागत दृष्टि से एक महान आत्मा के आगमन का संकेत माना गया है। ऐतिहासिक विवरणों के अनुसार, शालिवाहन शक संवत् 1192, कार्तिक शुक्ल एकादशी (रविवार, 26 अक्टूबर 1270 ईस्वी) के दिन प्रातःकाल गोणाबाई ने एक पुत्र को जन्म दिया। यह तिथि विशेष धार्मिक महत्त्व रखती है, क्योंकि कार्तिक शुक्ल एकादशी को पंढरपुर में विशाल धार्मिक उत्सव एवं मेला आयोजित होता है, जिसमें हजारों श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं। अतः संत नामदेव का जन्म न केवल एक पारिवारिक घटना थी, बल्कि एक व्यापक सांस्कृतिक और धार्मिक संदर्भ से भी जुड़ा हुआ था। जन्म के उपरांत ग्यारहवें दिन नामकरण संस्कार संपन्न किया गया। एक विद्वान ब्राह्मण के परामर्शानुसार बालक का नाम "नामदेव" रखा गया, जबकि पारिवारिक स्तर पर उसे "नामा" के रूप में संबोधित किया जाने लगा। जन्मकुंडली के आधार पर ब्राह्मण ने यह भविष्यवाणी की कि यह बालक भविष्य में भगवान विठ्ठल का महान उपासक बनेगा तथा अपने आध्यात्मिक योगदान के कारण समस्त भारतवर्ष में विख्यात होगा। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संत नामदेव का जन्म केवल एक ऐतिहासिक घटना नहीं था, बल्कि वह एक व्यापक धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रिया का अंग था, जिसमें भक्ति, आस्था और सामाजिक चेतना का अद्भुत समन्वय परिलक्षित होता है। उनके जन्म से संबंधित घटनाएँ यह संकेत देती हैं कि उनका जीवन प्रारंभ से ही एक विशिष्ट आध्यात्मिक उद्देश्य के लिए नियोजित था, जिसने आगे चलकर भक्ति आंदोलन को सशक्त दिशा प्रदान की।

संत नामदेव के जन्म संबंधी समकालीन साक्ष्य : जनाबाई और अभंग साहित्य के आलोक में संत परंपरा में किसी महापुरुष के जीवनवृत्त को समझने के लिए लोक-स्मृतियों, भक्त-साहित्य तथा समकालीन संतों के कथनों का विशेष महत्त्व होता है। संत नामदेव के जन्म के संदर्भ में भी ऐसे प्रमाण विशेष रूप से उपलब्ध होते हैं, जिनमें संत जनाबाई द्वारा रचित अभंगों का उल्लेख अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। जनाबाई, जो नामदेवजी के घर में दासी के रूप में कार्य करती थीं और आगे चलकर स्वयं एक विख्यात संत-कवयित्री बनीं, ने अपने अभंगों में नामदेवजी के जन्म की घटनाओं का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। उनके अभंगों के अनुसार, माता गोणाबाई पंढरपुर निवासी भगवान विठ्ठल की परम भक्त थीं। पंढरपुर को विठ्ठल का अधिष्ठान माना जाता है, जहाँ भक्तों की आस्था और श्रद्धा निरंतर प्रवाहित होती रहती है।

जनाबाई के वर्णन के अनुसार, गोणाबाई ने अत्यंत शुद्ध भाव से भगवान विठ्ठल से पुत्र-प्राप्ति की प्रार्थना की। उनकी निष्कपट भक्ति और समर्पण से प्रसन्न होकर भगवान ने उनकी मनोकामना पूर्ण की। इस प्रकार, दिव्य अनुग्रह के परिणामस्वरूप नामदेवजी का जन्म हुआ। उनके जन्म से न केवल पिता दामासेठ को अपार हर्ष प्राप्त हुआ, बल्कि जनाबाई स्वयं भी अत्यंत आनंदित हुईं। यह प्रसंग इस तथ्य को रेखांकित करता है कि नामदेवजी का जन्म केवल पारिवारिक सुख का विषय नहीं था, बल्कि वह एक आध्यात्मिक घटना के रूप में भी अनुभव किया गया। विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जनाबाई नामदेवजी के जन्म से पूर्व ही उनके घर में निवास कर रही थीं। इस कारण उन्होंने जन्म की घटना को प्रत्यक्ष रूप से देखा तथा बालक नामदेव के लालन-पालन में भी सहभागिता निभाई। जनाबाई की गोद में नामदेवजी का खेलना इस संबंध की आत्मीयता और निकटता को दर्शाता है, जो आगे चलकर भक्ति-साहित्य में भी परिलक्षित होती है। इसके अतिरिक्त, स्वयं नामदेवजी ने भी अपने जन्म के विषय में अपने ज्येष्ठ पुत्र नारायण को एक अभंग के माध्यम से जानकारी दी है। इस अभंग में उन्होंने अपनी जन्मतिथि, समय तथा ज्योतिषीय विवरणों का उल्लेख किया है। अभंग के अनुसार, शालिवाहन शक संवत् 1192, कार्तिक शुक्ल एकादशी, रविवार, सूर्योदय के समय उनका जन्म हुआ। यह विवरण पारंपरिक मान्यताओं तथा ऐतिहासिक साक्ष्यों के साथ सामंजस्य स्थापित करता है। नामदेवजी के इस अभंग में यह भी संकेत मिलता है कि उनकी जन्मपत्रिका एक ब्राह्मण द्वारा तैयार की गई थी, जिसमें उनके जीवन के आध्यात्मिक स्वरूप और भविष्य की महत्ता का पूर्वानुमान व्यक्त किया गया था। "शतकोटी अभंग करील प्रतिज्ञा" जैसे कथन उनके जीवन में भक्ति-साहित्य की केंद्रीय भूमिका को इंगित करते हैं। साथ ही "नामसंकीर्तन" के माध्यम से आध्यात्मिक उन्नति का जो मार्ग उन्होंने अपनाया, वह उनके संपूर्ण जीवन-दर्शन का आधार बन गया। जनाबाई के अभंगों तथा स्वयं नामदेवजी के आत्मकथात्मक उल्लेखों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि संत नामदेव का जन्म एक सामान्य घटना न होकर एक दिव्य और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण प्रसंग था। इन स्रोतों के माध्यम से न केवल उनके जन्म का विवरण प्राप्त होता है, बल्कि उस समय की भक्ति-परंपरा, लोकविश्वास और आध्यात्मिक चेतना का भी गहन परिचय मिलता है। मराठी संत-चरित्रकार महिपति के अनुसार, नामदेव के माता-पिता दामासेठ और गोणाबाई ने पुत्र-प्राप्ति के लिए भगवान विठ्ठल से अत्यंत श्रद्धा के साथ प्रार्थना की थी। कहा जाता है कि दामसेठ को स्वप्न में यह संकेत मिला कि उन्हें पुत्र-रत्न की प्राप्ति होगी। अगले दिन प्रातःकाल जब वे चंद्रभागा नदी से स्नान कर लौट रहे थे, तब उन्हें जल में एक सीप तैरती हुई दिखाई दी, और उसी के माध्यम से नामदेव की प्राप्ति होने की कथा कही जाती है। यह विवरण प्रतीकात्मक और चमत्कारिक तत्वों से युक्त है, जो संत-जीवन के महिमामंडन की परंपरा को दर्शाता है। इसके विपरीत, प्रियदास ने यह मत व्यक्त किया है कि नामदेव का जन्म एक विधवा के गर्भ से हुआ था। उनके अनुसार, वामदेव नामक एक भक्त की विधवा पुत्री की इच्छा के परिणामस्वरूप स्वयं भगवान हरि ने उसके गर्भ में प्रवेश कर जन्म लिया। इस मत का समर्थन पंजाबी परंपरा के लेखक बाबा पूरणदास द्वारा भी किया गया है, किंतु इसके समर्थन में प्रामाणिक ऐतिहासिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं। इसी प्रकार, पाश्चात्य विद्वान गार्सा द तासी ने यह मत प्रस्तुत किया है कि नामदेव ग्वालियर में पाए गए थे और एक दर्जी द्वारा उनका पालन-पोषण किया गया। यह मत भी अनुमानात्मक प्रतीत होता है और व्यापक रूप से स्वीकार्य नहीं है। इन विविध मतों के विपरीत, संत जनाबाई के अभंगों में जो विवरण प्राप्त होता है, वह अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय माना जाता है। जनाबाई के अनुसार, गोणाबाई ने व्रत और भक्ति के माध्यम से भगवान से पुत्र की कामना की और उसी के फलस्वरूप नामदेव का जन्म उनके गर्भ से हुआ। इस अवसर पर दामासेठ को अत्यंत आनंद की अनुभूति हुई। इसी आधार पर

हिंदी, मराठी तथा अंग्रेजी के अधिकांश विद्वान गोणाबाई को नामदेव की माता तथा दामसेठ को उनके पिता के रूप में स्वीकार करते हैं। कहीं-कहीं लिप्यंतरण की त्रुटियों के कारण "दमशेती" जैसे रूप मिलते हैं, जो मूलतः "दामासेठ" का ही विकृत रूप हैं। संत परंपरा में नामदेव का स्थान अन्य संतों के साथ उनके आध्यात्मिक संबंधों के कारण भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। संत ज्ञानेश्वर से संबंधित एक प्रसिद्ध कथा इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। कहा जाता है कि ज्ञानेश्वरजी को एक रात्रि स्वप्न में गंगा, यमुना, सरस्वती आदि पवित्र नदियाँ स्त्रीरूप में दिखाई दीं। उन्होंने बताया कि तीर्थों में स्नान करने वाले लोगों के पापों का भार उन पर संचित हो गया है, जिससे वे अत्यंत व्यथित हैं। अतः उन्होंने ज्ञानेश्वरजी से प्रार्थना की कि वे उनके जल में स्नान करके उन्हें इस पाप-भार से मुक्त करें। यह कथा संतों की आध्यात्मिक महत्ता और उनके प्रति लोक-आस्था का प्रतीक है। इसके पश्चात् ज्ञानेश्वरजी के मन में तीर्थयात्रा का विचार उत्पन्न हुआ। उन्होंने इस विषय में अपने भाई-बहनों निवृत्तिनाथ, सोपानदेव और मुक्ताबाई से विचार-विमर्श किया। यात्रा का निश्चय होने पर उन्होंने यह भी अनुभव किया कि किसी महान भक्त का साथ इस यात्रा को और अधिक सार्थक बना सकता है। इस विचार से उन्होंने नामदेव को स्मरण किया और अंततः सभी संत पंढरपुर में एकत्रित हुए। इस पावन मिलन का उल्लेख स्वयं नामदेव ने अपने अभंग में किया है। वे बताते हैं कि उन्होंने ज्ञानेश्वर के दर्शन करते ही दंडवत प्रणाम किया और अत्यंत प्रेमपूर्वक उनका स्वागत किया। इस संत-समागम को वे अपने जीवन की महान उपलब्धि मानते हैं। उनके अनुसार, यह मिलन उनके पूर्वजन्म के पुण्यों का फल था और इसके माध्यम से उन्हें भगवान पांडुरंग के साक्षात् दर्शन का अनुभव हुआ। इस प्रकार, संत नामदेव के जन्म संबंधी विविध मतों के साथ-साथ संत ज्ञानेश्वर के साथ उनका आध्यात्मिक संबंध भक्ति आंदोलन की उस परंपरा को स्पष्ट करता है, जिसमें संतों का परस्पर मिलन, संवाद और संगति आध्यात्मिक उन्नति का प्रमुख साधन माना गया है।

संत नामदेव की भक्ति-परंपरा से संबंधित अनेक कथाएँ लोकजीवन में प्रचलित हैं, जो उनकी आध्यात्मिक प्रतिष्ठा और सामाजिक प्रभाव को व्यक्त करती हैं। एक प्रसिद्ध कथा के अनुसार, नामदेवजी के कीर्तन में स्वयं भगवान पंढ विठ्ठल उपस्थित हुए। उस समय मंदिर में पुजारी नागनाथ की मूर्ति का अभिषेक कर रहे थे और स्तोत्र-पाठ चल रहा था। कहा जाता है कि उसी क्षण भगवान ने पुजारियों की ओर पीठ कर ली और अपना मुख नामदेव की ओर कर लिया। इस घटना ने उपस्थित लोगों को अत्यंत आश्चर्यचकित कर दिया। इस प्रसंग को लोक में इस प्रकार व्यक्त किया जाता है

"दास नामदेव को भयो द्वारो, पंडित को पिछवाड़ा हो।"

पुजारी इस घटना से चकित रह गए और उन्होंने नामदेव की भक्ति की महिमा को स्वीकार करते हुए उनके चरणों में गिरकर क्षमा माँगी। इस घटना के पश्चात् नामदेव की ख्याति दूर-दूर तक फैल गई। लोकमान्यता है कि मंदिर का मुख पश्चिम की ओर होना इसी घटना से संबंधित माना जाता है। इसके उपरांत संत-मंडली महाराष्ट्र की 'काशी' कही जाने वाली पैठन (प्राचीन प्रतिष्ठान) पहुँची, जो गोदावरी नदी के तट पर स्थित है। वहाँ संतों ने विश्राम किया और नित्यकर्म के पश्चात् नामदेवजी कीर्तन करने लगे। उसी समय कुछ वर्णाभिमानी लोगों ने संतों की निंदा करनी आरंभ कर दी। वे कहने लगे कि ये लोग कोई कार्य नहीं करते, केवल गले में तुलसीमाला पहनकर और हाथ में करताल लेकर ऊँचे स्वर में विठ्ठल का नाम जपते रहते हैं। उन्होंने यह भी आपत्ति जताई कि उच्च वर्ण के ब्राह्मण भी इनके चरण स्पर्श करते हैं, जो उनके अनुसार वर्णाश्रम धर्म के विरुद्ध है। कुछ लोगों ने इन्हें अपमानित करके वहाँ से हटाने का विचार किया। इसी उद्देश्य से वे कीर्तन में पहुँचे और नामदेव से प्रश्न किया "आप कौन हैं और आपकी जाति क्या है?" नामदेवजी ने विनम्रता से उत्तर दिया कि इस शरीर का नाम 'नामदेव' है और जाति 'शिंपी' (दर्जी) है। यह सुनकर कुछ ब्राह्मण

क्रोधित हो गए और उन्होंने पूछा कि उनका इष्टदेव कौन है। नामदेवजी ने उत्तर दिया "मेरा विठ्ठल सर्वत्र व्याप्त है, कोई भी स्थान उससे रिक्त नहीं है।" उन लोगों ने चुनौती दी कि यदि उनका विठ्ठल यहाँ उपस्थित नहीं हुआ, तो उन्हें वहाँ रहने नहीं दिया जाएगा। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि निम्न जातियों के लोग भक्ति का ढोंग कर रहे हैं। यह सुनकर नामदेवजी अत्यंत दुखी हुए और उन्होंने भगवान पांडुरंग से प्रार्थना की कि वे प्रकट होकर इन लोगों के अहंकार का निवारण करें। लोककथा के अनुसार, उसी समय भगवान ने देवताओं सहित वहाँ प्रकट होकर नामदेव की भक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण दिया। यह देखकर विरोध करने वाले लोग लज्जित हो गए और उन्होंने नामदेव से क्षमा माँगी। नामदेवजी ने उन्हें क्षमा प्रदान की और कीर्तन समाप्त हुआ। इसके पश्चात् संत-मंडली ने विभिन्न तीर्थों की यात्रा की। वे देवगिरि, वेरुल, घृष्णेश्वर, पंचवटी, त्र्यंबकेश्वर, द्वारका आदि स्थानों से होते हुए आगे बढ़े और अंततः जूनागढ़ पहुँचे। एक अवसर पर संत ज्ञानेश्वर ने नामदेवजी से भक्ति और साधना के स्वरूप के विषय में प्रश्न किया भजन किस प्रकार करना चाहिए, मन और बुद्धि को सात्त्विक कैसे बनाया जाए, तथा भक्ति और ध्यान का वास्तविक स्वरूप क्या है। यह सुनकर नामदेवजी अत्यंत विनम्र हो गए और उन्होंने ज्ञानेश्वर के चरणों में प्रणाम करते हुए कहा कि उन्हें केवल भगवान विठ्ठल का ही आश्रय है; वे न तो विद्वान हैं और न ही अधिक ज्ञान रखते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि उनका यह प्रश्न करना ऐसा प्रतीत होता है मानो कल्पवृक्ष किसी साधारण व्यक्ति से याचना कर रहा हो। ज्ञानेश्वरजी ने उत्तर दिया कि वे नामदेव के अनुभवजन्य विचार सुनना चाहते हैं, क्योंकि वे भगवान के प्रेम के भंडार हैं। तब नामदेवजी ने अपने भक्ति-दर्शन को व्यक्त करते हुए कहा मुझे तो भगवान विठ्ठल का नाम-संकीर्तन ही सबसे प्रिय है। अन्य सभी साधन उसके सामने तुच्छ और कष्टप्रद प्रतीत होते हैं। सच्चा भजन वही है, जिसमें मनुष्य दूसरों के गुण-दोषों की चिंता किए बिना विनम्रता और प्रेम का व्यवहार करे। इससे अंतःकरण में आनंद और सात्त्विकता का विकास होता है। सभी प्राणियों में एक ही परमात्मा के स्वरूप का दर्शन करना और रज-तम से रहित होकर केवल प्रेम में स्थित रहना ही सच्ची भक्ति है।" नामदेवजी के इन विचारों को सुनकर ज्ञानेश्वर अत्यंत प्रसन्न हुए। इसके पश्चात् संत-मंडली प्रयाग, भारद्वाज आश्रम, अयोध्या आदि तीर्थों की यात्रा करती हुई काशी पहुँची। उस समय वहाँ एक महान यज्ञ का आयोजन चल रहा था, जिसमें दूर-दूर से विद्वान ब्राह्मण एकत्रित हुए थे। यज्ञ के अंत में 'अग्रपूजा' किसे दी जाए, इस विषय में विवाद उत्पन्न हो गया। यह निर्णय लिया गया कि एक हाथिनी के सूंड में पुष्पमाला देकर उसे छोड़ दिया जाए; वह जिस व्यक्ति के गले में माला डालेगी, वही अग्रपूजा का अधिकारी होगा। अगले दिन हाथिनी को माला देकर छोड़ा गया। अनेक लोग उसके सामने आने का प्रयास करते रहे, किंतु वह किसी के पास नहीं रुकी और अंततः गाँव के बाहर जाकर उसने निवृत्तिनाथ के गले में माला डाल दी। इस पर कुछ ब्राह्मणों ने आपत्ति व्यक्त की और कहा कि एक पशु के निर्णय को कैसे स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रसंग में भी संतों की महत्ता और समाज की संकीर्ण मानसिकता के बीच का द्वंद्व स्पष्ट रूप से सामने आता है। इस प्रकार, इन घटनाओं से यह स्पष्ट होता है कि संत नामदेव की भक्ति केवल व्यक्तिगत साधना तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह सामाजिक रूढ़ियों और वर्ण-आधारित अहंकार के विरुद्ध एक सशक्त आध्यात्मिक प्रतिरोध भी थी । संत नामदेव के जीवन से संबंधित अनेक प्रसंग उनके आध्यात्मिक प्रभाव, लोकविश्वास तथा संत-परंपरा में उनके स्थान को स्पष्ट करते हैं। लोककथा के अनुसार, उनकी प्रार्थना से प्रसन्न होकर भगवान ने स्वयं प्रकट होकर उस प्रसाद को स्वीकार किया, जिससे संतों की महत्ता प्रमाणित हुई । काशी में स्वामी रामानंद ने भी इन संतों का सम्मान किया। इसके बाद संत-मंडली पश्चिम की ओर बढ़ते हुए मारवाड़ (वर्तमान राजस्थान) क्षेत्र में पहुँची। इस क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों विशेषतः जलाभाव का वर्णन संत-परंपरा में मिलता है। यात्रा के दौरान एक प्रसंग में संतों को अत्यधिक प्यास लगी। वे चलते-चलते एक स्थान पर पहुँचे, जिसे परंपरा में कोलायत के रूप में

पहचाना जाता है। वहाँ एक गहरा कुआँ था, जिसमें से जल निकालना अत्यंत कठिन था। इस परिस्थिति में नामदेवजी ने भगवान विठ्ठल का स्मरण किया और प्रार्थना की। कथा के अनुसार, उसी समय तेज ध्वनि के साथ कुएँ का जल ऊपर उठ आया। उस समय नामदेव ध्यानावस्था में थे और संत ज्ञानेश्वर ने उन्हें सचेत किया। तत्पश्चात् सभी संतों ने प्रसन्नता के साथ जल ग्रहण किया। लोकविश्वास है कि वह कुआँ आज भी विद्यमान है और अन्य कुओं के सूख जाने पर भी उसमें वर्षभर जल बना रहता है। आगे की यात्रा में संत-मंडली ने विभिन्न तीर्थस्थलों का भ्रमण किया। वे देवगिरी, वेरुल, घृष्णेश्वर, पंचवटी, त्र्यंबकेश्वर, द्वारका, जूनागढ़ आदि स्थानों से होते हुए दक्षिण भारत के अनेक प्रमुख तीर्थों तक पहुँची। इस क्रम में उन्होंने तिरुपति (व्यंकटेश), मल्लिकार्जुन तथा रामेश्वरम जैसे पवित्र स्थलों के दर्शन किए। रामेश्वरम में भागीरथी जल अर्पित कर तीन दिन तक निवास करने के पश्चात् वे आगे बढ़े। इसके बाद वे ताम्रपर्णी, करवीर (कोल्हापुर), वाई तथा अंततः आलंदी पहुँचे, जहाँ उन्होंने सिद्धेश्वर के दर्शन किए। आगे चलकर संत-मंडली ने भीमाशंकर आदि स्थानों का भी भ्रमण किया। संत नामदेव के गुरु के संबंध में भी विद्वानों के बीच मतभेद पाया जाता है। विभिन्न विद्वानों ने उनके गुरु के रूप में संत ज्ञानेश्वर, सोपानदेव, विसोबा खेचर तथा स्वामी रामानंद के नामों का उल्लेख किया है। कुछ विद्वानों, जैसे क्षितिमोहन सेन, ने यह मत प्रस्तुत किया है कि नामदेव ज्ञानेश्वर के शिष्य थे। यह तथ्य अवश्य है कि नामदेव ने अपने अभंगों में ज्ञानेश्वर के प्रति अत्यंत श्रद्धा व्यक्त की है। तथापि, प्रत्यक्ष गुरु-दीक्षा का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है। स्वयं नामदेव ने यह स्वीकार किया है कि संत-संगति से उनके जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया "संतसंग से मेरे जीवन में मूलभूत परिवर्तन हुआ।" अतः ज्ञानेश्वर को उनके प्रेरणास्रोत के रूप में देखा जा सकता है, न कि दीक्षा-गुरु के रूप में। इसी प्रकार, संत जनाबाई ने कहीं-कहीं सोपानदेव को नामदेव का गुरु कहा है, किंतु यह अधिकतर श्रद्धा-प्रदर्शन का संकेत प्रतीत होता है। नामदेव स्वयं ज्ञानेश्वर, निवृत्तिनाथ और सोपानदेव को अत्यंत सम्मान देते थे। मोहन सिंह दिवाना ने अपनी कृति में स्वामी रामानंद को नामदेव का गुरु माना है, किंतु इसके समर्थन में पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत नहीं किए गए हैं। जिस हस्तलिखित पोथी का वे उल्लेख करते हैं, उसकी प्रामाणिकता भी संदिग्ध मानी जाती है। इसके अतिरिक्त, नामदेव की स्वयं की रचनाओं चाहे वे मराठी हों या हिंदी में रामानंद से दीक्षा ग्रहण करने का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। इसके विपरीत, स्वयं नामदेव के अभंगों एवं पदों में विसोबा खेचर को उनका सद्गुरु स्वीकार किया गया है। एक अभंग में वे कहते हैं "सद्गुरु खेचर स्वामी मेरे लिए कल्पतरु के समान हैं, जिन्होंने मुझे मेरे वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार कराया।"इसी प्रकार एक अन्य पद में वे कहते हैं

"मन मेरी सुई, तन मेरा धागा,
खेचर जी के चरणों में नामा शिंपी लागा।"

संत परंपरा में संत नामदेव के शिष्यों तथा समकालीन संतों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इन संतों ने न केवल व्यक्तिगत साधना को अपनाया, बल्कि भक्ति को समाज के व्यापक स्तर तक पहुँचाने का कार्य भी किया। नामदेव के प्रमुख शिष्यों में जनाबाई का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिन्हें मराठी संत साहित्य में अत्यंत उच्च स्थान प्राप्त है। जनाबाई का जीवन प्रारंभ से ही भक्ति-प्रधान रहा; वे पंढरपुर में नामदेव के परिवार से जुड़कर दासी के रूप में कार्य करती थीं, किंतु उनकी अंतरात्मा विठ्ठल-भक्ति में पूर्णतः तल्लीन थी। उनके अभंगों में सहजता, भावुकता और ईश्वर के प्रति अनन्य समर्पण का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। वे अपने दैनिक कार्यों जैसे जल भरना, झाड़ू लगाना, धान कूटना को भी ईश्वर-सेवा के रूप में देखती थीं, जिससे उनका संपूर्ण जीवन साधना का पर्याय बन गया। इसी क्रम में परिसा भागवत, चोखामेला, केशव कलाधारी, लद्धा, बोहरदास और जल्लो जैसे अनेक शिष्यों ने नामदेव की भक्ति परंपरा को विविध दिशाओं में विस्तारित किया। चोखामेला जैसे संत, जो सामाजिक दृष्टि से निम्न माने जाने वाले वर्ग

से थे, ने यह सिद्ध किया कि सच्ची भक्ति जाति और सामाजिक बंधनों से परे होती है। उनके जीवन में सहनशीलता, विनम्रता और ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा का अद्वितीय उदाहरण मिलता है। इसी प्रकार केशव कलाधारी ने उत्तर भारत में नामदेव की शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार किया, जबकि लद्धा और बोहरदास जैसे भक्तों की कथाएँ गुरु-भक्ति, समर्पण और संत-कृपा की महत्ता को रेखांकित करती हैं। नामदेव के समकालीन संतों में निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर, सोपानदेव और मुक्ताबाई का विशेष स्थान है। ये सभी संत एक ही परिवार से संबंधित थे और इनकी साधना ने भक्ति आंदोलन को दार्शनिक तथा आध्यात्मिक गहराई प्रदान की। ज्ञानेश्वर ने जहाँ अद्वैत और भक्ति का समन्वय प्रस्तुत किया, वहीं निवृत्तिनाथ ने योग और वैराग्य की परंपरा को सुदृढ़ किया। मुक्ताबाई जैसी संत-कवयित्री ने अपने अनुभवों के माध्यम से यह सिद्ध किया कि आत्मज्ञान और भक्ति में किसी प्रकार का भेद नहीं है। इसके अतिरिक्त विसोबा खेचर, गोरा कुम्हार, नरहरि सुनार, सांवता माली, सेना नाई और चांगदेव जैसे संतों ने अपने-अपने व्यवसायों के साथ-साथ भक्ति को जीवन का अभिन्न अंग बनाए रखा। इन संतों की विशेषता यह थी कि वे अपने दैनिक कार्यों को ही साधना का माध्यम मानते थे जैसे नरहरि सुनार अपने सुनार-कर्म को ईश्वर-सेवा के रूप में देखते थे, और गोरा कुम्हार मिट्टी के बर्तनों के माध्यम से जीवन-दर्शन व्यक्त करते थे। इस संत मंडली की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें समाज के सभी वर्गों ब्राह्मण, शूद्र, स्त्री, पुरुष, गृहस्थ, योगी सभी को समान स्थान प्राप्त था। भक्ति इनके लिए केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता और मानवीय एकता का सशक्त माध्यम थी। अभंग, कीर्तन और सत्संग के माध्यम से इन संतों ने जनसाधारण को सरल भाषा में आध्यात्मिकता का संदेश दिया, जिससे भक्ति एक जनआंदोलन का रूप ले सकी। इस प्रकार, संत नामदेव और उनके समकालीन संतों की यह परंपरा केवल धार्मिक या साहित्यिक धारा भर नहीं रही, बल्कि इसने भारतीय समाज में समानता, प्रेम और आध्यात्मिक जागरण की एक नई चेतना का संचार किया। यही परंपरा आगे चलकर वारकरी संप्रदाय के रूप में विकसित हुई, जिसने महाराष्ट्र ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारत की भक्ति परंपरा को गहराई से प्रभावित किया।नामदेव-कालीन संत-मंडली महाराष्ट्र की भक्ति-परंपरा का एक अत्यंत विस्तृत, जीवंत और बहुआयामी अध्याय है, जिसमें ज्ञानेश्वर और नामदेव जैसे महापुरुषों के साथ अनेक संतों ने मिलकर एक ऐसे आध्यात्मिक वातावरण का निर्माण किया, जिसने समाज के हर स्तर को प्रभावित किया। इस मंडली में निवृत्तिनाथ गुरु-परंपरा और योगमार्ग के प्रतिनिधि रूप में प्रतिष्ठित होते हैं, जिन्होंने अपने छोटे भाई ज्ञानेश्वर को न केवल दीक्षा दी, बल्कि उन्हें आध्यात्मिक साधना के उच्च शिखर तक पहुँचने का मार्ग भी दिखाया; उनके व्यक्तित्व में वैराग्य, स्थिरता और आंतरिक अनुशासन का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। ज्ञानेश्वर ने अद्वैत दर्शन और भक्ति को एक सूत्र में बाँधते हुए लोकभाषा में गूढ़ आध्यात्मिक सत्यों को प्रस्तुत किया, जिससे साधारण जन भी धर्म और आत्मज्ञान की ओर उन्मुख हुआ। नामदेव ने सगुण भक्ति को अत्यंत सरल, भावपूर्ण और लोकसुलभ रूप में व्यक्त किया; उनके अभंगों में भगवान विट्ठल के प्रति प्रेम, समर्पण और आत्मीय संवाद की सहज अनुभूति मिलती है, जिसने भक्ति को केवल पूजा-पद्धति न रहने देकर जीवन का स्वाभाविक अंग बना दिया। सोपानदेव ने भक्ति को सरलता और आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करते हुए यह प्रतिपादित किया कि परम तत्व एक ही है, जिसे विभिन्न रूपों में अनुभव किया जा सकता है, जबकि मुक्ताबाई ने अत्यंत अल्प आयु में ही गहन आध्यात्मिक चेतना का परिचय दिया; उनकी वाणी में योग, ज्ञान और भक्ति का अद्भुत संतुलन दिखाई देता है, और उन्होंने चांगदेव जैसे सिद्ध योगी के अहंकार को भी सहजता से विनीत बना दिया। गोराकुंभार ने अपने कुम्हार-कर्म के माध्यम से यह दर्शाया कि जैसे मिट्टी को गढ़कर घड़ा बनाया जाता है, वैसे ही साधना से मनुष्य का जीवन परिष्कृत होता है; उनके अभंगों में वेदान्तीय संकेत और अनुभवजन्य ज्ञान स्पष्ट रूप से प्रकट होते हैं। नरहरि सुनार ने अपने सुनार-व्यवसाय को ही साधना का माध्यम बनाते

हुए यह बताया कि आत्मा सोने के समान शुद्ध है, जिसे विवेक और भक्ति से निखारा जा सकता है। सावता माली ने खेती और श्रम के बीच नाम-स्मरण की महिमा का प्रचार किया और यह सिद्ध किया कि ईश्वर-भक्ति किसी विशेष स्थान या परिस्थिति की मोहताज नहीं है। सेना नाई ने सेवा, सत्य और स्वधर्म के पालन को भक्ति का आधार माना और अपने कर्म को ही ईश्वर-अर्पण का रूप दिया। चांगदेव, जो योग-सिद्धियों और दीर्घायु के कारण प्रसिद्ध थे, अंततः ज्ञानेश्वर और मुक्ताबाई के सान्निध्य में आकर यह समझ सके कि सच्चा ज्ञान अहंकार-शून्यता में निहित है; उनका जीवन इस बात का उदाहरण बन गया कि बाह्य सिद्धियाँ अंततः आंतरिक विनम्रता के बिना अधूरी हैं। विसोबा खेचर ने नामदेव को व्यापक ईश्वर-बोध प्रदान करते हुए यह समझाया कि ईश्वर केवल मंदिरों में ही नहीं, बल्कि समस्त सृष्टि में व्याप्त है। जनाबाई ने भक्ति को स्त्री-जीवन के अनुभवों, श्रम और संवेदनाओं से जोड़कर उसे अत्यंत मानवीय और आत्मीय स्वर दिया। इसी प्रकार अन्य संतों जैसे बंका, सोयराबाई, सच्चिदानंद आदि ने भी अपने-अपने स्तर पर भक्ति, समता और प्रेम के संदेश को आगे बढ़ाया। इस संत-मंडली की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण-अब्राह्मण,गृहस्थ-संन्यासी,श्रमिक और साधक सभी को समान स्थान प्राप्त था; यहाँ जाति, कुल और बाह्य आडंबरों का कोई महत्व नहीं था, बल्कि भक्ति ही सर्वोपरि थी। ये संत अपने-अपने व्यवसायों में लगे रहते हुए भी ईश्वर-चिंतन में लीन रहते थे और अभंगों के माध्यम से अपने अनुभवों को जनसामान्य तक पहुँचाते थे। संध्या, पूजा और सामूहिक संकीर्तन के रूप में भक्ति एक सामाजिक परंपरा बन चुकी थी, जिसमें लोग प्रतिदिन एकत्र होकर भाव-विभोर होकर ईश्वर-नाम का गान करते थे। इस प्रकार नामदेव-कालीन संत-मंडली ने न केवल धार्मिक चेतना को जाग्रत किया, बल्कि सामाजिक समरसता, नैतिकता और सांस्कृतिक एकता को भी सुदृढ़ किया। मराठी साहित्य में अभंग-परंपरा का उत्कर्ष इसी काल में हुआ, जिसे उचित ही स्वर्णयुग कहा जाता है, और आगे चलकर यही परंपरा वारकरी पंथ के रूप में विकसित होकर आज भी जनमानस में जीवित और प्रभावशाली बनी हुई है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि संत नामदेव भारतीय भक्ति आंदोलन के महान संतों में अग्रणी स्थान रखते हैं। उन्होंने भक्ति को केवल व्यक्तिगत साधना तक सीमित न रखकर उसे सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना का व्यापक स्वरूप प्रदान किया। उनका जीवन, कृतित्व तथा अभंग-साहित्य मध्यकालीन भारतीय समाज में आध्यात्मिक जागरण, सामाजिक समरसता और मानवीय समानता के सशक्त प्रतीक के रूप में उभरकर सामने आता है। इससे यह तथ्य स्थापित होता है कि संत-परंपरा में लोकस्मृतियों और भक्त-साहित्य का विशेष ऐतिहासिक महत्व है। उनके विचारों में भक्ति का स्वरूप अत्यंत सरल, प्रेमपूर्ण और सर्वसमावेशी दिखाई देता है। संत नामदेव ने जाति-भेद, ऊँच-नीच तथा सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करते हुए यह प्रतिपादित किया कि ईश्वर-प्राप्ति का अधिकार सभी मनुष्यों को समान रूप से प्राप्त है। उनके अभंगों और कीर्तनों में प्रेम, करुणा, सदाचार और सामाजिक समानता का संदेश स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इसी कारण उनकी भक्ति केवल धार्मिक साधना न होकर सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी बन गई। उनकी संत-मंडली की विशेषता यह थी कि उसमें समाज के सभी वर्गों ब्राह्मण, शूद्र, स्त्री, पुरुष, गृहस्थ और श्रमिक को समान स्थान प्राप्त था। जनाबाई, चोखामेला, गोरा कुम्हार, नरहरि सुनार और सावता माली जैसे संतों ने यह सिद्ध किया कि भक्ति किसी विशेष वर्ग की संपत्ति नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता की साझा आध्यात्मिक धरोहर है।नामदेव के अभंग-साहित्य ने भक्ति को लोकभाषा के माध्यम से जनसामान्य तक पहुँचाया। उनकी रचनाओं में सहजता, भावात्मकता और आत्मीयता का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। यही कारण है कि उनकी वाणी आज भी महाराष्ट्र सहित सम्पूर्ण भारत की भक्ति-परंपरा में श्रद्धा और सम्मान के साथ गायी जाती है। अतः

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि संत नामदेव का जीवन और साहित्य भारतीय भक्ति आंदोलन की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। उन्होंने भक्ति को सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक एकता और आध्यात्मिक लोकतंत्र का माध्यम बनाकर भारतीय समाज को नई दिशा प्रदान की। उनकी शिक्षाएँ आज भी प्रेम, समानता, सह-अस्तित्व और मानवीय मूल्यों की प्रेरणा देती हैं।

संदर्भ :

1. वानखड़े, कृष्ण गोपाल। संत नामदेव । प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, हिंदी संस्करण, 196 पृष्ठ। सहयोगी: सरदार शहर पब्लिक लाइब्रेरी।
2. लग, जोग। संत नामदेव । नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया, 1987।
3. नामदेव,अभंग गाथा ,संपादक वी. बी. कोल्टे, साहित्य अकादेमी, 1980।
4. नामदेव ,संत नामदेवांची अभंगवाणी , पुणे विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1995।
5. आर . डे. रानाडे, मिस्टिसिज़्म इन महाराष्ट्र : इंडियन मिस्टिसिज़्मस्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस, 1983।
6. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास , नागरी प्रचारिणी सभा, 2002।
7. द्विवेदी हज़ारी प्रसाद , भक्ति आंदोलन और मध्यकालीन भारत , राजकमल प्रकाशन, 2007

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 May 2026 Page No. : 207-210
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

“आदिवासियों का धर्मांतरण: ‘सूरज किरन की छांव’ उपन्यास के विशेष संदर्भ में”

उष्मिता गौड़
पी.एच.डी. शोधार्थी, हिंदी विभाग
विद्यासागर विश्वविद्यालय, मिदनापुर, पश्चिम बंगाल पिनकोड : 721102

बीज शब्द : धर्म, परिवर्तन, आदिवासी, ईसाई, मिशनरी।

आदिवासी भारत के मूल निवासी हैं। सदियों से आदिवासी अपनी विशिष्ट संस्कृति के लिए जाने जाते हैं। इनकी सांस्कृतिक एवं धार्मिक मान्यताएं पहाड़, जंगल, नदी, मिट्टी से जुड़ी हुई है। समय-समय पर बाहरी सत्ताओं के हस्तक्षेप से आदिवासी पीड़ित एवं शोषित होते रहे। इन सबसे इनकी धार्मिक एवं सामाजिक मान्यताएं क्षतिग्रस्त हुई। आदिवासी अपनी भूमि, समाज एवं संस्कृति से बेहद प्रेम करते हैं, यही कारण है जब अंग्रेज सरकार द्वारा इन पर बहुत से पाबंदी लगाए जाने लगी तब आदिवासियों ने इसके विरुद्ध विद्रोह किया। उदाहरण के रूप में हम संथाल विद्रोह, मुंडा विद्रोह एवं कोल विद्रोह आदि को देख सकते हैं। ईसाई मिशनरियों ने 16वीं शताब्दी के दौरान संत फ्रांसिस जैवियर के जमाने से भारत में धर्म प्रचारक का काम शुरू किया था। इनका धर्म प्रचार ज्यादा समय तक विशुद्ध बनकर नहीं रह पाया। इन्होंने धीरे-धीरे शिक्षा एवं चिकित्सा को धर्म प्रचार का माध्यम बनाया। भारतीय जनता की ग़रीबी एवं असहायता का फायदा उठाकर यह मिशनरियों ने आर्थिक सहायता एवं शिक्षा का लोभ दिखाकर लोगों का धर्म परिवर्तन करवाया। जो लोग इनके बहकावे में नहीं आते थे यह उनकी सहायता के बदले उन पर धर्म परिवर्तन करने के लिए दबाव डालते थे। इन सब में सबसे ज्यादा आदिवासी इनके शिकार बने। आदिवासी क्षेत्र में सरकारी सुख सुविधा की कमी का फ़ायदा उठाकर इन मिशनरियों ने जनसेवा के नाम पर शिक्षानुष्ठान एवं अस्पताल खोला। जन सेवा के माध्यम से आदिवासियों को धर्म परिवर्तन के लिए बहलाया-फुसलाया गया एवं उनको विभिन्न रूप से मजबूर किया गया। परिणामतः आदिवासी अपनी संस्कृति एवं अस्मिता को खोने लगे। राजेन्द्र अवस्थी का उपन्यास ‘सूरज किरन की छांव’ में आदिवासियों के धर्मांतरण के कारण एवं परिणाम का चित्रण हुआ है।

दूसरे धर्मों में ईशा, अल्लाह और विभिन्न देवी-देवता की पूजा होती है परन्तु आदिवासियों में प्रकृति ही उनकी देवी-देवता है। जहाँ तक धर्म की बात आती है वहाँ आदिवासी अपने जीवन का मूल स्रोत प्रकृति को मानते हैं। प्रकृति

ही उनकी सारी जरूरतों को पूरी करती है, इसलिए आदिवासियों ने उसको ही अपना आराध्य मानते हैं। प्रकृति के नियमों को प्रमुखता देते हैं। आदिवासी कवि तथा आलोचक रामदयाल मुंडा आदिवासियों के धर्म को 'आदि धर्म' कहा है। वंदना टेटे तथा अन्य विद्वानों ने आदिवासियों के धर्म को 'सरना धर्म' नाम दिया है। संताली जनजाति प्रमुख रूप से अपने धर्म को 'सरना धर्म' के नाम से स्वीकार करती है। जबकि सम्पूर्ण आदिवासी जनजातियों का कोई नामित विशिष्ट धर्म नहीं है। इसलिए इनके धर्म-दर्शन को प्रकृतिवादी दर्शन तथा जीवन वादी धर्म-दर्शन कहा जा सकता है।

आज सभी धर्म मिलकर आदिवासियों पर अपने-अपने धर्म को थोपने का प्रयास कर रहे हैं। आदिवासियों के आसपास जिस धर्म की आबादी ज्यादा है आदिवासी उधर ही आकर्षित होते चले जा रहे हैं। भारत सरकार की जनगणना में आदिवासी वैशिष्ट्य को महत्व न देते हुए आदिवासियों को या तो हिंदू मान लिया जाता है या अन्य में रख दिया जा रहा है। भारत में बहुत से आदिवासी जनजाति हिन्दुओं के साथ रहकर अपने को हिन्दू मानते हुए उनके जैसे रीति-रिवाज, पूजा-पाठ, विवाह-संस्कार आदि को स्वीकार कर चुके हैं। रामदयाल मुंडा ने अपनी पुस्तक 'आदिवासी अस्तित्व और झारखंडी अस्मिता के सवाल' में झारखण्ड के आदिवासियों के बारे में बताते हुए कहा है- "उपर्युक्त धार्मिक विशेषताओं ने कालक्रम में इस क्षेत्र में ऐसी मानसिकता पैदा की जिसके चलते अपनी सहिष्णुता का एक वातावरण पैदा हुआ, जिसको सही अर्थ में धर्मनिरपेक्षता कहा जा सकता है। इस धार्मिक सहिष्णुता का परिणाम है कि इस क्षेत्र में बहुत हाल तक कोई धार्मिक दंगे नहीं हुए।"[1] इस प्रकार आज आदिवासियों को न केवल राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक स्वतंत्रता की जरूरत है; बल्कि धार्मिक स्वतंत्रता की भी आवश्यकता है। उनकी भिन्न जीवन शैली ही उनकी पहचान है। बाहरी वर्चस्वशाली तत्वों के घुसपैठ से आदिवासियों की अस्मिता पर संकट आ गयी है। एक आँकड़ा की मानें तो "मेघालय में 16 तरह की जनजातियाँ हैं और ईसाई धर्म को मानते हैं। त्रिपुरा में 19 जनजातियाँ हैं जो ईसाई, बौद्ध और हिंदू धर्म को मानते हैं। छत्तीसगढ़ के बिलासपुर संभाग में जेवरागोण्ड के अलावा सरगुजिया, रतनपुरिया, मटकोड़वा ध्रुव तथा राजगोण्ड सगा समाज है।"[2] धर्म की इतनी भिन्नता के चलते भिन्न समुदाय में रहने वाले आदिवासियों के धर्म के प्रसिद्ध विचारक धुर्य तथा एल्विन मानते हैं कि इनको हिंदू मान लेना चाहिए। यह आदिवासी अस्मिता के प्रति सवाल खड़ा कर रहा है। ऐसे में आदिवासियों की धार्मिक मान्यता अस्तित्व में ही नहीं रहेगा।

अपने धर्म पर आस्ता रखने के क्रम में दूसरे धर्म को निचा दिखाकर अपने धर्म को फैलाना गलत है। ईसाई धर्म में चर्च के वैरागिन(सिस्टर) को ईश्वर की साथी मानते हैं। यही सिस्टर 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास की नायिका आदिवासी युवती बंजारी के धर्म पर हँसी उड़ाकर कहती हैं- "पत्थर में भला देव रहता है? ये जंगली जाने क्या-क्या पूजते हैं। हर झाड का देव, हर पत्थर को भगवान।"[3] उपन्यास में जब बंजारी ईसाई पोथी को पढ़ती है कि कृष्ण चोर और राम दगाबाज है। तब उसके मन में संशय होता है कि बचपन से जिसे हम भगवान मानते आये हैं वो क्या सच में ऐसा है। इसी द्वंद्व में न वो ईसाई धर्म को पूर्ण रूप से स्वीकार कर पाती है और न ही अपने पुराने धर्म को मन से निकाल पाती है। चर्च का पादरी भी अपने भाषण में आदिवासियों के धर्म को नीचा दिखाते हुए ईशु को बड़ा बताते हैं– "ईशू बड़ा परमेश्वर हैं। प्रार्थना करते वक्त बक मत करो, जैसा दूसरी जात वाले करते हैं। वे सोचते हैं, बक-बक करने से ही वह सुनेगा। तुम्हारा पिता तुम्हारो मांगने के पहले जानता है कि तुम्हें क्या चाहिए-तुम मूरख मत बनो।"[4] स्पष्ट है कि धार्मिक कट्टरता आदिवासियों पर हावी हो रही है क्योंकि वे सरल और सीधे लोग हैं, दुनिया के प्रपंच से वे अनजान है। इसलिए धार्मिक कट्टरपंथी वाले आसानी से आदिवासियों को बेहला फुसलाकर उनका धर्म परिवर्तन कर लेते हैं। एक बार धर्मान्तरण के बाद वे उस चक्रव्यूह पद जाने के बाद वे अपनी पहचान भुलाकर उसी में ही फसते चले जाते हैं। जैसे 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास में नायिका बंजारी चाहकर भी अपने धर्म में वापस नहीं आ सकी।

भारत में प्रचलित प्रायः सभी धर्मों में धर्म संरक्षक होते है जो अपने धर्म के मर्म समझकर अनुयायियों को पथप्रदर्शित करते हैं लेकिन सच्चाई तो यह है कि ज्यादातर धर्म गुरु धार्मिक पाखण्डों, अंधविश्वासों एवं कर्मकाण्ड को फैलाकर अपना जेब भरते हैं, वे अपना यश फैलाने तथा अनुयायियों की संख्या बढ़ाने में व्यस्त है। राजेन्द्र अवस्थी ने अपने उपन्यासों के जरिए इन ढोंगी धर्म गुरुओं पर करारा प्रहार किया है। भारत के ईसाई मिशनरियों को हमेशा से अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए विदेश से रुपया मिलता आ रहा है। इसके चलते चोरी-छिप्पे धर्म परिवर्तन होते आ रहे हैं। ईसाई धर्म में पादरी और वैरागिन(सिस्टर) को ईशु और मनुष्य के बीच का सेतु माना जाता है क्योंकि वे ईश्वर साधना का सही मार्ग प्रदान करते हैं। राजेन्द्र अवस्थी के 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास के पादरी अपने धर्म के अनुयायी बढ़ाने के लिए गलत काम करने से भी पीछे नहीं हटते। नैतिकता का हद तोड़ते हुए ये धर्म प्रचारक मिशनरी अस्पताल में गरीबों को ज़बरदस्ती मुक्त इलाज के बहाने लेकर आते हैं और इलाज के बदले उन गरीब आदिवासियों को ईसाई धर्म अपनाने के लिए मजबूर कर देते हैं। उपन्यास में अपने बीमार बच्चे को लेकर अस्पताल आए औरत से पादरी कहता है- "यदि लड़के को इशु को भेंट कर दो तो उपाय करूँ।"[5] इस घटना से ईसाई धर्म प्रचारकों की निर्दयता देखी जा सकती है। इस उद्धरण से स्पष्ट है कि ईसाई धर्म को फ़ैलाने के लिए वे किसी भी हद तक गिर जाने से पीछे नहीं हटते।

धर्म गुरु लौकिक संसाधनों से विमुख होकर वैरागी हो जाते हैं लेकिन 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास में पादरी चुनाव में भाग लेता है और जीतने के लिए कई गंदे चाल चलाता है। हार ने के बाद उसके आत्मसम्मान को इतनी गहरी चोट पहुँचती है कि वह अपने कर्तव्य से ही मुँह मोड़ लेता है। उसकी लापरवाही से एक मरीज की मृत्यु हो जाने के बाद वह गाँव छोड़कर पहाड़ी चर्च में चला जाता है। ईसाई धर्म में वैरागिन को ईशु की दासी मानते हैं, जिनका एकमात्र लक्ष्य जनसेवा ही रहता है, लेकिन इस उपन्यास में मिस्पा नामक वैरागिन चोरी-छिप्पे लौकिक जीवन का आनंद लेती है। उसका कई मर्दों के साथ अनैतिक यौन संबंध भी रहता है। अपने रंग-बिरंगे कपड़े दिखाकर वह बंजारी से कहती है- "पादरी चाहता है, यही बेकार सफेद कपड़े पहने रहूँ। इन्हें पहने देख लेगा तो मेरे सिर पर बज्जर टूढ पड़ेंगा, वह या तो ये कपड़े मुझसे छीन लेगा या मुझे नौकरी से ही निकाल देगा। गर्दन फंसी हूँ, क्या करूँ।"[6] स्पष्ट है कि अनेक वैरागिन सक्त धार्मिक नियमों के बंधन में दम घुटकर जीती हैं, जो सिर्फ नाम मात्र की सेविका होती है।

'सूरज किरन की छांव' उपन्यास में ईसाई मिशनरियों की धार्मिक कट्टरता को दर्शाया गया है। उपन्यास में चित्रित ईसाई मिशनरी का एकमात्र लक्ष्य आदिवासी और हिंदुओं को ईसाई बनाकर भारत में ईसाई धर्म फैलाना है। जिनके पास धन है, सभी प्रकार की सुख-सुबिधा है वह कभी अपना धर्म परिवर्तन नहीं करेंगे, इसलिए इन मिशनरियों ने गरीब आदिवासियों चुना क्योंकि उनकी आर्थिक स्थिति हमेशा से अच्छी नहीं रही। 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास में भूख से तड़पते गोंड आदिवासियों को बेहतर जिंदगी का लालच देकर पादरी ईसाई धर्म अपनाने को मजबूर करता है। आदिवासियों को धर्म परिवर्तन से आर्थिक सहायता मिलने का लालच दिया जाता है। भूखे जरपु से पादरी का कहना है- "तुम्हारा धर्म कैसा है, तुम्हारे लोग कैसे है? तुम जैसा हट्टा-कट्टा आदमी भूखों मर जाय और तेरी जाति वालों के कान में जूं तक न रेंगे। यदि हमारे धर्म में तू आ जाय, तो जिंदगी भर आराम से खायेगा। जहाँ तेरा पसीना बहेगा, हम अपना खून बहा देंगे।"[7] पेट की भूख और पादरी के कोमल वचनों ने जरपू को जोसफ बना दिया। उपन्यास की रधिया को अपने पति के कर्ज के बदले अपने नवजात लड़के को मिशनरी वालों को सौप ने को मजबूर किया गया। ऐसे न करने पर पादरी पूरे परिवार को ईसाई बनने को मजबूर कर रहा था। कोई भी व्यक्ति बचपन से जिन धार्मिक मान्यताओं का पालन करता है उसको छोडकर नए धर्म को दिल से स्वीकारना कठिन होता है। उपन्यास की नायिका बंजारी के माध्यम से लेखक ने दो धर्मों के बीच उलझे हुए व्यक्ति के आत्म-संघर्ष को दिखाया है। गोंड आदिवासी युवती बंजारी को अपनी सामाजिक

विवशता के कारण ईसाई बनना पड़ा। बचपन से उसके मन में ईश्वर की जो छवि थी, उसको तोड़कर नये धर्म और ईश्वर को अपनाना उसके लिए आसान नहीं था। वह इस उलझन में पड़ी रहती कि कौन सा देव महान है- यहोबा या महादेव। उसकी बीमार बेटी की जान बचाने के बदले मिशनरी अस्पताल वालों ने उससे उसकी बेटी को झीन लिया। मिशनरी वाले उसकी बेटी को पालेंगे और बड़े होने पर मैम यानि वैरागिन(सिस्टर) बनाएँगे। अस्पताल में चोरी-छिप्पे चल रहे धर्म परिवर्तन को बढ़ावा देनेवाली नर्स रूबी को डॉ. जेकब ने ऐसे झोर ज़बरदस्ती धर्म परिवर्तन का विरोध करते हुए समझाया है- "औरों का भी तो धर्म है। यदि वे तुम्हें बदलने लगें। ईशु ने कब कहा है कि तुम पर दूसरे धर्म वालों की सेवा न करो। मैं ईसाई हूँ, ईशू को मानता हूँ, उसके सामने सिर झुकाता हूँ, पर दूसरों से घृणा नहीं करता।"[8] डॉ. जेकब के इस महत्वपूर्ण वक्तव्य से राजेन्द्र अवस्थी यह व्यक्त करना चाहते हैं कि सभी धर्म सच्चाई का राह दिखाता है, जिनका मकसद एक है। कोई भी धर्म दूसरे धर्म को नीचा दिखाकर अपने धर्म में ज़बरदस्ती ले आने की बात नहीं करता।

राजेन्द्र अवस्थी का 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास प्रमुख रूप से आदिवासी स्त्री की विवशता को दिखाता है परंतु मिशनरियों द्वारा आदिवासी एवं अन्य हिंदुओं का धर्म परिवर्तन एक बड़ी समस्या के रूप में उभरती है। नायिका बंजारी का दबाव में आकर मिसेज बेंजो जोसेफ बनना, आदिवासियों के धर्मांतरण को ही दिखाता है। धर्म परिवर्तन करने के बाद बंजारी के जीवन में दुख का पहाड़ टूट पड़ता है। मिशनरियों के द्वारा लोगों पर दबाव डालकर धर्म परिवर्तन करवाने का प्रसंग सामने आता है। बंजारी का ईसाई धर्म स्वीकार करने के उपरांत भी ईसाई धर्म के प्रति उसके मन में कई प्रकार के द्वंद्व एवं शंका का संचरण होता है। गांव के मिशनरी स्कूल में हिंदू देवी-देवताओं को ग़लत ठहराकर उनका अपमान किया जाता है, जिससे वह अपने देवी-देवताओं से विमुख होकर ईसाई धर्म स्वीकार लें। ईसाई धर्म ग्रहण करने पर सभी प्रकार की सुख-सुविधा मिलने का लालच दिया जाता है। मिशनरियों द्वारा अस्पताल भी खोले जाते हैं। इलाज़ के बहाने अस्पताल में ग़रीब लोगों को जबरदस्ती लाया जाता है। अस्पताल में इलाज़ के लिए आये गरीब मरीजों को ईसाई बनने के लिए विभिन्न प्रकार का दबाव डाला जाता है। सभी प्रकार के कौशल का प्रयोग कर मिशनरियों द्वारा आदिवासी तथा अन्य गांव के अनपढ़ लोगों का धर्म परिवर्तन कराने का प्रसंग उपन्यास में चित्रित हुआ है। धर्म परिवर्तन करने के पश्चात पूर्ण रूप से उन लोगों का जीवन मिशनरियों के नियंत्रण में आ जाता है। धर्म परिवर्तन के बाद उन आदिवासियों की मानसिक कुंठा एवं विवशता का बड़ा ही दुखद एवं मार्मिक वर्णन इस उपन्यास में दृश्यमान है।

सन्दर्भ:-

1. मुंडा, डॉ. रामदयाल, 'आदिवासी अस्तित्व और झारखंडी अस्मिता के सवाल', आदिवासी प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2002, पृ. 36
2. 'आदिवासी सत्ता', अंक-2, मार्च 2016
3. अवस्थी राजेन्द्र, 'सूरज किरन की छांव', पराग प्रकाशन, दिल्ली-32, प्रथम संस्करण: 1979, पृ. 44
4. वही, पृ.57
5. वही, पृ.64
6. वही, पृ. 104
7. वही, पृ. 32
8. वही, पृ. 65

Mobile No: **9040661537** Email Id.: **usmita.gouda@gmail.com**

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com   Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/1   https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ॰ पूनम आर्या
अस्सिटेंट प्रोफेसर (हिन्दी),
श्री राम सिंह धौनी राजकीय महाविद्यालय जैती, अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड)

for the paper titled

बीसवीं शताब्दी के कुमांउनी कवियों की कविताओं में सामाजिक चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 11-13

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/2 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

ਡਾ. ਲਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ

ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ (ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ),

ਡੀ.ਏ.ਵੀ ਕਾਲਜ ਬਠਿੰਡਾ

for the paper titled

ਸਾਧੂ ਬਿਨਿੰਗ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ੈਗਤ ਅਧਿਐਨ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

MaMay 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 14-17

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/3 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. प्रतिभा राय,

असि॰ प्रो॰ बीएड,

सेंट पाल टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, बिरसिंहपुर समस्तीपुर, बिहार- 848102

for the paper titled

स्वतंत्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता: उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 18-22

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/4

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ॰ सुकन्या चल्ला

ए पी टी डब्ल्यू आर ई आई एस गर्ल्स, करेडु, प्रकाशम ज़िला।

for the paper titled

स्वतंत्रता और जिम्मेदारी: आधुनिक महिला का संतुलन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 23-25

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा
Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/5 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

नाजमा हासान
(शोधार्थी),
विश्वविद्यालय स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
ल. ना. मि. विश्वविद्यालय,दरभंगा, बिहार ।

for the paper titled

अद्वैत वेदान्त दर्शनानुसार आत्मा, ब्रह्म और जगत् की अवधारणा

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 26-28

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/6 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ अमिता प्रकाश
असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सोमेश्वर, अल्मोड़ा

for the paper titled

वीरेन डंगवाल के काव्य में स्त्री-संघर्ष के विविध आयाम

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 29-33

9 772395 711007

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/7

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

नीलमणि तिग्गा

शोधार्थी,

शिक्षा विभाग, राधा गोविंद विश्वविद्यालय, रामगढ़ (झारखण्ड)

for the paper titled

झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के बढ़ते महत्त्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 34-38

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/8

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

प्रो० अरुण कुमार सिंह
(इतिहास विभाग),
डी०ए०वी० पीजी कॉलेज, आजमगढ़
(सम्बन्द्ध महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय आजमगढ़)

for the paper titled

औपनिवेशिक इतिहासलेखन से परे नाथ एवं अघोर चिकित्सा परंपरा : एक IKS आधारित पुनर्पाठ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 39-45

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/9 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० श्रुति मिश्रा

शास० कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

for the paper titled

भारतीय ज्ञान परम्परा में संगीत एवं अध्यात्म

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 46-48

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/10 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. दादासाहेब नारायण डांगे
सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, राहाता

for the paper titled

“काव्य में ‘इन्सान’ की खोज करते कवि सदानंद भोसले (मानवता के परिप्रेक्ष्य में)”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 49-54

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/11 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

पंकज कुमार कुशवाह,
(एम.ए.-योग विभाग)
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)
श्री जितेन्द्र प्रताप सिंह
सहायक आचार्य (योग विभाग)
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)

for the paper titled

आधुनिक जीवनशैली में योग और पोषण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 55-62

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/12 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

कु. शाशि देवी,

(शोधार्थी योग विभाग)

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)

डॉ. हरिकान्त मिश्र

विभागाध्यक्ष दर्शनशास्त्र विभाग

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उ.प्र.)

for the paper titled

आस्तिक परंपरा मे योग का दार्शनिक प्रतिरूप

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 63-69

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/13 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

कृष्ण बहादुर सिंह
शोधार्थी,
शिक्षाशास्त्र विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
डॉ. राममणि द्विवेदी
प्राचार्य,
एम.एल.चौरसीया शिक्षा महाविद्यालय, रीवा(म.प्र.)

for the paper titled

माध्यमिक स्तर के हिंदी माध्यम के छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके नैतिक मूल्यों के प्रभाव का अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 70-74

9 772395 711007

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/14 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ॰ स्वाति राय

सहायक व्याख्याता,

राजगंज इंटर महाविद्यालय, राजगंज ,धनबाद

for the paper titled

डिजिटल शिक्षा और महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 75-79

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/15 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

भुनेश्वर सिंह
शोधार्थी,
दीनदयाल उपाध्याय अध्ययन पीठ, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला।
डॉ. हेत राम
सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान, क्षेत्रीय केन्द्र धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।

for the paper titled

दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन में धर्मराज्य

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 80-88

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/16

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. पूनम कुमारी
एसोसिएट प्रोफेसर,
डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम गवर्नमेंट
डिग्री कालेज, पठानचेरू, जिला संगारेड्डी, तेलंगाना - 502319

for the paper titled

मंजुल भगत कृत 'अनारो' उपन्यास में चित्रित आर्थिक यथार्थ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 89-92

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/17 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. जिनु जॉन
सहायक आचार्या, हिंदी विभाग,
मार अत्तनेशियस कॉलेज(आटोनोमस), कोतमंगलम, केरलं - 686666

for the paper titled

भारतीय मध्यवर्गीय जीवन-संघर्ष और सामाजिक यथार्थ ‘थके पाँव’ उपन्यास के सन्दर्भ में

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 93-96

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/18 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

रिम्पल सिंह,
शोधार्थी,
डॉ. दिनेश कुमार मीणा
शोध निर्देशक,
जे.जे.टी. विश्वविद्यालय, चुडैला, झुंझनु (राजस्थान)

for the paper titled

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में पुरुष-विमर्श और नैतिक संकट

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 97-99

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/19 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

कुलबीर सिंह
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, नीलम विश्वविद्यालय, कैथल

डॉ. सुमन देवी
शोध निर्देशिका,
हिन्दी विभाग, नीलम विश्वविद्यालय, कैथल

for the paper titled

हरिशंकर परसाई के व्यंग्य साहित्य में मध्यमवर्गीय मानसिकता का द्वंद्व

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 100-103

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/20 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

पूर्णिमा किस्पोट्टा
शोधार्थी,
इतिहास विभाग, राधागोविंद विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

डॉ. पूनम कुमारी
सहायक प्राध्यापिका,
इतिहास विभाग, राधागोविंद विश्वविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

for the paper titled

झारखण्ड की उराँव जनजाति की महिलाओं में साक्षरता के प्रति दृष्टिकोण: एक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 104-108

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/21

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

Dinesh kumar

Research scholar history,

P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur

Dr.Shrikrishna singh

professor history,

P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur

for the paper titled

आधुनिक समय में डॉक्टर बी आर अंबेडकर के विचारों की प्रासंगिकता

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 109-113

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/22 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ॰ आजेन्द्र प्रताप सिंह
असि॰ प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
फिरोज गाँधी कॉलेज रायबरेली लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

for the paper titled

बैसवारा के अमर साहित्यकार जवाहर इंदु : जीवन परिवेश रचनाधर्मिता

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 114-118

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/23 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Shourya Pratap Singh

Assistant Professor,

(UGC-Net & PhD in Political Science)

Janta Mahavidyalaya Prashikshan Sansthan, Amdahi, Gonda (U.P.)

(Maa Pateshwari University, Balrampur, U.P.)

for the paper titled

Communicative Justice and the Margins : Evaluating Media Accessibility and the Democratic Agency of Persons with Disabilities in India

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 119-123

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/24 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

कुलबीर सिंह

सहायक प्राध्यापक,हिन्दी

राजकीय महाविद्‌यालय, बहु, झज्जर (हरियाणा)।

for the paper titled

परसाई के व्यंग्य में राजनीतिक-सामाजिक विडम्बनाओं का यथार्थ चित्रण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 124-128

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/25

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Archana Mishra

(Assistant Professor),

Gorakh Singh College (Education Department) Maharajganj, Siwan

for the paper titled

सततता के लिए उच्च शिक्षा

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 129-133

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/26 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

राहुल कुमार मीना
शोधार्थी,
दिल्ली विश्वविद्यालय

for the paper titled

जसिंता केरकेट्टा की काव्ययात्रा : संघर्ष, पर्यावरण और आदिवासी अस्मिता

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 134-139

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/27 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० रिजवान अहमद
असिस्टेंट प्रोफेसर इतिहास,
राजकीय महाविद्यालय सेहमों, बस्ती (उ०प्र०)

for the paper titled

झलकारी बाई : 1857 के विद्रोह की नायिका का पुनर्मूल्यांकन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 140-145

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/28 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

ਹਰਜੀਤ ਸਿੰਘ,
ਖੋਜਾਰਥੀ,
ਗੁਰੂ ਕਾਸ਼ੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ,
ਡਾ.ਅਮਨਦੀਪ ਕੌਰ,
ਨਿਗਰਾਨ,
ਗੁਰੂ ਕਾਸ਼ੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ

for the paper titled

ਹਰਪ੍ਰੀਤ ਸੇਖਾ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਸਮਾਜ-ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਰੋਕਾਰ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 146-151

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/29

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

LAV KESH BAHADUR SINGH

Research scholar history,

P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur

Dr.Shrikrishna singh

professor history,

P.K.K.Government Degree college Jalalabad Shahjahanpur

for the paper titled

भारतरत्न पंडित मदनमोहन मालवीय और हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 152-154

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/30

https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

श्रीमती सरिता आचार्य

सा. प्रा. गणित विभाग,

श्री उमा कन्या महाविद्यालय हाटपीपल्या जिला देवास (मध्य प्रदेश)

for the paper titled

भारतीय ज्ञान परंपरा का गणितीय आयाम: स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ के 16 सूत्रों का विश्लेषण एवं शैक्षणिक अनुप्रयोग

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 155-157

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/31 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Michael Khindo

Assistant Professor,

Punjabi University Campus, Maur

for the paper titled

Legacy of Shaheed Udham Singh

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 158-161

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/32 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

सचिन कुमार
शोधकर्ता, शिक्षा विभाग
आईएफटीएम, विश्वविद्यालय मुरादाबाद - 244001 , उत्तर प्रदेश (भारत)

for the paper titled

विद्यालयों पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव - उच्च माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के दृष्टिकोण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 162-166

9 772395 711007

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/33 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. सुनीता सिंह मरकाम

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

शास. इंदिरा गांधी गृहविज्ञान कन्या महाविद्यालय शहडोल (म. प्र.)

for the paper titled

म.प्र. के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं का योगदान

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 167-171

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/34 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० कमलेश देवी
सह-प्राध्यापक (हिन्दी विभाग),
गुरु गोरखनाथ जी राजकीय महाविद्यालय हिसार

for the paper titled

पर्यावरण और वर्तमान परिपेक्ष्य

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 172-174

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/35 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

जयकिशन नैनानी
सहायक प्राध्यापक,
पीएमसीओई शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महविद्यालय,बड़वानी (म.प्र.)

for the paper titled

विक्रमोर्वशीये स्वात्मभावगौरवविमर्शः

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 175-179

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/36 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. म्होर सिंह मीणा
सहायक आचार्य, इतिहास,
राजकीय कन्या महाविद्यालय, नीमकाथाना, सीकर ।

for the paper titled

जयपुर राज्य के अधीन खण्डेला की प्रशासनिक व्यवस्था की विवेचना (18वीं सदी से 20वीं सदी के संदर्भ में)

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 180-183

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/37 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

श्रीमती राजकुमारी

सह आचार्य संस्कृत

महारानी श्री ज्या राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

for the paper titled

सौन्दर्यानुरागी महाकविर्माघः

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 184-187

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/38 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

सुशील कुमार पटेल
शोध छात्र,
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ,वाराणसी

for the paper titled

“ हिन्दी उपन्यास में युवा वर्ग के व्यक्तित्व का संघर्ष”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 188-192

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/39 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

Mr. Ijegalakbe Jeme,

Assistant Professor,

Doomdooma College, Rupai Siding, Tinsukia, Assam

for the paper titled

Trickster Tales of the Zeme Naga of Assam

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 193-197

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/40 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

अशोक कुमार

सह आचार्य,

हिंदी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश धर्मशाला

गौरव सेठी

हिंदी शिक्षक,

स्कॉलर्स स्टेयर्स हाई स्कूल चलेट जिला ऊना

for the paper titled

"संत नामदेव का जीवन, भक्ति-दर्शन, संत-मंडली एवं शिष्य-परंपरा : सामाजिक समरसता के परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 198-206

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. May 2026/41 https://doi.org/10.5281/zenodo.20187071

Certificate of Publication

is awarded to

उष्मिता गौड़

पी.एच.डी. शोधार्थी, हिंदी विभाग

विद्यासागर विश्वविद्यालय, मिदनापुर, पश्चिम बंगाल पिनकोड : 721102

for the paper titled

“आदिवासियों का धर्मांतरण: ‘सूरज किरन की छांव’ उपन्यास के विशेष संदर्भ में”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

May 2026, Vol. 23, Issue-5, Page No. 207-210

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007